अथ षष्ठप्रपाठकाऽऽरंभः ॥६॥

उद्दालक-श्वेतकेतुसंवादपूर्वक "तत्त्वमसि" इस महावाक्यका नव वारोपदेश ॥ १६ ॥

अथ श्रीछांदोग्योपनिषदःषष्ठप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः प्रारभ्यते ॥ १ ॥

ॐ। श्वेतकेतुर्हारुणेय आस। तं ह पि-

अथ श्रीछांदोग्योपनिषदो मूलमात्रभाषादीपिकायाःषष्ठप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः प्रारभ्यते ॥ १ ॥

अर्थः—श्वेतकेतु आरुणेय होताभया। ताकूं पिता कहतेभये ॥ उद्दालक उवाचः—

अथ श्रीछादोग्योपनिषद्भाष्यभाषादीपिकायाः षष्ठप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः प्रारभ्यते ॥ १ ॥

उद्दालक-श्वेतकेतुप्रसंगसैं एकज्ञानकरि सर्वज्ञानोपदेश ७

टीकाः—"श्वेतकेतु आरुणेय होता भया" इ-

अथ श्रीछान्दोग्योपनिषद्भाष्यभाषादीपिकायाः षष्ठप्रपाठकगतप्रथमखंडस्य टिप्पणम् ॥१॥

१ वर्त्तमान अध्यायके अतीत ग्रंथके साथि संबंधकूं कहनेकूं आचार्य प्रतीककूं लेके ताकूं प्रतिज्ञा करैहैं ॥

तोवाच-श्वेतकेतो! वस ब्रह्मचर्य्यं। न वै सोम्यास्मत्कुलीनोऽननूच्य ब्रह्मबन्धुरिव भवतीति॥ १॥

हे श्वेतकेतो! ब्रह्मचर्य जैसैं होवै तैसैं वास कर॥ हे सोम्य! हमारे कुलविषै भया पुरुष अध्ययन न करिके ब्रह्मबंधुकीन्यांई होवैहै यह [युक्त] नहींहै ॥ १ ॥

त्यादिअध्यायका संबंध है:-"सर्वहीं यह ब्रह्म है तिसतैं उत्पत्ति अरु [तिसविषै] लय अरु चेष्टा (स्थिति) वाला है" ऐसैं पूर्व (तृतीयाध्यायविषै) कहा। तहां तिस प्रकारसैं तिस (ब्रह्म) तैं यह जगत् उपजताहै औ तिसविषैहीं लीन होताहै औ तिसकरिहीं चेष्टाकूं करताहै। यह कहनेकूं योग्य है ॥ औ [३]अनंतर (चतुर्थ अध्याय-

२ ताहीं संबंधकूं प्रकट करतेहुये प्रथम तृतीय अध्यायके साथि इस अध्यायके संबंधकूं कथन करैहैं ॥ इहां यह वक्तव्य है:-तिसकेअर्थ यह षष्ठ अध्याय आरंभ करियेहै। ऐसैं संबंध है ॥

३ अंतरायसहित संबंधकूं कहिके अब अंतरायरहित तिस संबंधकूं दिखावै हैं ॥

विषै) एक विद्वान् (ज्ञानी)के भुक्तहुये सर्व जगत् तृप्त होवैहै ऐसैं कहा । सो सर्व भूतनविषै स्थित आत्माकी ऐकताके हुये संभवैहै । आत्मभेदके हुये नहीं औ सो एकता किसप्रकारसैं है । यातैं तिसअर्थवाला यह षष्ठअध्याय आरंभ करियेहै ॥ पिता-पुत्रकी आख्यायिका जो है सो विद्याकी अतिशयकरि साररूपताके दिखावनेरूप अर्थवाली है:—नामतैं श्वेतकेतु ऐसा [इहां "ह" अक्षर इस वार्त्ताकी परंपरातैं प्राप्ततारूप ऐतिह्यप्रमाणरूप अर्थवाला है] आरुणेय कहिये अरुणका पौत्र होताभया ॥ तिस पुत्रकूं आरुणि (उद्दालक) पिता योग्य

४ अध्यायके तात्पर्यकूं कहिके अब आख्यायिकाके तात्पर्यकूं कहैहैं ॥ इहां पिता प्रतिवक्ता है औ पुत्र प्रष्टा है । इस प्रकारकी यह आख्यायिका है औ सो विद्याकी अतिसाररूपताके प्रकाशनअर्थ है । जातैं पिता जो है सो पुत्रकेअर्थ अतिसाररूपहीं वस्तुकूं उपदेश करैहै । यह अर्थ है औ "कुलके अनुरूप (अनुसारी)" इत्यादि वचनतैं कुलतैं अधमपुरुषकूं गुरुपना नहीं है । यह जानिये है औ ब्रह्मचर्य जैसैं होवै तैसैं अध्ययनकेअर्थ [वासकर] यह शेष है औ "गमन करिके" इत्यादि वचनतैं माणवक (ब्रह्मचारी)के अधीन अध्ययन है । यह सूचनकिया ॥

स ह द्वादशवर्ष उपेत्य चतुर्विंॅशति-

अर्थः—सो (पुत्र) द्वादशवर्षका हुया आचार्यके प्रति जायके चोवीशवर्षका हुवा।

विद्याका पात्र मानते हुये औ ताके उपनयन (यज्ञोपवीत)के कालके उल्लंघनकूं देखते हुये कहतेभये ॥ उद्दालक उवाचः—हे श्वेतकेतो ! हमारे कुलके अनुरूप (योग्य) गुरुके प्रति गमनकरिके तूं ब्रह्मचर्य जैसैं होवै तैसैं वास कर॥ औ[५] हे सोम्य (प्रियदर्शन)! जो हमारे कुलविषै उत्पन्न हुया पुरुष अध्ययनकूं न करिके ब्राह्मणरूप बंधुनकूं कथन कराहै अरु आप ब्राह्मणके आचारवाला नहीं होवै सो "ब्रह्मबंधु" कहियेहै। तिस ब्रह्मबंधुकीन्यांई होवैहै। यह युक्त नहीं है। ऐसैं ॥१॥

टीकाः—तौ[६] (पुत्र)का यातैं (स्वगृहतैं)

---

५ ननु उपनयन अरु अध्ययन मतिहोहु ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

६ ननु पिता आपहीं उपनयन करिके पुत्रके प्रति क्यूं

तिवर्षः सर्व्वान् वेदानधीत्य महामना

सर्व वेदनकूं अध्ययन करिके बडे मनवाला अनूचानमानी स्तब्ध (अनम्र) [होयके] आवताभया ॥ ताकूं पिता कहतेभये ॥ उद्दालक उवाचः—हे श्वेतकेतो! हे सोम्य!

पितातैं प्रवास (अन्यदेशविषै गमन) अनुमानसैं जानियेहै (कल्पनाकरियेहै) ॥ ॥ जिँस कारणकरि पिता आप गुणवान् हुया पुत्रके ताँई उपनयन करता नहीं ॥ ॥ पिताकरि उक्त सो श्वेतकेतु द्वादशवर्षका हुया आचार्यके प्रति उपगमन करिके जहांलगि चोवीश वर्षका भया तहांलगि सर्व (च्यारी बी) वेदनकूं अध्ययन करिके औ तिनके अर्थकूं जानिके

अध्ययन करावता नहीं? तहां कहैहैं ॥ इहां अतः (यातैं) शब्द स्वगृहकूं विषय करनेवाला है ॥

७ अनुमानरूप कल्पन है। तिसविषै कल्पककूं कहैहैं ॥ इहां अनूचान कहिये अनुवचनविषै समर्थ औ कर्मव्युत्पत्तिकरि अरु करणव्युत्पत्तिकरि आदेशशब्द व्याख्यान किया ॥

अनूचानमानी स्तब्ध एयाय तꣳ ह पि-
तोवाच-श्वेतकेतो! यन्नु सोम्येदं महाम-
ना अनूचानमानी स्तब्धोऽस्युत तमादे-
शमप्राक्ष्यः ॥ २ ॥

जो तूं यह बडे मनवाला अनूचानमानी स्तब्ध भयाहैं। तिस आदेशकूं बी पूंछता भयाहैं ॥ २ ॥

महामना (बडे मनवाला) कहिये महत् (गंभीर) है मन जिसका अरु अन्योंसैं असम (बडा) आपकूं माननेवाला है मन जिसका सो यह महामना है ऐसा औ अनूचानमानी कहिये अनूचान (अनुवचनविषै समर्थ) आपकूं मानताहै ऐसे स्वभाववाला जो है सो अनूचानमानी है ऐसा औ स्तब्ध कहिये अनम्र-स्वभाववाला। ऐसा हुया गृहके प्रति आवता भया। तिस इस प्रकारके आपके अननुसारी स्वभाववाले स्तब्ध (अनम्र) अरु मानी पुत्र-

येनाश्रुतꣳ श्रुतं भवत्यमतं मतम-

अर्थः-जिसकरि अश्रुत श्रुत होवैहै ।

कूं देखिके सद्धर्मविषै अवतारकरनेकी (उतारनेकी) इच्छाकरि पिता कहते भयेः-उद्दालक उवाचः-हे श्वेतकेतो! हे सोम्य! जो यह तूं महामना अनूचानमानी अरु स्तब्ध भयाहैं । कौंन तेरेकूं उपाध्याय (अध्यापक) तैं अतिशय प्राप्तभया है ॥ औ आदेश (उपदेश) करियेहै सो आदेश है । अर्थ यह जोः- केवल शास्त्र अरु आचार्यके उपदेशकरि जानने योग्य वस्तु है । वा जिसकरि परब्रह्म आदेश (उपदेश) करियेहै सो आदेश है । तिस आदेशकूं बी आचार्यके प्रति तूं पूंछताभयाहैं [क्या]? ॥ २ ॥

टीकाः-इस आदेशकूं विशेषण देतेहैंः- जिस श्रवणकिये आदेश (उपदेश) करि अन्य नहीं सुन्या जो है सोबी सुन्या होवैहै । अमत (अतर्कित) जो है सो मत

विज्ञातं विज्ञातमिति ॥ कथं नु भगवः स आदेशो भवतीति? ॥ ३ ॥

अमत मत [होवैहै]। अविज्ञात विज्ञात [होवैहै] ऐसैं ॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—हे भगवन्! सो आदेश कैसैं होवैहै । ऐसैं [पूंछताभया] ॥ ३ ॥

(तर्कित) होवैहै । अविज्ञात (अनिश्चित) जो है सो विज्ञात (निश्चित) होवैहै ऐसैं ॥ [८]सर्व वेदनकूं पढिकेबी औ सर्व अन्यवेद्यकूं जानिके बी अकृतार्थहीं होवैहै । यावत् आत्मतत्वकूं नहीं जानताहै । यह आख्यायिकातैं जानियेहै ॥ ॥ तिस इस अद्भुतकूं सुनिके कहताभया[९] कहिये कैसैं यह अन्यके विज्ञानकरि अन्य वस्तु

---

८ सर्व वेदकूं अध्ययन करिके औ जान्याहै तिसका अर्थ जिसनैं ऐसे पुत्रके प्रति आत्मविद्याकूं अधिकारकरिके क्यूं पिता पूंछते हैं । ता पुत्रकूं सर्व वेदके अध्ययनआदिक करिहीं कृतार्थ होनेतैं? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

९ "तिसी इस अद्भुतकूं सुनिके कहता भया" ऐसैं उक्त

यथा सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्व्वं

अर्थः-उद्दालक उवाचः-हे सोम्य! जैसैं एक मृत्तिकाके पिंड [विज्ञात]करि सर्व मृ-

---

विज्ञात होवैहै। ऐसैं इसकूं अप्रसिद्ध मानता हुया पूंछताहै॥ श्वेतकेतुरुवाचः-हे भगवन्! किस प्रकारसैं सो आदेश होवैहै? ऐसैं॥ ३॥

टीकाः-उद्दालक उवाच-हे सोम्य! जिस प्रकारसैं सो आदेश होवैहै सो श्रवण करः- जैसें लोकविषे एक रुचक अरु कुंभआदिकके कारणभूत मृत्पिंड विज्ञातकरि सर्व अन्य ताके विकारका समूह मृन्मय(मृत्तिकाके वि-

---

अर्थकूं विवरण करैहैं॥ इहां मृत्तिकामय। इस पदकी व्याख्या मृत्तिकाके विकारोंका समूह। यह है॥ सो (विकारोंका समूह) जैसैं विज्ञात मृत्तिकाके पिंडकरि विज्ञात होवैहै। तैसैं अन्यबी सर्व विज्ञात कारणकरि ताके विकारका समूह विज्ञात होवैहै। ऐसैं योजना है॥

मृन्मयं विज्ञातꣳ स्याद्वाचारम्भणं वि-
कारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम् ४

त्तिकामय विज्ञात होवै। वाणीका आरंभण (आश्रय) मात्र विकार नामहींहै। मृत्तिका ऐसैंहीं सत्य है॥ ४॥

कारका समूह) विज्ञात होवैहै॥ ॥ नंनु[10] मृत्पिंडरूप कारणके विज्ञात हुये अन्यकार्य कैसैं विज्ञात होवैगा? यह[11] दोष नहींहैः—काहेतैं कार्यकूं कारणसैं अनन्य होनेतैं। जो[12] मानताहैं किः—अन्यके विज्ञातहुये अन्य नहीं जानियेहै ऐसैं। सो इस प्रकारसैं सत्य होवै जब कारणतैं अन्य कार्य होवै। परंतु ऐसैं कारणतैं अन्य

---

१० ननु अन्यके विज्ञानतैं अन्यका विज्ञान नहीं देख्या होनेतैं अयुक्त है? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै॥

११ कार्य अरु कारणकी अन्यताकी असिद्धितैं ऐसैं मतिकहो। इस रीतिसैं सिद्धांती परिहार करैहैं॥

१२ ताहींकूं स्पष्ट करैहैं॥

यथा सोम्यैकेन लोहमणिना सर्व्वं

अर्थः—हे सोम्य! जैसें एक लोहमणि

कार्य नहीं है ॥ ॥ [13]ननु तब लोकविषै यह कारण है यह इसका विकारहै ऐसा यह (भेद दर्शन) कैसेंहै ? तहां श्रवण कर ? वाचारंभण कहिये वाणीका आरंभण। अर्थ यह जोः— वाणीका आलंबन (विषय)॥ कौंन यहकिः— विकार है। सो नामधेय है कहिये। [14]नाँमहीं नामधेय है [इहां स्वार्थविषै धेय प्रत्यय है]। वाणीका आलंबन मात्र जो वस्तु है सो केवल नामहीं है । विकार नाम वस्तु परमार्थतैं नहींहै। परंतु [15]मृत्तिकाहीं सत्य वस्तु है ॥४॥

टीकाः—हे सोम्य ! जैसें एक लोहमणि

१३ कार्य अरु कारणकी भिन्नताके अभावविषै लोकप्रसिद्धिके विरोधकूं पूर्ववादी शंका करैहै ॥ इधर "वाणीसैं आरंभण" इस वाक्यविषै "वाणीसैं" यह तृतीया विभक्ति "वाणीका" ऐसें षष्ठीके अर्थविषै देखनेकूं योग्य है ॥

१४ नामधेय । इस पदके अर्थकूं कथन करैहैं ॥

१५ विकारकी मिथ्यारूपताके हुये परमार्थतैं क्या है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

लोहमयं विज्ञातꣳ स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं लोहमित्येव सत्यम्॥५॥
यथा सोम्यैकेन नखनिकृन्तनेन स-

(विज्ञात सुवर्णपिंड) करि सर्व लोहमय (सुवर्णमय) विज्ञात होवैहै। वाणीका आरंभण मात्र विकार नामहीं है। लोह (सुवर्ण) ऐसैंहीं सत्यहै ॥ ५ ॥

अर्थः–हे सोम्य! जैसैं एक नखनिकृन्त

(सुवर्णपिंड) करि सर्व अन्य विकारका समूह कटक (कडे) मुकुट अरु केयूर (बाजुबंध) आदिक लोहमय (सुवर्णके विकारका समूह) विज्ञात होवैहै। वाचारंभण (वाणीका विषय)। इत्यादि समान है ॥ ५ ॥

टीकाः–हे सोम्य! जैसैं एक नखनिकृंतन (नख छेदनके शस्त्र) करि। अर्थ यह जोः–तिसकरि उपलक्षित कार्ष्णायसपिंड (लोहपिंड)करि सर्व कार्ष्णायस (लोहके विका-

ऽवँ कार्ष्णायसं विज्ञातꣳ स्याद्वाचार-
म्भणं विकारो नामधेयं कृष्णायसमि-
त्येव सत्यमेवꣳ सोम्य! स आदेशो भ-
वतीति ॥ ६ ॥

न (विज्ञात नखछेदनके साधनविशेष)करि
सर्व लोहमय विज्ञात होवैहै । वाणीका आ-
लंबनमात्र विकार नामहींहै । लोह ऐसैंहीं
सत्यहै । हे सोम्य! ऐसैं सो आदेश होवैहै ।
ऐसैं [पिता कहते भये] ॥ ६ ॥

रका समूह) विज्ञात होवैहै ॥ अन्य समान है ॥
[१६]ईहां अनेक दृष्टांतनका ग्रहण जो है सो दार्ष्टां-
तिकके अनेक भेदोंकरि अनुगमन (सादृश्यके
करनेरूप अनुकरण) अर्थ है औ दृढप्रतीतिके
अर्थ है ॥ हे सोम्य! जो मैंनैं कहा सो आ-

---

१६ एकहीं दृष्टांतसैं कहनेकूं इच्छित अर्थकी सिद्धिके हुये अनेक दृष्टांतनके ग्रहणसैं क्या है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

न वै नूनं भगवन्तस्त एतदवेदिषुर्य-
द्ध्येतदवेदिष्यन् कथं मे नावक्ष्यन्निति

अर्थः—भगवान् (पूजावान्) वे (मेरे
गुरु) इसकूं निश्चयकरि नहीं जानतेहैं ।
जबहीं इसकूं जानतेहोवैं [तब] मेरेअर्थ

देश इस प्रकारसैं होवैहै ॥ [६] ॥ ऐसैं
पिताके कहते हुये इतर (श्वेतकेतु) कहैहै ॥
श्वेतकेतुरुवाचः—भगवान्[17] (पूजावान् गुरु)
मेरे जे हैं वे जो तुह्मनैं कहा वस्तु याकूं नि-
श्चयकरि नहीं जानते हैं ॥ जो[18] इस वस्तुकूं
जानते होवैं तो गुणवाले भक्त अनुगत मेरे
अर्थ कैसैं नहीं कहतभये । तिस हेतुकरि मैं
मानता हूं किः—वे नहीं जानतेहैं ऐसैं ॥ [अवा

---

१७ " नहीं निश्चय करि " इत्यादि वाक्यके प्रतीककूं
लेके व्याख्यान करैहैं ॥

१८ तिन गुरुनके अज्ञानविषै श्वेतकेतु हेतुकूं कहैहै ॥

भगवाꣲस्त्वेवमेतद्ब्रवीत्विति ॥ तथा सो-म्येति होवाच ॥ ७ ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषदि षष्ठप्रपाठकस्य प्रथमः खण्डः समाप्तः ॥ १ ॥

कैसैं नहीं कहतेभये । यातैं भगवान् (आप) हीं मेरेअर्थ सो कहहू ? ऐसैं [पुत्र कहताभया ॥ तब पिता] हे सोम्य! तथाऽस्तु ऐसैं कहतेभये ॥ ७ ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषदो मूलमात्रभाषादीपिकायां षष्ठप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः समाप्तः ॥१॥

---

[१९]थबी गुरुकी निंदाकूं फेर गुरुकुलके प्रति पिताकरि भेजनेके भयतैं कहताभया] यातैं भगवान् (पूजावान् आप) हीं तो मेरेअर्थ जिस ज्ञातकरि मेरेकूं सर्वज्ञता होवै तिस वस्तुकूं कहहू ॥ ॥

---

१९ ननु श्वेतकेतु गुरुनके अज्ञानकूं कहताहुया गुरुद्रोही प्रत्यवायी (पापी) होवैगा ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां गुरुनका अज्ञान अतः (यातैं) शब्दका अर्थ है ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषद्भाष्यभाषादीपिकायाः षष्ठप्रपाठकगतप्रथमखंडस्य टिप्पणम् ॥ १ ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य द्वितीयः खंडः ॥२॥

सदेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वि-

अथ श्री॰मूलभाषा॰षष्ठप्रपाठकस्य द्वितीयः खंडः॥२॥

अर्थः–हे सोम्य ! यह आगे एकहीं अ-

ऐसें उक्त हुया पिता हे सोम्य! तथाऽस्तु (सो कहताहूं) ऐसें कहते भये ॥ ६ ॥ ७ ॥

इति श्री॰भाष्यभाषा॰षष्ठप्रपा॰प्रथमः खंडः समाप्तः १

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰षष्ठप्रपा॰द्वितीयः खंडः ॥ २ ॥

सृष्टितैं पूर्वएकहीं अद्वैतसत्थातैं तेजआदि ३ भूतसृष्टि ४

टीकाः–सत्[20]हीं होताभया। इहां सत्[21] ऐसें अस्तितामात्र वस्तुरूप सूक्ष्म[22] निर्विशेष[23] सर्व[24]-

---

अथ श्री॰ षष्ठप्रपाठकगतद्वितीयखंडस्य टिप्पणम् २

२० जाके विज्ञानसैं सर्वका विज्ञान प्राप्त होवैहै प्रतिज्ञाकिये ताके विज्ञानकूं प्रकट करनेकूं प्रथम सर्वकी सत्मात्रताकूं प्रतिज्ञा करैहैं ॥

२१ सत्शब्दकी सामान्य (नैयायिक अभिमत सत्ताजाति)रूप विषयवान्ताकूं निषेधकरैहैं ॥

२२ ता सत्के प्रथिवीआदिकनतैं विशेष (भेद)कूं दिखावैहैं

२३ आकाशआदिकनतैं विशेषकूं कहैहैं ॥

२४ अंतके विशेषणकी व्यावृत्तिअर्थ तिनतैं विशेषकूं कहैहैं॥

तीयं ॥ तद्धैक आहुरसदेवेदमग्र आसी-
देकमेवाद्वितीयं तस्मादसतः सज्जायेत १

द्वितीय सत्हीं होताभया ॥ तहांहीं एक क-
हतेहैं किः—यह आगे एकहीं अद्वितीय अ-
सत्हीं होताभया । तातैं असत्तैं सत् उप-
जताभया ॥ १ ॥

गत ऐंक[25] निरंजन[26] निरवयव[27] विज्ञान जो[28] सर्व वे-
दान्तनतैं जानियेहै [सो ग्रहण करियेहै] औ
एव (हीं) शब्द अवधारण (निश्चय)रूप अ-
र्थवाला है ॥ ॥ क्या सो निश्चय करियेहै? यह
कहैहैंः—यह नामरूप अरु क्रियावाला विकृत
(विकारी) जो जगत् प्रतीत होवैहै । सो सत्
हीं होताभया । ऐसैं "होताभया" इस शब्दके

---

२५ ताकी तटस्थताकूं निषेध करैहैं ॥

२६ प्रत्यक् आत्मासैं अभिन्न तिस सत्के संसारीपनैकूं निवारण करैहैं ॥

२७ निष्क्रिय होनेकरि ताके कूटस्थ (निर्विकार)पनैकूं कहैहैं ॥

२८ यथोक्त वस्तुविषै प्रमाणकूं कहैहैं ॥

साथि संबंध होवैहै ॥ ॥ कब सत्‌हीं यह होताभया ? यह कहियेहैः–आगे कहिये जगत्‌की उत्पत्तितैं पूर्व ॥ ॥ [२९]क्या अबी यह सत् नहीं है । जिसकरि आगे होताभया । ऐसैं विशेषणयुक्त करियेहै ? [३०]यह कथन बनै नहीं ॥ ॥ [३१]तब विशेषण कैसैंहै ? [३२]अबीबी यह सत्‌हीं है । [३३]किंतु

---

२९ विशेषणके अनुसारकरि पूर्ववादी शंकाकरैहै ॥

३० वर्तमानदशाविषै जगत्‌का असत्व नहीं है ऐसैं सिद्धांती कहैहैं ॥

३१ सदा सद्भावके समान हुये विशेषण नहीं निर्वाहकरैहै ? ऐसैं पूर्ववादी शंकाकरैहै ॥

३२ क्या विशेषणके सामर्थ्यतैं अबी जगत्‌का असद्भाव प्रश्नका विशेषण करिये है । किंवा विशेषणकी अर्थवान्‌ता तेरेकारि पूंछिये है ? तिनमैं प्रथम पक्षकूं सिद्धांती दूषण देते हैं ॥ इहां यह अर्थ हैः–प्रत्यक्षके विरोधतैं वर्तमान अवस्थाविषै जगत्‌के असद्भावकी सिद्धि नहीं है ॥

३३ द्वितीय पक्षकेप्रति सिद्धांती कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः–औ जो यह वर्तमान नामरूप विशेषणवाला जगत् देखियेहै सो इदं शब्दके औ इदं बुद्धिके विषयभावकरि स्थित होवैहै ॥ ऐसैं करिके इदं इदं (यह यह) अबी ऐसैं बी व्यवहार करियेहै । सोई तो आगे उत्पत्तितैं पूर्व सत्‌शब्द अरु ताकी बुद्धि ऐसैं इतने मात्रकरि गम्यहीं है । परंतु इदं शब्दका अरु इदं बुद्धिका विषय नहीं होवैहै । यातैं " आगे

नामरूपमय विशेषणवाला औ इदं (यह) इस शब्द अरु ज्ञानका विषय है । ऐसैं करिके यह औ (अबी ऐसैं बी) होवैहै ॥ जगत्की उत्पत्तितैं आगे तो केवल सत्शब्द अरु ज्ञानमात्र करि गम्यहीं है । यातैं सत्हीं यह आगे होताभया । ऐसैं अवधारण करियेहै ॥ [३४] जौतैं उत्पत्तितैं पूर्व नामवाला वा रूपवाला यह वस्तु सुषुप्तिकालकी न्यांईं ग्रहणकरणेकूं शक्य नहींहै ॥ [३५] जैसैं सुषुप्तितैं ऊठ्या पुरुष सुषुप्तिविषै केवल स-

---

यह सत्हीं होताभया " ऐसैं निश्चय करिये है ॥ तातैं इदं शब्द अरु बुद्धिकी व्यावृत्तिकी अपेक्षावाला विशेषण पूर्वकाल संबंधी जगत्विषै अविरुद्ध है ॥

३४ अब अवर्तमान अवस्थाविषै बी जगत्के सद्भावविषै तहां इदं शब्द अरु बुद्धि क्यूं प्रवृत्त नहीं होवैहै ? यातैं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—जैसैं सुषुप्तिकालविषै सत् (विद्यमान) बी वस्तु इदं शब्द अरु बुद्धिका गोचर नहीं होवैहै । तैसैं उत्पत्तितैं पूर्व सत्रूप हुया बी जगत् नामवान् होनेकरि अरु रूपवान् होनेकरि "यह" ऐसैं व्यवहार करनेकूं शक्य नहीं है । काहेतैं करणोंके उपसंहारकूं उभयत्र (सुषुप्ति अरु प्रलयविषै) तुल्य होनेतैं ॥

३५ ननु सुषुप्तिविषै बी वस्तुका सद्भाव नहीं है प्रमाणके अभावतैं ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ

तूमात्रहीं वस्तु था। ऐसैं सत्तामात्रकूं जानताहै (स्मरण करताहै)। तैसैं उत्पत्तितैं पूर्व [सत्तामात्र था यह जानियेहै] यह अभिप्राय है ॥

३६
जैसैं लोकविषै यह कहियेहै:—पूर्वाह्णविषै घटादिककूं स्रजनेकी इच्छावाले कुलालकरि प्रसारित मृत्तिकाके पिंडकूं देखिके ग्रामांतरके प्रति जायके अपराह्णविषै पीछे आया पुरुष तहांहीं घट शरावआदिक अनेकभेदकरि भिन्न कार्यकूं देखिके "केवल मृत्तिकाहीं यह घट शरावआदिक पूर्वाह्णविषै होताभया" ऐसैं कहताहै ॥ तैसैं " सतूहीं आगे होताभया " ऐसैं कहिये-

---

है:—तहां (सुषुप्तिविषै) वस्तुका असद्भाव नहीं है। काहेतैं उत्थितपुरुषके परामर्श (स्मरण)तैं औ अनुभूत अरु अनुभविताके अभाव हुये ता (स्मरण)के अयोगतैं औ तहां विभक्त (पृथक्‌किया) वस्तु नहीं देखिये है सुषुप्तिके अभावके प्रसंगतैं। यातैं तहां केवल सन्मात्र वस्तु है। इस रीतिसैं जैसैं सुषुप्तिविषै सत्‌वस्तुका निश्चय होवैहै। तैसैं उत्पत्तितैं पूर्व बी सर्व सत्‌मात्र कहाहीं है ॥

३६ उक्त अर्थकूंहीं प्रसिद्ध अन्य उदाहरणकरि प्रतिपादन करैहैं ॥

सृष्टितैं पूर्व एकहीं अद्वैतसत्था तातैं तेजआदि३भूतसृष्टि ४

है ॥ औ [37]एँकहीं था ऐसैं । [38]स्वकार्यविषै प्राप्त अन्य नहींथा । यातैं एकहींथा ऐसैं कहियेहै ॥ औ [39]अद्वितीय था कहिये जैसैं मृत्तिकातैं व्यतिरेककरि मृत्तिकाके अन्य घटादि आकारसैं परिणामका कर्त्ता कुलालआदिक निमित्त कारण देख्या है । तैसैं सत्तैं व्यतिरेककरि सत्का सहकारी कारक द्वितीय अन्य वस्तु प्राप्त है सो "अद्वितीय" ऐसैं निषेध करियेहै। याका द्वितीय अन्य वस्तु विद्यमान नहीं है यातैं अद्वितीय है ॥ ॥ [40]नँनु वैशेषिकनके पक्षविषैबी सर्वका सत्के साथि सामानाधिकरण्य प्रतीत

---

३७ क्या यह सत्है? इस अपेक्षाके हुये ताके लक्षणकूं कहैहैं ॥

३८ लक्षणवाक्यके अवतारकूं प्राप्तहुये प्रथम एक अरु एव इन दोविशेषणोंके अर्थकूं कहैहैं ॥ इहां एक अरु एव शब्दका सजातीय अरु स्वगत भेदसैं हीन । यह अर्थ है ॥

३९ अब अद्वितीय इस अन्यविशेषणकूं लेके व्याख्यान करैहैं ॥ इहां अद्वितीय शब्दका विजातीय भेदसैं शून्य । यह अर्थ है ॥

४० जो कहाकिः—सत्के साथि सामानाधिकरण्यतैं सत्हीं सर्व है ऐसैं ॥ तहां आरंभवादी जो वैशेषिक सो शंका करैहै ॥

होवैहै। काहेतैं द्रव्य अरु गुणआदिकनविषै सत् शब्द अरु ज्ञानकी अनुवृत्तितैं सत् (है) द्रव्य। सत् गुण। सत् कर्म। इत्यादि देखनेतैं ?[41] सत्य अबी ऐसैं होवैहै। [42]परन्तु उत्पत्तितैं पूर्व यह कार्य नहीं था। सत्हीं था ऐसैं अंगीकार करियेहै। वैशेषिकनकरि उत्पत्तितैं पूर्व कार्यके असद्भावके अंगीकारतैं औ [43]उत्पत्तितैं पूर्व एकहीं सत् अद्वितीयकूं [जातैं वे] नहीं इच्छतेहैं। [44]तातैं वैशेषिकोंकरि कल्पित सत्तैं अन्य कारणवाला यह सत् [45]मृत्तिकाआदिक दृष्टांतनतैं कहियेहै॥ ॥

---

४१ क्या कार्यका सत्के साथि सामानाधिकरण्य वर्तमान-दशाविषै परपक्षविषै बी (वैशेषिक मतविषै बी) संभवैहै। ऐसैं तेरेकरि कहियेहै। किंवाः—पूर्व अवस्थाविषै बी संभवैहै। ऐसैं कहिये है? इस रीतिसैं सिद्धांती विकल्प करिके प्रथम पक्षकूं अंगीकार करैहैं॥

४२ द्वितीयपक्षकूं सिद्धांती दूषण देतेहैं॥

४३ औ लक्षणवाक्य परपक्षविषै (वैशेषिक मतमैं) दुःखसैं जोडनेकूं अशक्य है। ऐसैं कहैहैं॥

४४ दोनूं वाक्यनके विचारकरि परपक्षके असंभवकूं उपसंहार करैहैं॥

४५ दृष्टांत अरु दार्ष्टांतकूं एकरूप होनेतैं औ दृष्टांतनकूं कार्य अरु कारणके अभेदविषै स्थित होनेतैं कार्य कारणके

[46]तहांहीं इस उत्पत्तितैं पूर्व वस्तुके निरूपणविषै केईक वैनाशिक (बौद्ध) वस्तुकूं निरूपण करतेहुये कहतेहैं:—यह जगत् आगे उत्पत्तितैं पूर्व असत् कहिये [47]सत्‌का अभावमात्र एकहीं अद्वितीय होताभया। ऐसैं बौद्ध उत्पत्तितैं पूर्व [48]सत्‌के अभावमात्रकूं तत्व कल्पतेहैं। परन्तु सत्‌के प्रतिपक्षीअन्यवस्तुकूं इच्छते नहीं॥ [49]जैसैं

भेदके बोधक आरंभवादरूप वैशेषिकके पक्षकी असिद्धि है। ऐसैं कहैहैं॥

४६ वैशेषिकपक्षके असंभव हुये बी वैनाशिक (बौद्ध)नका पक्ष होवैगा? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै॥

४७ असत् शब्दकी तुच्छ (शून्य)तैं भिन्न विषयवान्‌ताकूं पूर्ववादी निवारण करैहै॥

४८ सत्‌तैं अन्य असत्‌है। ऐसैं स्थित हुये असत्‌वादी (शून्यवादी)नैं बी असत्‌का प्रतियोगीभूत (निरूपक) सत् आस्थाका विषयकिया? यह सिद्धांतीकी आशंका मनमैं ल्यायके पूर्ववादी कहैहै॥

४९ ताहीकूं वैधर्म्यरूप दृष्टांतकरि पूर्ववादी स्पष्टकरैहै॥ इहां यह अर्थ है:—सत् यह यथाभूत है औ असत् यह तिसतैं विपरीत गृह्यमाण है। सत् औ असत् ऐसैं द्विविधतत्व होवैहै॥ इसरीतिसैं जैसैं नैयायिक सत् अरु असत्‌रूप दोनूं तत्वनकूं कहतेहैं। काहेतैं भाव अरु अभाव ऐसैं तिनोंकरि

सत् ऐसैं यथाभूत औ असत् ऐसैं तिसतैं वि-परीत गृह्यमाण इस भेदतैं सत् औ असत् ऐसा द्विविध तत्व होवैहै॥ ऐसैं नैयायिक कहतेहैं॥ ॥ ५०नंनु उत्पत्तितैं पूर्व सत्का अभावमात्र जब वै-नाशिकोंकरि अभिप्रेत होवै। तब उत्पत्तितैं पूर्व यह असत् होताभया औ एकहीं अद्वितीय ऐसैं कालका संबंध संख्याका संबंध अरु अद्वि-तीयपना तिन्होंकरि कैसैं कहियेहै? ५१बौढ (सत्य) है:—भावके अभावमात्रकूं अंगीकार करनेवाले तिन बौद्धनके पक्षविषै [असत्का कालसैं सं-

---

वी अंगीकारतैं॥ तैसैं बौद्धनकरि द्विविध तत्व इष्ट (मान्य) नहीं है। काहेतैं सत्का अत्यंताभाव असत् है ऐसैं अंगीका-रतैं अप्रतीत प्रतियोगीवाले अभावकूं अत्यंताभावरूप होने-करि शशविषाण (शशेकाशृंग) नहीं है इत्यादि व्यवहारविषै प्रसिद्धहोनेतैं॥

५० तिस इस वैनाशिक (शून्यवादी माध्यमिक)के प-क्षके प्रति सिद्धांती शिष्यके मुखसैं दूषण देतेहैं॥

५१ शिष्यकरि उक्तअर्थकूं सिद्धांती अंगीकार करैहैं॥ इहां यह अर्थ है:—भावका जो अभाव तिसमात्र असत् है। ऐसैं अंगीकार करनेवाले तिन शून्यवादीनके पक्षविषै असत्का कालसैं संबंध आदिक युक्त नहीं है। हे शिष्य! यह तैनैं यु-क्तहीं कहा॥

बंध आदिक] युक्त नहीं है ॥ तिनके पक्षविषै [52]असत्तामात्रका अंगीकार बी अयुक्तहींहै । काहेतैं अंगीकारकरनेवालेके अनंगीकारके (असद्भावके) असंभवतैं ॥ ॥ [53]ननु अबी अंगीकारका कर्त्ता अंगीकारकरियेहै उत्पत्तितैं पूर्व नहीं ऐसैं जो कहै । [54]सो बनैं नहीः–काहेतैं उत्पत्तितैं पूर्व सत्के अभावके प्रमाणके अभावतैं [55]उत्प-

---

५२ किंवाः–ता शून्यवादीके मतविषै जिस किस बी वस्तुका असत्व इष्ट है वा सर्वका ? ऐसैं विकल्पकरिके सिद्धांती प्रथमपक्षकूं दूषण देतेहैं ॥

५३ क्या अंगीकारका कर्ता जब कदाचित् अंगीकार करनेकूं योग्य है किंवा उत्पत्तितैं पूर्व अवस्थाविषै बी ? ऐसैं विकल्पकरिके प्रथमपक्षकूं अंगीकारकरिके द्वितीयपक्षकूं दूषण देताहुया पूर्ववादी आशंका करैहै ॥

५४ सो क्या तब (तिसकालविषै) असद्भावतैं नहीं अंगीकारकरिये है किंवा ताके अंगीकारके कर्ताके अभावतैं ? तिनमैं प्रथमपक्ष बनै नहीं । ऐसैं सिद्धांती कहैहैं ॥

५५ द्वितीयपक्ष बनै नहींः–काहेतैं उत्पत्तितैं पूर्व जगत् असत्था । जातैं इसका अंगीकारका कर्ता अबी अंगीकारकरियेहै । तैसैं उत्पत्तितैं पूर्व अवस्थाविषै अंगीकारका कर्त्ता सत्था । जातैं याकेबी अंगीकारके कर्ताके अबी अंगीकारके संभवतैं–उत्पत्तितैं पूर्व ता अंगीकारके कर्ता (ज्ञाता)के स-

त्तितैं पूर्व असत्हीं था। इस कल्पनाका असंभवहै ॥ ॥ [५६]ननु वस्तुकी आकृतिकूं शब्दार्थरूपताके हुये असत् एकहीं अद्वितीय था। इसरीतिसैं पदार्थता औ वाक्यार्थताका संभव कैसैं होवैगा औ तिनके असंभवके हुये यह वाक्य अप्रमाण होवैगा? ऐसैं जो कहै। [५७]यँह दोष नहींहै:—काहेतैं वाक्यकूं सत्के ग्रहणकी नि-

---

ऋावविषै प्रमाणका अभाव नहीं है॥ विवादका विषय जो काल सो ज्ञाताकी सत्तावाला है कालहोनेतैं प्रसिद्ध कालकी न्यांई। इस अनुमानतैं (द्वितीयपक्ष बनै नहीं) ऐसैं कहैहैं॥

५६ परपक्षकूं दूषणदेके वाक्यके तात्पर्यकूं दिखावनेकूं शंकाकरैहै॥ इहां यह अर्थहै अन्यके निषेधकूं शब्दार्थताके हुये वा निषेधकरने योग्य वस्तुकूं शब्दार्थताके हुये श्रुतिगत असत् इस शब्दके अर्थकी सिद्धि कैसैं होवैगी औ मीमांसककी प्रक्रियाकरि आकृतिकूं शब्दार्थताके हुये एक अरु अद्वितीय इन दो पदनकूं आकृतिवाचकताके अयोगतैं असत् शब्दके अर्थका असंभव होवैगा औ ताके अभाव हुये पदार्थनके संसर्गादिस्वरूप वाक्यार्थका असंभव होवैगा औ वाक्यार्थके असंभव हुये निर्विषय यह वाक्य अप्रमाण होवैगा॥

५७ सत्के अभिनिवेश (आग्रह) की निवृत्ति अर्थ यह वाक्य है। परन्तु शून्यकूंहीं साक्षात् कथनकरता नहीं। तातैं वाक्यकी अप्रमाणता नहीं है। ऐसैं सिद्धांती परिहार करैहैं॥

वृत्तिपर होनेतैं । सत् ऐसा यह शब्द सत्रूप आकृतिका वाचक है औ एकहीं । अद्वितीय । ये दो शब्द सत्शब्दकेसाथि समानाधिकरण (एक अर्थवाले) हैं । औ तैसैं[५९] इदं (यह) अरु आसीत् (होताभया) । ये दो शब्द हैं ॥ तंहां[६०] नञ् जो है सो सत् वाक्यविषै प्रयोग किया हुया सत् वाक्यकूंहीं आलंबन करिके सत् वाक्यके अर्थकूं विषयकरनेवाली "सत् एकहीं अद्वितीय यह होताभया" इस लक्षणवाली बुद्धिकूं तिस सत् वाक्यके अर्थतैं निवर्त करैहै ॥ जैसैं अश्वारूढ पुरुष अश्वरूप आलंबनवाला हुया

५८ तथापि असत् आदिक शब्दनकी शक्तिके अग्रहणके हुये वाक्यार्थका संभव कैसैं होवैगा? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

५९ एक अद्वितीय इनदो शब्दनकी न्यांई इदं आसीत् (यह होताभया) ये दो शब्द सत् शब्दके साथि समानाधिकरण (एक अर्थवाले) हीं हैं ऐसैं कहैहैं ॥

६० ननु "सत्हीं" इत्यादिरूप वाक्यकी उक्त प्रकारकरि अर्थवान्ताके हुये बी "असत्हीं" इत्यादि वाक्य अर्थवान् कैसैं होवैगा? इहां इव (न्यांई) शब्द जो है सो यद्वत् (जैसैं) इस अर्थविषै है । काहेतैं तद्वत् (ताकी न्यांई) ऐसैं पृथक् प्रयोगतैं । यह अर्थ है ॥

अश्वकूं ताके अभिमुख विषयतैं निवर्त्त करैहै। ताकी न्यांईं ॥ [61]परन्तु फेर सो वाक्य सत्के अभावकूंहीं कथन करता नहीं। [62]यातैं पुरुषकी विपरीतग्रहणतैं निवृत्तिरूप अर्थपर " यह असत्हीं होताभया" इत्यादिरूप वाक्य उच्चारण करियेहै॥ जातैं विपरीतग्रहणकूं [63+64]दिखायके तिसतैं निवृत्त करनेकूं शक्य होवैहै। इस अर्थवाला होनेतैं अ-

---

६१ ननु वाक्यकूं सत्के अभिनिवेशकी निवृत्तिपरता क्यूं है। सत्के अभावपरताहीं क्यूं नहीं होवैगी ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:-अत्यंताभावरूप सत्के अभावकूं तुच्छ होनेतैं शब्दकी शक्तिवृत्तिकी गोचरताके असंभवतैं [प्रकृत श्रुतिवाक्यकूं सत्के अभावकी परता नहीं है]॥

६२ अन्यपरताके असंभव हुये सत्के अभिनिवेशकी निवृत्तिकी परता वाक्यकूं सिद्ध भई। ऐसैं उपसंहार करैहैं॥

६३ पूर्वकालविषै पुरुषकूं सत्के अभिनिवेशकी निवृत्ति इस वाक्यविषै जब विवक्षित होवै तब नञ् पदहीं प्रयोगकरनेकूं योग्य था "यह आगे असत्हीं होताभया" ऐसैं क्यूं प्रयोग किया ? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

६४ अथवा "सत्हीं" इत्यादिरूप वाक्यकरि श्रुति वा उद्दालकमुनि स्वपक्षकूं कहिके। स्थूणानिखनन (खंभके खोडनैं)रूप न्यायकरि ताके दृढीकरणअर्थ होनेकरि "असत्हीं" इत्यादि वाक्यकरि यह विपरीत पक्षका अनुवाद है। ऐसैं अन्यतात्पर्यकूं कहैहैं॥

कुतस्तु खलु सोम्यैवꣳ स्यादिति

अर्थः–हे सोम्य! किस (प्रमाण)तैं तो निश्चयकरि ऐसैं होवै । ऐसैं कहतेभये ॥

सदादि वाक्यका श्रौतपना औ प्रमाणपना सिद्ध है । यातैं अदोष है । तातैं[६५] सर्वकेअभावरूप असत्तैं सत् (विद्यमान वस्तु) उपजताभया [इहां श्रुतिपदविषै क्रियापदमैं अकारका[६६] अभाव छांदस है] ॥ १ ॥

टीकाः–तिसँ[६७] इस विपरीतग्रहणरूप महावैनाशिक(अतिनास्तिक)नके पक्षकूं दिखायके प्रतिषेध करैहैंः–हे सोम्य ! किस प्रमाणतैं

---

६५ प्रथमपक्षविषै "तस्मात् (तातैं)" इत्यादिवाक्यके अर्थके अभावतैं द्वितीयपक्ष ग्रहणकिया । तहां कारणका असत्व कहा । अब कार्यका बी सो (असत्व) दिखावैहैं ॥

६६ "अजायत" ऐसैं कहनेकूं योग्य हुये श्रुतिनैं "जायत" यह कैसैं प्रयोग किया ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

६७ " कहांतैं तो निश्चयकरि " इत्यादिरूप द्वितीय वाक्यके विचारके किये हुये बी द्वितीयपक्ष ग्राह्य है । इस अभिप्राय करिके कहैहैं ॥

होवाच। कथमसतः सज्जायेतेति सत्त्वेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम् २

असत्तैं सत् उपजै। यह कैसैं [कहिये] है॥ हे सोम्य! यह आगे एकहीं अद्वितीय सत्हीं था (होताभया)॥ २॥

तो निश्चित ऐसैं होवैगा। कहिये "असत्तैं सत् जन्मताहै" इस प्रकारसैं काहेतैं होवैगा। अर्थ यह जोः—किसी बी प्रमाणतैं ऐसैं नहीं संभवै है॥ [६८]यद्यपि बीजके नाश हुये ताके अभावतैं हीं जायमान अंकुर देख्या है ऐसैं है। [६९]तैंथापि तिनका अंगीकार अविरुद्ध है॥ [७०]कैसैं किः [७१]जे प्रथम बीजके संस्थानकरि विशिष्ट बीजके

---

६८ विवादका विषय जो जगत् सो अभावपूर्वक है कार्य होनेतैं अंकुरकी न्यांई? ऐसैं प्रमाणकूं पूर्ववादी शंकाकरैहै॥

६९ अब सिद्धांती [कार्यकी] अप्रसिद्ध [अभावपूर्वकतारूप] विशेषणवानताकूं मानिके परिहार करैहैं॥

७० ननु बीजके नाशकरि अंकुरकी उत्पत्तिकूं इष्टहोनेतैं अप्रसिद्ध विशेषणता कैसे हैं? इसरीतिसैं पूर्ववादी शंकाकरैहै॥

७१ क्या अंकुरकी उत्पत्तिके हुये बीजके अवयव नाशकूं

अवयव हैं वे अंकुरविषै बी वर्त्ततेहीं हैं। अंकुरके जन्मके हुये तिनका नाश नहीं होवैहै ॥ [७२] जो फेर बीजआकारसैं संस्थान है "सो बीजके अवयवनतैं व्यतिरेककरि वस्तुभूत है" ऐसैं वैनाशिकोंकरि नहीं अंगीकार करियेहै जो अंकुरके जन्मके हुये नाशकूं पावै ॥ "औ सो बीजके अवयवनतैं व्यतिरिक्त वस्तुभूत है [ऐसैं कहै तो] तैसैं हुये अंगीकारका विरोध होवैगा ॥ [७३] औ संवृत्तिकरि अंगीकारकिया बीजनके संस्थान (स्थिति)का रूप (आकार) नाशकूं पावैगा? ऐसैं जो कहै। तो [७४] यह संवृत्ति नाम कौंन है। क्या यह अभावरूप है। अथवा भावरूप है?

पावतेहैं किंवा बीजके आकारसैं संस्थान नाशकूं पावताहै? ऐसैं विकल्पकरिके प्रथमपक्षके प्रति सिद्धांती जबाब देतेहैं ॥

७२ द्वितीयपक्षकूं दूषण देतेहैं ॥

७३ सो (बीजाकारसैं संस्थान) क्या परमार्थरूप वस्तु है किंवा संवृत्ति (लौकिक वुद्धि) करि सिद्ध है? तिनमैं प्रथम पक्ष बनै नहीं:–काहेतैं अंगीकारके विरोधतैं। ऐसैं उक्त द्वितीयपक्षकूं पूर्ववादी उठावताहै ॥

७४ संवृत्तिके प्रति सिद्धांती विकल्प करैहैं ॥

ऐसैं ॥ जँब अभावरूप है तब तामैं दृष्टांतका अभाव है। औ[76] भावरूप है तथापि अभावतैं अंकुरकी उत्पत्ति नहीं होवैगी। जातैं बीजके अवयनतैं अंकुरकी उत्पत्ति होवैहै ॥ ॥ नँनु[77] अवयव बी नाशकूं पावते हैं? ऐसैं जो कहै। सो बँनै[78] नहीं:—काहेतैं ताकूं ताके अवयनविषै बी तुल्य होनेतैं ॥ [79]जैसैं वैनाशिकोंके पक्षविषै बीजका संस्थानरूप अवयवी नहीं है तैसैं अवयव

---

७५ प्रथमपक्षविषै भावकी अभावतैं उत्पत्तिविषै दृष्टांतका अभाव होवैगा औ संवृत्तिकूं अवस्तुरूप होनेकरि बीजके सद्भावकी असाधक होनेतैं। ऐसैं कहैहैं ॥

७६ द्वितीयपक्षकूं अनुवादकरिके दूषण देतेहैं ॥ इहां यह अर्थ है:—तत्व जिसकरि संवरण (आच्छादन) करिये है ऐसी जो लौकिकी बुद्धि सो संवृत्ति है। सो जब भावरूप तेरेकूं इष्ट है तब तिसकरि बीजके अवयवनकी अंकुराकारसैं परिणामकी सिद्धितैं तेरेकरि उक्त दृष्टांतकी असिद्धि होवैगी ॥

७७ लौकिक बुद्धि(संवृत्ति)कूं अनाश्रयकरिके परमतकूंहीं ग्रहणकरिके पूर्ववादी शंका करैहै ॥

७८ अवयवीके नहोते नाशके अयोगकी न्यांई अवयवनविषै बी ता (नाश)के अयोगकूं तुल्य होनेतैं। यह तेरा प्रश्न बनता नहीं। ऐसैं सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं ॥

७९ ताहींकूं स्पष्टकरैहैं ॥

सृष्टितैं पूर्वएकहीं अद्वैतसत्थातातैं तेजआदि३भूतसृष्टि ४

बी [नहीं हैं] । यातैं तिनके बी नाशका असंभव है ॥ बीजके अवयवनके बी सूक्ष्म अवयव हैं तिनके (सूक्ष्म) अवयवनके बी अन्य सूक्ष्मतर अवयव हैं । इसरीतिसैं प्रसंगकी अनिवृत्तितैं सर्वत्र नाशका असंभवहै औ [२]सत्बुद्धिकी अनुवृत्तितैं सत्ताकी अनिवृत्ति है । यातैं सद्वादीनके पक्षविषै सत्तैं हीं सत्की उत्पत्ति होवेगी ॥ [३]परन्तु

---

८० ननु हमारे पक्षविषै परम अवयवी नहीं है । अवयव तो हैं हीं? ऐसैं जो कहै । तहां कहैहैं ॥

८१ तब तिनोंका अंकुरके जन्मके हुये नाश होवैगा? ऐसैं जो कहै । तहां कहैहैं ॥ इहां यह भाव है:—अंकुरके जन्मके हुये अवयवनकी परंपराकी विश्रांतिकी भूमि नहीं प्राप्त होवैहै । ता (भूमि)की शून्यरूपताके होते ताके नाशके हुये सत्कारणवादकी प्राप्तितैं औ ताकी अशून्यरूपताके हुये बी कार्यरूपताके हुये कादाचित्क (अनित्य) द्रव्यकूं सावयव होनेकरि उक्तदोषकी तुल्यतातैं औ अशून्यरूपताकेहींहोते अकार्यरूपताके हुये जब भाव है तब ताके नाशकी असिद्धि होवैगी औ जब अभावरूप है तब ताके नाशके हुये सत्कारणवादकी प्राप्तिहीं होवैगी ॥

८२ असद्वादकी अप्रामाणिकताकूं कहिके । अब सद्वादकी प्रामाणिकताकूं कहैहैं ॥

८३ परमतविषै उक्तदृष्टांतके अभावकूं अनुवादकरिके औ स्वमतविषै ताके सद्भावकूं मिलावते हैं ॥

असत्वादीनके पक्षविषै असत्तैं सत्की उत्पत्ति-का दृष्टांत नहींहै औ सद्वादीनके पक्षविषै मृत्तिकाकेपिंडतैं घटकी उत्पत्ति देखियेहै। ता (मृत्तिका) के भावके हुये [घटके] भावतैं अरु ता (मृत्तिका) के अभावके हुये [घटके] अभावतैं ॥ [८४]जैंब अ-भावतैंहीं घट उत्पन्न होवै तब घटके अर्थी पुरु-षकरि मृत्तिकाकापिंड नहीं ग्रहण करियेगा औ [८५]घटादिकविषै अभावशब्द अरु ताके ज्ञानकी अनुवृत्ति प्राप्त होवैगी। परन्तु यह नहींहै। यातैं असत्तैं सत्की उत्पत्ति बनैनहीं ॥ य[८६]द्यपि कह-तेहैं किः—मृत्तिकाकी बुद्धि घटकी बुद्धिका निमि-त्तहै। यातैं मृत्तिकाकीबुद्धि घटबुद्धिका कारण

८४ ननु घटकी बी अभावतैंहीं उत्पतिकूं इष्ट होनेतैं दृ-ष्टांतका असंभव होवैगा? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

८५ किंवाः—जो तिसका उपादान देख्याहै ताके शब्द अरु प्रत्यय तहां वर्त्ततेहैं जैसैं। तैसैं अभाव जब घटादिकका उपादान होवै तब तिसके शब्द अरु ज्ञान तिसविषै अनुवृत्त होवैं औ अनुवर्त्तमान होते नहीं। तातैं असत् (अभाव)तैं सत् (भाव)की उत्पत्ति अयुक्त है। ऐसैं कहैहैं ॥

८६ भावरूप सत्स्वरूप मृत्तिकाके पिंडकूं घटादिककी कारणता अन्वय अरु व्यतिरेककरि कही। तहां अन्वय अरु व्यतिरेककी अन्यथासिद्धिकूं पूर्ववादी उद्भव करैहै ॥

कहियेहै। परन्तु परमार्थतैंहीं मृत्तिका वा घट नहींहै ऐसैं ? तथापि विद्यमान जो मृत्तिकाकी बुद्धि सो विद्यमानहीं घटबुद्धिका कारण है। जातैं असत्तैं सत्की उत्पत्ति नहीं है॥ ॥ ननु मृत्तिका अरु घटकी बुद्धिनकूं निमित्त अरु नैमित्तिकरूप दोनेकरि अनंतरता मात्र है परन्तु तिनका परस्पर कारण कार्यभाव नहीं है? ऐसैं जो कहै। सो बनै नहीं:—काहेतैं बुद्धिनकी निरंतरताके निश्चयके हुये वैनाशिकोंके पक्षविषै बाहिरके दृष्टांतके अभावतैं। यांतैं "हे सोम्य! किसतैं

८७ तिस पक्षविषै बी मेरे पक्षकी हानि नहीं है। ऐसैं सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं॥

८८ जो कहा किः—सत्रूप बुद्धिकूं सत्रूप बुद्धिकेप्रति कारणता है। ऐसैं॥ सो असिद्ध है? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै॥ इहां यह अर्थ हैः—जातैं सत्ताकी सिद्धिके हुये पूर्वभावीपना जो है सो कारणपना है औ कार्यपना जो है सो उत्तरभाविपना युक्त है औ बुद्धिनकूं असत् होनेतैं अनंतरता मात्रकरि तिनका निमित्त अरु नैमित्तिकपना व्यवहारकरियेहै॥

८९ असत्रूपबी बुद्धिनका (ज्ञानोका) अनंतरताकरि निमित्त अरु नैमित्तिकपना है। यह निश्चय करनेकूं शक्य नहीं है। दृष्टांतके अभावतैं। ऐसैं सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं॥

९० "किसतैं तो निश्चयकरि" इत्यादिवाक्य व्याख्यान किया ताकूं उपसंहारकरैहैं॥

तो ऐसें होवै । इस प्रकारसें पिता कहतेभये । कैसें (किसप्रकारसैं) असत्तैं सत् उपजैगा ऐसैं" अभिप्राय यह है किः—[91]असत्तैं सत्की उत्पत्तिविषै कोईबी दृष्टांतरूप प्रकार नहींहै ॥ इसरीतिसैं असद्वादीके पक्षकूं उन्मथन करिके "हे सोम्य! सत्रूपहीं यह आगे होताभया" ऐसें स्वपक्षकी सिद्धिकूं उपसंहार करैहैं ॥ ॥ [92]ननु तुज सिद्धांतीरूप सद्वादीके पक्षविषैबी सत्तैं सत् उत्पन्न होवैहै ऐसैं कहियेहै तामैं दृष्टांत नहीं है । काहेतैं घटतैं अन्य घटकी उत्पत्तिके अदर्शनतैं? [93]सत्य ऐसैं सत्तैं

९१ ननु पूर्व तुमनैं असत्तैं सत्की उत्पत्तिविषै दृष्टांतका अभाव कहा । अबी अन्य उपसंहारकिया ? इस शंकाकूं निवारणकरैहैं ॥ इहां स्वपक्षकी सिद्धिकूं उपसंहारकरैहैं ॥ ऐसैं संबंध है ॥

९२ सिद्धांतविषै बी दृष्टांतकी असिद्धि तुल्य है ? ऐसैं पूर्ववादी शंकाकरैहै ॥ इहां यह अर्थ हैः—यद्यपि मृत्तिकातैं घटकी उत्पत्ति देखिये है । तथापि मृत्तिकातैं अन्यमृत्तिका घटतैं अन्यघट उत्पद्यमान नहीं देखिये है । तातैं सत्तैं अन्य सत्की उत्पत्ति नहीं [संभवै] है ॥

९३ क्या अन्यसत्की सत्तैं उत्पत्तिहीं निवारण करिये है

अन्य सत् नहीं उपजताहै । किंतु[94] सत्हीं अन्य आकारसैं स्थितहोवैहै । जैसैं[95] सर्प कुंडलकी न्यांई होवैहै औ[96] जैसैं मृत्तिका चूर्ण पिंड घट अरु कपाल आदिक प्रभेदनकरि स्थित होवैहै ॥ ॥ जँब[97] ऐसैं सत् (ब्रह्म)हीं सर्व प्रकारकी अवस्थावाला है तब उत्पत्तितैं पूर्व यह होता-भया । यह कैसैं कहियेहै ? [तहां सिद्धांती क-हैहैं:–] नँनु[98] हे पूर्ववादी । तैनैं "सत्हीं" ऐसा

किंवा:–सत्की कारणता निराकरण करिये है ? तिनमैं प्रथम पक्षकूं सिद्धांती अंगीकारकरैहैं ॥

९४ द्वितीयपक्षकूं सिद्धांती निराकरण करैहैं ॥

९५ तहांबी दृष्टांतके अभावकूं आशंकाकरिके कहैहैं ॥

९६ कुंडलीभावविषै कार्यताकी प्रसिद्धि नहीं है ? यह आशंकाकरिके अन्य उदाहरणकूं कहैहैं ॥ इहां प्रभेदनकरि स्थित होवैहै । ऐसैं संबंध है ॥

९७ सत्केहीं सर्वप्रकारसैं अवस्थान हुये पूर्वकालसंबंधी जो कार्यके सद्भावका वचन है सो अयुक्त होवैगा । काहेतैं ताके सर्वदा सद्भावके अविशेषतैं ? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

९८ जातैं पूर्व अवस्थावाला कारण अरु सत्मात्रपना कार्यका निश्चय करिये है । तैसैं हुये सत्रूप कारणकाहीं तिस तिस आकारकरि अवस्थान है । ऐसैं अंगीकार हुये बी

इदं शब्दके वाच्य कार्यका अवधारण (निश्चय) नहीं सुन्याहै [क्या]॥ ॥[तहां पूर्ववादी कहैहै:—] तब[९९] इदं शब्दकावाच्य जो अबी यह जन्म्याहै सो उत्पत्तितैं पूर्व असत्हीं होताभया ऐसैं प्राप्तभया? सो[१००] बनै नहीं:—काहेतैं सत्केहीं इदं शब्द अरु बुद्धिका विषय होनेकरि अवस्थानतैं॥ जैसैं मृत्तिकाहीं पिंड अरु घटआदिक शब्द अरु बुद्धिकी विषय होनेकरि स्थित होवैहै। ताकी न्यांई॥ ॥ ननु[१०१] जैसैं मृत्तिका रूप

कार्यका पूर्वकालसंबंधी सद्भावका अवधारण (निश्चय) अविरुद्ध है। ऐसैं सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं॥

९९ ननु कार्यका जब कारणमात्रपना निश्चित है तब कारणहीं होताभया कार्य नहीं। सो कार्य पूर्व असत् हुयाहीं अबी उपज्याहै। यातैं असत्कार्यवादीका मतहीं आया? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै॥

१०० कारणकेहीं कार्यरूपसैं अवस्थानतैं असत्कार्यवादकी प्राप्ति नहीं है। ऐसैं दृष्टांतकरि सिद्धांती परिहारकरैहैं॥

१०१ विवादकाविषय जो कार्य सो उपादानतैं भेदकूं पावता है। तिसतैं विलक्षण बुद्धिका विषय होनेतैं। जैसैं अश्वकी बुद्धितैं विलक्षण बुद्धिका विषय महिष (भैंसा) ता (अश्व)तैं भेदकूं पावता है॥ तैसैं हुये सत्की हीं इदं बुद्धिकी विषय अनिर्वाच्य अवस्थाके अंगीकारकरि असत्का-

वस्तु है। ऐसैं पिंड अरु घट आदिक बी है। ताकीन्यांई कार्यकूं सत्की बुद्धितैं अन्यबुद्धिका विषय होनेतैं सत्तैं अन्य कार्यका समूह अन्यवस्तुरूप होवैगा। जैसैं अश्वतैं गौ है? [१०२] सो बनै नहीं:—काहेतैं पिंड[१०३] अरु घटआदिकनके परस्पर व्यभिचारके हुयेबी मृत्तिकाभावके अव्यभिचारतैं ॥ [१०४] यद्यपि घट पिंडके प्रति व्यभिचारकूं पावताहै औ पिंड घटके प्रति ॥ तथाऽपि पिंड अरु घट ये दोनूं मृत्तिकाभावके प्रति

यंवादकी प्राप्तिका समाधान कैसैं होवैगा? ऐसैं पूर्ववादी शंकाकरैहै ॥

१०२ विलक्षणबुद्धिकी विषयताकूं भेदमात्रकी साधकताके हुये पिष्टके पेषणकी न्यांई सिद्ध साधनरूप दोष होवैगा औ वास्तविक भेदकी साधकताके हुये दृष्टांतकी असिद्धि होवैगी। इस अभिप्रायकरिके सिद्धांती कहैहैं ॥

१०३ किंवा:—कार्यके व्यभिचारीपनैंकरि रज्जु सर्प आदिककी न्यांई मिथ्यापनैके अनुमानतैं अनिर्वाच्य (मिथ्या) संस्थानतैं हीं सत्कूं कार्यबुद्धिकी विषयता अंगीकार करनेकूं योग्यहै। ऐसैं कहैहैं ॥

१०४ ताहींकूं स्पष्टकरैहैं ॥ इहां मृत्तिकापनैसैं विना पिंड अरु घटके स्वरूपके अभावतैं । यह तत् (तातैं) शब्दका अर्थ है औ अव्यभिचारविषै मृत्तिकापना इत्यादि दृष्टांत है ॥

व्यभिचारकूं पावते नहीं । तातैं पिंड अरु घट मृत्तिकामात्रहैं ॥ अश्वके प्रति गौ वा गौके प्रति अश्व तो व्यभिचारकूं पावताहै ॥ [१०५] तातैं मृत्तिकाआदिक कारणका आकारमात्र घटादिक कार्यहै । [१०६] ऐसैं सत् (ब्रह्म)का आकारमात्र यह सर्वहै । यातैं सो उत्पत्तितैं पूर्व सतूहीं था । यह युक्त है । काहेतैं [१०७] विकार (कार्य)के आकारमात्रकूं वाणीका आरंभण (आलंबन) मात्र होनेतैं ॥ ॥ [१०८] ननु "निरवयव सत् निष्कल निष्क्रिय शांत निरवद्य (निर्दोष) निरंजनहै । दिव्य अमूर्त्त पुरुष बाहिरभीतरसहित अजन्मा है" इत्यादि श्रुतिनतैं निरवयव जो सत् (ब्रह्म) ताका विकाररूप आकार कैसैं संभवै ? [१०९] यहैं दोष

---

१०५ अव्यभिचारके फलकूं कहैहैं ॥

१०६ दृष्टांतगत अर्थकूं दार्ष्टांतविषै समर्थन करैहैं ॥

१०७ ननु पृथक्हीं प्रसिद्धकार्यका सत्मात्रपना कैसैं है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

१०८ कार्यके मिथ्यापनैकूं स्पष्टकरनेकूं पूर्ववादी प्रश्न करैहै ॥

१०९ जैसैं अज्ञात रज्जुआदिकके अवयवनतैं सर्पादिकका संस्थान अनिर्वाच्य इष्ट है । तैसैं श्रुतिजनित जगत्के कारण-

तदैक्षत बहु स्यां प्रजायेयेति। तत्ते-

अर्थः—सो (सत्) ईक्षणकूं करताभ-या:—"बहु होवों। उत्पन्न होवों" ऐसैं॥ सो

नहीं हैः—काहेतैं रज्जुआदिकके अवयवनतैं सर्पआदिक आकारनकी न्यांईं बुद्धिकल्पित सत्के अवयवनतैं विकाररूप आकारके संभवतैं औ "[110]वांणीका आरंभणमात्र विकार नामहीं है मृत्तिका ऐसैंहीं सत्य है। ऐसैं [सत्हीं सत्यहै]" इस श्रुतितैं [111]इदं बुद्धिके कालविषै बी परमार्थतैं एकहीं अद्वितीय है ॥ २ ॥

टीकाः—[112]सो सत् ईक्षा जो दर्शन (ज्ञान-

ताकी बुद्धिके असंभवकरि मायोपाधिक सत्के कल्पित अवयवनतैं विकार जो कार्य ताका संस्थान (आकार) सो संभवैहै। तातैं यह द्वैतप्रपंच ब्रह्मका विवर्त्त संभवैहै। ऐसैं सिद्धांती शंकाकूं परिहारकरैहैं ॥

११० ब्रह्मका विवर्त्त (कल्पितकार्य) जगत् है। इस अर्थविषै श्रुतिकूं अनुकूल करैहैं ॥

१११ प्रपंचके मिथ्यापनैके हुये फलितकूं उपसंहार करैहैं॥

११२ अद्वितीयपनैके प्रतिपादनअर्थ उत्तर (तृतीय) वाक्यकूं उठायके व्याख्यान करैहैं ॥

जोऽसृजत॥तत्तेज ऐक्षत—बहु स्यां प्रजायेयेति। तदपोऽसृजत। तस्माद्यत्र क्व च

तेजकूं स्रजताभया ॥ ॥ सो तेज ईक्षणकूं करताभया:—"बहु होवों। उत्पन्न होवों" ऐसें ॥ सो (तेज) जलोंकूं स्रजताभया ॥

रूप संकल्प) ताकूं करताभया ॥ [११३] यातें सांख्य परिकल्पित प्रधान जगत्का कारण नहींहै। काहेतें प्रधानके अचेतन (जड) भावके अंगीकारतैं। यह सत् (ब्रह्म) सो चेतनहै। काहेतें ईक्षिता (ईक्षणकाकर्ता) होनेतें ॥ ॥ सो सत् किसप्रकारसैं ईक्षाकूं करताभया ? यह कहैहैः—

---

११३ सत्शब्दका अवाच्य जगत्का कारण प्रधान है। ऐसैं केईक (सांख्यवादी) कहतेहैं। सो बी इसकरि निरस्त होनेतें। यह अर्थ है औ अचेतनताके अंगीकारतैं ता (प्रधान) कूं ईक्षापूर्वक स्रष्टापना नहीं है। यह शेष है औ परिणाम अरु विवर्त्त इन दो वादनकूं आश्रयकरिके इधर दो उदाहरण हैं ॥

सृष्टितैं पूर्व एकहीं अद्वैतसत्था तातैं तेजआदि३भूतसृष्टि ४

शोचति स्वेदते वा पुरुषस्तेजस एव तदध्यापो जायन्ते ॥ ३ ॥

तातैं जहां औ कहां पुरुष शोककूं करताहै वा प्रस्वेदकूं पावताहै। तेजतैंहीं तब जल उपजतेहैं ॥ ३ ॥

"बहुत होऊं। प्रकर्षकरि उत्पन्न होऊं" ॥ जैसैं मृत्तिका घटादि आकारसैं वा जैसैं रज्जुआदिक बुद्धिकल्पित सर्पआदिक आकारसैं होवैहै। ताकीन्यांई ॥ ॥ ननु[114] तब जो ग्रहण करियेहै सो सर्व सर्पआदिक आकारसैं रज्जुकी न्यांईं असत्हीं होवैगा ? सो[115] बनै नहीं:—काहेतैं सत् (ब्रह्म)कूं हीं द्वैत (भेद)करि अन्यथा (अ-

---

११४ " बहु होवों " इत्यादि श्रुतिके तात्पर्यकूं कहनेकूं निरसन कियेहीं प्रश्नकूं पूर्ववादी उद्भव करैहै ॥

११५ "बहु होवों। उत्पन्न होवों" इस वाक्यकरि ईक्षिता (ईक्षणकेकर्त्ता)कीहीं कार्यआकारसैं प्राप्तिके कथनकरि यह वैशेषिक आदिकका मत निरस्तकिया। ऐसैं श्रुतिके तात्पर्यकूं दिखावते हुये सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं ॥

न्य आकारसैं) गृह्यमाण (प्रतीत) होनेतैं किसीकाबी कहीं बी असद्भाव नहीं है। ऐसैं हम (सद्वादी) कहतेहैं कहिये [116] जैसैं सत्तैं अन्यकूं अन्य वस्तुरूप कल्पना करिके फेर ताहीके उत्पत्तितैं पूर्व औ प्रध्वंस (नाश)तैं पीछे असद्भावकूं तार्किक कहतेहैं। तैसैं हमोंकरि कदाचित् बी कहीं बी सत्तैं अन्य अभिधान (नाम) वा अभिधेय (नामी) रूप वस्तु नहीं कल्पनाकरियेहै। परन्तु सत्हीं सो सर्व है जो जो अन्य बुद्धिकरि अभिधान (कथन) है औ अभिधान (कथन) करियेहै॥ [117] जैसैं रज्जुहीं सर्पबुद्धिकरि "सर्प" ऐसैं कहियेहै। वा जैसैं पिंडघटादि जो है सो

---

११६ ताहीकूं प्रपंचन करैहैं॥

११७ प्रतिज्ञाकिये अर्थकूं दो मतके अनुसारकरि दो दृष्टांतनसैं स्पष्टकरैहैं॥ इहां यह अर्थ है:—अज्ञानरूप कारणके अन्वय अरु व्यतिरेककरि रज्जुसर्पादिककी अज्ञानमयता है औ द्वैतके अभिनिवेशके सत्मात्रतैं अविवेकके होतेहीं उत्पत्तितैं अरु विचारकरि तातैं विवेकके होते अनुत्पत्तितैं द्वैतबी अज्ञानमयहीं है। ताका तत्व तो सत्मात्र अधिष्ठान वाणी अरु मनसैं अतीत है॥

मृत्तिकातैं अन्यबुद्धिकरि पिंडघटादिशब्दकरि कहियेहै ॥ जैसैं लोकविषै रज्जुके विवेककरि देखनेवाले पुरुषनकूं तो सर्पके अभिधान अरु बुद्धि (नाम अरु ज्ञान) निवर्त्त होवैहैं औ जैसैं मृत्तिकाके विवेककरि देखनेवाले पुरुषनकूं घटादिकके शब्द अरु बुद्धि निवर्त्त होवैहैं । ताकीन्यांई सत्के विवेककरि देखनेवाले तत्वदर्शिनकूं सत्तैं अन्य विकारके शब्द अरु बुद्धि निवर्त्त होवैहैं । काहेतैं "जिसतैं[118] मनकरि सहित वाणीयां अप्राप्त होयके (अविषयकरिके) निवर्त्त होवैहैं" ऐसैं औ "अनिरुक्त अरु अनिलयनविषै" इत्यादिश्रुतिनतैं ॥ ॥ ऐसैं ईक्षणकूं करिके सो सत् तेजकूं स्रजताभया ॥ ॥ ननु[119] "तिसीहीं इस आत्मातैं आकाश उपज्या " इस अन्य (तैत्तिरीयक)श्रुतिविषै आकाशतैं वायु तिसतैं तृतीय तेज सुन्या है ॥ इहां प्रथम होनेकरि तिस

---

११८ ता (द्वैत)की वाणी अरु मनसैं अतीततताविषै प्रमाणकूं कहैहैं ॥ इहां " सो विदित (ज्ञात)तैं अन्यहीं है" इत्यादि वाक्य आदिपदका अर्थ है ॥

११९ तैत्तिरीयश्रुतिके विरोधकूं पूर्ववादी शंकाकरैहै ॥

(सत्)तैंहीं तेज उपजताहै औ ताहीं (सत्) तैं आकाश उपजताहै। यह [120]विरुद्ध कैसैं सिद्ध होवैहै? [121]यहै दोष बनै नहीं:—काहेतैं आकाश अरु वायुके सर्ग (जन्म)तैं अनंतर सो सत् तेजकूं स्रजताभया। इस कल्पनाके संभवतैं ॥ [122]अथवा इहां सृष्टिका क्रम कहनेकूं वांछित नहीं है [किंतु जातैं] सत्का कार्य यह सर्व है यातैं सत् एकहीं अद्वितीयहै। यह विवक्षित (कहनेकूं वांछित)है। [123]मृत्तिकाआदिकके दृष्टांततैं ॥

---

१२० तथापि विरोधकी बुद्धि किस प्रकारसैं है? यह आशंकाकरिके पूर्ववादी कहैहै ॥ इहां यह अर्थ है:—इस श्रुतिविषै सत्तैंहीं प्रथमताकरि तेज उपज्या कहिये है। अन्य श्रुतिविषै तो तिसीहीं सत्तैं आकाश प्रथमताकरि स्रज्या है। ऐसैं उपदेशकिया है। तैसैं हुये यह परस्पर विरुद्ध कथन कैसैं सिद्ध होवैहै ॥

१२१ तैत्तिरीयश्रुतिके अनुसारकरि छांदोग्य श्रुतिके व्याख्यानके संभवतैं विरोध नहीं है। ऐसैं सिद्धांती परिहार करैहैं ॥

१२२ सृष्टिके क्रमके विवक्षितपनेकूं अंगीकारकरिके यह समाधान कहा। अब सोई नहीं है। परन्तु सत्का अद्वितीयपना विवक्षित है। यातैं अन्यपक्षकूं आश्रयकारिके कहैहैं ॥

१२३ तहां गमक (प्रमाण)कूं दिखावैहैं ॥ इहां यह अर्थ

सृष्टितैं पूर्व एकहीं अद्वैतसत्‌था तातैं तेजआदि३भूतसृष्टि ४

१२४ अथवा [तेजआदिक तीन भूतनके मध्य एक एककूं दोप्रकारसैं विभागकरिके आप आपके अर्ध अर्ध भागके दो दो विभागकरिके अपनेतैं इतर तीनि भूतनके द्वितीयभागकेसाथि तिन दो

हैः—मृत्तिकाआदिकका कार्य घटादिक तिसतैं भिन्नताकरि नहीं है। मृत्तिकाआदिकहीं तो सत्यहै। ऐसैं दृष्टांतके ग्रहणतैं सत्‌रूप ब्रह्मका तेज जल अरु अन्नआदिक कार्य तिसतैं भिन्नताकरि नहीं है। सत्‌मात्रहीं तो सत्यहै। ऐसैं दार्ष्टांतविषै बी विवक्षित भासता है ॥

१२४ "सो तेजकूं स्रजता भया" इत्यादि श्रुतिके अन्य तात्पर्यकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—"तिन (तेज आदिक तीन देवता)के मध्य एक एककूं त्रिवृत् त्रिवृत् (त्रिगुणित त्रिगुणित जैसैं होवै तैसैं) करौं" इत्यादि वाक्यविषै त्रिवृत्करणकूं इष्ट होनेतैं तीनहीं भूतनकी इहां सृष्टि कहिये है औ ऐसैं हुये पंचीकरण अविवक्षित है। यह कहनेकूं योग्य नहीं है। काहेतैं तीन भूतनकी सृष्टिकी श्रुतिविषै अन्य (तैत्तिरीय) श्रुतिकरि सिद्ध आकाश आदिककी सृष्टिके उपलक्षणकी न्यांई त्रिवृत्करणकी श्रुतिकरि पंचीकरणके उपलक्षणतैं ॥ तैसैं हुये अन्य श्रुतिकरि सिद्ध आकाश अरु वायुके तेजआदिक तीनिभूतनविषै अंतर्भावकूं अभिप्रायका विषय करिके लघु उपायकरि सर्वकी सत्‌मात्रता माननेकूं योग्यहै। ऐसैं माननेवाली श्रुति त्रिवृत्करणकूंहीं कहती हुयी ताके अनुसारकरि तीनिभूतनकीहीं सृष्टिकूं कहैहै ॥

दो भागनके मिलावनेका नाम त्रिवृत्करणहै। ता] त्रिवृत्करणकूं विवक्षित होनेतैं तेज जल अरु अन्न (पृथिवी) इन तीनकीहीं सृष्टिकूं कहैहै॥ ॥ दग्धा (दाहक) पक्ता (पाचक) प्रकाशक औ रोहित (रक्तवर्ण) तेज है ऐसैं लोकविषै प्रसिद्ध है॥ सो सत्करि स्त्रज्या तेज ईक्षणकूं करताभया। अर्थ यह जोः—तेज[125]रूपसैं सम्यक् स्थित हुया "बहु होवों। उत्पन्न होवों" ऐसैं पूर्वकीन्यांई ईक्षणकरताभया। सो तेज जलोंकूं स्त्रजताभया। वे जल द्रवरूप स्निग्धरूप चलनशील औ शुक्ल ऐसैं लोकविषै प्रसिद्ध हैं॥ [126]जातैं तेजके कार्यभूत जल हैं तातैं जहां कहां देशविषै वा कालविषै पुरुष शोककूं करताहै (संतप्तहोताहै) वा स्वेदयुक्त होताहै। तेजतैंहीं तब जल उपजतेहैं॥ ३॥

---

१२५ अचेतन तेजकूं ईक्षितापना कैसैं है? यह आशंकाकरिके वाक्यार्थकूं कहैहैं॥

१२६ जलोंकी तेजकी कार्यताविषै लोकनके अनुभवकूं अनुकूल करैहैं॥

ता आप ऐक्षन्त—बह्वयः स्याम प्रजा-

अर्थः—वे जल ईक्षणकूं करतेभयेः—"बहु

टीकाः—वे जल ईक्षणकूं करतेभये। अर्थ यह जोः—पूर्वकीन्यांईहीं जलाकारसैं सम्यक् स्थितहुया अवलोकन (संकल्प) करताभयाः— "हम बहुत होवैं। उत्पन्न होवैं" ऐसैं॥ वे जल पृथिवीरूप अन्नकूं स्रजतेभये। जातैं[127] पार्थिव (पृथिवीका परिणाम) अन्न है औ जातैं[128] जलका कार्य अन्न[129] है। तातैं जहां कहां देशविषै जल वर्षताहै तहांहीं बहुत अन्न होवैहै। यातैं जलोंतैंहीं सो अन्नआदिक उपजताहै ॥

---

१२७ पृथिवीविषै अन्न शब्दके प्रयोगमैं हेतुकूं कहैहैं ॥

१२८ जलोंका कार्य अन्न है। इस अर्थविषै बी लोकप्रसिद्धिकूं दिखावैहैं ॥

१२९ "वे (जल) अन्नकूं स्रजते भये" यावाक्यविषै जलोंतैं अन्नकी सृष्टि उपदेशकरी। दृष्टांतविषै बी तिन जलोंतैं ता अन्नकी सृष्टि उपदेश करिये है। तैसैं हुये पुनरुक्ति दोष होवैहै? यह आशंकाकरिके अर्थके भेदकूं दिखावैहैं ॥

येमहीति। ता अन्नमसृजन्त। तस्माद्यत्र
क च वर्षति तदेव भूयिष्ठमन्नं भवत्य-

होवैं। उत्पन्न होवैं" ऐसैं॥ वे (जल) अन्न
(पृथिवी)कूं स्रजतेभये॥ तातें जहां औ कहां
वर्षताहै तहांहीं बहुत अन्न होवैहै[यातैं] ज-

"वे जल अन्नकूं स्रजतेभये" ऐसैं पूर्व पृ-
थिवी कही। इहां दृष्टांतविषै तो अन्न औ तिस-
आदिक। इस विशेषणतें व्रीहि अरु यवआदिक
कहियेहै औ अन्न जो है सो गुरु (भारी) स्थिर
अरु धारणस्वरूप औ रूपतें कृष्ण प्रसिद्ध है॥ ॥
१३० ननु तेजआदिकनविषै ईक्षण नहीं जानियेहै।

---

१३० "सो तेज ईक्षणकूं करताभया" इत्यादि वाक्य-
विषै यथाश्रुत अर्थकूं ग्रहणकरिके पूर्ववादी शंका करैहै॥ इहां
यह अर्थ है:-प्राणीनविषै हिंसाके निषेधकीन्यांई अरु अनु-
ग्रहके विधानकीन्यांई तेज आदिकनविषै तिनके अभावतैं
औ तिन (प्राणीन)विषै ईक्षणतैं कार्यकी दृष्टिकीन्यांई इन
(तेज आदिकन)विषै ता (ईक्षणतैं कार्य)की दृष्टिके अभा-
वतैं इन (तेज आदिकन)विषै ईक्षण प्रामाणिक नहीं है॥
तैसैं हुये प्रकृत श्रुतिवाक्य प्रमत्तका गीत होवैगा॥

ऽद्भ्य एव तदध्यन्नाद्यं जायते ॥ ४ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य द्वितीयः खण्डः ॥ २ ॥

ळोंतैंहीं सोअन्नआदिक उपजताहै ॥ ४ ॥

इति श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपा०द्वितीयः खंडः॥२॥

काहेतैं तिनविषै हिंसाआदिकके प्रतिषेधके अभावतैं औ त्रास (भय)आदिक कार्यकी अप्रतीतितैं। तैसैं हुये " सो तेज ईक्षण करताभया " इत्यादि कैसैं कहियेहै? [१३१] यँह दोष बनै नहीं:—काहेतैं तेजआदिकनकूं ईक्षितारूप कारणके परिणाम होनेतैं औ सत्‌रूपहीं ईक्षिताकूं नियमित क्रमकरि युक्त कार्यका उत्पादक होनेतैं तेजआदिकभूत ईक्षणकरतेहुयेकीन्यांई ईक्षणकरताभया ऐसैं कहियेहै॥ ॥ [१३२] ननु सत् (ब्रह्म) काबी ईक्षितापना उपचरित (कथनमात्र) हीं

---

१३१ तिन तेज आदिकनके गौण (अमुख्य) ईक्षितापनेकूं अंगीकारकरिके सिद्धांती परिहार करैहैं ॥

१३२ सत्‌काबी ईक्षण गौण होवैगा। काहेतैं उपचारकी बहुलताविषै पाठतैं? ऐसैं पूर्ववादी शंकाकरैहै ॥

है? [133] सो बनै नहीं:—काहेतें सत्के ईक्षणकूं केवल शब्दकरि गम्यहोनेतें सो उपचरित (गौण)कल्पनाकरनेकूं शक्य नहींहै। तेज[134] आदिकनके मुख्य ईक्षणका अभाव तो अनुमानसैं जानियेहै। यातें सो उपचरित (अमुख्य) कल्पनाकरनेकूं युक्त है॥ ॥ ननु[135] सत्कूंबी मृत्तिकाकीन्यांई कारण होनेतें ताका अचेतनपना अनुमानसैं जाननेकूं शक्य है। [136] यातें अचेतन सत्रूप प्रधानकूंहीं चेतनरूप अर्थवाला होनेतें औ नियमित

१३३ सन्निधितें शब्दकी बलवान्ताकूं अंगीकारकरिके सिद्धांती परिहार करैहैं॥

१३४ तेज आदिकनविषै बी ईक्षणकी शब्दकरि गम्यता तुल्यहै? ऐसैं जो कहै। सो बनै नहीं। ऐसैं कहैहैं॥ इहां यह अर्थ है:—विवादका विषय जो तेजआदिक सो ईक्षिता (ईक्षणकाकर्ता) नहीं होवैहै। अचेतन होनेतैं। घटकी न्यांई। इस अनुमानतैं तेजआदिक जगत्विषै ईक्षणके असंभवतैं तहां जो सुन्या सो औपचारिक (आरोपित) उचित है॥

१३५ सांख्यवादी अनुमानके आश्रयकरि शंका करैहै॥

१३६ अचेतनका ईक्षण कैसैं बनै? यह आशंकाकरिके सांख्य कहैहै। इहां अनुमान करनेकूं। याका कल्पना करनेकूं यह अर्थ है॥

सृष्टितैं पूर्व एकहीं अद्वैतसत्था तातैं तेजआदि ३भूतसृष्टि ४

कालके क्रमकरि युक्त कार्यका उत्पादक होनेतैं ईक्षणकरतेहुयेकी न्यांईं ईक्षण करताभया ऐसैं उपचरितहीं ईक्षण अनुमान करनेकूं शक्य है [१३७] औ लोकमैं अचेतनविषै चेतनकी न्यांईं उपचार देख्या है। जैसैं कूल (नदीका तीर)पतन होनेकूं इच्छता है। ऐसैं उपचार होवैहै। ताकी न्यांईं सत्काबी उपचार होवैगा? [१३८] सो कथन बनै नहीं:—काहेतैं "सो सत्य है सो आत्मा है" ऐसैं तिसविषै आत्माके उपदेशतैं॥ ॥ [१३९] ननु आत्माका उपदेश बी उपचारमात्र है। ऐसैं जो कहै। कहिये [१४०] जैसैं "भद्रसेन मेरा आत्मा है" ऐसैं सर्व अर्थके करनेवाले अनात्माविषै आत्माका उपचार है। ताकीन्यांईं [आत्माका उपदेशबी उपचाररूप है। ऐसैं जो कहै]? [१४१] सो बनै नहीं काहेतैं "मैं सत् हूं"

१३७ अचेतनविषै चेतनकी न्यांईं उपचार कैसैं होवैहै? तहां सांख्य कहैहै॥

१३८ आत्मशब्दके आश्रयकरि सिद्धांती परिहार करैहैं॥

१३९ आत्माका उपदेशबी प्रधानविषै गौण होवैगा? ऐसैं सांख्यवादी शंका करैहै॥

१४० ताही शंकाकूं सांख्य। दृष्टांतद्वारा विवरण करैहै॥

१४१ याकूं परिहार करते हुये तिस (प्रधान)विषै आत्मा-

ऐसैं सत्‌विषै सत्यप्रतिज्ञावालेकूं "तिसकूं" तहां लगिहीं चिर (विदेह मोक्षहोनेविषै देरी) है ऐसैं मोक्षके उपदेशतैं ॥ ॥ [142]ननु सो (मोक्षका उपदेश)बी उपचाररूप है। ऐसैं जो कहैं कहिये [143]प्रधान अरु आत्माविषै प्रतिज्ञावालेकूं मोक्षका सामीप्य वर्त्तता है। यातैं मोक्षका उपदेश बी उपचाररूपहीं है। जैसैं लोकविषै ग्रामकेप्रति गमनकरनेकूं प्रस्थित (प्रस्थानकूं प्राप्त) भया पुरुष त्वराकी अपेक्षाकरि "मैं ग्रामकूं प्राप्तभया हूं" ऐसैं कहै। ताकीन्यांई ? [144]सो बनै नहीं:—काहेतैं जिस विज्ञातकरि अविज्ञात विज्ञात होवैहै। ऐसैं उपक्रमतैं [145]एकके विज्ञात हुये सर्व विज्ञात होवैहै

का उपदेश गौण (गौणीवृत्तिकरि साध्य) नहीं होवैहै। काहेतैं तिस (आत्मा)विषै निष्ठावालेकूं मोक्षके उपदेशतैं। ऐसैं सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं ॥

१४२ मोक्षका उपदेशबी उपचाररूप होवैगा ? ऐसैं सांख्य शंका करैहै ॥

१४३ शंकाकूंहीं सांख्य विवरण करैहै ॥

१४४ अब सिद्धांती एकके विज्ञानसैं सर्वके विज्ञानके उपदेशकूं आश्रयकरिके परिहार करैहैं ॥

१४५ उक्तकूंहीं सिद्धांती विवरण करैहैं ॥

सर्वकूं तिसतैं अनन्य (अभिन्न) होनेतैं अरु ताकूं अद्वितीयहोनेतैं औ [१४६] अन्य जाननेकूं योग्य अवशिष्ट श्रुतिकरि श्रावित वा लिंगतैं अनुमेय नहींहै जिसकरि मोक्षका उपदेश उपचाररूप होवै औ [१४७] सर्व प्रपाठकके अर्थकी उपचाररूपताकी कल्पनाके हुये [उपनिषद्का आरंभ] व्रथाश्रमरूप कल्पित होवैगा । काहेतैं तिस [१४८] पुरुषार्थके

---

१४६ सत्तैं अन्य ज्ञातव्यकूं अप्रामाणिक होनेतैंबी सत्के ज्ञानके हुये सर्वके ज्ञानका उपदेश युक्तिमान् है । ऐसैं कहैहैं ॥

१४७ अब जातैं प्रधानके ज्ञान हुये तिससैं अभिन्न ताके विकार (कार्य)का ज्ञान होवैहै औ ताकूं पुरुषार्थरूप होनेतैं ता (प्रधान)के ज्ञान हुये पुरुषनकाबी ज्ञान कथन करियेहै । तातैं एकके विज्ञानकरि सर्वके विज्ञानके उपदेशतैं मोक्षके उपदेशकी मुख्यताकी सिद्धि नहीं है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

१४८ ननु उपनिषद्का आरंभ वृथा है यह कैसैं कहिये है । पुरुषार्थके साधन ज्ञानरूप अर्थवाला होनेतैं ? यह आशंकाकरिके [सांख्यका अनुसारी] कहैहै ॥ इहां यह अर्थ हैः—तिस अनुमानवादी सांख्यके मतविषै मुक्तिके हेतु ज्ञानकूं "जड अरु अजडकी एकताका असंभव है" इत्यादि तर्ककरिहीं सिद्ध होनेतैं उपनिषद्का आरंभ वृथाहीं है ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य तृतीयः खंडः ॥३॥

तेषां खल्वेषां भूतानां त्रीण्येव बी-

अथ श्री॰मूलभाषा॰षष्ठप्रपाठकस्य तृतीयः खंडः॥३॥

अर्थः–तिन प्रसिद्ध इन भूतनके तीनि-

साधनरूप विज्ञानकूं तर्कसैंहीं सिद्धहोनेतैं ॥ [149] तातैं वेदकूं प्रमाणरूप होनेतैं श्रुत (श्रुतिउक्त) अर्थका परित्याग युक्त नहींहै । [150] यांतैं चेतनावाला जगत्का कारण है। यह सिद्धभया ॥४॥

इति श्री॰भाष्यभाषा॰षष्ठप्रपाठकस्य द्वितीयः खंडः २

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰षष्ठप्रपाठकस्य तृतीयः खंडः ३

ब्रह्मतैं ईक्षणकरि ३ भूतत्रिवृत्करणसैं नामरूपसृष्टि ४

टीकाः–[151] तिनें जीवकरि आविष्ट प्रसिद्ध

---

१४९ श्रुतिकी मुख्यार्थताविषै बाधकके अभावतैं ताके परित्यागके अयोगतैं "ईक्षति अधिकरण" न्यायकरि प्रधानवादकी असिद्धि है । ऐसैं परमतके निरसनकूं सिद्धांती उपसंहार करैहैं ॥

१५० प्रधानवादके असंभव हुये परिशेषतैं प्राप्त स्वमतकूं निगमन करैहैं ॥

इति श्री॰षष्ठप्रपाठकगतद्वितीयखंडस्य टिप्पणम् ॥ २ ॥

अथ श्री॰षष्ठप्रपाठकगततृतीयखंडस्य टिप्पणम् ३

१५१ अचेतन महाभूतनकी ब्रह्मकी कार्यता कही ॥ अब

जानि भवन्त्याण्डजं जीवजमुद्भिज्ज-
मिति ॥ १ ॥

हीं बीज होवैहैं । आंडज जीवज औ उद्भि-
ज्ज ऐसैं ॥ १ ॥

---

[१५२] इनैं पक्षीआदि भूतनके [इधर] "इनके" ऐसैं प्रत्यक्ष निर्देशतैं भूतशब्दकरि पक्षी आदिकनकाहीं ग्रहण है । तेजआदिकनका तो नहीं । काहेतैं

जीवके आवेशयुक्त भौतिकनकीबी परंपराकरि ब्रह्मकी कार्यताहींहै । ऐसैं कहनेकूं तिन (भौतिकन)कूं अनुवाद करैहैं ॥ इहां पूर्व अध्यायविषै जिनकी गति अरु आगति (गमनागमनरूप) दिखायी औ जिनका तृतीयस्थान कहा । वे चराचरभूत इधर तत् शब्दकरि स्मरण करियेहैं औ तिनकी प्रसिद्धताके प्रकाशनअर्थ "खलु" ऐसैं कहा औ भूतनके तीनिहीं बीज होवैहैं ऐसैं उत्तरपदविषै संबंध है ॥

१५२ भूत शब्दकूं तेजआदिकनविषै रूढ होनेतैं तिनका इहां ग्रहण क्यूं नहीं होवैगा? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—भूतनका (प्राणीनका) प्रत्यक्षपना "इनके" ऐसैं निर्देशकरियेहै औ पक्षी आदिकनकी प्रत्यक्षता संभवै है यातैं वेई इहां भूत विवक्षित हैं । तेज आदिक तो नहीं । काहेतैं तिनकूं प्रत्यक्ष होनेके अयोगतैं ॥

[१५३] तिनके त्रिवृत्करणकूं वक्ष्यमाण होनेतैं त्रिवृत्करणके न होते प्रत्यक्ष निर्देशके असंभवतैं औ तेजआदिकनविषै "ये तीन देवता" ऐसैं दे[१५४]वता शब्दके प्रयोगतैं ॥ तातैं तिन प्रसिद्ध इन पक्षी पशु स्थावरआदिक भूतनके तीनिहीं बीज (कारण) होवैहैं अधिक नहीं ॥ ॥ कौंनसे वे बीज हैं ? यह कहिये हैः–आंडज । अंडतैं जो जन्म्या सो अंडज है अंडजहीं आंडज कहिये पक्षीआदिक ॥ [१५५]जो तैं पक्षी अरु सर्पआदिकनतैं पक्षी अरु सर्प आदिक उपजते देखियेहैं। तिसकरि पक्षी पक्षीनका बीज है। सर्प सर्पनका बीज

१५३ तेजआदिकनकी प्रत्यक्षताके अयोगतैं "इनके" ऐसैं निर्देशके असंभवकूं प्रतिपादन करैहै ॥

१५४ तिन तेजआदिकनके प्रत्यक्षताकरि निर्देश (कीर्त्तन)के असंभवविषै अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां देवताओंकी परोक्षताकी प्रसिद्धितैं औ इन तेजआदिकनविषै देवता पदके प्रयोगतैं इनकी प्रत्यक्षताका संभव नहीं है। यह [देवता शब्दके प्रयोगतैं इस शब्दका] अर्थ है । तातैं इहां भूतशब्दकरि महाभूतनके ग्रहणके अयोगतैं। यह अर्थ है ॥

१५५ आंडज पक्षी आदिक है । याकूं प्रत्यक्षकरि उपपादन करैहैं ॥ इहां अन्यबी ऐसैं गोधाआदिक कहियेहैं ॥

है। तैसैं अन्यबी अंडतैं जन्म्या तिस जातिवालोंका बीज है। यह अर्थ है ॥ ॥ ननु[१५६] अंडतैं जो जन्म्या सो अंडज कहियेहै। यातैं अंडहीं बीज है यह युक्त है। अंडज बीज कैसैं कहियेहै? जब तेरी इच्छाके अधीन श्रुति होवै। तब सत्य[१५७] ऐसैं होवै। परन्तु स्वतंत्र श्रुति जातैं अंडजआदिकहीं बीज है अंडआदिक नहीं। ऐसैं कहैहै औ अंडज[१५८]आदिकके अभाव हुये तिस जातिकी

---

१५६ अंडतैं जन्म्या। इस व्युत्पत्तिके अनुसारकरि अंडहीं बीज है अंडज तो नहीं? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

१५७ पुरुषकृत जो व्युत्पत्ति सो श्रुतिकरि बाध होनेकूं योग्य है। ऐसैं सिद्धांती परिहार करैहैं ॥

१५८ केवल श्रुतितैं यह व्यवस्था नहीं है किंतु युक्तितैं बी है। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:—अंडजआदिकके होतेहीं तिस जातिवाला अंडजआदिक संततिकरि उपजता है। औ ताके अभावके हुये ताका अभाव है। ऐसैं अन्वय अरु व्यतिरेककरि अंडजआदिकहीं अंडज जातिका कारण है ॥ यद्यपि अंडआदिकके अभावके हुये अंडजआदि नहीं जन्मता है तथापि अंडआदिकके भावके होते अंडजआदिकके अभावके हुये बी सो होवैहै। ऐसा अन्वय नहीं है ॥ तातैं अंडजआदिकनके अंडजआदिकहीं बीज है अंडआदिक नहीं ॥ इहां धानाशब्द बीज (कण)कूं विषय करनेवाला है ॥

संततिका अभाव देखियेहै अंडआदिकके अभाव हुये नहीं । यातैं अंडजआदिकनके अंडजआदिकहीं बीज हैं ॥ ॥ तैसैं जीवतैं जो जन्म्या सो जीवज है । अर्थ यह जोः–पुरुष पशुआदिरूप जरायुज है ॥ औ उद्भिज्ज है । ऊंचे भेदन करताहै ऐसा जो स्थावर (वृक्षादिक)सो उद्भित् है । तिसतैं जो जन्म्या सो उद्भिज्ज है । वा धाना (बीज) उद्भित् है तिसतैं जन्मता है यातैं उद्भिज्ज है ऐसा स्थावर बीज है । अर्थ यह जोः–स्थावरोंका बीज है ॥ औ स्वेदज[१५९] अरु संशोकज (उष्णतासैं जन्य)का अंडज अरु उद्भिज्जविषे-

१५९ ननु स्वेदज अरु संशोकज । ऐसैं दो बीज अवशेष रहते हैं । वे क्यूं नहीं बोधन करिये हैं? तहां कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः–स्वेदज जो ऊंचे भेदनकरिके जायमान दंश मशकआदिक सो उद्भिज्जविषै अंतर्भूत होवैहै औ संशोक जो उष्णता तिसतैं जायमान जो यूकादि सो अंडजविषै अंतर्भूत होवैहै ॥ यद्वाः–स्वेदज जो यूकादि (लीक्षादि) सो अंडजविषै अंतर्भूत है औ संशोक (उष्णता)तैं भूमिकूं ऊंचेसैं भेदनकरिके जन्म्या जो मशकादि ताका उद्भिज्जविषै अंतर्भाव है ॥ तैसैं हुये तिन दोनूं बीजनके पृथक् बोधनकी अपेक्षा नहीं है॥

सेयं देवतैक्षत-हन्ताहमिमास्तिस्रो

अर्थः-सो यह देवता ईक्षणकूं करती-

हीं यथासंभव अंतर्भाव है।[160] ऐसैंहीं तीनिहीं बीज हैं ऐसा अवधारण घटित होवैहै ॥ १ ॥

टीकाः-सो[161] यह प्रकृत सत्नामवाली तेज जल अरु अन्नकी योनिरूप देवता ईक्षणकरतीभई। जैसैं "बहु होवों" ऐसैं पूर्व ईक्षण करतीभई तैसैं ॥ सोई[162] बहु होनेरूप प्रयोजन अ-

---

१६० स्वेदज आदिकके अंडज आदिकविषै अंतर्भावके प्रापककूं कहैहैं ॥

१६१ जीवके आवेशकरि युक्त भूतनकी सत्कार्यता प्रकरणके प्रामाण्यतैं कही। अब जीवनकी विशिष्टरूपसैं ब्रह्मकी कार्यताके हुये बी स्वरूपसैं ताकी कार्यता नहीं है। काहेतैं ब्रह्महीं उपाधिमैं प्रविष्ट हुया जीव इस व्यवहारका विषय है ऐसैं अंगीकारतैं। तैसैं हुये ब्रह्मके विज्ञात हुये जीवका विज्ञान होवैगा औ जीवनके भोगायतन जे भौतिक कार्य हैं। तिनके नामरूपका निर्माण कहनेकूं योग्य है। इस अभिप्रायकरिके उत्तरग्रंथकूं लेके व्याख्यान करैहैं ॥

१६२ जैसैं "बहु होवों" ऐसैं पूर्व ईक्षणकूं करती भई।

देवता अनेन जीवेनाऽऽत्मनाऽनुप्रविश्य नामरूपे व्याकरवाणीति ॥ २ ॥

भई:–"अबी मैं इनतीन देवताओंके प्रति इस जीवरूप आत्मा (स्वरूप)सैं अनुप्रवेशकरिके नामरूपकूं विस्पष्ट करों ऐसैं २

याापि निर्वृत्त (पूर्ण) नहीं भया ऐसैं है । यातैं बहु होनेरूपहीं प्रयोजनकूं अंगीकारकरिके फेरि ईक्षणकूं करतीभई ॥ ॥ किस प्रकारसैं कि:– अबी मैं इन यथोक्त तेजआदिक तीन देवताओंकेप्रति इस जीवरूप [ऐसैं स्वबुद्धिविषै स्थित पूर्वसृष्टिविषै अनुभूत प्राणधारणरूप आत्माकूंहीं स्मरण करती हुई श्रुति कहैहै॥इस

तैसैं क्यूं फेर ईक्षणकूं करतीभई । प्रयोजनके अभावतैं? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां अबी । या पदका महाभूतनकी सृष्टिके अनंतर । यह अर्थ है औ मायोपाधिक ब्रह्मकूं कारण होनेतैं पूर्वसृष्टिविषै अनुभूतपना औ ताके संस्कारका बुद्धिविषै स्थितपना अरु स्मरण । इत्यादि विरुद्ध नहीं है । ऐसैं देखनेकूं योग्य है ॥

जीवरूप] आत्माकरि [ऐसैं[163] प्राणधारणके कर्ता आत्माकरि इस वचनतैं स्वात्मातैं अव्यतिरिक्त अरु चैतन्यस्वरूप होनेकरि अविशिष्ट (स्वसमान) आत्माकरि। यह दिखावैहै] [164]अनुप्रवेशकरिके तेज जल अरु अन्नरूप भूतनकी मात्राकेसाथि संसर्गकरि लब्धविशेषविज्ञानवाली हुयी नाम अरु रूपकूं विस्पष्टकरों। कहिये यह इस नामवाला है अरु इसरूपवाला है ऐसैं विस्पष्टकरों ॥ ॥ [165]ननु असंसारिणी सर्वज्ञ देवताका स्वतंत्रताके होते बुद्धिपूर्वक अनेकशत सहस्र अनर्थोंके आश्रय देहकेप्रति अनुप्रवेशक-

---

१६३ आत्माकरि। इस विशेषणके तात्पर्यकूं कहैहैं ॥

१६४ निर्विकल्पक चिन्मात्ररूप जो देवताहै सो मायाके वशतैं महाभूतनकूं सृजिके तिनविषै जब प्रविष्टभई। तब तिन महाभूतनकरि आरंभकिये सूत्र विराट्आदिक समष्टि व्यष्टि स्वरूप देहनविषै प्रवेश करिके तिस तिस देहके अभिमानवाली हुयी देवदत्तादि नामसैं औ शुक्लताआदिकरूपसैं योजनाकरिके पिंडकूं विस्पष्ट करैहै। ऐसैं कहैहैं ॥

१६५ देवताकूं सर्वज्ञ होनेतैं असंसारी होनेतैं अरु स्वतंत्र होनेतैं संकल्प अरु प्रवेश अयुक्त है? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

रिके मैं दुःखकूं अनुभव करूंगी । ऐसा संकल्प करना औ अनुप्रवेश यह युक्त नहीं है ? [१६६] सत्य ऐसैं युक्त नहीं है । जब अपनेहीं निर्विकाररूपसैं मैं अनुप्रवेशकूं करों औ दुःखकूं अनुभव-करों ऐसैं संकल्पकूं करतीभई होवै तब । परन्तु ऐसैं नहीं है ॥ [१६७] तब कैसैं है किः—"इस जीवरूप आत्मा (स्वरूप) करि अनुप्रवेशकरिके " इस वचनतैं ॥ [१६८] जातैं जीव नाम पर देवताका आभासमात्र है । सो आदर्शविषै प्रविष्ट पुरुषके प्रतिबिंबकीन्यांईं औ जलादिकनविषै प्रविष्ट

---

१६६ क्या साक्षात् अनुप्रवेश आदिक विरोधकूं पावताहै किंवा जीवद्वाराबी ? ऐसैं विकल्पकरिके प्रथम पक्षकूं सिद्धांती अंगीकार करैहैं ॥

१६७ साक्षात् अनुप्रवेशादि जब नहीं है तब सो कैसैं है? इस आकांक्षापूर्वक द्वितीय पक्षकूं सिद्धांती दूषण देतेहैं ॥ इहां देवताका जीवरूप द्वारसैं अनुप्रवेशआदिक अविरुद्ध है। यह शेष है ॥

१६८ अविरोधकूंहीं साधनेकूं जीवके स्वरूपकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—अभिमुख होनेकरि " मैं " ऐसैं अपरोक्षपनैकरि भासता है यातैं आभास है । ऐसा जो स्वतः अपरोक्ष चित्प्रतिबिंब तन्मात्र जीव नाम है ॥

सूर्यादिकनके प्रतिबिंबकीन्यांई बुद्धिआदिक[169] भूतमात्राओंके [चिदात्माके] साथि संसर्गसैं जनित है ॥ औ [170]अचिंत्य अनंतशक्तिवाली पर-देवताका बुद्धिआदिकनके साथि जो संबंध है सो चैतन्यका[171] आभास है सो पर देवताके[172] स्वरूपके

१६९ ता जीवकी स्वरूपसैं अनादिताके हुयेबी विशिष्ट-रूपसैं सादिताकूं दिखावैहैं ॥ इहां बुद्धि आदिक भूतमात्रा-आदिकनके साथि चिदात्माका जो संसर्ग कहिये तादात्म्य-संबंध तिसकरि जनित कहिये ताके अधीन है। यह अर्थ है॥

१७० ननु चिदात्मा कूटस्थ असंग अरु अद्वितीय अंगी-कार करिये है । सो बुद्धि आदिक भूतमात्रा आदिकनके साथि कैसैं संबंधकूं पावताहै ? तहां कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:–सत्व आदिक प्रकारोंकरि अशक्य चिंतनकरनेकूं योग्य अनादि अनिर्वाच्य सम्यक् ज्ञानविना नाशशून्य दंडायमान (प्रसिद्ध) जो मायाशक्ति है। ताका विषय होनेकरि अरु आश्रय होनेकरि परादेवता स्थित होवैहै औ ताकी स्वनिष्ठ मायाशक्तिके वशतैं बुद्धिआदिकनकेसाथि आत्माका संबंध सिद्ध होवैहै ॥

१७१ बुद्धि आदिकसैं संबंधके फलकूं कहहैं ॥ इहां ताका आभास जीवशब्दका वाच्य सिद्ध होवैहै। यह शेष है ॥

१७२ बुद्धिआदिकनसैं आत्माके संबंधविषै मायाशक्ति उपादान है ऐसैं कहा। तिसविषै हीं निमित्त कारणकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:–जातैं आवरण विक्षेप शक्तिकरि संपन्न मा-

विवेकके अग्रहणरूप निमित्तवाला है औ मैं [१७३] सुखी हूं। दुःखी हूं। मूढ हूं। इत्यादि अनेक विकल्पोंकी प्रतीतिका हेतु है ॥ औ [१७४] छाँयामात्र जीवरूपसैं अनुप्रविष्ठ होनेतैं परदेवता स्वतः (स्वरूपतैं) देहविषै होनेवाले सुख दुःखआदिकनसैं संबंधकूं पावती नहीं ॥ [१७५] जैसैं पुरुष अरु आदित्यआदिक आदर्श अरु उदकआदिकनविषै छायामात्रसैं अनुप्रविष्ठ हुये आदर्श अरु उदकआदिकनके दोषनसैं संबंधकूं पावता नहीं। ताकी न्यांई परदेवता बी है ॥ [१७६] "जैसैं सर्वलोकका च-

याशक्ति है। तातैं अविद्यातैं उत्पन्न देश काल आदिककरि अनवच्छिन्न (अपरिच्छिन्न) देवतास्वरूप मैं हूं। ऐसैं विशेषके अग्रहणरूप आवरणकूं निमित्तकरिके बुद्धिआदिकसैं आत्माके तादात्म्य संबंधका अध्यास सिद्ध होवैहै ॥

१७३ बुद्धिआदिकसैं अध्यासके अन्यकार्यकूं दिखावैहैं ॥

१७४ तब परदेवताहीं संसारिणी होवैगी? ऐसैं जो कहै। तो सत्य है। अज्ञानद्वारा बुद्धिआदिकसैं संबंधकूं अनुभवकरिके जीवभावकूं पायके सोई संसरती है। ऐसैं कहैहैं ॥

१७५ परादेवताकूं स्वतः संसारके अभावकूं दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥

१७६ ता परदेवताकूं स्वतः दुःख आदिकसैं असंबंधविषै श्रुतिकूं प्रमाण करैहैं ॥

क्षुरूप सूर्य चक्षुगत बाह्यदोषनसैं लिप्तहोता नहीं। तैसैं एक अरु लोकनके दुःखसैं बाह्य सर्व भूतनका अंतरात्मा लोकनके दुःखसैं लिप्तहोता नहीं औ आकाशकीन्यांई सर्वगत अरु नित्य है ऐसैं जातैं काठक (कठवल्ली) विषै कहा है औ "[१७७]ध्यावते हुयेकी न्यांई लीलाकरते हुयेकीन्यांई है" ऐसैं वाजसनेयक (बृहदारण्यक) विषै कहाहै [यातैं सो स्वतःदुःखादिकसैं संबंधरहित है]॥ ॥ [१७८]ननु छायामात्र जब जीव मिथ्याहीं प्राप्तभया। [१७९]तब ताकूं परलोक इहलोकआदिक तैसैं (मिथ्या) होवैगा? [१८०]यह दोष नहींहैः-

---

१७७ औ उपाधिद्वारा ताकी संसारिताविषै श्रुति है। ऐसैं कहैहैं॥

१७८ प्रतिबिंबविषै छायाशब्दके प्रयोगतैं मिथ्यापना इष्ट है? ऐसैं मानताहुया पूर्ववादी शंका करैहै॥

१७९ तिस प्रतिबिंबका मिथ्यापना हमकूं इष्टहीं है? यह सिद्धांतीकी आशंकाकरिके पूर्ववादी कहैहै॥ इहां यह अर्थ हैः-जीवके मिथ्यात्वके स्वीकार कियेहुये ताकूं यह लोक परलोक ताका हेतु। मोक्ष औ ताका हेतु। यह सर्व मिथ्या होवैगा॥

१८० विशिष्टरूपसैं जीवके मिथ्यात्वके हुयेबी स्वरूपसैं

काहेतैं सत्(ब्रह्म)स्वरूपसैं ताकी सत्यताके अंगीकारतैं औ [१८१]सर्व नामरूपादि विकारका समूह सत्स्वरूपसैंहीं सत्य है। [१८२]स्वतःतो मिथ्या हीं है॥ काहेतैं "वाणीकाआरंभण (उच्चारित) विकार नाममात्र है" ऐसैं कथन किया होनेतैं॥ [१८३]तैसैं जीवबी है। यातैं "[१८४]यक्षके अनुसारहीं बलि (बलि-

---

सत्यहोनेतैं जीवकूं "अहंब्रह्मास्मि" इस ज्ञानतैं मुक्ति संभवै है। ऐसैं सिद्धांती समाधान करैहैं॥

१८१ औ जो कहाथाकिः—परलोक इहलोक आदिक मिथ्या होवैगा? ऐसैं तहां कहैहैं॥

१८२ तब ताके मिथ्यात्वकी उक्ति कैसैंहै? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

१८३ जैसैं प्रपंच ब्रह्मरूपसैं सत्यहुयाबी स्वरूपसैं मिथ्या है। ऐसैं कहा। तैसैं जीवशब्दका वाच्यबी ब्रह्मरूपसैं सत्य हुया स्वरूपसैं मिथ्या है। ऐसैं स्वीकारकरनेकूं योग्य है। यह कहैहैं॥

१८४ अब भोक्ता स्वरूपसैं बी सत्यहोहु। भोग्यरूप प्रपंचकाहीं मिथ्यापना अंगीकारकरनेकूं योग्य है? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥ इहां यह अर्थ हैः—लौकिकन्यायके अनुसारकरि भोग्यप्रपंचके मिथ्यात्वके हुये भोक्ताकी बी विभक्त स्वरूपसैं ता (मिथ्यात्व)की प्रसिद्धि है। यातैं जीवशब्दके वाच्यके मिथ्यात्वके हुयेबी ताके लक्ष्य सन्मात्रका सत्यत्व है। यह व्यवस्था है॥

तासां त्रिवृतं त्रिवृतमेकैकां करवा-

अर्थः–तिनके मध्य एकएककूं "त्रिवृत त्रिवृत [जैसें होवै तैसें] करों" ऐसें [ईक्ष-

दान) होवैहै" इस न्यायकी लोकविषै प्रसिद्धि है ॥ [185]यातैं सत् (ब्रह्म) स्वरूपसैं सर्व व्यवहारोकी अरु सर्व विकारोंकी सत्यता है औ सत्तैं अंन्यताके हुये मिथ्यात्व है । यातैं इहां (अद्वैतवादविषै) तार्किकोंकरि कोईबी दोष कहनेकूं शक्य नहीं है ॥ [186]जैसें परस्पर विरुद्ध द्वैतवाद स्वबुद्धिके विकल्पमात्ररूप अरु अतत्वनिष्ठ है । ऐसें कहनेकूं शक्य है [तैसा यह अद्वैतवाद नहीं है] ॥ २ ॥

टीकाः–[187]सो परदेवता ऐसें तीनदेवताके प्रति

१८५ औ जो तार्किकोंकरि कहिये है किः–प्रपंचके मिथ्यात्वके हुये क्षणिकविज्ञानवादीरूप सौगत (बौध)के मतकी अनुमति होवैगी औ सत्यताके हुये अद्वैतकी हानि होवैगी ? ऐसें । सो बी उक्तन्यायकरि निरस्तभया । ऐसें कहैहैं ॥

१८६ अद्वैतवादविषै देशके अभावकूं विपरीतधर्मवाले दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥

१८७ " विस्पष्टकरों " इस अंतवाले वाक्यकूं व्याख्यान-

णीति॥सेयं देवतेमास्तिस्रो देवता अने-

णकरतीभई] ॥ सो यह देवता इन तीनि
देवताओंके प्रति इसीहीं जीवरूप आत्मासैं

अनुप्रवेशकरिके स्वात्माविषै स्थित बीजभूत अ-
व्याकृत (अप्रकट) नामरूपकूं विस्पष्टकरों।
ऐसैं ईक्षणकूं करिके औ तिन तीन देवताओं-
के मध्य एक एककूं त्रिवृत त्रिवृत करों।
[१८८] एैसैं एकके त्रिवृत्करणके हुये एक एककी प्रधा-
नता अरु दोनूं दोनूंका गुणभाव (अप्रधानपना)
होवैगा। [१८९] अन्यथा जातैं रज्जुकी न्यांई एकहीं

करिके। ताकूं अनुवादकरिके "तिनके मध्य" इत्यादि तृतीय
वाक्यकूं व्याख्यान करैहैं॥ इहां "विस्पष्टकरों" ऐसैं ईक्षणकूं
करताभया। ऐसैं संबंध है॥

१८८ फेर यह त्रिवृत्करण कैसैं होवैहै? यह आशंकाक-
रिके। प्रथम एक एक देवताकूं दो प्रकारसैं दोप्रकारसैं वि-
भागकरिके फेर एक एक भागकूं दो प्रकारसैं दो प्रकारसैं क-
रिके तिनकूं तिनतैं इतर भूतनके दोभागनविषै डालिके त्रि-
वृत्करण विवक्षित है। ऐसैं कहैहैं॥

१८९ गुणप्रधानभावके अनंगीकारके हुये समान परि-

नैव जीवेनाऽऽत्मनानुप्रविश्य नामरूपे व्याकरोत् ॥ ३ ॥

अनुप्रवेशकरिके नाम रूपकूं विस्पष्ट करतीभई ॥ ३ ॥

त्रिवृत्करण होवैगा । परंन्तु[190] तीनोंका पृथक् पृथक् त्रिवृत्करण नहीं होवैगा यातैं ॥[191] ऐसैं (गु-

---

माणवाले तिन सूत्रनकरि निर्मितरज्जुकी न्यांई त्रिवृत्करण एकहीं होवैगा । ऐसैं कहैहैं ॥

१९० एवकारके अर्थकूं दिखावैहैं ॥ इहां गुणप्रधानभावकरि त्रिवृत्करणकूं उपसंहार करनेकूं इति शब्द है ॥

१९१ यातैं बी गुणप्रधान (अप्रधान अरु प्रधान) भावकरि त्रिवृत्करण माननेकूं योग्य है। ऐसैं कहैहैं॥ [इहां घृतकी न्यांई तेज है। जलकी न्यांई जल है औ पिष्टकी न्यांई पृथिवी है॥ त्रिवृत्करणके भये । ताम्रादि रससेवीकेअर्थ अधिकघृत अरु न्यून जल औ पिष्टकरिकृत राबरीकीन्यांई । तेज होवैहै ॥ औ रोगीकेअर्थ अधिक जल अरु न्यूनघृत औ पिष्टकरिकृत राबरीकीन्यांई जल होवैहै ॥ औ नीरोगकेअर्थ अधिकपिष्ट अरु न्यूनघृत औ जलकरिकृत रोटीकी न्यांई त्रिवृत्कृत पृथिवी होवैहै॥ ऐसैं भूतनका गुणप्रधानभावसैं त्रिवृत्करण होवैहै । तातैं पृथक् पृथक् नामका लाभ होवैहै । तिनका संकर होवै नहीं ॥ यह अभिप्राय है] ॥

णप्रधानभावके) किये हुये हीं तेज जल अरु अन्न (पृथिवी)के पृथक् नामके ज्ञानका लाभ होवैगा । यह तेज है । ये जल हैं औ यह अन्न है । ऐसैं ॥ औ [१९२] पृथक् नामके ज्ञानके लाभके हुये देवताओंके सम्यक् व्यवहारकी प्रसिद्धिरूप प्रयोजन होवैगा ॥ [१९३] ऐसैं ईक्षणकूं करिके सो यह देवता इन तीन देवताओंके प्रति इसीहीं नाम यथोक्तहीं जीवरूप आत्मा (स्वरूप) करि सूर्यके बिंबकी न्यांई भीतर प्रवेशकरिके कहिये वैराज (विराट्संबधी) प्रथम पिंडकेतांई औ देवादिकनके पिंडनके तांई अनुप्रवेश करिके यथासंकल्प (संकल्पके अनुसार)हीं नामरूपकूं विस्पष्ट करताभया ॥ यह इसनामवाला है । इसरूपवाला है । ऐसैं ॥ ३ ॥

---

१९२ पृथक् नामके ज्ञानके लाभसैं बी क्या होवैहै ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

१९३ "सो यह देवता" इत्यादि वाक्यकूं व्याख्यान करैहैं ॥ ॥

तासां त्रिवृतं त्रिवृतमेकैकामकरोद्य-
था नु खलु सोम्येमास्तिस्रो देवतास्त्रिवृ-
त्रिवृदेकैका भवति तन्मे विजानीहीति ४

इति षष्ठप्रपाठकस्य तृतीयः खण्डः ॥ ३ ॥

अर्थः–तिनके मध्य एक एककूं त्रिवृत त्रिवृत करतीभई ॥ औ हे सौम्य ! जैसें तो प्रसिद्ध ये तीन देवता त्रिवृत त्रिवृत एक एक होवैहै सो मेरे [कहनेवालेके हुये] विस्पष्ट जान ऐसें ॥ ४ ॥

इति श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपा० तृतीयः खंडः॥३॥

टीकाः–औ तिन देवताओंके मध्य गुणप्रधान (अमुख्यमुख्य)भावकरि एककूं त्रिवृत त्रिवृत सो देवता करतीभई ॥ [१९४] प्रथम

---

१९४ संक्षेपकरि त्रिवृत्करणकूं प्रतिज्ञाकरिके । अब उदाहरणतैं स्पष्टकरनेकूं आरंभ करते हुये उद्दालकमुनि देहविषै त्रिवृत्करणकूं आगे स्पष्टकरनेकूं योग्य होनेतैं देहतैं अतिरिक्त तीनि भूतनविषै प्रथम ता त्रिवृत्करणकूं उदाहरण करनेकूं उपक्रम करैहैं ॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकगततृतीयखंडस्य टिप्पणम् ॥ ३ ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य चतुर्थः खंडः ॥४॥

यदग्ने रोहितꣳ रूपं तेजसस्तद्रूपं। य-

अथ श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य चतुर्थः खंडः॥४॥

अर्थः—जो अग्निका रोहित रूप है सो

नामरूपकरि विस्पष्ट किये देवता आदिक पिंड-नका तेज जल अरु अन्नमयताकरि त्रिधापना स्थितहोहू। परन्तु जैसैं पिंड(शरीर)नतैं बाहिर ये तीन देवता एक एक त्रिवृत त्रिवृत होवैहै। हे सोम्य! (हे पुत्र) सो मेरे कहनेवालेके हुये विस्पष्ट जान कहिये विस्पष्ट जैसैं होवै तैसैं उदाहरणतैं निश्चयकर ॥ ४ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपा०तृतीयः खंडः ॥ ३ ॥

अथ श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपा०चतुर्थः खंडः ॥४॥

त्रिवृत्करणप्रदर्शनकरि विकारमिथ्यात्व औ हेतुसत्यत्व ७

टीकाः—जो[१९५] सो देवताओंका त्रिवृत्करण कहा

अथ श्री०षष्ठप्रपाठकगतचतुर्थखंडस्य टिप्पणम्॥४॥

१९५ उदाहरणतैं कैसैं निश्चय होवैहै? यह आशंकाकरिके। अनंतरके वाक्यकूं अवतार देतेहैं ॥

च्छुक्लं तदपां। यत्कृष्णं तदन्नस्यापागा-

तेजका रूप है। जो शुक्ल है सो जलोंका है। जो कृष्ण है सो अन्नका है। अग्निका

ताहींका इहां उदाहरण कहियेहै ॥ [196] उदाहरण नाम एक देशकी प्रसिद्धिकरि अशेषकी प्रसिद्धि-अर्थ जो उदाहरण करियेहै सो ॥ [197] तिसें इसकूं कहैहैं:-जो त्रिवृत्कृत अग्निका लोकविषै प्रसिद्ध रोहित (रक्त) रूप है। सो अत्रिवृत्कृत तेजका रूप है ऐसें जान ॥ तैसें अग्निकाहीं जो शुक्ल रूप है सो अत्रिवृत्कृत जलोंका है ॥ औ तिसीहीं अग्निका जो कृष्ण रूप है। सो अन्नका है कहिये अत्रिवृत्कृत पृथिवीका है। ऐसें जान ॥

---

१९६ उदाहरण शब्दकूं व्युत्पादन करैहैं ॥

१९७ तहांहीं श्रुतिकूं अवतार देके व्याख्यान करैहैं ॥ इहां सो अत्रिवृत्कत (सूक्ष्म) जलोंका रूप है। ऐसें जान। ऐसें संबंध है औ तहां ऐसें हुये। याका:-तहां अग्निविषै रूपत्रयके पूर्वोक्तरीतिसें पृथक् कियेहुये। यह अर्थ है औ अबी। याका विवेकदशाविषै। यह अर्थ हैं ॥

दग्नेरग्नित्वं। वाचारम्भणं विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाणीत्येव सत्यम् ॥१॥

अग्निभाव गया। वाणीसैं (वाणीका) आरंभण विकार नाममात्र है। तीनिरूप ऐसैंहीं सत्य है ॥ १ ॥

तहां ऐसैं हुये तीन रूपनसैं व्यतिरेककरि "अग्नि" ऐसैं जो तूं मानताहैं तिस अग्निका अग्निपना अबी गया। अर्थ यह जोः—तीन[१९८] रूपनके विवेकविज्ञानतैं पूर्व जो तेरेकूं अग्निबुद्धि होतीभई सो अग्निबुद्धि गई औ अग्निशब्द बी गया[१९९] ॥ जैसैं दृश्यमान रक्त आश्रयकरि संयुक्त स्फटिक गृह्यमाण हुया आश्रय अरु स्फटिकके विवेकज्ञानतैं पूर्व "यह पद्मराग (माणिक) है" इस शब्द अरु बुद्धिका प्रयोजक होवैहै।

---

१९८ अक्षरार्थकूं कहिके वाक्यके तात्पर्यरूप अर्थकूं कहैहैं ॥

१९९ तीनिरूपनके विवेकतैं पूर्वअवस्थाविषै अग्निशब्द अरु अग्निबुद्धि होवैहै औ तिनके विवेकतैं अनंतर तिनकी निवृत्ति होवैहै। इस अर्थकूं दृष्टांतकरि समर्थन करैहैं ॥

परन्तु तिन दोनूंके विवेकविज्ञानके हुये तिनके विवेकविज्ञानवालेकूं "पद्मराग" ऐसे शब्द अरु बुद्धि निवर्त्त होवैहैं। ताकीन्यांईं ॥ ॥ [200]नंनु इहां बुद्धि अरु शब्दकी कल्पनासैं क्या करियेहै। तीन रूपनके विवेकके करणतैं पूर्व अग्निहीं होताभया। सो अग्निका अग्निपना रोहितआदिकरूपनके विवेकके करणतैं जाताभया। यह युक्त है। [201]जैसैं तंतुनके दूरी कियेहुये पटका अभाव होवैहै [तैसैं]? [202]सो बनैनहीं:—काहेतैं बुद्धि अरु शब्दमात्रहीं अग्नि है ऐसैं [203]जांतैं श्रुति कहैहै:—वाणीका आरंभण(उच्चारणरूप) अग्नि नाम विकार नामधेय है। अर्थ यह जो:—नाममात्र है ॥ यातैं

२०० अग्निविषै श्रुतकूं छोडिके अधिककल्पनाविषै कारण नहीं है? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

२०१ रोहित आदिक तीनरूपनके विवेकके हुये अग्निका अग्निभाव दूरी होवैहै। इस अर्थविषै दृष्टांतकूं पूर्ववादी कहैहै॥

२०२ शब्द अरु बुद्धिके दूरी हुयेबी श्रुत (श्रुतिउक्त अर्थ)का त्याग नहीं होवैहै। ऐसैं सिद्धांती परिहार करैहैं ॥

२०३ तहां प्रमाण होनेकरि अनंतरके वाक्यकूं लेके व्याख्यान करैहैं ॥ इहां अग्निकी नाममात्रता अतः (यातैं)शब्दका अर्थ है ॥

यदादित्यस्य रोहितꣳ रूपं तेजस-स्तद्रूपं। यच्छुक्लं तदपां। यत्कृष्णं तदन्न-

---

अर्थः—जो आदित्यका रोहित रूप है सो तेजका रूप है। जो शुक्ल है सो जलोंका-ह। जो कृष्ण है सो अन्नका है। आदित्यतैं

अग्निबुद्धिबी मृषाहीं है॥ ॥ तब तहां क्या सत्य है? तीनि रूपहीं सत्य है। तीन रूपनतैं व्य-तिरेककरि अणुमात्रबी सत्य नहीं है॥ इहां इ-तिशब्द अवधारणके अर्थ है॥ १॥

टीकाः—तैसैं जो आदित्यका। जो चंद्र-माका। जो विद्युत्का। इत्यादि समान है॥ ॥ ॥ [204] ननु "हे सोम्य! जैसैं तो ये प्रसिद्ध तीनि देवता त्रिवृत त्रिवृत एक एक होवैहै सो मेरे कहतेहुये विस्पष्टजान" ऐसैं कहिके तेज-काहीं च्यारीबी अग्निआदिक उदाहरणोंकरि

---

२०४ प्रक्रमके विचार कियेहुये उदाहरणविषै न्यूनता है? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै॥

स्यापागादादित्यादादित्यत्वं । वाचारम्भणं विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाणीत्येव सत्यम् ॥ २ ॥

आदित्यपना गया । वाणीका आरंभण विकार नाममात्र है । तीनि रूप ऐसैंहीं सत्य है ॥ २ ॥

त्रिवृत्करण दिखाया । त्रिवृत्करणविषै जल अरु अन्नका उदाहरण नहीं दिखाया ? [२०५] यह दोष बनै नहीं:—काहेतैं जल अरु अन्नकूं विषयकरनेवाले बी उदाहरण ऐसैंहीं देखनेकूं योग्यहैं । ऐसैं श्रुति मानती है । [यातैं] औ तेजका[२०६] उदाहरण

---

२०५ जो वापी कूप (तद्गतजल) आदिकका रोहित (रक्त) रूप है सो तेजका रूप है । जो शुक्ल है सो जलोंका है । जो कृष्ण है सो अन्नका है ॥ औ जो व्रीहि यव आदिकका रोहितरूप है सो तेजका रूप है । जो शुक्ल है सो जलोंका है । जो कृष्ण है सो अन्नका है । ऐसैं उदाहरणके संभवतैं उदाहरणकी न्यूनता नहीं है । ऐसैं सिद्धांती परिहार करैहैं ॥

२०६ तब तेजकूं विषयकरनेवाला उदाहरणबी तर्कसैं जाननेकूं योग्य है । क्यूं उदाहरण किया ? यह आशंकाक-

यच्चन्द्रमसो रोहितꣳ रूपं तेजसस्त-
द्रूपं।यच्छुक्लं तदपां।यत्कृष्णं तदन्नस्या-

अर्थः-जो चंद्रमाका रोहित रूप है सो तेजका रूप है। जो शुक्ल है सो जलोंका है। जो कृष्ण है सो अन्नका है । चंद्रतैं

उपलक्षणअर्थ है। काहेतैं तीनोंकूं रूपवान् होनेतैं औ रूपके विभागकी तीनविषै स्पष्ट अर्थताके संभवतैं औ तीनोंके मध्य असंभवतैं गंध-२०७

रिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः-जब कहींबी उदाहरण नहीं कहियेहै तब उपलक्षणहीं नहीं सिद्ध होवैगा। यातैं तीनोंकूं रूपवान् होनेकरि यथोक्तरूपके विभागकी तिनतीनविषै स्पष्टताके संभवतैं तेजके दृष्टांतका प्रदर्शन जो है सो अन्नआदिविषयक उदाहरणके उपलक्षण अर्थ है । तिस हेतुकरि उपेक्षा किया नहीं ॥

२०७ ननु जब जल अरु अन्नकाबी त्रिवृत्करण उपलक्षित है। तब तिनविषै रस अरु गंधकूं असाधारण होनेतैं तिनका त्रिवृत्करण उदाहरणकरनेकूं योग्य है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः-जैसैं जो जल अरु अन्नविषै भास्वर (प्रभावाला) लोहित रूप है सो तेजका रूप है। जो शुक्ल है सो जलोंका है। जो कृष्ण है सो अन्नका है। ऐसैं रूप विवे-

पागाच्चन्द्राच्चन्द्रत्वं। वाचारम्भणं विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाणीत्येव सत्यम्॥३॥

चंद्रपना गया। वाणीका आरंभण विकार नाममात्र है। तीनि रूप ऐसैंहीं सत्य है॥३॥

अरु रसका अनुदाहरण है। जातैं तेजविषै गंध अरु रस नहींहैं॥ औ विभागकरि दिखावनेकूं अशक्य होनेतैं स्पर्श अरु शब्दका अनुदाहरण

चन करनेकूं शक्य होवैहै॥ तैसैं तेजका जलोंका अरु अग्निका अमुक रस है वा गंध है। ऐसैं जाननेकूं शक्य नहीं है। यातैं तिन (रस अरु गंध)का अनुदाहरण है॥

२०८ ननु त्रिवृत्करणके हुये तीनोंविषैबी रूपकी न्यांई गंध अरु रस संभावित हैं। तातैं तिन दोनूं (रस गध)के तीनोंके मध्य असंभवकी उक्ति कैसैं है? तहां कहैहैं॥ इहां यह अर्थ है:— संभावित हुयेबी वे गंध अरु रस तीनोंभूतनविषै विवेचन करनेकूं (पृथक् करिके दिखावनेकूं) अशक्य हैं। यातैं उदाहरण करनेकूं अशक्य हैं॥

२०९ तब सर्व भूतनविषै संभावित स्पर्श अरु शब्दका उदाहरण क्यूं नहीं होवैगा? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥ इहां यह अर्थ है:—जैसैं लोहितआदिक रूपनका त्रय तीनिभूतनके मध्य विभागकरि दिखावनेकूं शक्य है। ऐसैं शब्दनका

यद्विद्युतो रोहितꣳरूपं तेजसस्तद्रूपं।
यच्छुक्लं तदपां।यत्कृष्णं तदन्नस्यापागा-

अर्थः—जो विद्युत्का रोहित रूप है सो तेजका रूप है। जो शुक्ल है सो जलोंका है। जो कृष्ण है सो अन्नका है। विद्युत्तें

है ॥ २१०जब सर्व जगत् त्रिवृत्कृत है तब ऐसैं अग्नि आदिककीन्यांई तीन रूपहीं सत्य है। अग्निके अग्निभावकीन्यांई जगत्का जगत्भाव जाता-भया ॥ २११तैसैं अन्नकूं बी जलका कार्य होनेतें जल

त्रय अरु स्पर्शनका त्रय तीनोंके मध्य विभागकरि दिखावनेकूं शक्य नहीं है ॥ प्रसिद्ध एक ठिकाने उष्णशीत अरु अनुष्णाशीतरूप स्पर्शनका त्रय नहीं देखियेहै औ खर (उग्र) मधुर अरु मध्यमरूप शब्दनका त्रयबी एकठिकाने देख्या नहीं है ॥

२१० सर्वकी त्रिवृत्कृतताके हुये फलितकूं कहैहैं ॥ इहांः—जैसैं अग्नि आदिक त्रिवृत्कृत है। तैसैं सर्वहीं जगत् जब त्रिवृत्कृत है ऐसैं अंगीकार किया। तब अग्निके अग्निभावकी न्यांई जगत्का जगत्भाव दूरी भया। तीनिरूपहीं सत्य है । ऐसैं योजना है ॥

२११ तथापि सत्मात्रका परिशेष कैसैं होवैगा? यह

द्विद्युतो विद्युत्त्वं । वाचारम्भणं विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाणीत्येव सत्यम्॥४॥

विद्युत्पना गया । वाणीका आरंभण विकार नाममात्र है। तीनि रूप ऐसैंहीं सत्य है॥४॥

ऐसैंहीं सत्य है वाचारंभणमात्र अन्न है ॥ तैसैं जलोंकूंबी तेजके कार्य होनेतैं वाणीका आरंभणपना है । तेज ऐसैंहीं सत्य है ॥ तेजकूंबी सत्का कार्य होनेतैं वाचारंभणपना है । सत् ऐसैं हीं सत्य है ॥ इसरीतिसैं यह अर्थ विवक्षित है ॥ ॥ ननु[212] अत्रिवृत्कृत वायु अरु अंतरिक्ष (आ-

---

आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—तीनरूपनतैं भिन्नताकरि जगत्के अभावकी न्यांई पृथिवी शब्दके वाच्य कृष्णरूपकूं बी शुक्लरूपमात्र जलका कार्य होनेतैं ताका तिसतैं भिन्नताकरि असत्पना है ॥ पृथिवीकीन्यांई शुक्लरूप मात्रामय जलोंकूंबी लोहितरूपमात्र तेजके विकार होनेतैं ताका तिन (जलों)तैं भिन्नताकरि अभाव है ॥ ता (लोहितरूपमय तेज)कूंबी सत्का कार्य होनेतैं ताका तिसतैं भेदकरि असत्पना है ॥ औ सत्मात्रहीं परिशेषतैं सिद्ध भया । यह त्रिवृत्करणके प्रकरणविषै विवक्षित है ॥

२१२ त्रिवृत्करणरूप पक्षविषै एकके विज्ञानसैं सर्वका वि-

काश) तो तेज आदिकनविषै अनंतर्भूत होनेतैं अवशेष रहते हैं। ऐसैं गंध[२१३] रस शब्द अरु स्पर्शबी अवशेष रहेहैं। यातैं सत्के विज्ञात होनेकरि सर्व अन्य अविज्ञात विज्ञात कैसैं होवैगा वा तिनके विज्ञानविषै अन्य प्रकार कहनेकूं योग्य है? यह[२१४] दोष बनै नहीं:—काहेतैं रूपवाले द्रव्यविषै सर्वके देखनेतैं[२१५]॥ कैसैंकि:—रूप[२१६]-

---

ज्ञान नहीं सिद्ध होवैहै॥ काहेतैं अवशेष रहे ज्ञेयके सद्भावतैं? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै॥ इहां इति (यातैं) पद जो है सो "कैसैं" इत्यादिक वाक्यसैं संबंधकूं पावताहै॥

२१३ गंधसैं आदिलेके शब्दपर्यंत जे गुण हैं वे गुणिनविषै अनंतर्भूत हैं (अंतर्भूत नहीं हैं)। यातैं सत्के विज्ञानसैं तिनके विज्ञानका संभव नहीं है? ऐसैं पूर्ववादी कहैहै॥ इहां तिनके विज्ञानविषै कहिये सत्के विज्ञानकरि वायुआदिकका विज्ञान जो है तिसविषै अन्य प्रकार है। अर्थ यह जो:—ताका कार्य होनेतैं अतिरिक्त [प्रकार] है॥

२१४ आकाशआदिकके तीनोंभूतनविषैहीं अंतर्भावके संभवतैं अवशेष रहा ज्ञेय नहीं है। ऐसैं सिद्धांती परिहार करैहैं॥

२१५ तेज जल अरु अन्नविषै सर्व आकाशआदिकका दर्शन कैसैं है? यह कहैहैं॥

२१६ तहां शब्द अरु स्पर्शकी औ आकाश अरु वायुकी तीनिभूतनविषै प्रत्यक्ष अरु अनुमानकरि प्रतीतिकूं दिखावैहैं॥

वाले तेजविषै प्रथम शब्द अरु स्पर्शकेबी उपलंभ (ज्ञान)तैं तहां स्पर्श अरु शब्द गुणवाले वायु अरु अंतरिक्षका सद्भाव अनुमानसैं जानियेहै ॥ [२१७] तैसैं रूपवाले जल अरु अन्न (पृथिवी) विषै रस अरु गंधका अंतर्भाव है । यातैं [२१८] रूपवाले तेज जल अरु अन्न इन तीनोंके त्रिवृत्करणके दिखावनेकरि तिनके अंतर्भूत सर्व सत्का विकार होनेतैं तीनिहीं रूप विज्ञात सत्य श्रुति मानतीहै। [२१९] जौंतैं रूपवाले मूर्त्त द्रव्यकूं त्यागिके वायु अरु आकाशका वा तिस (मूर्त्त द्रव्य)के गुण गंध अरु रसका ग्रहण नहीं है ॥ [२२०] अथवा रूप-

---

इहां तेजका जो ग्रहण है सो जल अरु अन्नका उपलक्षण (सूचक) है । काहेतैं तिन (जल अरु अन्न)विषैबी स्पर्श आदिककी प्रतीतिके अवशेषतैं ॥

२१७ औ जो कहा किः—गंधआदिक अन्य ज्ञेय है ? ऐसैं । तहां कहैहैं ॥ इहां तैसैं । याका तीनिभूतनविषै स्पर्शआदिकके अतर्भावकी न्यांई । यह अर्थ है ॥

२१८ तीनोंविषैहीं अंतर्भावके हुये फलितकूं कहैहैं ॥

२१९ रूपवाले तीनिभूतनविषै आकाश आदिकके अंतर्भावकूं व्यतिरेकद्वारा प्रतिपादन करैहैं ॥

२२० अंतर्भावकी उक्तिके श्रमकूं दूरी करनेकूं सिद्धांती

वालोंका बी त्रिवृत्करण दिखावनेके अर्थहीं श्रुति मानतीहै ॥ [221] जैसैं तो त्रिवृत्कृतविषै तीनि रूपहीं सत्य है। तैसैं पंचीकरणविषैबी समान न्याय है॥ यातैं सर्वकूं सत्का विकार होनेतैं सत्के विज्ञात होनेकरि सर्व यह विज्ञात होवैहै। सत् एकहीं अद्वितीय सत्य है। ऐसैं सिद्धहीं हो-

---

अन्यपक्षकूं कहैहैं ॥ इहां दिखावनेअर्थ है पंचीकरणके। यह शेष है ॥

२२१ पंचीकरणके हुये सत्मात्रका परिशेष कैसैं सिद्ध होवैहै? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:—जब पंचभूतनकूंबी एक एककूं दो प्रकारसैं विभागकरिके [दोनूं मैंसैं एक एक भागकूं अलग स्थित करिके] फेर एक एक भागकूं च्यारी प्रकारका करिके स्वभागतैं अतिरिक्त पूर्वले (अलग स्थापित प्रथम) भागोंविषै एक एक डालियेहै। तब श्रुतिकरि उपलक्षित पंचीकरण प्राप्त होवैहै। तहांबी पंचभागोंके पृथक्करणके भये पंचहीं तन्मात्रा अवशेष रहैहैं। वे पृथिवीआदिक तन्मात्राबी जलआदिककी कार्य होनेतैं तिस तिस कारणतैं भेदकरि नहीं सिद्ध होवैहैं ॥ यातैं त्रिवृत्करणकी न्यांई पंचीकरणविषैबी न्यायके तुल्य होनेतैं सर्वकूं सत्का विकार होनेकरि ताके तिस (सत्)तैं व्यतिरेककरि अभावतैं तिस सत्के विज्ञात होनेकरि सो सर्वबी विज्ञातहीं होवैहै। सो सत्मात्र तो परमार्थरूप सत्य अवशेष रहा होवैहै ॥

एतद्धस्म वै तद्विद्वाꣳस आहुः पूर्वे महाशाला महाश्रोत्रिया न नोऽद्य क-

---

अर्थः—इसींहींकूं जाननेवाले पूर्वले महाशालावाले महाश्रोत्रिय कहतेभये:—ह-

---

वैहै । तिसैं[222] एकके विज्ञात हुये सर्व यह विज्ञात होवैहै । यह सुष्ठु प्रकारसैं कहा ॥२॥३॥४॥

टीकाः—इसैं[223] (त्रिवृत्करण)कूं जाननेवाले पूर्वले (अतिक्रांत) महाशालावाले महाश्रोत्रिय कहतेभये ॥ ॥ क्या कहतेभये ? यह कहैहैं:—यथोक्त विज्ञानवाले हमारे कुलविषै अबी कोईबी अश्रुतकूं अमतकूं अविज्ञात-

---

२२२ उक्तन्यायकरि एकके विज्ञानसैं सर्वके विज्ञानकी श्रुति अविरुद्ध है । ऐसैं उपसंहार करैहैं ॥

२२३ त्रिवृत्करण पक्षविषैबी एकके विज्ञानसैं सर्वके विज्ञानकी श्रुति अविरुद्ध है । ऐसैं उपपादनकरिके । त्रिवृत्करणकूं अन्य उदाहरणकरि दिखावनेकूं आरंभ करैहैं ॥ इहां याकूं । इस पदका त्रिवृत्करणकूं । यह अर्थ है औ वे फिर । ऐसैं त्रिवृत्करणके विज्ञानवाले निर्देश करियेहैं ॥

श्चनाश्रुतममतमविज्ञातमुदाहरिष्यती-
ति । ह्येभ्यो विदाञ्चकुः ॥ ५ ॥

मारे मध्य अबी कोइबी अश्रुतकूं अमतकूं अविज्ञातकूं नहीं उदाहरणकरैगा ऐसैं नहीं। जातैं इन (ज्ञातरूपन)तैं जानतेभये ॥५॥

कूं नहीं उदाहरण करैगा ऐसैं नहीं किंतु उदाहरण करैगा ॥ अभिभाय यह है किः—हमारे कुलविषै उत्पन्न भये पुरुषनकूं सत्के विज्ञानवाले होनेतैं सर्व विज्ञातहीं है ॥ ॥ वे फेर कैसैं सर्वकूं जानतेभये ? यह कहैहैंः—इन तीनि त्रिवृत्कृत रोहितादि रूपनके विज्ञाननतैं सर्वबी अन्य अवशेष रहा जगत् ऐसैंहीं है । ऐसैं जातैं जानतेभये । तातैं वे सत्के विज्ञाननतैं सर्वज्ञहीं होतेभये ॥ अथवा इनतैं जानतेभये । याका अग्निआदिक दृष्टांतनके विज्ञात होनेतैं सर्व अन्यकूं जानतेभये । यह अर्थ है ॥ ५ ॥

यद्रु रोहितमिवाभूदिति तेजसस्तद्रूपमिति तद्विदाञ्चक्रुर्यद्रु शुक्लमिवाभूदित्यपाꣳ रूपमिति तद्विदांञ्चक्रुर्यद्रु कृष्ण-

---

अर्थः—जोई रोहितकी न्यांई होताभया ऐसैंहै सो तेजका रूप है। ऐसैं ताकूं जानते भये ॥ जोई शुक्लकी न्यांई होताभया ऐसैं है सो जलोंका रूप है। ऐसैं जानतेभये ॥ जो-

---

टीकाः—कैसैंकि[२२४]ः—जोई अन्य रूपकरि संदेहयुक्त कपोतादिरूपविषै रोहितकीन्यांई जो तिनपूर्वले ब्रह्मवेत्ताओंकूं गृह्यमाण होताभया।

---

२२४ जाननेके प्रकारकूंहीं आकांक्षापूर्वक प्रकट करैहैं ॥ इहां अन्य अग्निआदिकतैं। यह शेष है औ जो अनेक रूपवाला होनेतैं कपोतादिरूपसैं संदेहयुक्त यह देखिये है तिस कपोतादिकके स्वरूपविषै जो कछुक रोहितकी न्यांई रूप पूर्वले पुरुषनकूं गृह्यमाण होता भया। सो तेजका रूप है। ऐसैं वे जानते भये। इस रीतिसैं योजना है औ अत्यंत दुर्लक्ष्य याका नामरूपकरि दुःखसैं जाननेयोग्य द्वीपातरतैं प्राप्त पक्षीआदिक। यह अर्थ है औ अगृह्यमाण। ऐसैं पदच्छेद है ॥

मिवाभूदित्यन्नस्य रूपमिति तद्विदा-
ञ्चक्रुः ॥ ६ ॥

यद्विज्ञातमेवाभूदित्येतासामेव देव-
ताना$^{\circ}$ समास इति तद्विदाञ्चक्रुर्यथा नु

ई कृष्णकीन्यांई होताभया ऐसैं है सो अ-
न्नका रूप है। ऐसैं जानतेभये ॥ ६ ॥

अर्थः—जोई अविज्ञातकीन्यांई होताभ-
या ऐसैं है। सो इनहीं देवताओंका समा-
स है॥ ऐसैं जानतेभये ॥ हे सोम्य ! जैसैं

सो तेजका रूप है। ऐसैं वे जानतेभये ॥
तैसैं जोई शुक्ककी न्यांई गृह्यमाण होताभ-
या। सो जलोंका रूप है। ऐसैं वे जानते-
भये ॥ जोई कृष्णकीन्यांई गृह्यमाण होता-
भया। सो अन्न (पृथिवी)का रूप है। ऐसैं
वे जानतेभये ॥ ॥ ऐसैंहीं अत्यंत दुर्लक्ष्य
जोईबी अविज्ञातकी न्यांई विशेषतैं अगृह्य-
माण होताभया। सो बी इन तीन देवता-

खलु सोम्येमास्तिस्रो देवताः पुरुषं प्राप्य त्रिवृत्त्रिवृदेकैका भवति तन्मे विजानाहीति ॥ ७ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य चतुर्थः खंडः ॥ ४ ॥

प्रसिद्ध ये तीन देवता पुरुषकूं पायके त्रिवृत त्रिवृत एक एक होवैहै सो मेरे कहतेहुये विस्पष्टजान ऐसैं ॥ ७ ॥

इति श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपा०चतुर्थः खंडः ॥४॥

ओंकाहीं समास (समुदाय)है। ऐसैं वे जानतेभये ॥ [२२५] ऐसैं प्रथम बाह्य वस्तु अग्निआदिकवाला विज्ञात है ॥ ऐसैं अबी हे सौम्य! जैसैं प्रसिद्ध ये यथोक्त तीनि देवता शिरः

---

२२५ "जैसैं प्रसिद्ध" इत्यादि वाक्यकूं वृत्तके अनुवादपूर्वक अवतार देतेहैं ॥ इहां जैसैं प्रसिद्ध एक एक देवता पुरुषकूं पायके त्रिवृत् त्रिवृत् होवैहै। तैसैं अबी अध्यात्मरूप त्रिवृत्करणकूंहीं जान। ऐसैं संबंध है औ त्रिवृत्करणकूं [कहैहैं] यह शेष है ॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकगतचतुर्थखंडस्य टिप्पणम् ॥ ४ ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य पञ्चमः खंडः॥५॥

अन्नमशितं त्रेधा विधीयते। तस्य यः

अथ श्री॰मूलभाषा॰षष्ठप्रपाठकस्य॰पंचमः खंडः ॥५॥

अर्थः—भुक्त अन्न तीनि प्रकारसैं विभा-

पाणि आदि लक्षणवाले कार्यकरणके संघात-रूप पुरुषकूं पायके पुरुषरूपसैं उपयुज्यमान हुयी त्रिवृत् त्रिवृत् एक एक होवैहै । सो मेरे कथन करतेहुये विस्पष्ट जान । ऐसैं कहिके उद्दालकमुनि कहैहैं ॥ ६ ॥ ७ ॥

इति श्री॰भाष्यभाषा॰षष्ठप्रपाठकस्य चतुर्थः खंडः ॥ ४ ॥

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰षष्ठप्रपा॰पंचमः खंडः ॥५॥

भुक्त पीत अन्न जल तेज (घर्मवस्तु)की त्रिविधता ४

टीकाः—अन्न भुक्त हुया तीनि प्रकारसैं करियेहै कहिये जठरके अग्निकरि पच्यमान हुया तीनि प्रकारसैं विभागकूं पावताहै ॥ ॥ कैसैं किः—तिसैं[२२६] तीनि प्रकारसैं क्रियमाण अ-

---

अथ श्री॰षष्ठप्रपाठक॰पंचमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ५ ॥

२२६ अन्नका तीनिप्रकारसैं विभागकूं प्राप्त होना कैसैं है।

स्थविष्ठो धातुस्तत्पुरीषं भवति । यो मध्यमस्तन्माꣳसं योऽणिष्ठस्तन्मनः ॥१॥

गकूं पावता है। ताका जो अत्यंत स्थूल धातु (अंश) है सो पुरीष (विष्ठा) होवैहै । जो मध्यम है सो मांस होवैहै। जो अत्यंत सूक्ष्म है। सो मन होवैहै ॥ १ ॥

न्नका जो स्थविष्ट कहिये स्थूलतम ऐसा धातु है नाम अत्यंत स्थूल वस्तुरूप जो विभाग प्राप्तभये अन्नका स्थूल अंश (भाग) है सो पुरीष (विष्ठा) होवैहै । जो अन्नका मध्यमरूप धातु है सो रस आदिक (रक्त)के क्रमसैं परिणामकूं पायके मांस होवैहै । जो अतिशय अणुरूप धातु है सो ऊंचेकूं हृदयकेप्रति

वा तिसका उपयोग कैसैं होवैहै? यह प्रश्नपूर्वक विवरण करैहैं ॥ इहां रस आदि । इस शब्दकरि रुधिरआदिक ग्रहण करिये है औ तिस कर्मके फलका नाडीनविषै विचरनेवाला भोक्ता है। यातैं हिता नामक नाडियां हैं तिनविषै । यह अर्थ है ॥

पायके सूक्ष्म हितानामक नाडीनविषै अनुप्रवेशकरिके वाक्आदिक करणोंकेसंघातकी स्थितिकूं उत्पन्न करता हुया मन होवैहै कहिये म[227]नेरूपसैं विपरिणामकूं पायाहुया मनकी वृद्धिकूं करैहै औ [228]तातैं अन्नकरि बढ्या होनेतैं मनकूं भौतिकपना है। वैशेषिकनके तंत्रविषै उक्त लक्षणवाला नित्य अरु निरवयव मन है ऐसैं नहीं ग्रहण करियेहै ॥ ॥ [229]यद्यपि "मन इसका दैव (दिव्य) चक्षु है" ऐसैं यह श्रुति आगे कहैगी। तथापि सो नित्यताकी अपेक्षासैं नहीं [230]किंतु सूक्ष्म व्यवहित (अंतरायसहित) अरु विप्रकृष्ट (अतिदूर) आदिक सर्व इंद्रियनके विषयन-

२२७ ननु अन्नके उपयोगतैं पूर्वहीं मनकूं सिद्ध होनेतैं सो मन होवैहै यह कैसैं कहिये है? तहां कहैहैं ॥

२२८ मनके अन्नकरि पुष्ट होने (बढने)के वचनतैं वैशेषिकनकी परिभाषावी दूषित जाननेकूं योग्य है। ऐसैं कहैहैं ॥

२२९ मनके दैवत्वरूप विशेषणतैं नित्यताकी सिद्धि होवैगी? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

२३० तब किस अभिप्रायकरि मनका दैवत्वरूप विशेषण है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

आपः पीतास्त्रेधा विधीयन्ते। तासां

अर्थः—पानकिये जल तीनि प्रकारसैं विभागकूं पावतेहैं । तिनका जो अत्यंत

विषै व्यापक होनेकी अपेक्षाकरि है औ[231] जो[232] अन्य इंद्रियनके विषयकी अपेक्षाकरि मनकी नित्यता है सोबी अपेक्षिकहीं है। ऐसैं हम कहतेहैं "[233]सत् एकहीं अद्वितीय था" इस श्रुतितैं ॥ १ ॥

टीकाः—[234]तैसैं जल पान किये हुये तीनि प्रकारसैं विभागकूं पावते हैं । तिनकेमध्य

---

२३१ तब चक्षु आदिकनतैं विलक्षण होनेतैं मनका दैवत्व विशेषण है। यातैं तिन (इन्द्रियन)की अपेक्षाकरि मनकूं नित्यता होवैगी ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

२३२ यद्वाः—चक्षुआदिकनके न होतेबी मनके सद्भावके उपलंभतैं तिन (इन्द्रियन)की अपेक्षाकारि ताकी नित्यता मान्य है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

२३३ आत्माकी न्यांई मनकी नित्यता क्यूं नहीं होवैगी ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

२३४ भुक्त अन्नकी त्रिविधताकूं कहिके । अब पान किये जलोंकी बी त्रिविधताकूं कहैहैं ॥

यः स्थविष्ठो धातुस्तन्मूत्रं भवति। यो मध्यमस्तल्लोहितं। योऽणिष्ठः स प्राणः ॥२॥
तेजोऽशितं त्रेधा विधीयते। तस्य यः

स्थूल धातु है सो मूत्र होवैहै । जो मध्यम है सो रुधिर होवैहै । जो अत्यंत सूक्ष्म है सो प्राण होवैहै ॥ २ ॥

अर्थः—भक्षणकिया तेज (तैल घृतादि)

जो अत्यंत स्थूल धातु (अंश)है सो मूत्र होवैहै । जो मध्यम है सो लोहित (रुधिर) होवैहै । जो अत्यंत सूक्ष्म है सो प्राण होवैहै ॥ जातें आगे कहैगी:—"आपोमय (जलमय) प्राण है । सो पान करनेवालेका विच्छेदकूं पावता नहीं" ऐसैं ॥ २ ॥

टीका:— तैसैं तेज जो तैल[२३५] घृतादि घर्म-

---

२३५ ननु तेजरूप जो अग्नि अरु आदित्य आदिक ताका भक्षण कैसैं होवैगा? यह आशंकाकरिके तेजकूं विशेषण देते हैं ॥

स्थविष्ठो धातुस्तदस्थि भवति। यो मध्यमः स मज्जा। योऽणिष्ठः सा वाक् ॥३॥

तीनि प्रकारसैं विभागकूं पावताहै। ताका जो अत्यंत स्थूल धातु है सो अस्थि होवैहै। जो मध्यम है सो मज्जा होवैहै। जो अत्यंत सूक्ष्म है सो वाक् होवैहै ॥ ३ ॥

वस्तु सो भक्षित हुया तीन प्रकारसैं विभागकूं पावताहै। ताका जो अत्यंत स्थूल धातु है सो अस्थि होवैहै। जो मध्यम है सो [236]अस्थिनके अंतर्गत स्नेहरूप मज्जा होवैहै। जो अत्यंत सूक्ष्म है सो वाक् होवैहै ॥ जातैं तैल[237] घृतादिकके भक्षणतैं वाक् विशद (स्पष्ट) अरु भाषणविषै समर्थ होवैहै। यह लोकविषै प्रसिद्ध है ॥ ३ ॥

---

२३६ मज्जा शब्दके अर्थकूं कहैहैं ॥

२३७ जो अतिसूक्ष्म भाग है सो वाक् है। ऐसैं उक्त अर्थकूं स्पष्ट करैहैं ॥

अन्नमयꣳहि सोम्य! मन आपोमयः प्राणस्तेजोमयी वागिति॥ भूय एव मा

अर्थः–हे सोम्य ! अन्नमयहीं मन है। जलमय प्राण है। तेजोमयी वाक् है। ऐसैं [पिता कहतेभये] ॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः–

टीकाः–[238]जातैं ऐसैं है यातैं हे सोम्य ! अन्नमय मन है। जलमय प्राण है। तेजोमयी वाक् है ॥ ॥ [239]ननु केवल अन्नके भक्षक मूषा आदिक जंतु वाचाल अरु प्राणवाले होवैहैं। तैसैं जलमात्रके भक्षक समुद्रके मीन मकर आदिक मनस्वी (मनवाले) अरु वाचाल होवैहैं। तैसैं तैलपानसैं रहित प्राणीनकाबी प्राणवान्‌पना अरु मनोवान्‌पना अनुमेय है ॥

२३८ भुक्त अन्नके अरु पान कियेबी जलौंके अरु भक्षण किये तैल आदिकके जे अत्यंत सूक्ष्म धातु (अंश) हैं। वे मन वाणी अरु प्राण हैं ऐसैं जातैं सिद्ध भया यातैं तिन-(प्राणआदिकन)की अन्नादिमयता युक्त है। ऐसैं कहैहैं ॥

२३९ तिनकी अन्नादिमयताके प्रति व्यतिरेककी सिद्धिकूं आश्रयकरिके पूर्ववादी आक्षेप करैहै ॥

भगवान् विज्ञापयत्विति॥तथा सोम्येति होवाच ॥ ४ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य पंचमः खंडः ॥ ५ ॥

फेरहीं मुजकूं भगवान् विज्ञापन करहू। ऐसैं [श्वेतकेतु पूंछताभया]॥ ॥ हे सोम्य ! तथाऽस्तु। ऐसैं [पिता] कहतेभये ॥ ४ ॥

इति श्री॰मूलभाषा॰षष्ठप्रपाठ॰पंचमःखंडः ॥५॥

जब वे ऐसैं हैं तब तहां "हे सौम्य ! अन्नमयहीं मन है" इत्यादि कैसैं कहियेहै ? [२४०] यैहूं दोष नहीं है:—काहेतैं सर्वकूं त्रिवृत्कृत होनेतैं सर्वत्र सर्वके संभवतैं ॥ [२४१] जातैं नहीं कोईबी अत्रिवृत्कृत

---

२४० मूषकआदि जंतुनकूं स्पष्ट जलपानआदिककी अप्रतीतिके हुयेबी जो तिनका भक्ष्य है तिसविषैहीं जलआदिकके अंतर्भावके संभवतैं प्राणआदिककी अन्नमयता आदिक घटित है। ऐसैं सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं॥ इहां यह अर्थ है:— सर्व अन्नआदिकके त्रिवृत्कृतपनैकूं उक्त होनेतैं इस सर्वहीं भक्ष्यकी तीनभूतस्वरूपताके संभवतैं एक एककूं भक्षण करनेवालेकी बी सर्व (तीन)की भक्षकताके संभवतैं मन आदिककी अन्नादिमयता अविरुद्ध है ॥

२४१ उक्तकूंहीं स्पष्ट करैहैं ॥

अन्नकूं खाताहै वा अत्रिवृत्कृत जल पानकरियेहै वा कोईबी अत्रिवृत्कृत तेज (घर्मवस्तु)कूं खाताहै ॥ यातैं अन्नके भक्षक मूषकआदिकनका वाचालपना वा प्राणवान्पना इत्यादि अविरुद्ध है ॥ [२४२] ईसैंरीतिसैं प्रतीतिकूं प्राप्त किया श्वेतकेतु कहैहै ॥ श्वेतकेतुरुवाचः–फेरहीं मेरेकूं भगवान् (पूज्य आप) "हे सोम्य ! अन्नमयहीं मन है" इत्यादि विज्ञापन करहू कहिये दृष्टांत करि जनावहू । [२४३] अबीबी मुजकूं इस अर्थविषै सम्यक् निश्चय भया नहीं ॥ [२४४] जातैं तेज जल अरु

---

२४२ उक्तरीतिसैं मनआदिककी अन्नादिमयताकी प्रतीति करावने द्वारा परंपरासैं सन्मात्रके परिशेषकी प्रतीतिकूं प्राप्त किये हुये श्वेतकेतु प्रश्नकूं करैहै । ऐसैं कहैहैं ॥

२४३ सर्वके संनिधानके तुल्यहुये अन्नका सूक्ष्मांश मनकूंहीं बढावता है प्राणकूं नहीं। इस निश्चयकी असिद्धि है ? ऐसैं श्वेतकेतु कहैहै ॥

२४४ अन्नके सूक्ष्मांशसैं पार्थिव भागहीं बढता है । इस विशेषकूं आशंकाकरिके श्वेतकेतु कहैहै ॥ इहां यह अर्थ है:– एक उदरविषै प्रवेशकूं पाये अन्नादिककूं मिश्रीभूत होनेतैं औ मनकूं सर्वभूतनके शब्दादि गुणनका व्यंजक होनेकरि सर्वभूतनसैं आरंभकिया होनेतैं ताके पार्थिवभावकी असि-

भुक्त पीत अन्नजल तेजकी त्रिविधता ४

अन्नमय होनेकरि अविशिष्ट (समान) एक देह-विषै उपयुज्यमान अन्न जल अरु स्नेहके समूह अत्यंत सूक्ष्म धातुरूपसैं मन प्राण अरु वाक्कूं स्वजातिके अनउल्लंघनकरि बढावतेहैं । यातैं दुःखसैं जाननेकूं योग्य हैं । यह अभिप्राय है । यातैं फेरहीं जनावहू (बोधनकरहू)। इत्यादि कहैहै ॥ ॥ तिसैं[२४५] ऐसैं कहनेवाले पुत्रके प्रति । हे सोम्य ! तथाऽस्तु (सो कहताहूं) कहिये जो तूं पूंछता हैं । यह जैसैं संभवैहै ॥ तैसैं इहां दृष्टांतकूं तूं श्रवण कर । ऐसैं पिता कहतेभये ॥ उद्दालक उवाच ॥ ४ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपा० पंचमः खंडः ॥ ५ ॥

च्छितैं उक्तविशेष नहीं संभवैहै औ जातैं ऐसैं श्वेतकेतुका अभिप्राय है यातैं । ऐसैं योजना है ॥

२४५ मनआदिककी अन्नादिमयताकूं उपपादन करनेकूं उत्तरग्रंथकूं अवतार देतेहैं ॥ इहां ऐसैं योजना है:—जो तूं मनआदिककी अन्नादिमयता कैसैं है यह पूंछता हैं ॥ सो यह जैसैं संभवैहै तैसैं इहां (अन्नादिमयताविषै) उच्यमान ताके दृष्टांतकूं श्रवण कर॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकगतपंचमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ५ ॥

अन्नकूं खाताहै वा अत्रिवृत्कृत जल पानकरियेहै वा कोईबी अत्रिवृत्कृत तेज (घर्मवस्तु)कूं खाताहै ॥ यातैं अन्नके भक्षक मूषकआदिकनका वाचालपना वा प्राणवान्पना इत्यादि अविरुद्ध है ॥ [242]ईसैरीतिसैं प्रतीतिकूं प्राप्त किया श्वेतकेतु कहैहै ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—फेरहीं मेरेकूं भगवान् (पूज्य आप) "हे सोम्य! अन्नमयहीं मन है" इत्यादि विज्ञापन करहू कहिये दृष्टांत करि जनावहू। [243]अबीबी मुजकूं इस अर्थविषै सम्यक् निश्चय भया नहीं ॥ [244]जांतैं तेज जल अरु

२४२ उक्तरीतिसैं मनआदिककी अन्नादिमयताकी प्रतीति करावने द्वारा परंपरासैं सन्मात्रके परिशेषकी प्रतीतिकूं प्राप्त किये हुये श्वेतकेतु प्रश्नकूं करैहै। ऐसैं कहैहैं ॥

२४३ सर्वके संनिधानके तुल्यहुये अन्नका सूक्ष्मांश मनकूंहीं बढावता है प्राणकूं नहीं। इस निश्चयकी असिद्धि है? ऐसैं श्वेतकेतु कहैहै ॥

२४४ अन्नके सूक्ष्मांशसैं पार्थिव भागहीं बढता है। इस विशेषकूं आशंकाकरिके श्वेतकेतु कहैहै ॥ इहां यह अर्थ हैः— एक उदरविषै प्रवेशकूं पाये अन्नादिककूं मिश्रीभूत होनेतैं औ मनकूं सर्वभूतनके शब्दादि गुणनका व्यंजक होनेकरि सर्वभूतनसैं आरंभकिया होनेतैं ताके पार्थिवभावकी असि-

अन्नमय होनेकरि अविशिष्ट (समान) एक देह-विषै उपयुज्यमान अन्न जल अरु स्नेहके समूह अत्यंत सूक्ष्म धातुरूपसैं मन प्राण अरु वाक्कूं स्वजातिके अनउल्लंघनकरि बढावतेहैं । यातैं दुःखसैं जाननेकूं योग्य हैं । यह अभिप्राय है । यातैं फेरहीं जनावहू (बोधनकरहू) । इत्यादि कहैहै ॥ ॥ तिसैं[२४५] ऐसैं कहनेवाले पुत्रके प्रति । हे सोम्य ! तथाऽस्तु (सो कहताहूं) कहिये जो तूं पूंछता हैं । यह जैसैं संभवैहै ॥ तैसैं इहां दृष्टांतकूं तूं श्रवण कर । ऐसैं पिता कहतेभये ॥ उद्दालक उवाच ॥ ४ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपा० पंचमः खंडः ॥ ५ ॥

द्धितैं उक्तविशेष नहीं संभवैहै औ जातैं ऐसैं श्वेतकेतुका अभिप्राय है यातैं । ऐसैं योजना है ॥

२४५ मनआदिककी अन्नादिमयताकूं उपपादन करनेकूं उत्तरग्रंथकूं अवतार देतेहैं ॥ इहां ऐसैं योजना हैः—जो तूं मनआदिककी अन्नादिमयता कैसैं है यह पूंछता हैं ॥ सो यह जैसैं संभवैहै तैसैं इहां (अन्नादिमयताविषै) उच्यमान ताके दृष्टांतकूं श्रवण कर॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकगतपंचमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ५ ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य षष्ठः खंडः ॥ ६ ॥

दध्नः सोम्य ! मथ्यमानस्य योऽणिमा स ऊर्ध्वः समुदीषति तत्सर्पिर्भवति॥१॥

अथ श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य षष्ठः खंडः ॥ ६ ॥

अर्थः-हे सोम्य ! मथ्यमान दधिका जो अणिमा है। सो ऊर्ध्व हुया सम्यक् ऊंचेकूं जाताहै। सो सर्पि (घृत) होवैहै ॥ १ ॥

अथ श्री०भाष्यभाषा० षष्ठप्रपा० षष्ठः खंडः ॥ ६ ॥

मन प्राण औ वाक्की क्रमसैं अन्न जल औ तेजोरूपता ९

टीकाः-हे[२४६] सोम्य ! मथनकिये दधिका जो अणिमा(सूक्ष्मभाव) है। सो ऊर्ध्व हुया मिलिके नवनीत(मसका)भावकरि ऊर्ध्वकूं गमन करैहै। सो सर्पि (घृत) होवैहै ॥१॥

अथ श्री०षष्ठप्रपाठ०षष्ठखंडस्य टिप्पणम् ॥ ६ ॥

२४६ मिश्रीभावके हुये बी सूक्ष्मभावके पृथक्हीं कार्यकारणभावविषै दृष्टांतकूं कहैहैं ॥

एवमेव खलु सोम्यान्नस्याश्यमान-
स्य योऽणिमा स ऊर्ध्वः समुदीषति त-
न्मनो भवति ॥ २ ॥

अर्थः-हे सोम्य ! ऐसैंहीं निश्चयकरि भुज्यमान अन्नका जो अणिमा है। सो ऊर्ध्व हुया सम्यक् ऊंचेकूं जाताहै सो मन होवैहै ॥ २ ॥

टीकाः-[247] जैसैं यह दृष्टांत है। ऐसैंहीं निश्चयकरि हे सौम्य! भक्षण किये (भोजन किये) अरु वायुसहित उदरके अग्निकरि मंथानसैं दधिकीन्यांई मथन किये ओदनआदिक अन्नका जो अणिमा है। सो ऊर्ध्व हुया मिलिके ऊंचे जाताहै। सो मन होवैहै ॥ अर्थ यह

---

२४७ दृष्टांतकूं अनुवाद करिके दार्ष्टांतकूं कहैहैं ॥ इहां खज जो मंथा तिसकरि मथ्यमान दधिका जैसैं अणिमा है। तैसैं यथोक्त अन्नका जो अणिमा है। ऐसैं योजनाकरनेकूं योग्य है ॥

अपाꣳसोम्य! पीयमानानां योऽणिमा स ऊर्ध्वः समुदीषति स प्राणो भवति ॥ ३ ॥

तेजसः सोम्याश्यमानस्य योऽणिमा

अर्थः–हे सोम्य! पान किये जलोंका जो अणिमा है। सो ऊर्ध्व हुया सम्यक् ऊंचेकूं जाताहै। सो प्राण होवैहै ॥ ३ ॥

अर्थः–हे सोम्य! भक्षणकिये तेजका

जोः–मैंनके[२४८] अवयवोंकेसाथि मिलिके मनकूं बढावताहै ॥ २ ॥

टीकाः–हे सोम्य! तैसें पान किये जलोंका जो अणिमा है। सो मिलिके ऊर्ध्वकूं जाताहै। सो प्राण होवैहै ॥ ३ ॥

टीकाः–हे सोम्य! ऐसैंहीं निश्चयकरि भक्ष्यमाण तेज (तैलघृतादिक) का जो अ-

---

२४८ सो मन होवैहै। यह कैसें कहिये है। मनकूं पूर्वबी सिद्ध होनेतैं? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

स ऊर्ध्वः समुदीषति सा वाग्भवति॥४॥
अन्नमयꣳहि सोम्य! मन आपोमयः
प्राणस्तेजोमयी वागिति॥भूय एव मा

जो अणिमा है। सो ऊर्ध्व हुया सम्यक्
ऊंचेकूं जाताहै। सो वाक् होवैहै ॥ ४ ॥
अर्थः-हे सोम्य ! अन्नमयहीं मन है।
जलमय प्राण है। तेजोमयी वाक् है ऐसें
[पिता कहते भये] ॥ ॥ श्वेतकेतुरुवा-

णिमा है। सो ऊर्ध्व हुया मिलिके ऊंचेकूं
जाताहै। सो वाक् होवैहै ॥ ४ ॥
टीकाः-हे सौम्य ! अन्नमैंयहीं[२४९] मन है।
आपोमय प्राण है। तेजोमयी वाक् है।
ऐसें मैनें युक्त हीं कहा। यह अभिप्राय है॥
॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः-[जातैं ऐसैं आप-

२४९ मनआदिककी अन्नादिमयताकूं उपसंहार करैहैं ॥
इहां यातैं। याका तुह्मारे अभिप्रायतैं। यह अर्थ है औ यह
सर्व। ऐसें प्राणका जलमयपना अरु वाक्का तेजोमयपना
कहियेहै ॥

भगवान्विज्ञापयत्विति ॥ तथा सोम्येति होवाच ॥ ५ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य षष्ठः खण्डः ॥ ६ ॥

च:—फेरहीं भगवान् मेरेकूं विज्ञापनकरहू। ऐसैं [पुत्र कहताभया] ॥ ॥ हे सोम्य ! तथाऽस्तु । ऐसैं पिता कहतेभये ॥ ५ ॥

इति श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपाठ० षष्ठः खंडः॥६॥

का अभिप्राय है] यातैं जल अरु तेजका यह सर्व ऐसैं होहू। परन्तु मन अन्नमय है । इस अर्थविषै अव्यभिचारकरि मेरेकूं निश्चय नहीं भया। यातैं फेरहीं मेरेकूं भगवान् मनका अन्नमयपना दृष्टांतकरि विज्ञापन करहू ? ऐसैं [श्वे-

---

२५० हृदयप्रदेशविषै प्राणआदिकके सन्निधानके अविशेषके हुये । मनकाहीं अन्नके रसकरि उपचय (बढना) कैसैं होवै है । यह अद्यापि समाहित (समाधानका विषय) भया नहीं । ऐसैं मानिके श्वेतकेतु कहैहै ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य सप्तमः खंडः ॥७॥
षोडशकलः सोम्य! पुरुषः पञ्चदशा-

अथ श्री०मूलभाषा० षष्ठप्रपाठ०सप्तमः खंडः ॥ ७ ॥
अर्थः—उद्दालक उवाचः—हे सोम्य ! पुरुष षोडशकल है ॥ पंचदश दिन भोजनकूं मतिकर । काम (यथेच्छा) जलकूं

तकेतु कहता भया] ॥ ॥ हे सौम्य ! तथा[251]स्तु । ऐसैं पिता कहतेभये ॥ ५ ॥
इति श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य षष्ठः खंडः ॥६॥
अथ श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपा०सप्तमः खंडः ॥ ७ ॥
षोडशकलपुरुषोक्तिसैंमनआदिकीअन्नमयतादिकानिश्चय६
टीकाः—भुक्त[252] अन्नका जो अत्यंत सूक्ष्म धातु है । सो मनविषै शक्तिकूं धारण करता भया। सो अन्नकरि वृद्धिकूं प्राप्त भई मनकी शक्ति षोडश प्रकारसैं विभागकूं पायके पुरुषकी कला

२५१ मनके विशेषकरि अन्नमयपनैकूं उपपादन करनेकूं पिता उत्तर ग्रंथकूं उठावते हैं ॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकगतषष्ठखंडस्य टिप्पणम् ॥ ६ ॥
अथ श्री०षष्ठप्रपाठकगतसप्तमखंडस्य टिप्पणम् ७
२५२ अन्वय अरु व्यतिरेककरि मनके अन्नरसकरि बढ-

हानि माशीः काममपः पिबाऽऽपोमयः प्राणो न पिबतो विच्छेत्स्यत इति ॥१॥

पानकर । जलमय प्राण नहीं पानकरने-वालेका विच्छेदकूं पावैगा । ऐसैं [पिता कहतेभये] ॥ १ ॥

होनेकरि निर्देश करनेकूं इच्छित है । तिसैं[253] मनविषै अन्नसैं बडी हुयी अरु षोडश प्रकारसैं विभागकूं प्राप्त भई शक्तिकरि संयुक्त तिसवाला हुया कार्य कारणका संघातरूप जीवविशिष्ट पुरुष षोडशकल (षोडशकलावान्) कहियेहै ॥ जिसैं[254] शक्तिके होते द्रष्टा श्रोता मंता बोद्धा कर्त्ता विज्ञाता सर्व क्रियाविषै समर्थ पुरुष होवैहै औ जिस शक्तिके नष्ट हुये सामर्थ्यकी हानि होवैहै॥

नेकूं दिखावनेकूं अन्नरसकरि जनित शक्तिकूं कलापनैकरि कलपना करैहैं ॥ इहां षोडश दिनोंके अवच्छेदकरि षोडश प्रकारसैं कलपना देखनेकूं योग्य है ॥

२५३ तथापि पुरुषका षोडशकलपना (षोडशकलावान्-पना) कैसैं है? यातैं कहैहैं ॥ ॥

२५४ तिसीहीं प्रकृत अन्नरसकृत शक्तिकूं विशेषण देते

औ आगे[255] "अन्नका आयी (लाभवाला) द्रष्टा होवैहै" इत्यादि । कहैगी ॥ औ सैर्व[256] कार्यकारणका सामर्थ्य मनका कियाहीं है ॥ जातैं लोकविषै केईक मानस[257] बलकरि संपन्न ध्यानरूप[258] आहारवाले बलयुक्त देखियेहैं । काहेतैं अन्नकूं सर्वात्मक होनेतैं ॥ यांतैं[259] अन्नका किया मानस

हैं ॥ इहां तिस शक्तिकरि संयुक्त पुरुष षोडशकल कहियेहै । ऐसैं पूर्वले पदसैं संबंध है ॥

२५५ अन्नरसकरि जनित अरु मानस शक्तिका किया संघातका सामर्थ्य है । इस अर्थविषै वाक्यकूं प्रमाण करैहैं ॥ इहां आय जो लाभ सो इसकूं है सो आयी है । कहिये यावत् अन्नकूंबी अत्ता (भोक्ता) होवैहै तावत्हीं इसका द्रष्टा है । इत्यादि व्यवहार संभवैहै । यह श्रुतिका अर्थ है ॥ [इहां "आयै" ऐसा पाठ वर्णके फेरफारकरि है] ॥

२५६ उक्त अर्थविषै लोकके अनुभवकूं अनुकूल करैहैं ॥

२५७ ताहींकूं स्पष्ट करैहैं ॥

२५८ किंवाः—केईक मानस (मनके)हीं बलकरि ध्यानरूप आहारवाले देखियेहैं औ सो ध्यान अन्नकी परंपराकरि सिद्ध है । काहेतैं अन्नकूंहीं देहादिरूपसैं परिणामकूं पाया होनेतैं । ऐसैं कहैहैं ॥

२५९ ऐसैं भूमिकाकूं करिके । अब षोडशकल शब्दके अर्थकूं कहैहैं ॥ इहां जातैं अन्नका किया मानस वीर्य है । यातैं सोई षोडश प्रकारसैं विभागकूं पायके कला हैं जिसकी । ऐसैं

वीर्य है । यातैं षोडश हैं कला जिस पुरुषकी सो यह षोडशकल पुरुष है ॥ याकूं जब प्रत्यक्ष-कीन्यांई करनेकूं इच्छताहैं तब तूं पंचदश सं-ख्यावाले दिवसपर्यंत अन्नके भोजनकूं मति कर । [260] जातैं जलकूं नहीं पीनेवाले तेरा प्राण-विच्छेदकूं पावैगा । यातैं इच्छातैं (जैसैं इच्छा होवै तैसैं) जलकूं पानकर । जलमय (जल-का विकार) प्राण है । ऐसैं हम कहतेभये ॥ [261] जातैं कार्य जो है सो स्वकारणके आश्रयविना अविभ्रंशमान (अविनाशी) हुया स्थित होनेकूं उत्साह करता नहीं ॥ १ ॥

योजना है औ एतत् (इसकूं)इस शब्दकरि अन्नका किया मानस वीर्य ग्रहण करियेहै औ प्राणविच्छेद (वियोग)कूं पावैगा जातैं तातैं जलकूं पानकर । ऐसैं पूर्वके पदसैं संबंध है ॥

२६० जलके पानके परित्यागके हुये प्राणके वियोगविषै कारणकूं कहैहैं ॥

२६१ प्राणकी जलमयताके हुयेबी जलके परित्यागके हुये ताका उच्छेद (नाश) कैसैं होवैहै ? तहां कहैहैं ॥ इहां ऋ-चाआदिकका अप्रतिभान (अभान) तहां ऐसैं कहियेहै औ अलपकूंबी दाह करै नहीं तब बहुतकूं कहांतैं दाह करैगा ।

स ह पञ्चदशाहानि नाशाथ हैनमुपससाद । किं ब्रवीमि भो इत्यृचः सोम्य!

अर्थः—सो पंचदशादिन भोजनकूं नकरताभया । अनंतर इस (पिता)के प्रति समीपजाताभया ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—भो (हे भगवन्! मैं) क्या कहूं । ऐसैं [पुत्र कहताभया] ॥ ॥ उद्दालक उवाचः—हे सोम्य! ऋचाओंकूं । यजुषनकूं । सामोंकूं [पठनकर] ऐसैं [पिता कहते भये] ॥

टीकाः—सोई (श्वेतकेतु) ऐसैं सुनिके मनके अन्नमयपनैकूं प्रत्यक्षकीन्यांई करनेकूं इच्छता हुया पंचदश दिन भोजनकूं न करता भया ॥ अनंतर षोडशवें दिनाविषै इस पिताकेप्रति समीप गमन करता भया औ स-

ऐसैं योजना है औ इधर व्यावृत्ति जो व्यतिरेक सो "अन्नके उपयोगके अभावके होते मनके सामर्थ्यका अभाव है" अरु अनुवृत्ति जो अन्वय सो "अन्नके उपयोगके होते मनका सामर्थ्य है" यह भेद है ॥

यजूꣳषि सामानीति ॥ स होवाच-न वै मा प्रतिभान्ति भो इति ॥ २ ॥

तꣳ होवाच यथा सोम्य ! महतोऽ-

श्वेतकेतु कहताभया ॥ श्वेतकेतुरुवाचः– भोः (हे भगवन् !) मेरेकूं प्रतिभान होते नहीं । ऐसैं [पुत्र कहताभया] ॥ २ ॥

अर्थः–ताकूं [पिता] कहतेभये ॥ उद्दालक उवाचः–हे सोम्य ! जैसैं महान्

मीप जायके कहता भयाः–भो भगवन्! मैं क्या कहूं? ऐसैं ॥ ॥ इतर (पिता) कहता भया हे सौम्य ! ऋचाओंकूं यजुषनकूं अरु सामोंकूं पठनकर । ऐसैं ॥ ॥ इसरीतिसैं पिताकरि उक्त हुया सो श्वेतकेतु कहैहैः–भो भगवन् ! मुजकूं ऋचाआदिक प्रतिभान होते नहीं । अर्थ यह जोः–मेरे मनविषे नहीं देखिये हैं । ऐसैं ॥ २ ॥

टीकाः–ऐसैं कहनेवाले ता पुत्रकेप्रति पिता

भ्याहितस्यैकोऽङ्गारः खद्योतमात्रः परिशिष्टः स्यात्तेन ततोऽपि न बहु दहे-

---

अरु वृद्धिकूं पाये [अग्नि]का एक अंगार खद्योतमात्र परिशिष्ट (शेषरहा) होवै । तिसकरि तिसतैं बी बहुतकूं दाहकरै नहीं॥

कहैहैं:—जिसकरि तेरेकूं वे ऋचाआदिक नहीं भान होतेहैं तहां कारणकूं श्रवण कर । [ऐसैं ताकूं पिता कहैहैं:—] हे सोम्य ! जैसैं लोकविषै महान् (महत् परिमाणवाले) अरु इन्धनोंकरि वृद्धिकूं प्राप्त भये अग्निका एक अंगार खद्योतमात्र (खद्योतरूप जंतुके परिमाणवाला) शांत भयेका अवशिष्ट होवै । तिस अंगारकरि ता (तिस परिमाण)तैंबी किंचित्कूंबी दहनकरै नहीं तब बहुतकूं कहांतैं दहन करैगा ॥ ऐसैंहीं हे सोम्य ! तेरी अन्नसैं वृद्धिकूं प्राप्तभई षोडशकलाओंके मध्य एककला (अवयव) अवशिष्ट होवै (रही है)। तिस

देवꣳ सोम्य! ते षोडशानां कलानामेका कलाऽतिशिष्टा स्यात्तयैतर्हि वेदान्नानुभवस्यशान ॥ ३ ॥

अथ मे विज्ञास्यसीति ॥ स हाशाथ

हे सोम्य! ऐसैं तेरी षोडश कलाओंके मध्य एक कला अवशिष्ट होवै। तिसकरि अबी वेदनकूं नहीं अनुभव करताहैं। भोजनकूं कर अनंतर मेरे [वचनतैं] जानैगा। ऐसैं [पिता कहतेभये] ॥ ३ ॥

अर्थः—सो भोजनकूं करताभया। अनंतर इस (पिता)के प्रति समीप जाताभ-

---

खद्योतमात्र अंगारतुल्य कलाकरि तूं अबी वेदोंकूं नहीं अनुभव करता हैं कहिये नहीं जानताहैं औ प्रथम भोजनकूं कर। अनंतर मेरी वाणीकूं सुनिके अशेषकूं जानैगा ॥३॥

टीकाः—सो (श्वेतकेतु) तैसैंहीं भोजनकूं करता भया ॥ अनंतर इस पिताकेप्रति श्र-

हैनमुपससाद। तꣳ ह यत्किञ्च पप्रच्छ सर्वꣳह प्रतिपेदे ॥ तꣳ होवाच ॥ ४ ॥ यथा सोम्य! महतोऽभ्याहितस्यैक-

---

या ॥ ताकूं [पिता] जो कछु पूंछतेभये। सर्वकूं जानताभया ॥ ४ ॥

अर्थः—ता (पुत्र)कूं कहतेभये ॥ उद्दालक उवाचः—हे सोम्य! जैसें महान् अरु वृद्धिकूं पाये [अग्नि]के तिस खद्योतमा-

---

वण करनेकूं इच्छता हुया समीप जाता भया। तिस समीप आये पुत्रकूं जो कछु ऋचाआदिकनविषै ग्रंथरूपकूं वा अर्थके समूहकूं पिता पूंछते भये ॥ सो श्वेतकेतु सर्वहीं तिस ऋचाआदिककूं अर्थतें औ ग्रंथतें जानता भया ॥ ४ ॥

टीकाः—ताकूं फेर कहते भयेः—हे सोम्य! जैसें महान् (बडे) अरु वृद्धिकूं पाये [इत्यादि समान है] शांत भये अग्निके परिशेष रहे खद्योतमात्र एक अंगारकूं तृणोंकरि अरु चू-

मङ्गारं खद्योतमात्रं परिशिष्टं तं तृणैरु-
पसमाधाय प्राज्वलयेत्तेन ततोऽपि बहु
दहेत् ॥ ५ ॥

एवꣳसोम्य! ते षोडशानां कलाना-
मेका कलाऽतिशिष्टाऽभूत्साऽन्नेनोपस-

त्र अवशिष्ट एक अंगारकूं तृणोंकरि उप
समाधानकरिके प्रज्वलित करै। तिसकरि
तिसतैंबी बहुतकूं दाह करै ॥ ५ ॥

अर्थः—हे सोम्य! ऐसैंहीं तेरी षोडश
कलाओंके मध्य एक अवशिष्ट होतीभई।

णोंकरि उपसमाधानकरिके (स्थापनकरिके)
प्रज्वलित करै (बढावै)। तिस प्रदीप्त अंगार
करि तिस पूर्व परिमाणतैंबी बहुतकूं दाह
करै (जलावै) ॥ ५ ॥

टीकाः—हे सोम्य! ऐसैं तेरी सामर्थ्यरूप
षोडश अन्नकी कलाओंके मध्य सामर्थ्यरूप
एक कला अतिशिष्ट (अवशिष्ट) होती भई।

माहिता प्राज्वलीं तयैतर्हि वेदाननुभव-
स्यन्नमयꣳ हि सोम्य! मन आपोमयः

सो अन्नकरि बढाई हुयी प्रज्वलित भई। तिसकरि अबी वेदनकूं अनुभवकरताहैं ॥ हे सोम्य! अन्नमयहीं मन है। जलमय प्राण है। तेजोमयी वाक् है। ऐसें [पिता

कहिये पंचदशादिन नहीं भोजन करनेवाले तेरी एक एक दिवसकरि एक एक कला अपरपक्ष-विषै चंद्रमाकी कलाकीन्यांई क्षीण भई ॥ सो तेरी अतिशिष्टकला भुक्त अन्नकरि उपसमा-हित (वर्धित) हुयी प्रज्वलित भई। अर्थ यह जोः—वर्धित भई ॥ इहां "प्राज्वालीत्" ऐसा पाठांतर है। तब (तिस पक्षविषै) अन्नकरि उपसमाहित (बढायी) हुयी आप प्रज्वलित होतीभई (बढतीभई) । यह अर्थ है ॥ तिस वर्धित कलाकरि अबी तूं वेदनकूं अनुभव करताहैं (जानताहैं) ॥ ऐसें व्यावृत्ति (व्यति-

प्राणस्तेजोमयी वागिति ॥ तद्धास्य वि-
जज्ञाविति विजज्ञाविति ॥ ६ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य सप्तमः खण्डः ॥ ७ ॥

कहतेभये] ॥ ॥ [श्वेतकेतु] इस (पि-
ता)के तिस (उक्त)कूं जानताभया ऐसैं ।
जानताभया ऐसैं ॥ ६ ॥

इति श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपा०सप्तमः खंडः॥७॥

रेक) अरु अनुवृत्ति (अन्वय)करि मनका अ-
न्नमयपना सिद्धभया। ऐसैं पिता उपसंहार करैं-
हैं:-हे सोम्य! अन्नमयहीं मन है। इत्यादि ॥
जैसैं[२६२] यह मनका अन्नमयपना तेरेकूं सिद्ध भया
तैसैं जलमय प्राण है। तेजोमयी वाक् है।
यहबी सिद्धहीं है। यह अभिप्राय है ॥ तिस
इस पिताके उक्त मनआदिकके अनादिमयप-

---

२६२ मनकी अन्नमयताकूं उपपादन करनेकूं आरंभकिया
" जलमय प्राण है " इत्यादि वाक्य है सो इहां कैसैं कहिये
है? तहां कहैहैं ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्याष्टमःखंडः ॥८॥

उद्दालको हारुणिः श्वेतकेतुं पुत्रमु-

अथ श्री॰मूलभाषा॰षष्ठप्रपाठकस्याष्टमः खंडः ॥ ८ ॥

अथ श्री प्रथमोपदेशप्रारंभः ॥ १ ॥

अर्थः–उद्दालक आरुणि श्वेतकेतु पुत्रकूं

नैकूं श्वेतकेतु जानता भया ॥ इहां दो[263] अभ्यास त्रिवृत्करणके प्रकरणकी समाप्तिअर्थ है ॥ ६ ॥

इति श्री॰भाष्यभाषा॰ षष्ठप्रपाठकस्य सप्तमः खंडः ७

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰षष्ठप्रपाठकस्याष्टमः खंडः ॥८॥

सुषुप्ति औ अन्न जलद्वारा जगन्मूल सदद्वैतोपदेश ७

अथ प्रथमोपदेशः ॥ १ ॥

टीकाः–जिसैं[264] मनविषै आदर्शविषै प्रतिबिं-

---

२६३ विद्याकी समाप्तिविना इहां दोवार कथन कैसें है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

इति श्री॰षष्ठप्रपाठकगतसप्तमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ७ ॥

अथ श्री॰षष्ठप्रपाठकगताष्टमखंडस्य टिप्पणम् ८

२६४ त्रिवृत्करणके निर्णयरूपविषयवाले अवांतर प्रकरणकूं परिसमाप्तकरिके । अब सत्रूप विषयवालेहीं महाप्रकरणकूं अनुवर्त्तन (प्रवर्त) करते हुये मनके लयहुये सुषुप्तिविषै जीवकूं सत्की जो संपत्ति (प्राप्ति) होवैहै ताकूं कहनेकूं उक्त मन उपाधिवान्पनैकूं अनुवाद करैहैं ॥

वाच-स्वप्नान्तं मे सोम्य! विजानीहीति।
यत्रैतत्पुरुषः स्वपिति नाम।सता सोम्य!

कहतेभये ॥ उद्दालक उवाचः—हे सोम्य! स्वप्नांत (सुषुप्ति)कूं मेरे कहते हुये विस्पष्ट जान ऐसैं ॥ जहां पुरुष "स्वपिति (सोवताहै)" यह नाम होवैहै। हे सोम्य!

बरूपसैं पुरुषकी न्यांई औ जलआदिकनविषै प्रतिबिंबनसैं सूर्यादिकनकीन्यांई जीवस्वरूपसैं परा देवता अनुप्रवेशकूं प्राप्त भई है।सो मैंने[265] अन्नमय तेज अरु जलमय वाक् अरु प्राणोंकेसाथि संबंधवाला जान्या ॥ जिसैं[266] (मनो) मय अरु जिस (मन)विषै स्थित हुया जीव मननदर्शन अरु श्रवणआदिक व्यवहारकेअर्थ समर्थ होवैहै औ ताँ[267] (मन)के उपराम (लय) हुये

---

२६५ उक्त उपाधिके स्वरूपकूं संचार करैहैं ॥

२६६ उपाधिकरि उपहितविषै कार्यकरताकूं दिखावैहैं॥

२६७ मनके भावहुये जाग्रत् अरु स्वप्नरूप व्यवहारकी सिद्धि होवैहै। ऐसैं कहिके। अब ता (मन)के अभाव हुये सुषुप्तिकूं प्रकटकरैहैं ॥

तदा सम्पन्नो भवति। स्वमपीतो भवति।

तब सत्के साथि संपन्न (प्राप्त) होवैहै ॥ स्वस्वरूपकूं प्राप्त होवैहै। तातैं इसकूं "स्व-

अपने देवतारूपहींकूं पावताहै ॥ सो[२६८] अन्य श्रुतिविषै कहा है:—"ध्यान करते हुयेकीन्यांई लीलाकरते हुयेकीन्यांई। बुद्धिसहित स्वप्नरूप होयके इस लोककूं अतिक्रमणकरताहै। सोई यह आत्मा ब्रह्म विज्ञानमय मनोमय है" इत्यादि औ "स्वप्नकरि शारीर" इत्यादि अरु "प्राणानकूं करता हुयाबी प्राण नाम होवैहै" इत्यादि ॥ तिसं[२६९] इस मनविषै स्थित अरु मन आख्याकूं प्राप्त

२६८ आत्माविषै मनके वशतैंहीं दर्शन आदिक व्यवहार है स्वरसताकरि नहीं। इस अर्थविषै बृहदारण्यककी श्रुतिकूं प्रमाण करैहैं ॥ इहां द्वितीय वाक्यविषै "सधी (बुद्धिसहित)" यह पद उपयोगी होवैहै। औ तृतीयवाक्यविषै तो "विज्ञानमय है अरु मनोमय है" ये दोपद उपयोगी होवैहैं ॥

२६९ ऐसैं भूमिकाकूं करिके समनंतर वाक्यकूं ग्रहण करैहैं ॥ इहां "ताकूं पुत्रके अर्थ" इस ठिकाने तिस परदेवताविषै ताका अवस्थानपना यह तत् (ताकूं) शब्दका अर्थ है औ "तहां" ऐसैं द्वितीयपक्षकी उक्ति है औ "स्वप्न" यह

तस्मादेनꣳ स्वपितीत्याचक्षते। स्वꣳ ह्यपीतो भवति ॥ १ ॥

पिति (सोवताहै)" ऐसें कहतेहैं । जातें स्वस्वरूपकूं प्राप्त होवैहै ॥ १ ॥

अरु मनके उपशमरूप द्वारकरि इन्द्रियनके विषयनतैं निवृत्त भये जीवका जिस स्वात्मभूत परदेवताविषै जो अवस्थान है। ताकूं पुत्रकेअर्थ कहनेकूं इच्छते हुये उद्दालक आरुणि। श्वेतकेतु पुत्रकेप्रति कहतेहैं ॥ उद्दालक उवाचः— स्वप्नान्तकूं कहिये स्वप्नके मध्यकूं। स्वप्न ऐसी दर्शनवृत्तिरूप स्वप्नकी आख्या (संज्ञा) है तिस स्वप्नके मध्यरूप स्वप्नांतकूं। अर्थ यह जोः—सु-

---

दर्शनवृत्तिरूप स्वप्नकी आख्या है। इस ठिकाने स्वप्न शब्दकूं स्वप्न अरु सुषुप्तिविषै साधारण होनेतैं सुषुप्तिकी व्यावृत्तिअर्थ "दर्शनवृत्तिरूप" यह विशेषण है। काहेतैं सुषुप्तिकूं अदर्शनवृत्तिरूप होनेतैं औ "अर्थतैं" याका। जातैं स्वप्नरूप कार्यका सतत्व (कारण) है सो सुषुप्तिहीं है। काहेतैं सुषुप्तिनामक तम जो अज्ञान सो स्वप्न अरु जाग्रत्का बीज है। यातैं तहां दोनूंके लयतैं। द्वितीय व्याख्यानविषै सुषुप्तिहीं अर्थके वशतैं फलती है। यह अर्थ है ॥

षुप्तिकूं ॥ अथवा स्वप्नांतकूं । याका स्वप्नके सतत्व (कारण)कूं । तहां (द्वितीय पक्षविषै)बी अर्थतैं सुषुप्तिहीं होवैहै । काहेतैं "[२७०]स्वंस्वरूपकूं प्राप्त होवैहै" इस वचनतैं ॥ [२७१]जातैं सुषुप्तितैं अन्यठिकाने जीवकी स्वस्वरूपकेप्रति प्राप्तिकूं ब्रह्मवेत्ता इच्छते नहीं ॥ तहां (सुषुप्तिविषै) [२७२]जातैं आदर्शके दूरी किये हुये आदर्शगत पुरुषका प्रतिबिंब जैसैं आपहीं पुरुषकूं प्राप्त होवैहै । ऐसैं मन आदिकके उपराम हुये चैतन्यके प्रतिबिंबरूप जीवस्वरूपसैं नामरूपके व्याकरण (विस्पष्टकरणे)अर्थ मनविषै प्रवेशकूंपाई जो परा देवता सो मननामक जीवरूप ताकूं त्यागिके अपनेहीं आत्मा(स्वरूप)कूं पावती है । [२७३]यातैं सुषुप्ति

२७० यातैं बी स्वप्नांत शब्दसैं साक्षात् वा अर्थात् सुषुप्तिहीं कहीहै । ऐसैं कहैहैं ॥

२७१ ननु अन्य अवस्थाविषैबी "स्वस्वरूपकूं प्राप्त होवैहै" यह श्रुतिवचन अविरुद्ध है? ऐसैं जो कहै । सो बनै नहीं । ऐसैं कहैहैं ॥

२७२ तहां (सुषुप्तिविषै) बी स्वाप (स्वरूपकी प्राप्ति) कैसैं होवैहै? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

२७३ "स्वपिति" नामके अर्थके सामर्थ्यकरि सिद्ध अर्थकूं निगमन करैहैं ॥

हीं स्वप्नांतशब्दका वाच्य है ऐसैं जानियेहै ॥ [२७४] जहांतो सोया हुया स्वप्नोंकूं देखताहै सो स्वाप्न (स्वप्नका) दर्शन सुखदुःखकरि संयुक्त है यातैं पुण्यपापका कार्य है। [२७५] जातैं पुण्यपापकूं सुखदुःखकी आरंभकता प्रसिद्ध है [२७६] पुण्यपापकूं अविद्या अरु कामके आश्रयकरिहीं सुखदुःख अरु तिनके दर्शनरूपकार्यकी आरंभकता संभवैहै। अन्यथा नहीं ॥ यातैं संसारके हेतु अविद्या काम अरु कर्मकरि संयुक्तहीं स्वप्न है। जातैं तहां स्वरूपकूं प्राप्त नहीं होवैहै। काहेतैं "[२७७] पुण्यकरि अनन्वागत (असंबद्ध) अरु पाप-

---

२७४ ननु स्वप्नांत शब्द जब बुद्धांत शब्दकी न्यांई स्वप्नकूं हीं कथन करैहै। तबबी "स्वस्वरूपकूं प्राप्त होवैहै" यह श्रुतिवाक्य अविरुद्ध है। काहेतैं सर्वदा जीवकूं सत्रूप ब्रह्मकी प्राप्तिके तुल्य होनेतैं? यातैं कहैहैं ॥

२७५ स्वप्नके दर्शनकूं पुण्य पापकी कार्यता प्रकट करैहैं॥

२७६ केवल पुण्यपापकरिहीं स्वप्नविषै नहीं जुडताहै किंतु अविद्याआदिककरिबी। यातैं तहां (स्वप्नविषै)स्वाप्यय (स्वरूपकी प्राप्ति) नहीं संभवैहै। ऐसैं कहैहैं ॥

२७७ तब स्वप्नकी न्यांई सुषुप्तिविषैबी स्वाप्यय नहीं होवैगा। काहेतैं तहांबी काम कर्म आदिकके संबंधके संभवतैं? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

करि अनन्वागत है। तब (सुषुप्तिविषै) हृदयके सर्व शोकनकूं तीर्ण (तिरगया) होवैहै "सोई इसका यह अतिछंदा है यह परम आनंद है" इत्यादि श्रुतिनतैं ॥ सुषुप्तिविषैहीं जीवभावसैं विनिर्मुक्त अपनें परदेवतारूपकूं मैं दिखावूंगा। ऐसैं पिता कहैहैं:—हे सोम्य! मेरे कहते हुये स्वप्नांत(सुषुप्ति)कूं विरुपष्ट जान (निश्चयकर)। यह अर्थ है॥ ॥ कब (किसकालविषै) स्वप्नांत होवैहै? यह कहियेहै:—जहां कहिये जिस कालविषै सोवनेवाले पुरुषका लोकविषै प्रसिद्ध "स्वपिति (सोवताहै)" ऐसा यह नाम होवैहै [तब स्वप्नांत होवैहै]॥ ॥ औ गौण यह नाम है। ऐसैं कहैहैं:—जब पुरुष स्वपिति (सोवता है) ऐसैं कहियेहै॥ तब (तिसकालविषै) सत् शब्दके वाच्य प्रकृत परदेवतारूप सत् ब्रह्मके साथि संपन्न (संगत) होवैहै कहिये एकीभूत होवैहै॥ नाम मैंन[२७८]-

२७८ जीवरूपके होते देवताभाव कैसैं संभवैहै? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

विषै प्रविष्ट अरु मनआदिकके संसर्गकरि किये जीवरूपकूं परित्यागकरिके अपना सत्रूप जो परमार्थ सत्य है ताकूं प्राप्त होवैहै। यातैं (तातैं) "स्वपिति (सोवता है)" ऐसैं इसपुरुषकूं लौकिकजन कहतेहैं ॥ [२७९]जातैं अपने (आत्मा)कूं प्राप्त होवैहै। यातैं [२८०]गुंण (गौण)नामकी प्रसिद्धितैंबी सुषुप्तिविषै स्वात्माकी प्राप्ति जानियेहै। यह अभिप्राय है ॥ ॥

[२८१]फेर लौकिकजनोंकूं स्वात्माकी संपत्ति (प्राप्ति) कैसैं प्रसिद्ध है? [२८२]स्वप (सुषुप्ति)कूं जाग्रत्के

२७९ "तातैं" इस शब्दकी यातैं शब्द व्याख्या है। यातैं तिसकरि योजनाकिये हेतुकूंहीं स्पष्ट करैहैं ॥

२८० "स्वपिति" नामके निर्वचन (अर्थ)के फलकूं दिखावैहैं ॥

२८१ सुषुप्तिविषै मुख्य स्वरूपावस्थानके असंभवतैं [तैसैं हुये] मुक्त होनेकरि अनुत्थानके प्रसंगतैं। स्वरूपावस्थानकी प्रसिद्धिका निमित्त कहनेकूं योग्य है? ऐसैं पूर्ववादी पूंछताहै॥

२८२ ज्वरादिरोगकरि ग्रस्त पुरुषकूं स्वभावकी स्थितिके हुये श्रम(खेद)का अभाव प्रसिद्ध है औ सुषुप्ति श्रमके दूरीकरनेका अवस्थान है। तैसैं हुये तहां स्वरूपसैं स्थितिकी प्रसिद्धि अविरुद्ध है। ऐसैं सिद्धांती कहैहैं ॥

श्रमरूप निमित्तकरि उद्भववान् होनेतैं। ऐसैं कहतेहैं ॥ कहिये [283]जौतैं जाग्रत्विषै पुण्यपापरूप निमित्तवाले सुखदुःखआदिक अनेक आयास (श्रम)नके अनुभवतैं शांत होवैहै औ तातैं आयासकूं प्राप्त अरु अनेक व्यापाररूप निमित्तकरि ग्लानिकूं प्राप्त भये करणोंका स्वव्यापारनतैं उपराम होवैहै। "[284]वाक् श्रमयुक्त होवैहै चक्षु श्रमयुक्त होवैहै" इत्यादि श्रुतितैंबी ॥ [285]तैसैं हुये "गृहीत वाक् गृहीत चक्षु गृहीत श्रोत्र गृहीत मन है" इत्यादि श्रुतिवाक्य है [यातैं जब] [286]करण प्राणकरि ग्रस्त होवैहैं औ प्राण एक अश्रांत

---

२८३ संक्षेपसैं उक्त समाधानकूं विवरण करैहैं ॥

२८४ करणोंकूं अनेक व्यापाररूप निमित्तवाली ग्लानि (खेद) होवैहै । इस अर्थविषै प्रमाणकूं कहैहैं ॥ इहां चकार (औ शब्द) अनुभवके ग्रहणअर्थ है ॥

२८५ सुषुप्तिअवस्थामैं करणोंकी उपरति(लय)विषै प्रमाणकूं कहैहैं ॥

२८६ सुषुप्तिविषै प्राणकेबी वाक्आदिककीन्यांई उपसंहृत(विलीन)पनैकूं आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह भाव है:—अन्यथा (प्राणके लय हुये) मरणकी भ्रांति होवैगी ॥

हुया जो देहरूप नीडविषै जागताहै। [२८७]तब जीव श्रमके दूरीकरनेअर्थ अपने देवतारूप आत्माकूं पावताहै । [२८८]स्वरूपविषै अवस्थानतैं अन्यठिकाने श्रमकी निवृत्ति नहीं होवैहै । यातैं "स्वस्वरूप-कूंहीं प्राप्त होवैहै" ऐसी लौकिक जनोंकी प्रसिद्धि युक्त है ॥ [२८९]जातैं लोकविषै ज्वरआदिककरि ग्रस्त अरु ता (ज्वर)की निवृत्तिके हुये स्वात्माविषै स्थित पुरुषनकूं विश्रमण (विश्रांति) देखियेहै । तैसैं इहांबी होवैहै । यह युक्त है ॥ औ "[२९०]तहां जैसैं श्येन वा सुपर्ण वि-

---

२८७ जीवकाबी बाहिर व्यापार होवैगा? ऐसैं जो कहै। सो बनै नहीं:—काहेतैं ऐसैं करणके अभावतैं। ऐसैं कहैहैं ॥

२८८ ननु सुषुप्तिविषै श्रमका निवारण मात्र होवैहै स्वरूपावस्थान नहीं। तहां किस कारणतैं लौकिकी प्रसिद्धि है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

२८९ उक्त अर्थकूं लौकिक दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥

२९० बृहदारण्यक श्रुतिके आलोचन किये हुयेबी सुषुप्ति अवस्थाविषै दोनूं अवस्थासैं जनित श्रमके निवृत्ति अर्थ ब्रह्मरूप नीड (आलय)की प्राप्ति जानिये है। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां "तहां" ऐसैं सुषुप्ति अवस्था कहिये है औ यथोक्त अर्थ जो जीवका ब्रह्मविषै अवस्थान है तिसविषै। यह अर्थ

स यथा शकुनिः सूत्रेण प्रबद्धो दिशं

अर्थः—सो जैसैं शकुनि (पक्षी) सूत्रकरि प्रबद्ध हुया दिशा दिशाके प्रति प-

---

परिपतनकरिके (विशेष ऊडिके) श्रांत होवैहै" इत्यादि श्रुतितैं ॥ १ ॥

टीकाः—तहां (सुषुप्तिमैं) यह यथोक्त अर्थविषे दृष्टांत हैः—"सो जैसैं शकुनि" कहिये पक्षियोंके घातका कर्त्ता पक्षी। सो हस्तगत सूत्रकरि प्रबद्ध (पासयुक्त) हुया दिशा दिशाके प्रति बंधनतैं मोक्षका अर्थी हुया प्रतिदिशाकेप्रति पतन होयके बंधनतैं अन्यठिकाने आयतन (विश्रमणके अर्थ आश्रय)कूं नपायके बंधन(बंधनके स्थान हस्तादिक)-कूंहीं आश्रय करैहै ॥ ऐसैंहीं कहिये जैसैं यह दृष्टांत है तैसैं निश्चयकरि हे सोम्य!

है औ स (सो) शब्द दृष्टांतरूप विषय(अर्थ)वाला है वा शकुनिरूप विषय(अर्थ)वाला है ॥

दिशं पतित्वाऽन्यत्रायतनमलब्ध्वा ब-
न्धनमेवोपश्रयत एवमेव खलु सोम्य!

तन होयके अन्यठिकाने आयतन (आ-
श्रय)कूं न पायकेबंधनकूंहीं आश्रय करैहै।
ऐसेंहीं कहिये जैसें यह दृष्टांत है तैसें नि-
श्चयकरि हे सोम्य! सो मन दिशा दि-

सो मन [इहां सो प्रकृत षोडशकलावाला अ-
न्नकरि वर्धित मन निर्धारित है। तिसविषै प्र-
विष्ट अरु तिसविषै स्थित अरु तिसकरि उपल-
क्षित जीव "सो मन" ऐसें मंचनके[२९१] पुकारने-
कीन्यांईं अजहत् लक्षणकरि निर्देश करियेहै॥
सो मन नामक उपाधिवाला जीव] जाग्रत्
अरु स्वप्नविषै अविद्या काम अरु कर्मकरि उप-
देशकरी सुखदुःखादिरूप दिशादिशाकेप्रति
पतन होयके (जायके)। अर्थ यह जोः—अनु-

---

२९१ जैसें मंचके पुकारनेसैं मंचविषै स्थित देवदत्त (पु-
रुषविशेष)अजहति लक्षणासैं जानियेहै। तैसें "सो मन"
इस शब्दकरि मनविषै स्थित जीव लक्ष्य होवैहै। ऐसें कहैहैं॥

तन्मनो दिशं दिशं पतित्वाऽन्यत्रायतनमलब्ध्वा प्राणमेवोपश्रयते प्राणबन्धनꣳ हि सोम्य! मन इति ॥ २॥

शाके प्रति पतन होयके अन्यठिकाने आयतनकूं न पायके प्राणकूंहीं आश्रय करैहै। हे सोम्य! जातैं प्राणरूप बंधनवाला मन है ऐसैं ॥ २ ॥

भवकरिके। सत् नामक स्वात्मातैं अन्यठिकाने आयतन (विश्रांतिके स्थान) कूं अप्राप्तहोयके प्राणकूंहीं [इहां सर्व कार्यकरणके आश्रय प्राणकरि उपलक्षित सत्नामवाली परादेवता "प्राण" ऐसैं कहियेहै। काहेतैं "[292]प्राणका प्राण। प्राणरूप शरीरवाला भारूप है" इत्यादि श्रुतितैं ॥ [293]यातैं तिस प्रा-

---

२९२ केवल प्रकरणतैं प्राण शब्दकरि परादेवता नहीं लखिये है किंतु अन्य ठिकाने प्रयोगके देखनेतैं बी लखियेहै। ऐसैं कहैहैं ॥

२९३ प्राणशब्दकरि परदेवताकी लक्षणाके हुये फलितकूं कहैहैं ॥

अशनापिपासे मे सोम्य! विजानी-

अर्थः—हे सोम्य! क्षुधा तृषाकूं मेरे क-

ण [नामक देवतारूप प्राणकूंहीं] आश्रय करैहै ॥ प्राण है बंधन जिस मनका सो मन प्राणबंधन[२९४] (प्राणरूप बंधनवाला) है ॥ जातैं हे सोम्य! ऐसा मन है कहिये प्राणकरि उपलक्षित परदेवतारूप आश्रयवाला मन है। यातैं तिस (मन)करि उपलक्षित जीव है ॥२॥

टीकाः—ऐसैं[२९५] "स्वपिति (सोवता है)" इस नामकी प्रसिद्धिरूप द्वारकरि जो जीवका सत्यस्वरूप जगत्का मूल है सो पुत्रकूं दिखायके। अब अन्नादि[२९६] कार्यकारणकी परंपरासैंबी

---

२९४ विज्ञानात्मा (साभासबुद्धिरूप जीव) प्राणकूंहीं आश्रय करैहै ॥ इस अर्थविषै हेतुकूं कहैहैं ॥

२९५ वृत्त (उक्त अर्थ)कूं अनुवादकरिके अनंतरके वाक्यकूं उठावते हैं ॥ इहां कहते भये अशना पिपासाकूं हे सोम्य! इत्यादि। यह शेष है ॥

२९६ किस अभिप्रायवाले हुये पिता पुत्रके प्रति ऐसैं क-

हीति।यत्रैतत्पुरुषोऽशिशिषतिनामाऽऽप एव तदशितं नयन्ते। तद्यथा गोनायो-

---

हतेहुये विशेषकरि जानऐसें ॥ जहां पुरुष "अशिशिषति (अशनकरनेकूं इच्छताहै)" यह नाम होवैहै । जलहीं तिस अशित (भुक्त अन्न)कूं ले जातेहैं ॥ सो तहां जैसें

जगत्के मूल सत्कूं दिखावनेकूं इच्छते हुये पिता पुत्रकूं कहैहैं:–हे सोम्य! [२९७]अशना पि-पासाकूं जाना अशन (भोजन) करनेकूं जो

हते भये? इस आकांक्षाके हुये कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:– अन्नादिक कार्य हैं औ कारण जल आदिक हैं तिनकी जो परंपरा है तिसकरि बी जगत्का जो सत्रूप मूल है ताकूं दिखावनेकूं इच्छते हुये पिता पुत्रके प्रति "अशना" इत्यादिक वाक्यकूं कहैहैं ॥

२९७ "अशना" इस पदकूं सन् प्रत्ययरूप अन्तवान्ताके अभावके हुयेबी ता(सन्प्रत्यय)का अर्थ कैसें व्याख्यान करिये है? तहां कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:–य(या)कारके लोपकरि इस प्रयोगविषै सन् प्रत्यय निषेध कियाहै । तैसें हुये । ता (सन्प्रत्यय)के अर्थकी उक्ति अविरुद्ध है ॥

ऽश्वनायः पुरुषनाय इत्येवं तदप आच-
क्षतेऽशनायेति । तत्रैतच्छुङ्गमुत्पतितꣳ

गोनाय अश्वनाय पुरुषनाय है। ऐसैं तब
जलोंकूं "अशनाया" ऐसैं कहतेहैं ॥ तहां
हे सोम्य! इस उत्पन्नभये शुङ्ग (देहरूप-

इच्छा सो [या अक्षरके लोपकरि] अशना है
अरु पानकरनेकूं जो इच्छा है सो पिपासा है।
तिन अशना पिपासाकूं (क्षुधा तृषाकूं) । अर्थ
यह जोः-क्षुधातृषाके स्वरूपकूं । मेरे कहते हु-
ये विस्पष्ट जानः-जहां[२९८] (जिसकालविषै) यह
(नाम) जैसैं होवै तैसैं पुरुष होवैहै ॥ ॥ सो
(नाम) क्या है कि! "अशिशिषति[२९९] (अश-

---

२९८ तहां क्षुधा तृषाके स्वरूपकूं विज्ञापन करैहैं ॥

२९९ सामान्यकरि उक्त नामकूं विशेषकरि जाननेकूं पू-
र्ववादी पूंछता है ॥ इहां जो कठिन अन्न पुरुषनैं भक्षण किया
ताकूं पान किये जल परिणामकूं प्राप्त करैहैं (पलटावते हैं)।
ऐसैं संबंध है औ "तब" ऐसैं परिणाम अवस्थाकी उक्ति है
औ "अथ" ऐसैं भुक्त अन्नकी जीर्णतातैं अनंतरता कहियेहै ॥

सोम्य! विजानीहि । नेदममूलं भविष्यतीति ॥ ३ ॥

कार्य)कूं विस्पष्ट जान । यह अमूल नहीं होवैगा ऐसैं ॥ ३ ॥

न करनेकूं इच्छताहै)" ऐसा ॥ ॥ तब तिसपुरुषका किसनिमित्तवाला यह नाम होवैहै ? यह कहैहैं:—जिस तिस पुरुषकरि भक्षित कठिन अन्नकूं पानकिये जलहीं लेजातेहैं। कहिये द्रवरूपकरिके (पिगलायके) रसादिभावसैं विपरिणामकूं प्राप्त करैहैं। तब भुक्त अन्न जीर्ण होवैहै (पाचित होवैहै) औ अनंतर इस पुरुषका " आशिशिषति (अशन करनेकूं इच्छता है)" ऐसा गौण नाम होवैहै। [३००]जांतैं अन्नके जीर्ण हुये सर्वहीं जंतु अशन करनेकूं इच्छताहै ॥ [३०१]तहां जलोंकूं अशित (भुक्त अन्न)का

---

३०० तब नामकी गौणता कैसैं है ? सो कहैहैं ॥
३०१ "सो जैसैं" इस वाक्यविषै जो तत् (सो) शब्द है

नेता होनेतैं जलोंका "अशनाया" ऐसा नाम प्रसिद्ध है [तिस इस अर्थविषै दृष्टांत कहिये है]:—जैसैं "गोनाय है" कहिये गौकूं लेजाताहै। यातैं गोपाल जो है सो "गोनाय" ऐसैं कहिये है। तैसैं अश्वनकूं लेजाताहै यातैं अश्वपाल जो है सो "अश्वनाय" ऐसैं कहियेहै औ पुरुषनकूं लेजाताहै यातैं राजा वा सेनापति जो है सो "पुरुषनाय" ऐसैं कहियेहै॥ इसी रीतिसैं तब जलोंकूं लौकिकजन विसं[३०२]र्जनीय(विसर्ग)के लोपकरि "अशनाया" ऐसैं कहतेहैं। तहां ऐसैं हुये पानकिये जलोंकरि रसादिभावसैं प्राप्तकिये भुक्त अन्नकरि

ताके अर्थकूं कहैहैं॥ इहां इस अर्थविषै दृष्टांत कहियेहै॥ यह शेष है॥

३०२ "अशनाया" ऐसा जलोंका आख्यान (नाम) कैसैं है "अशनायाः" ऐसैं जातैं विसर्गसहित नाम कहनेकूं योग्य है? तहां कहैहैं॥ इहां "तहां" या पदका व्याख्यान। ऐसैं हुये यह है। ताका भुक्त अन्नके नेतापनैके हुये। यह अर्थ है औ जलोंकरि इधर पानकिये जलोंकरि। यह शेष है औ "तहां" ऐसैं शरीरका निर्देश है॥

तस्य क्व मूलꣳ स्यादन्यत्रान्नादेवमेव

अर्थः—ताका अन्नतैं अन्यठिकाने कहां मूल होवैगा [अन्न मूल है] ॥ ऐसैंहीं नि-

---

यह शरीर उत्पादन किया है सो वटकणिका (वटबीज) विषै उत्पतित कहिये उद्गत (ऊंचे-कूं निकसे) अंकुरकीन्यांईं शुङ्ग (कार्य) है। हे सोम्य! तिस इस वटादिकके शुङ्गकी-न्यांईं उत्पतित (उत्पन्नभये) शरीरनामक शुङ्ग (कार्य) कूं विस्पष्ट जान ॥ ॥ क्या तहां जाननेकूं योग्य है? यह कहियेहै, श्रवण करः—यह शरीर शुङ्गकीन्यांईं कार्य होनेतैं अमूल (कारणरहित) नहीं होवैगा ॥ ॥ ऐसैं पिताकरि उक्तहुया श्वेतकेतु कहैहैः—॥३॥

टीकाः—जब ऐसैं वटादिकके शुङ्गकीन्यांईं मूलसहित यह शरीर है। तब तिस इस शरी-रका कहां मूल होवैगा? ऐसैं पुत्रकरि पूंछे हुये पिता कहैहैं ॥ उद्दालक उवाचः—तिस

खलु सोम्यान्नेन शुङ्गेनापोमूलमन्वि-
च्छाद्भिः सोम्य ! शुङ्गेन तेजोमूलमन्वि-

श्चयकरि हे सोम्य ! अन्नरूप शुङ्ग (कार्य) करि जलरूप मूलकूं जान। हे सोम्य ! जलरूप शुङ्गकरि तेजरूप मूलकूं जान।

(शरीर) का अन्नतैं अन्य ठिकाने कहां मूल होवैगा [कहींबी नहीं ! किंतु] अन्न मूल है। यह अभिप्राय है ॥ ॥ कैसैं[303] कि ? जातैं भुक्त अन्न पानकिये जलोंकरि द्रवरूप अरु जठरके अग्निकरि पच्यमान हुया प्रथम धातुरूप रसभावसैं परिणामकूं पावताहै । इसतैं शोणित (रुधिर)। शोणिततैं मांस। मांसतैं मेद (चर्बी)। मेदतैं अस्थि। अस्थिनतैं मज्जा मज्जातैं शुक्र (वीर्य) होवैहै ॥ औ तैसैं योषित् (स्त्री) करि भुक्तअन्न रसआदिकके क्र-

---

३०३ अन्नकी देहकी मूलताकूं आकांक्षापूर्वक उपपादन करैहैं ॥ इहां "तथा (तैसैं)" याका पुरुषकरि भुक्त अन्नकी-न्याईं। यह अर्थ है ॥

च्छ। तेजसा सोम्य! शुङ्गेन सन्मूलमन्वि-

हे सोम्य ! तेजरूप शुङ्गकरि सत्रूप मू-

मसैं ऐसैं परिणामकूं पायाहुया लोहित (स्त्रीका वीर्यरूप रज) होवैहै ॥ तिस अन्नके कार्य संयुक्त (संयोगकूं प्राप्त भये) अरु ऐसैं प्रतिदिन भुज्यमान अन्नकरि आपूर्यमाण (पूर्ण होनेवाले) शुक्र शोणित (वीर्य रज)करि मृत्तिकाके पिंडनसैं भित्तिकीन्यांई प्रतिदिन वृद्धिकूं प्राप्त अन्नरूप मूलवाला देहरूप शुङ्ग (कार्य) उत्पन्न होवैहै। यहअर्थ है॥ ॥औ[३०४] जो देहरूप शुङ्गका मूल अन्न निर्देश किया। सोबी देहकी न्यांईं विनाश अरु उत्पत्तिवाला होनेतैं किसीबी मूलतैं उत्पन्नभया शुङ्ग (कार्य)हीं है। ऐसैं करिके कहैहैं:—जैसैं देहरूप शुङ्ग अन्नरूप मूलवाला है। ऐसैंहीं निश्चयकरि हे सोम्य! अन्नरूप शुङ्ग (कार्यभूत)करि अन्नरूप शु-

३०४ तथापि सत्रूप मूलकी सिद्धि कैसैं होवैहै? यातैं कहैहैं ॥

च्छ । सन्मूलाः सोम्येमाः सर्वाः प्रजाः सदायतनाः सत्प्रतिष्ठाः ॥ ४ ॥

लकूं जान हे सोम्य ! ये सर्व प्रजा सत्-रूप मूलवाली सत्रूप आयतनवाली सत्-रूप प्रतिष्ठावाली हैं ॥ ४ ॥

ङ्गके जलरूप मूलकूं जान ॥ जलौंकूंबी विनाश अरु उत्पत्तिमान् होनेतैं शुङ्गता (कार्यता) है । ऐसैं करिके हे सोम्य ! जलरूप शुङ्ग (कार्य)करि ताके कारण तेजरूप मूलकूं जान ॥ तेजकूंबी विनाश अरु उत्पत्तिवाला होनेतैं कार्यपना है । ऐसैं करिके हे सोम्य ! तेजरूप शुङ्गकरि सत्रूप मूलकूं[३०५] ऐंकेहीं अद्वितीय परमार्थ सत्य जान ॥ जिसैं[३०६]विषै सर्व यंह वाणीका आश्रय विकार नाममात्र अनृत ।

---

३०५ सत्रूप मूलके वास्तवरूपकूं दिखावैहैं ॥

३०६ ता(सत्)कूं सर्व कल्पनाका अधिष्ठान होनेकरि परिणामवादकूं निराकरण करैहैं ॥

रज्जुविषै सर्पआदिक विकल्पके समूहकीन्यांई [307]औविद्याकरि अध्यस्त है। सो इस जगत्का मूल है॥ यातें हे सोम्य? सत्‌रूप मूल (कारण)वालीयां ये स्थावर जंगमरूप सर्व प्रजा हैं॥ वे प्रजा केवल सत्‌रूप मूलवालीहीं नहीं किंतु अबी स्थितिकालविषैबी सत् रूप आयतन (आश्रय) वालीयांहीं हैं। [308]जातें मृत्तिकाकूं अनाश्रयकरिके घटादिककी सत्ता वा स्थिति नहीं है। यातें प्रजाओंकूं मृत्तिकाकीन्यांई सत्‌रूप मूलवाली होनेतें सत् है आयतन (आश्रय) जिनोंका ऐसी जे प्रजा वे सदायतन हैं॥ औ अंता[309]विषै वे प्रजा सत्

३०७ अध्यासविषै मूलकारणकूं कहैहैं॥

३०८ प्रजा सर्व सत्‌रूप मूलवाली औ सत्‌रूप आयतन (स्थिति)वाली हैं। ऐसैं उक्त अर्थकूं दृष्टांतकरि प्रतिपादन करैहैं॥

३०९ सत्‌रूप प्रतिष्ठावाली हैं औ सत्‌रूप आयतनवाली हैं इन दो पदनके अर्थभेदके अभावकूं आशंकाकरिके कहैहैं॥ इहां यह अर्थ है:—प्रतिष्ठा शब्दकूं लयका वाची होनेतें औ आयतन शब्दकूं आश्रयरूप विषय (अर्थ)वाला होनेतें पुनरुक्ति दोष नहीं है॥

अथ यत्रैतत्पुरुषः पिपासति नाम। तेज एव तत्पीतं नयते। तद्यथा गोना-

---

अर्थः—अनंतर जहां पुरुष "पिपासति (पान करनेकूं इच्छताहै)" यह नाम होवैहै। तेजहीं तब पानकियेकूं लेजाताहै॥ तहां

प्रतिष्ठा हैं कहिये सत् है प्रतिष्ठा (लय समा[310]-प्ति अवसान[311] परिशेष[312]) जिनोंका ऐसी जे प्रजा वे सत् प्रतिष्ठा हैं॥ ४॥

टीकाः—अब जलरूप शुङ्गद्वारा सत्‌रूप मू-

---

३१० लय शब्दकी सुषुप्ति आदिक विषय(अर्थ)वान्‌ताकूं निवारण करैहैं॥

३११ सम्यक् जो आप्ति (प्राप्ति) सो समाप्ति है। ऐसैं प्राप्ति इहां विवक्षित होवैगी? इस शंकाकूं निवारण करैहैं॥

३१२ ता(अवसानरूप अंत)कूं अभावरूप होनेकरि[प्राप्त] तुच्छरूपताकूं निवारण करैहैं॥ इहां अन्न नामवाले शुङ्ग (कार्य) द्वारा सत्‌रूप मूलके निश्चयके अनंतर। यह अथ (अब) शब्दका अर्थ है औ "पिपासति (पानकरनेकूं इच्छताहै)" यह नाम कहिये इस नामवाला पुरुष। जिस काल-विषै होवैहै। ऐसैं योजना है॥

योऽश्वनायः पुरुषनाय इत्येवं तत्तेज आचष्ट उदन्येति । तत्रैतदेव शुङ्गमुत्प-

---

जैसें गोनाय अश्वनाय पुरुषनाय है। ऐसें तिस तेजकूं "उदन्या (उदकनाय)" ऐसें कहतेहैं ॥ हे सोम्य ! तिसींहीं उत्पन्नभये

लका अनुगम (निश्चय) करनेकूं योग्य है। ऐसें कहैहैंः—जहां (जिसकालविषै) "पिपासति (पान करनेकूं इच्छताहै)" ऐसा यह नाम जैसें होवै तैसें पुरुष होवैहै (यह नाम पुरुषका होवैहै)॥ "अशिशिषति (अशन करनेकूं इच्छताहै)" याकी न्यांई यहबी गौणहीं नाम होवैहै ॥ [313] द्रवरूपकिये भुक्त अन्नके नेता (लेजानेवाले) जल अन्नके कार्य देहकूं क्लेदन (आर्द्रभाव) करतेहुये शिथिल करैहैं । जलकी बहुलतातें जब तेजकरि शोषकूं नहीं प्रा-

---

३१३ "पिपासति" यह नाम पुरुषका गौण कैसें है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

तित[४] सोम्य ! विजानीहि । नेदममूलं भविष्यतीति ॥ ५ ॥

शुङ्गकूं विरूपष्टजान । यह अमूल नहीं होवैगा ॥ ५ ॥

प्तहोवैहै तब ॥ औ [३१४]अत्यंत तेजकरि शोष्यमाण (शुष्क भये) अरु देहभावकरि परिणामकूं पावनेवाले जलोंके हुये पुरुषकूं पानकरनेकी इच्छा उपजती है । तब पुरुष "पिपासति (पानकरनेकूं इच्छता है)" इस नामवाला होवैहै ॥ [३१५]सो यह कहैहैः—तेजहीं तब पान किये जल आदिककूं शोषण करता हुया देहगत रुधिर अरु प्राणभावकरि लेजाता है (परिणामकूं प्राप्त करैहै) ॥ सो जैसें "गोनाय" इत्यादि स-

---

३१४ जलोंकी तेजकरि शोष्यमाणता (शुष्कता) होइ । तितनेकरि क्या होवैहै ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां "तब" याका पानकी इच्छाकी अवस्थाविषै । यह अर्थ है ॥

३१५ तेजकूं जो उदकका नेतापना कहा । तहां श्रुतिकूं अवतार देके व्याख्यान करैहैं ॥

सुषुप्ति औ अन्न जलद्वारा जगन्मूल सदद्वैतोपदेश ७

तस्य क्व मूलꣳ स्यादन्यत्राद्भ्योऽद्भिः

अर्थः–ता (शरीर)का जलोंतैं अन्य ठिकाने कहां मूल होवैगा [जल मूल है]॥

मान है॥ तिस तेजकूं लोक "[316]उदन्या" ऐसैं कहताहै॥ उदककूं लेजाताहै यातैं तेज "उदन्य" है। इहां "उदन्या" ऐसा यह छांदस पाठ है॥ तहांबी [317]पूर्वकी न्यांई॥ [318]जलोंकाबी यहहीं शरीर नामवाला शुङ्ग (कार्य)है। अन्य नहीं। इत्यादि अन्य समान है॥ ५॥

टीकाः–[319]सामर्थ्यतैं तेजकाबी यहहीं शरीर-

---

३१६ "उदन्य" ऐसैं तेजकूं कहनेकी योग्यताके हुये ताकूं "उदन्या" यह कैसैं कहा? तहां कहैहैं॥ इहां "तहांबी" याका तेजविषैबी। यह अर्थ है॥

३१७ जैसैं "अशनाया" यह छांदस (वैदिक) पद है। तैसैं तेजविषै "उदन्या" यहबी छांदस पद हीं है। ऐसैं कहैहैं॥

३१८ अन्नद्वारा सत्रूप मूलके निश्चयकीन्यांई। जलद्वाराबी ताका निश्चय होवैहै। ऐसैं कहैहैं॥

३१९ तेजरूप कार्यद्वाराबी सत्रूप मूलका निश्चय होवैहै।

सोम्य! शुङ्गेन तेजोमूलमन्विच्छ। तेजसा सोम्य! शुङ्गेन सन्मूलमन्विच्छ। सन्मू-

---

हे सोम्य! जलरूप शुङ्गकरि तेजरूप मूलकूं जान। हे सोम्य! तेजरूप शुङ्गकरि

नामक शुङ्ग (कार्य) है॥ यातैं जलके शुङ्ग देहकरि जलरूप मूल जानियेहै। जलरूप शुङ्गकरि तेजरूप मूल जानियेहै। तेजरूप शुङ्गकरि सत्रूप मूल जानियेहै। [320] पूर्वकीन्यांई॥ [321] ऐसैंहीं तेज जल अरु अन्नमय वाचा-

---

ऐसैं कहैहैं॥ इहां "सामर्थ्यतैं" याका त्रिवृत्करणके वशतैं। यह अर्थ है॥ औ शरीरकी तीन भूतनकी कार्यता "यातैं" शब्दका अर्थ है॥

३२० जैसैं पूर्व अन्नके शुङ्ग (कार्य) देहकरि अन्ननामक मूल जानियेहै। इत्यादि व्याख्यान किया॥ तैसैं तेजके शुङ्ग देहकरि तेजरूप मूल जानियेहै। इत्यादि व्याख्यान करनेकूं योग्य है। ऐसैं कहैहैं॥

३२१ वृत्तके अनुवादपूर्वक "यथा (जैसैं)" इत्यादि वाक्यकूं ग्रहण करैहैं॥ इहां उक्त रीतिसैं दो नामोंकी प्रसिद्धिरूप द्वारकरि यथोक्त देहनामक कार्यके अन्नादिकारणकी

त्ठाः सोम्येमाः सर्व्वाः प्रजाः सदाय-

सत्‌रूप मूलकूं जान ॥ हे सोम्य ! ये सर्व प्रजा सत्‌रूप मूलवाली सत्‌रूप आयतन-

रंभणमात्र देहरूप शुङ्गके अन्नादिककी परंपरा-करि परमार्थ[322] सत्य अभय[323] (त्रासरहित[324]) निरा-[325]

परंपराकरि सत्‌नामक मूलकूं कहिये उक्तविशेषणवाले स-त्‌रूप मूलकूं जान । ऐसैं उपदेशकरि श्वेतकेतुकूं जनायके व्यवस्थाकरि शरीर एक एक भूतकरि आरंभ किया है । इस आपेक्षाके प्राप्त हुये । इस प्रकरणविषै उपयोग किये तेज आ-दिकनका स्वस्वभावके अनुसारकरि जो संघातकी वृद्धिका करनेपना प्राप्तभया । सो इहां सर्व शरीरनविषै सर्व भूतनके कार्यके उपलंभतैं व्यवस्थाविषै प्रमाणके अभावतैं दृश्यमान संघातविषै किस भूतका कितना कार्य है । इस अपेक्षाके हुये “अन्न अशित (भुक्त)” इत्यादि वाक्यविषै उक्तहीं देख-नेकूं योग्य है । ऐसैं पूर्वोक्तकूं उपदेश करैहैं । ऐसैं योजनाहै॥

३२२ सत्‌रूप मूलकी व्यवहारसत्यताकूं निवारण करैहैं ॥

३२३ वस्तुतैं अविद्याका संबंध ताकूं नहीं है। ऐसैं कहैहैं ॥

३२४ अविद्याके कार्यका संबंधबी परमार्थतैं ताकूं नहीं है । ऐसैं कहैहैं ॥

३२५ दोनूंसैं संबंधके अभाव हुये निवृत्तनिखिल दुःख-वाला होनेकरि परमानंदरूपता (अनायास सुखरूपता)की सिद्धि होवैहै । ऐसैं कहैहैं ॥

तनाः सत्प्रतिष्ठा यथा तु खलु सोम्ये-
मास्तिस्रो देवताः पुरुषं प्राप्य त्रिवृत्त्रि-

वाली सत्‌रूपप्रतिष्ठावाली हैं ॥ ॥ जैसैं
निश्चयकरि हे सोम्य ! ये तीन (तेज आ-
दिक) देवता पुरुषकूं पायके त्रिवृत् त्रिवृत्

यास (अखेद) सत्‌रूप मूलकूं जान ॥ ॥ ऐसैं
"अशीशिषति" अरु "पिपासति" इन दो नामोंकी
प्रसिद्धिरूप द्वारकरि जनायके । जो अन्य इहां
इस प्रकरणविषै पुरुषकरि उपयोग किये तेज
जल अरु अन्नका कार्यकरणके संघात देहरूप
शुङ्गका स्वजातिके अमिश्रभावकरि वृद्धिकरपना
कहनेकूं योग्य प्राप्तभया था सो इहां कथनकिया
हीं देखनेकूं योग्य है । ऐसैं पूर्व उक्तकूं उपदेश
करैहैं:—जैसैं निश्चयकरि जिसप्रकारसैं ये तेज
जल अरु अन्ननामवाली तीन देवता पुरुषकूं
पायके त्रिवृत् त्रिवृत् एक एक होवैहै ।
सो पूर्वतैंहीं कथनकिया होवैहै "भुक्त अन्न

वृदेकैका भवति तदुक्तं पुरस्तादेव भव-

एक एक होवैहै सो पूर्वहीं उक्त होवैहै ॥

तीन प्रकारसैं विभक्त होवैहै" इत्यादि । [326] तहां-हीं कहैहैं:–[327] भोजनकिये अन्नादिकनके जे मध्यम धातु होवैहैं वे सप्तधातुनके संघातरूप शरीरकूं बढावतेहैं । ऐसैं कहा ॥ मांस होवैहै । लोहित होवैहै । मज्जा होवैहै । अस्थि होवैहै ॥ औ जे अत्यंत सूक्ष्मधातु हैं वे मन प्राण अरु वाक्‌रूप देहके भीतर करणोंके संघातकूं बढावतेहैं । ऐसैं कहाः–"सो मन होवैहै । सो प्राण होवैहै । सो वाक् होवैहै । ऐसैं ॥ ॥ [328] सो यह

३२६ पूर्वोक्तकूंहीं स्पष्ट करैहैं ॥

३२७ क्या सो " अन्न अशित " इत्यादि वाक्यविषै कहाहै ? तहां कहैहैं ॥ इहां "साप्तधातुक" याका त्वचा रुधिर मांस मेद मज्जा अस्थि अरु शुक्र इन नामोंवाले सप्त धातु हैं तिनके संघातरूप [शरीरकूं] यह अर्थ है ॥

३२८ तेज जल अरु अन्नके कार्यभूत देहरूप शुङ्गद्वारा सत् तत्व निरूपण किया । अब मरणरूप द्वारकरिबी ताकूं

त्यस्य सोम्य! पुरुषस्य प्रयतो वाङ्मन-
सि संपद्यते। मनः प्राणे। प्राणस्तेज-

हे सोम्य! इस मरनेवाले पुरुषकी वाक्
मनविषै संपन्न (लीन) होवैहै। मन प्रा-

प्राण अरु करणोंका संघात। देहके नाश हुये देहांतरकेप्राति जीवकूं आश्रित हुया जिस क्रमसैं छूटगये पूर्वदेहतैं देहांतरकेप्राति गमन करैहै तिस (क्रमकीन्यांई गमन)कूं कहैहैः– हे सोम्य! मरनेवाले इस पुरुषकी वाक् मनविषै प्राप्त होवैहै (लीन होवैहै)। तब ज्ञाति " नहीं बोलताहै " ऐसें कहतेहैं। ३२९जातैं मनःपूर्वक वाणीका व्यापार होवैहै " जिसकूं

निरूपण करनेकूं आरंभ करैहैं॥ "ताकूं कहैहैं" इस ठिकाने क्रमकी न्यांई गमन तत् (ताकूं) ऐसैं कहा॥

३२९ वाणीके व्यापारके मनविषै लयमैं हेतुकूं कहैहैं॥ इहां प्राणकी संपत्ति जो है सो मनकूं तिस (प्राण)की अधीनता है औ मनके व्यापारकी निवृत्तिकी अवस्था "तब" ऐसैं कहियेहै "औ प्राण तब" ऐसैं अविज्ञानावस्था कहियेहै॥

सि । तेजः परस्यां देवतायाम् ॥ ६ ॥

णविषै । प्राण तेजविषै । तेज परदेवता-विषै ॥ ६ ॥

मनसैं ध्यावता है तिसकूं वाणीसैं बोलताहै ” इस श्रुतितैं ॥ वाक्के मनविषै लय हुये मन जो है सो केवल मननरूप व्यापारकरि वर्त्तता है॥ मनबी जब उपसंहार(लय)कूं पावताहै तब मन सुषुप्तिकालकीन्यांई प्राणविषै प्राप्त (लीन) होवैहै ॥ तब पार्श्वविषै स्थित (बाजूमैं बैठे) ज्ञाति (संबंधी) “ नहीं जानताहै ” ऐसैं कहतेहैं ॥ औ प्राण तब ऊर्ध्वोच्छ्वासी (ऊंचे श्वासवाला) अरु स्वात्माविषै विलीनभये बाह्य करणवाला हुया संवर्गविद्याविषै[३३०] देखनेतैं हस्त-

---

३३० प्राणकूं स्वात्माविषै उपसंहार किये बाह्यकरणवानता कैसैं है? सो कहैहैं ॥ इहां तहां जातैं प्राण वाक् आदिकनकूं ग्रसण करैहै ऐसैं देख्याहै । यातैं ताकूं स्वात्माविषै उपसंहार किये करणवान्पना (करणोंके विलयकी कारकता)

पादआदिकनकूं विक्षेपयुक्त करताहुया मर्मस्थानोंकूं भेदनकरते हुयेकीन्यांई उत्सर्जन (देहका त्याग) करता हुया क्रमसैं उपसंहारकूं प्राप्त हुया तेजविषै प्राप्त (लीन) होवैहै ॥ तब ज्ञाति "नहीं चलताहै" ऐसैं कहतेहैं ॥ फेर मृतभया वा नहीं । ऐसा संशय करतेहुये देहकूं आलंभमान (स्पर्श करते) हुये औ उष्णकूं जानते हुये "देह उष्ण हुया जीवताहै" ऐसैं कहते हैं ॥ जब सो उष्णतारूप लिंगवाला तेजबी उपसंहारकूं पावताहै। तब सो तेजबी परदेवताविषै प्रशमन (विलय)कूं पावताहै ॥ [३३१] तिसविषै ऐसैं क्रमकरि तेजके उपसंहार हुये औ मनके स्वमू-

युक्त है । यह अर्थ है औ "तेजविषै" ऐसैं भौतिक आध्यात्मिक (संघातविषै होनेवाला परिच्छिन्न) तेज ग्रहण करियेहै औ जीवता है ऐसैं कहतेहैं । इस रीतिसैं संबंधहै ॥

३३१ करणसहित अरु प्राणसहित भूतसर्गके परदेवताविषै उक्त क्रमसैं उपसंहारके हुयेबी जीवकूं क्या आया ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ " तब ऐसैं " याका तिस परदेवताविषै उक्त क्रमसैं तेजके उपसंहार (लय) हुये । यह अर्थ है औ स्वमूल कहिये मनका मूल भूतपंचक ताकूं औ निमित्तके उपसंहारतैं । इस ठिकाने निमित्त मन विवक्षित है ॥

लकूं प्राप्त हुये तिस (मन)विषै स्थितजीवबी सुषुप्तिकालकीन्यांई निमित्तके उपसंहारतैं उपसंहारकूं प्राप्तहुया जब सत्यअभिसंधिपूर्वक उपसंहारकूं पावताहै तब सत्कूंहीं पावताहै। फेर देहांतरकेअर्थ सुषुप्तितैं उत्थितकीन्यांई उत्थानकूं पावता नहीं ॥ जैसैं[३३२] लोकविषै भयसहित देशविषै वर्त्तमान पुरुष किसी प्रकारसैंबीहीं अभय देशकूं प्राप्त होवै। ताकीन्यांई ॥ औ ईतर[३३३] (मिथ्याभिसंधिवाला) अनात्मज्ञ(अज्ञानी) तो तिसी मूलतैं सुषुप्तितैं उत्थितकीन्यांई उत्थानकूं पायके मरिके फेर देहजालके प्रति प्रवेश करता है ॥ जिस मूलतैं उत्थान करिके जीव देहकेप्रति प्रवेश करताहै ॥ ६ ॥

---

३३२ सत्कूं प्राप्त भये सत्याभिसंधि (सत्यप्रतिज्ञावाले)का फेरि उत्थान नहीं है। यह दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥ इहां अभय देशकूं प्राप्त भया फेर सभय देशकेप्रति गमन करनेकूं इच्छता नहीं। यह शेष है ॥

३३३ औ जो अनृताभिसंध (असत्यप्रतिज्ञावाला) है सो यथोक्त रीतिकरि सत्कूं प्राप्त नहीं भया ताकेप्रति कहैहैं ॥ इहां "याका" इस षष्ठीकरि सर्व जगत् कहा औ असंसारी वा संसारी ऐसैं पदच्छेद है ॥

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदꣳ सर्वं

अर्थः–सो जो यह अणिमा है। ऐतदात्म्य (इसकरि आत्मावाला) यह सर्व

टीकाः–सो जो सत्नामवाला यह (उक्त) अणिमा (अणुभावरूप जगत्का मूल) है ऐतदात्म्य (इसकरि आत्मावाला)कहिये यह सत् है आत्मा जिस सर्वका सो एतदात्म है। तिसका (इस आत्मावालेका) जो भाव सो ऐतदात्म्य है। नाम इस सत्नामवाले आत्माकरि आत्मावाला यह सर्व जगत् है। अन्य संसारी इस (जगत्)का आत्मा नहीं है। काहेतैं "इस (ब्रह्म)तैं अन्य द्रष्टा नहीं है। इसतैं अन्य श्रोता नहीं है" इत्यादि अन्य श्रुतितैं ॥ औ जिस आत्माकरि आत्मावाला सर्व यह जगत् है सोई सत्नामवाला कारण सत्य है कहिये [३३४] परमार्थ सत् है॥ यातैं जगत्का सोई आत्मा है

---

३३४ मूलआदिकतैं विशेषकूं दिखावै हैं ॥

तत्सत्यं स आत्मा "तत्त्वमसि" श्वेतकेतो! इति ॥भूय एव मा भगवान् विज्ञा-

है। सो सत्य है। सो [इसजगत्का] आत्मा है। हे श्वेतकेतो ! "तत्वमसि (सो तूं हैं)" ऐसैं [पिता कहतेभये] ॥ ॥ श्वे-

कहिये प्रत्यक्स्वरूप सतत्व[335] (वास्तविक) याथात्म्य[336] (रूप) है। काहेतैं उपपदरहित आत्मशब्दकूं[337] गौआदिक शब्दकी न्यांई प्रत्यगात्माविषै निरूढ (संकेतसैं वर्त्तनेवाला) होनेतैं ॥ यातैं[338] हे श्वेतकेतो ! "तत्वमसि (सो सत् तूं हैं)" ऐसैं ॥ ॥ इसरीतिसैं प्रतीतिकूं प्राप्तकिया पुत्र कहैहै ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—हे भगवन्!

---

३३५ कल्पित जगत्का स्वरूप प्रत्यग्भूत अतात्विक (अवास्तविक) है ? इस शंकाकूं निवारण करैहैं ॥

३३६ तत्वकरि सहितबी सतत्व कहियेहै ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

३३७ आत्मशब्दका इस अर्थवान्पना कैसैं जानियेहै ? तहां कहैहैं ॥

३३८ सत्की आत्मरूपता होहू तिसकरि मेरेकूं तो क्या होवैगा ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

पयत्विति ॥ तथा सोम्येति होवाच॥७॥
इति षष्ठप्रपाठकस्याष्टमः खंडः ॥ ८ ॥

तकेतुरुवाचः–फेरहीं मुजकूं भगवान् विज्ञापनकरहू? ऐसैं [पुत्र कहताभया] ॥ ॥ हे सोम्य! तथाऽस्तु। ऐसैं [पिता] कहते भये ॥ ७ ॥

इति श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपा०अष्टमः खंडः॥८॥

फेरहीं मेरेकूं भगवान् (आप) विज्ञापन करहूं। अर्थ यह जोः–जो तुह्मनैं कहा सो मेरेकूं संदेहयुक्त है। कहिये [339] दिनादिनविषै सर्व प्रजा सुषुप्तिमैं सत्कूं संपद्यमान (प्राप्त) होवैहैं परंतु [340] जिसँकरि इस सत्कूं पायके "हम सत्कूं प्राप्तभयेहैं" ऐसैं ऊठिके नहीं जानैहैं। तिसकरि संदेहयुक्त यह है ॥ [341] यांतैं दृष्टांतकरि मेरेकूं प्रतीति

---

३३९ संदेहकी विषयताकूंहीं श्वेतकेतु विशेषण देताहै ॥

३४० संदेहविषै हेतुकूं कहैहै ॥ इहां तिसकरि संदेहयुक्त यह है। ऐसैं पूर्वसैं संबंध है ॥

३४१ तब संदेहकी निवृत्ति कैसैं होवैगी? यातैं कहैहै ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य नवमः खंडः ॥९॥

यथा सोम्य! मधु मधुकृतो निस्ति-

अथ श्री०मूलभाषा०षष्टप्रपा०नवमः खंडः ॥ ९ ॥

अथ श्री द्वितीयोपदेशप्रारंभः ॥ २ ॥

अर्थः—उद्दालक उवाच हे सोम्य! जैसैं मधुकर (मधुमक्षिका) मधुकूं उत्पादन

करावहू ॥ ॥ [342] ऐसैं उक्त हुये पिता हे सोम्य! तथाऽस्तु। ऐसैं कहते भये ॥ ७ ॥

इति श्री० भाष्यभाषा० षष्ठप्रपाठकस्या अष्टमः खंडः॥८॥

इति श्रीप्रथमोपदेशःसमाप्तः ॥ १ ॥

अथ श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य नवमः खंडः॥९॥

मधुदृष्टांतसैं सुषुप्तिमैं सत्प्राप्तिअज्ञानोक्तिकरि सदुपदेश४

अथ श्रीद्वितीयोपदेशप्रारंभः ॥ २ ॥

टीकाः—उद्दालक उवाचः—[343] दिनदिनविषै स-

---

३४२ अब पुत्रकूं प्राप्त संदेहकी निवृत्तिअर्थ उत्तर ग्रंथकूं उद्दालकमुनि उठावते हैं ॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकगताष्टमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ८ ॥

अथ श्री०षष्ठप्रपाठकगतनवमखंडस्य टिप्पणम् ९

३४३ "जैसैं" इत्यादि दृष्टांतकूं प्रकट करैहैं ॥ इहां ऐसैं

ष्ठन्ति। नानाऽत्ययानां वृक्षाणाꣳ रसान्
समवहारमेकताꣳ रसं गमयन्ति॥१॥

करैहैं। नानागतिवाले वृक्षनके रसनकूं इ-
कठे करिके एकताके तांई रसकूं प्राप्त क-
रैहैं ॥ १ ॥

तकूं पायके "हम सत्कूं प्राप्तभयेहैं" ऐसैं नहीं
जानते हैं। सो (अज्ञान) किस कारणतैं है?
ऐसैं जो तूं पूंछताहैं॥ इहां दृष्टांतकूं श्रवणकरः—
हे सोम्य! जैसैं[३४४] लोकविषै मधुकूं करैहैं ऐसी
जे मधुकर मक्षिका वे मधुकृत् कहियेहैं वे त-

योजनाहैः—प्रतिदिन सुषुप्तिविषै सर्व प्रजा सत्कूं पायके "हम सत्कूं प्राप्त भये हैं" ऐसैं जो नहीं जानते हैं सो अज्ञान किस कारणतैं है? ऐसैं जो तूं मेरेकूं पूंछताहैं तहां सुषुप्तिआदिकमैं अज्ञानविषै कारणभूत उच्यमान दृष्टांतकूं तूं श्रवण कर! ॥

३४४ जैसैं सो दृष्टांत स्पष्ट होवैहै। तैसैं कहियेहै। यह कहैहैं॥ इहां फेर मधुपद जो है सो क्रियापदसैं संबंधके दिखावनेअर्थ है॥

ते यथा तत्र न विवेकं लभन्तेऽमु-

अर्थः—वे (रस) जैसैं तहां (मधुविषै)

त्पर हुये मधुकूं उत्पादन करैहैं ॥ ॥ [३४५]कैसैं-
किः—नाना गतिवाले (नानाफलवाले) अरु
नानादिशाओंके वृक्षनके रसनकूं ग्रहण क-
रिके [३४६]मधुभावकरि रसनकूं एकभावकूं प्राप्त
करैहैं कहिये रसनके [३४७]मधुभावकूं संपादन करै-
हैं ॥ १ ॥

टीकाः—जैसैं मधुभावकरि एकताकूं प्राप्त
भये वे [३४८]रस तहां (मधुविषै) विवेक (भेद)कूं
पावते नहीं ॥ कैसैं किः—"मैं अमुक आम्र-
वृक्षका वा पनसवृक्षका रसहूं" ऐसैं [जा-

---

३४५ मधुकरोंकी मधुकी उत्पादकताकूं आकांक्षापूर्वक दिखावैहैं ॥

३४६ बहुत रसनकी एकता किस प्रकारसैं है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

३४७ ताहीकूं स्पष्ट करैहैं ॥

३४८ "वे जैसैं" इत्यादि वाक्यकूं व्याख्यान करैहैं ॥

ष्याहं वृक्षस्य रसोस्म्यमुष्याहं वृक्षस्य रसोऽस्मीत्येवमेव खलु सोम्येमाः सर्वाः प्रजाः सति संपद्य न विदुः सति सम्पद्यामह इति ॥ २ ॥

"मैं अमुकवृक्षका रस हूं। मैं अमुक वृक्षका रस हूं" ऐसें विवेककूं पावते नहीं ॥ हे सोम्य! ऐसैंहीं निश्चयकरि ये सर्वप्रजा सत्‌विषै प्राप्त होयके "[हम]सत्‌विषै प्राप्त हुये हैं" ऐसें नहीं जानैंहैं ॥ २ ॥

नते नहीं] ॥ अभिप्राय यह है कि:–[३४९]जैसैंहीं लोकविषै बहुत चेतनावाले इकठेभये प्राणिनकूं "मैं अमुकका पुत्रहूं। मैं अमुकका नप्ता (पौत्र) हूं" ऐसैं विवेकका लाभ होवैहै औ वे प्राप्तविवेकवाले हुये संकीर्ण (मिलित) होते नहीं। ऐसैं इहां मधुर आम्ल तिक्त अरु कटुक आदिरूप औ मधुभावकरि एकताकूं प्राप्तभये

---

३४९ उक्त अर्थकूं विपरीत धर्मवाले दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥ इधर " इहां " ऐसैं प्रकृत दृष्टांतकी उक्ति है ॥

त इह व्याघ्रो वा सिꣳहो वा वृको

अर्थः—वे (प्राणी) इहां (इस लोक-विषै) व्याघ्र वा सिंह वा वृक वा वराह वा

अनेक प्रकारके वृक्षनके रसनकाबी मधुरादि-भावकरि विवेक नहीं ग्रहण करियेहै ॥ जैसें[350] यह दृष्टांत है। ऐसैंहीं निश्चयकरि हे सोम्य! ये सर्व प्रजा दिन दिनाविषै सुषुप्तिकालमैं औ मरण अरु प्रलयमैं सत्‌विषै प्राप्त होयके "हम सत्‌विषै प्राप्त भये हैं। वा प्राप्त भयेथे" ऐसैं नहीं जानै हैं ॥ २ ॥

टीकाः—औ जौतैं[351] ऐसैं आत्माकी सत्‌रूप-

---

३५० दृष्टांतकूं अनुवादकारिके दार्ष्टांतकूं कहैहैं ॥

३५१ रसनकूं अचेतन होनेकरि विवेकके अयोग्य होनेतैं चेतनावानोंका ऐसैं दृष्टांत किस प्रकारसैं होवैगा? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां "ऐसैं" याका यथोक्त रसनके दृष्टांतके वशकरि। यह अर्थ है ॥ औ चेतनोंकूंबी सुषुप्ति आदिकविषै जडताकरि निरुद्ध होनेकरि रसतुल्य होनेतैं तिनकूं विवेकके अयोग्य अवस्थाकी प्राप्तिमात्रके हुये प्रकृत उदाहरण अविरुद्ध है। यह भाव है ॥

वा वराहो वा कीटो वा पतङ्गो वा दꣳशो वा मशको वा यद्यद्भवन्ति तदा भवन्ति ॥ ३ ॥

कीट वा पतंग वा दंश वा मशक जो जो होवैहैं। तब (फेर सत्तैं आयके) होवैहैं ॥ ३ ॥

ताकूं न जानिकेहीं सत्कूं पावते हैं । यातैं वे प्राणी इसलोकविषै जिस कर्मरूप निमित्तवाली जिस जिस व्याघ्रआदिकनकी जातिकूं "मैं व्याघ्र हूं। मैं सिंह हूं" इस प्रकारसैं प्राप्त होतेभये। वे तिस कर्म ज्ञान (ध्यान) अरु वासनाकरि अंकित (युक्त) हुये सुषुप्तिआदिकमैं सत्विषै प्रवेशकूं प्राप्त हुयेबी तिस (व्याघ्रआदिक) भावकरि फेर आयके होतेहैं। कहिये फेर सत्तैं आयके व्याघ्र वा सिंह वा वृक वा वराह वा कीट वा पतंग वा दंश वा मशक जो जो पूर्व इस लोकविषै होवैहैं। अर्थ यह जोः—होतेभये। सोई तब (फेर सत्तैं

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदꣳ स-

अर्थः—सो जो यह अणिमा है। ऐतदात्म्य (इसकरि आत्मावाला) यह सर्व

आयके) होवैहैं। अर्थ यह जोः—युगोंके सहस्रकी कोटिनके अंतरायवालीबी संसारी[352] जंतुकी जो पूर्वभावित वासना है सो नाशकूं पावती नहीं॥ काहेतैं "यथाप्रज्ञ (वासना अनुसार)हीं संभव (जन्मवाले) है" इस अन्य श्रुतितैं॥३॥

टीकाः—वे प्रजा[353] जिसविषै प्रवेशकूं पायके फेर आविर्भावकूं पावैहैं औ जे इन (अज्ञजनन)तैं अन्य सत्‌विषै सत्यआत्माकी अभिसंधिवाले हैं वे जिस अणुभावरूप सत्‌स्वरूप आत्माकेप्रति प्रवेश करिके फेर आवते नहीं।

---

३५२ सत्‌के साथि प्राप्त हुये जीवनकूंबी सो होवैगा? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

३५३ "सो जो यह अणिमा (सूक्ष्मभाव) है" इत्यादि वाक्यकूं अवतार देतेहैं॥ इहां "इनतैं" याका सत्‌के विज्ञानतैं रहित पुरुषनतैं। यह अर्थ है औ जिस अणुभावकूं। इहां तत् (वे) शब्द अध्याहार करनेकूं योग्य है॥

वैं तत्सत्यꣳ स आत्मा "तत्त्वमसि" श्वे-
तकेतो! इति ॥ भूय एव मा भगवान्

है। सो सत्य है। सो [सर्वजगत्का] आ-
त्मा है। हे श्वेतकेतो! "तत्वमसि (सो तूं
है)" ऐसैं [पिता कहतेभये] ॥ ॥ श्वे-
तकेतुरुवाचः—फेरहीं मेरेकूं भगवान् वि-

सो जो यह अणिमा (अणुभाव)। इत्यादि
पूर्व (अष्टमखंडविषै) व्याख्यान किया है ॥ ॥
श्वेतकेतुरुवाचः[354]—जैसें लोकविषै अपनै गृहमैं
सोया पुरुष ऊठिके अन्य ग्रामकूं गया हुया
"मैं स्वगृहतैं आयाहूं" यह जानताहै ॥ ऐसैं
"मैं सत्तैं आयाहूं" ऐसा विज्ञान। सुषुप्ति आ-
दिकतैं ऊठे जंतुनकूं काहेतैं नहीं होवैहै।
यह फेरहीं भगवान् मेरेकूं विज्ञापन कर-
हूं? ॥ ॥ ऐसैं[355] उक्त हुये पिता हे सोम्य!

---

३५४ अन्य प्रश्नकूं दृष्टांतके बलतैं श्वेतकेतु उठावताहै ॥
३५५ "सत्तैं मैं आयाहूं" ऐसैं उत्थित पुरुषकूं ज्ञानके

विज्ञापयत्विति ॥ तथा सोम्येति होवा-
च ॥ ४ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य नवमः खंडः ॥ ९ ॥

ज्ञापन करहू? ऐसैं [पुत्र कहता भया]
॥ ॥ हे सोम्य! तथाऽस्तु। ऐसैं [पिता] क-
हते भये ॥ ४ ॥

इति श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपा० नवमः खंडः॥९॥

इति श्रीद्वितीयोपदेशः समाप्तः ॥ २ ॥

तथाऽस्तु। ऐसैं कहते भये ॥ ४ ॥

इति श्री० भाष्यभाषा० षष्ठप्रपाठकस्य नवमः खंडः ॥९॥

इति श्रीद्वितीयोपदेशः समाप्तः ॥ २ ॥

अभावकूं दृष्टांतकरि उपपादन करनेकूं। श्रुति अनुसार आचार्य उत्तरग्रंथकूं उठावतेहैं ॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकगतनवमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ९ ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य दशमःखंडः॥१०॥

इमाः सोम्य ! नद्यः पुरस्तात्प्राच्यः स्यन्दन्ते पश्चात्प्रतीच्यस्ताः समुद्रा-

---

अथ श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य दशमः खंडः १०

अथ श्रीतृतीयोपदेशप्रारंभः ॥ ३ ॥

अर्थः—उद्दालक उवाचः—हे सोम्य ! ये नदियां प्राचीरूप पूर्वतें वहन करैहैं। प्रतीचीरूप पश्चिमतें वहन करैहैं। वे समुद्रतें

अथ श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य दशमः खंडः १०

नदीदृष्टांतसैं सदागमनाज्ञानोक्तिकरि सदुपदेश ३

अथ श्रीतृतीयोपदेशप्रारंभः ३

टीकाः—उद्दालक उवाचः—तहां[३५६] (आगमनके अज्ञानविषै) दृष्टांतकूं श्रवण कर! हे सोम्य! जैसैं ये नदीयां प्राची जे पूर्व दिशाके तरफ जानेवाली गंगाआदिक हैं वे

अथ श्री०षष्ठप्रपाठकगतदशमखंडस्य टिप्पणम् १०

३५६ इहां आगमनकी अवधिका अपरिज्ञान "तहां" ऐसैं कहा है ॥

त्समुद्रमेवापि यन्ति। स समुद्र एव भवति। ता यथा तत्र न विदुरियमहमस्मीयमहमस्मीति ॥ १ ॥

समुद्रकूंहीं पावतियां हैं। सो समुद्रहीं होवै है ॥ वे जैसैं तहां "यह मैं हूं। यह मैं हूं" ऐसैं नहीं जानै हैं ॥ १ ॥

पूर्वतैं कहिये पूर्वदिशाकेप्रति वहनकरैहैं। औ-पश्चिमदिशाकेप्रति गमन करैहैं ऐसीं जे सिंधु-आदिक प्रतीची हैं वे पश्चिमतैं कहिये प्रतीची (पश्चिम)दिशाकेप्रति वहन करैहैं ॥ वे समुद्र (अंभोनिधि)तैं जलधरों (बादलों)करि ऊपर आकर्षित (खींची) हुयी फेर वृष्टिरूपसैं पतित हुयी गंगाआदिक नदीरूपिणी होयके फेर समुद्र जो अंभोनिधि ताकूंहीं पावतीयां हैं। कहिये सो समुद्रहीं होवैहै ॥ वे नदीयां जैसैं तहां (समुद्रविषै) समुद्रस्वरूपसैं एकताकूं प्राप्त हुयी ? यह गंगा मैं हूं। यह य-

एवमेव खलु सोम्येमाः सर्व्वाः प्रजाः सत आगम्य न विदुः सत आगच्छामह इति। त इह व्याघ्रो वा सिꣳहो वा वृको वा वराहो वा कीटो वा पतङ्गो वा दꣳशो वा मशको वा यद्यद्भवन्ति तदा भवन्ति ॥ २ ॥

अर्थः-हे सोम्य ! ऐसैंहीं निश्चयकरि ये प्रजा सत्‌तैं आयके "सत्‌तैं आयेहै" ऐसैं नहीं जानैं हैं॥ वे इहां व्याघ्र वा सिंह वा वृक वा वराह वा कीट वा पतंग वा दंश वा मशक जो जो होवैहैं (तब पूर्व होते भये सत्‌तैं आयके) होवैहैं ॥ २ ॥

मुना मैं हूं औ यह मही मैं हूं" ऐसैं नहीं जानतियां हैं ॥ १ ॥

टीकाः-हे सोम्य ? ऐसैंहीं निश्चयकरि ये सर्व प्रजा जातैं सत्‌विषै प्राप्त होयके नहीं जानैंहैं। तिस सत्‌तैं आयके "हम सत्‌तैं

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदꣳ सर्व्वं तत्सत्यꣳ स आत्मा "तत्त्वमसि" श्वेत-

अर्थः—सो जो यह आणिमा है। इस-करि आत्मावाला (इसरूप) यह सर्व है। सो सत्य है। सो आत्मा है। हे श्वेतकेतो! "तत्वमसि (सो तूं हैं)" ऐसैं [पिता कहते-

आवतेहैं वा आये हैं" ऐसैं नहीं जानै हैं॥ वे इहां व्याघ्र। इत्यादि अन्य वाक्य समान है॥ [357]जलविषै वीची तरंग फेन बुद्बुदआदिक ऊठे हुये फेर तिसभाव (जलभाव)कूं प्राप्तहुये विनष्ट (नाशकूं प्राप्त) होवैहैं॥ ऐसैं लोकविषै देख्या है॥ जीव तो प्रतिदिन सुषुप्तिविषै औ मरण अरु प्रलयविषै कारणभावके तांई गमन

३५७ अन्य प्रश्नकूं व्याख्यान करैहैं॥ इहां [वीची] विनष्ट होवैहैं। ऐसैं लोकविषै देख्या है। ऐसैं संबंध है औ जीव तो प्रतिदिन सुषुप्तिअवस्थाविषै औ मरण अरु प्रलयविषै कारणभा-वके तांई जाते हुयेबी नहीं नाशकूं पावतेहैं। ऐसा जो है यह सो (सत्) है। ऐसैं योजना है॥

केतो ! इति ॥ भूय एव मा भगवान् वि-
ज्ञापयत्विति ॥ तथा सोम्येति होवा-
च ॥ ३ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य दशमः खंडः ॥ १० ॥

भये] ॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—फेरहीं मेरेकूं
भगवान् विज्ञापन करहू ? ऐसैं [पुत्र पूंछ-
ताभया] ॥ ॥ हे सोम्य ! तथाऽस्तु (सो
कहताहूं) । ऐसैं [पिता] कहतेभये ॥ ३ ॥

इति श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपाठ०दशमःखंडः १०

इति श्रीतृतीयोपदेशः समाप्तः ॥ ३ ॥

करते (पावते) हुयेबी विनाशकूं पावते नहीं ।
ऐसा जो है यह सो (सत्) है [२] ॥ ॥
श्वेतकेतुरुवाचः—फेरहीं मेरेकूं भगवान्
दृष्टांतकरि विज्ञापन करहूं ? [ऐसैं पुत्र पूंछ-
ता भया] हे सोम्य[३५८] ! तथाऽस्तु । ऐसैं पि-

---

३५८ जीवके विनाशकूं शंकाकरनेवाले पुत्रके प्रति बोधन अर्थ उत्तर वाक्यकूं उठावतेहैं ॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकगतदशमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ११ ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्यैकादशः खंडः॥११॥
अस्य सोम्य! महतो वृक्षस्य यो मूलेऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेद्यो मध्येऽभ्या-

अथ श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपाठकस्यैकादशः खंडः ११
अथ श्रीचतुर्थोपदेशप्रारंभः ॥ ४ ॥

अर्थः—उद्दालक उवाचः—हे सोम्य! इस बडे वृक्षके मूलविषै जो अभिहनन करै जीवताहुया स्रवै ॥ जो मध्यविषै अभि-

ता कहते भये ॥ २ ॥ ३ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा० षष्ठप्रपाठकस्य दशमः खंडः ॥१०॥
इति श्रीतृतीयोपदेशः समाप्तः ॥ ३ ॥
अथ श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपाठकस्यैकादशः खंडः ११
वृक्षदृष्टांतसैं जीवकी अमरताकरि सदद्वैतोपदेश ३
अथ श्रीचतुर्थोपदेशप्रारंभः ॥ ४ ॥

टीकाः—उद्दालक उवाचः—दृष्टांतकूं[३५९] श्रवणकर! हे सोम्य! इस महान् (अनेकशाखा-

अथ श्री०षष्ठप्रपा०एकादशखंडस्य टिप्पणम्॥११॥
३५९ जीवके नाशके अभावकूं कहनेकूं आदिविषै दृष्टांतकूं कहैहैं ॥

हन्याज्जीवन्स्रवेद्योऽग्रेऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेत्स एष जीवेनाऽऽत्मनानुप्रभूतः पेपीयमानो मोदमानस्तिष्ठति ॥ १ ॥

हनन करै जीवताहुया स्रवै। जो अग्रविषै अभिहनन करै जीवताहुया स्रवै ॥ सो यह जीवरूप आत्माकरि अनुव्याप्त पेपीयमान मोदमान स्थित होवैहै ॥ १ ॥

आदिककरि युक्त) वृक्षके मूलविषै [इहां "इसके" यापदकरि आगे स्थितवृक्षकूं दिखावते हुये कहैहैं] जब जो कोईकबी परशुआदिककरि अभिहनन (घात) करै। तब सो एकवार घातमात्रकरि नहीं शुष्क होताहै। किंतु जीवता हुयाहीं होवैहै। औ ताका रस स्रवता है ॥ तैसें जो मध्यविषै अभिहनन करै। जीवता हुया स्रवताहै ॥ तैसें जो अग्रविषै अभिहनन करै। जीवता हुया स्रवता है ॥ सो यह वृक्ष अबी जीवरूप आत्मा-

अस्य यदेकाꣳ शाखां जीवो जहात्यथ सा शुष्यति । द्वितीयां जहात्यथ

अर्थः—जब इसकी एक शाखाकूं जीव त्यागताहै तब सो सूक जातीहै । द्वितीयकूं

करि अनुव्याप्त अरु पेपीयमान कहिये मूलनसैं अत्यंत उदककूं पीवता हुया औ भूमिके रसोंकूं ग्रहण करता हुया औ मोदमान कहिये हर्षकूं पावता हुया स्थित होवैहै ॥ १ ॥

टीकाः—जब तिस इस वृक्षकी रोगग्रस्त वा वायुकरि आहत एक शाखाकूं जीव त्यागताहै कहिये शाखाविषै विशेषकरि प्रसृत आत्मांश (आपके अंश)कूं उपसंहार करैहै (संकोचताहै)। अनंतर (तब) सो शाखा सूख जातीहै ॥ जातैं वा[३६०]कू मन प्राण अरु करणोंके

---

३६० ननु रोगकरि ग्रस्त वा वायुकरि उपहत शाखाविषै प्राणके उपसंहारके हुयेबी जीवका उपसंहार काहेतैं संभवै है? तहां कहैहैं ॥

सा शुष्यति । तृतीयां जहात्यथ सा शुष्यति ! सर्वं जहाति सर्वः शुष्यत्ये-

---

त्यागताहै तब सो सूक जातीहै ॥ तृतीयकूं त्यागताहै तब सो सूक जातीहै । सर्वकूं त्यागताहै [तब] सर्व सूकजाताहै ॥ हे सो-

---

ग्रामविषे अनुप्रवेशकूं पाया जीव है । यातैं सो तिन (वाक्आदिकन)के उपसंहारके हुये उपसंहारकूं पावताहै ॥ औ प्राणयुक्त जीवकरि[३६१] भुक्त अरु पीत जो है सो रसभावकूं प्राप्तहुया जीवत् शरीरवाले वृक्षकूं रसरूपसैं बढावताहुया जीवके सद्भावविषे लिंग होवैहै ॥ जातैं[३६२] भुक्त अरु पीतकरि देहविषे जीव स्थित होवैहै औ वे

---

३६१ ननु वृक्षविषै जीवके सद्भावके हुये तहां उपसंहार अरु अनुपसंहार कहनेकूं योग्य हैं । तहां ताका सद्भाव तो किसका किया है? यातैं कहैहैं ॥ इहां रसरूपसैं बढावता हुया । ऐसैं संबंध है ॥

३६२ वृक्षके शरीरविषै जीवके सद्भावके हुये बी यह जीव कदाचित् तिस वृक्षकी एक शाखाकूं क्यूं त्यागताहै ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

वमेव खलु सोम्य! विद्धीति होवाच॥२॥

म्य! ऐसैंहीं निश्चयकरि जान! ऐसैं [पिता] कहतेभये ॥ २ ॥

भुक्त अरु पीत जीवके कर्मके अनुसारी हैं। यातैं ता (वृक्ष)के एक अंगकी विकलताका निमित्त कर्म जब उपस्थित (प्राप्त) होवैहै। तब जीव एक शाखाकूं त्यागताहै कहिये शाखातैं आपकूं उपसंहार करैहै (संकोचताहै)। अनंतर (तब) सो शाखा सूकजाती है ॥ [३६३] जीवकी स्थितिरूप निमित्तवाला रस जो है सो जीवके उपसंहारके हुये जीवके कर्मकरि आकर्षित हुया नहीं स्थित होवैहै औ रसके नाश हुये शाखा शोषकूं पावती है ॥ तैसैं सर्व (सारे)वृक्षकूंहीं जब यह (जीव) त्यागता है। तब सर्वबी वृ-

---

३६३ जीवके उपसंहार (संकोच)के हुयेबी ताकी शाखा क्यूं सूक जातीहै? तहां कहैहैं ॥ इहां जीवकी स्थिति है निमित्त जिसका ऐसैं विग्रह है औ "तैसैं" याका शाखाविषै उक्त प्रकारकरि। यह अर्थ है ॥

जीवापेतं वाव किलेदं म्रियते न जीवो म्रियत इति। स य एषोऽणिमैत-

---

अर्थः—जीवकरि वियुक्त हुया प्रसिद्ध यह (शरीर) मरताहै। जीव मरता नहीं ऐसैं॥ सो जो यह अणिमा है। इसकरि

क्ष सूकजाता है। वृक्षकूं[३६४] रसके स्रवण अरु शोषणआदिक लिंगतैं जीववान्पना है औ उक्त दृष्टांतकी श्रुतितैं चेतनावाले स्थावर हैं। यातैं बौद्ध अरु कणाद (वैशेषिक)नका मत "अचेतन स्थावर हैं" ऐसा है। यह असार है ऐसैं दिखाया होवैहै॥ २॥

टीकाः—जैसैं[३६५] इस वृक्षरूप दृष्टांतविषै दिखा-

---

३६४ औ जो वैशेषिक अरु वैनाशिक (बौद्ध)नैं स्थावरोंका निर्जीवताकरि अचेतनपना कहाहै। सो यह निरस्त भया।ऐसैं कहैहैं॥ इहां आदिशब्द वृद्धि अरु मोद आदिकके ग्रहणअर्थ है औ "सो यह वृक्ष जीवरूप आत्माकरि अनुप्रभूत (अनुव्याप्त) है" यह दृष्टांतकी प्रतिपादक श्रुति है॥

३६५ श्रुतिउक्त दृष्टांतविषै विवक्षित अर्थकूं अनुवादकरिके दार्ष्टांतिककूं कहैहैं॥

दात्म्यमिदꣳ सर्वं तत्सत्यꣳ स आत्मा "तत्त्वमसि" श्वेतकेतो! इति ॥ भूय एव

आत्मावाला यह सर्व है। सो सत्य है। सो आत्मा है। हे श्वेतकेतो! "तत्वमसि (सो तूं हैं)" ऐसैं [पिता कहतेभये] ॥ ॥ श्वे-

---

या किः—जीवकरि युक्त वृक्ष अशुष्क अरु रसपानआदिककरि युक्त हुया जीवता है ऐसैं कहियेहै औ तिस (जीव)करि त्यक्त हुया मरता है ऐसैं कहियेहै ॥ हे सोम्य! ऐसैंहीं निश्चयकरि जान! इस रीतिसैं पिता कहते भयेः—जीवकरि अपेत (वियुक्त) हुया प्रसिद्ध यह (शरीर) मरता है जीव मरता नहीं ऐसैं ॥ औ [३६६] कार्यशेषके होते सुषुप्तितैं ऊ-

---

३६६ जीवके सुषुप्तिविषै नाशके अभावमैं अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—ता (कार्यशेष)के होते सुषुप्त होयके फेर ऊठे पुरुषकूं कार्यका शेष है जिस कर्मविषै सो यह मेरा असमाप्त भया। ऐसैं स्मरण करिके ताके समाप्तकरनेके देखनेतैं सुषुप्तिविषै जीव नाशकूं पावता नहीं ॥

मा भगवान् विज्ञापयत्विति ॥ तथा सोम्येति होवाच ॥ ३ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्यैकादशः खंडः ॥ ११ ॥

तकेतुरुवाचः—फेरहीं मेरेकूं भगवान् विज्ञापन करहू? ऐसैं [पुत्र पूंछताभया] ॥ ॥ हे सोम्य! तथाऽस्तु (सो कहताहूं)। ऐसैं [पिता] कहतेभये ॥ ३ ॥

इति श्री०मूलभा०षष्ठप्रपा०एकादशःखंडः॥११॥

इति श्री चतुर्थोपदेशः समाप्तः ॥ ४ ॥

ठे पुरुषकूं "मेरा यह कार्यशेषवाला कर्म असमाप्त भया है" ऐसैं स्मरण करिके ता कार्यकी समाप्तिके देखनेतैं औ [३६७] जाँतमात्र (जन्ममात्रकूं प्राप्त भये) जंतुनकूं माताके स्तनविषै होनेवाले दुग्धके अभिलाष अरु भयआदिकके देखनेतैंहीं अतीत (गत) जन्मांतरोंविषै अनुभूत

---

३६७ मरणकालविषै ता (जीव)के नाशके अभावविषै अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां प्रथम चकार (औ शब्द) समुच्चय (अनुक्तके ग्रहणरूप अर्थ) विषै है औ द्वितीय [चकार] अवधारण (निश्चयरूप अर्थ)विषै है ॥

स्तनपान अरु दुःखके अनुभवतैं जन्य स्मृति जानियेहै औ [३६८]अग्निहोत्रादिक वैदिककर्मौंकूं अर्थवाले (सफल) होनेतैं जीव मरता नहीं इति ॥ सो जो अणिमा है इत्यादिवाक्य समान है ॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—फेर[३६९] यह अत्यंत स्थूल पृथिवीआदिक नामरूपवाला जगत् जो है सो। अत्यंत सूक्ष्म सत्रूप नामरूपरहित सत् (ब्रह्म)तैं कैसैं उपजता है। यह दृष्टांतकरि फेरहीं मेरेकूं भगवान् विज्ञापन करहु? ऐसैं [पुत्र पूंछताभया] ॥ ॥ [३७०]हे सोम्य! तथाऽस्तु ऐसैं पिता कहते भये ॥ ३ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपाठकस्यैकादशः खंडः ॥११॥

इति श्रीचतुर्थोपदेशः समाप्तः ॥ ४ ॥

---

३६८ जीवके प्रलयआदिकविषै अविनाशमैं अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां इति शब्द जीवकी नित्यताकी समाप्तिअर्थ है ॥

३६९ जो कहा किः—"हे सोम्य! सत्रूप मूलवाली" इत्यादि। तहां श्वेतकेतु प्रश्नकूं करैहै ॥

३७० विलक्षण ब्रह्म अरु जगत्का कार्य कारणभाव बनै नहीं? ऐसैं शंका करनेवाले पुत्रकूं प्रतिबोधकरनेकूं पिता उत्तर वाक्यकूं ग्रहण करैहैं॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकगतैकादशखंडस्य टिप्पणम् ॥ ११ ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य द्वादशः खंडः॥१२॥

न्यग्रोधफलमत आहरेतीदं भगव !

अथ श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य द्वादशःखंडः॥१२॥

अथ श्रीपंचमोपदेशप्रारंभः ॥५॥

अर्थः—उद्दालक उवाचः—इस (बडे वटवृक्ष) तैं न्यग्रोध (वट) के फलकूं ल्याव ! ऐसैं [पिता कहतेभये] ॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—हे भगवन्! यह [फल ल्याया] ऐ-

---

अथ श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य द्वादशः खंडः १२

वटबीजदृष्टांतसैं सूक्ष्मतैं स्थूलोत्पत्ति करि सदुपदेश ३

अथ श्रीपंचमोपदेशप्रारंभः ॥५॥

टीकाः—उद्दालक उवाचः—हे पुत्र! जब इसकूं प्रत्यक्ष करनेकूं इच्छता हैं। तब। ईस[371]

अथ श्री०षष्ठप्रपाठकगतद्वादशखंडस्य टिप्पणम् १२

३७१ इहां स्थूल कार्यका सूक्ष्म मुख्य कारणपना "सतत् (इसकूं)" ऐसैं कहियेहै औ "हे सोम्य! इस महान् वृक्षके" ऐसैं प्रकृत वृक्षकूं स्मरण करावैहैं॥ इहां जिस इस अणिमाकूं नहीं देखताहैं इस अणिमारूप बीजका। ऐसैं संबंध है औ

इति॥भिन्धीति॥भिन्नं भगव! इति॥कि-
मत्र पश्यसीत्यण्व्य इवेमा धाना भ-

सैं [पुत्र क०] ॥ ॥ उद्दालक उवाचः—भे-
दनकर! ऐसैं [पिता क०] ॥ ॥ श्वेतकेतु-
रुवाचः—हे भगवन्! भेदन किया। ऐसैं
[पुत्र क०] ॥ ॥ उद्दालक उवाचः—इहां
क्या देखताहैं? ऐसैं [पिता पूंछते भये]
॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—हे भगवन्! अणु
(अत्यंत सूक्ष्म)कीन्यांईं इन धाना (बी-

महान् (बडे) न्यग्रोध (वटवृक्ष)तैं एक फलकूं
ल्याव ॥ ॥ ऐसैं उक्त हुया पुत्र तैसैं करता
भया ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—हे भगवन्! यह
फल ल्याया ॥ ॥ ऐसैं दिखावनेवाले पुत्र-

"तथापि" याका अत्यंत अणु होनेतैं अदर्शनके हुये बी। यह अर्थ है औ अत्यंत सूक्ष्म बीजतैं अत्यंत स्थूल वृक्षकी उत्पत्तिकी प्रतीति "यातैं" शब्दका अर्थ है ॥

गव! इत्यासामङ्गैका भिन्धीति ॥ भिन्ना भगव ! इति ॥ किमत्र पश्यसीति ॥ न किञ्चन भगव ! इति ॥ १ ॥

जन)कूं [देखताहूं]। ऐसैं [पुत्र क॰] ॥ ॥ उद्दालक उवाचः—हे अंग (प्रिय) ! इनके मध्य एककूं भेदनकर ! ऐसैं [पिता क॰] ॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—हे भगवन् ! भेदनकरी। ऐसैं [पुत्र क॰] ॥ ॥उद्दालक उवाचः—इसविषै क्या देखताहैं ? ऐसैं [पिता पूंछतेभये]॥ ॥श्वेतकेतुरुवाचः—हे भगवन् ! कछुबी नहीं। ऐसैं [पुत्र क॰]॥ १ ॥

के प्रति सो पिता कहैहैंः—उद्दालक उवाचः—फलकूं भेदन कर ! ऐसैं ॥ ॥ इतर (पुत्र) कहता भयाः— श्वेतकेतुरुवाचः— फल भेदनकिया ॥ ऐसैं ता पुत्रकूं पिता कहैहैंः—उद्दालक उवाचः—इसविषै क्या देखताहैं ? ऐसैं उक्त हुया पुत्र कहताभयाः—

तᳪ होवाच-यं वै सोम्यैतमणिमानं

अर्थः-ता (पुत्र)कूं कहतेभये॥ उद्दालक उवाचः-हे सोम्य! जिस इस अणिमाकूं

श्वेतकेतुरुवाचः-हे भगवन्! अणु (अत्यंतसूक्ष्म)की न्यांईं इन धाना (बीजन)कूं देखताहूं। ऐसैं ॥ ॥ उद्दालक उवाचः-हे अंग! हे (वत्स)! धानाओंके (बीजनके) मध्य एक धानाकूं भेदनकर ॥ ॥ ऐसैं पिताकरि उक्त हुया पुत्र कहताभयाः-श्वेतकेतुरुवाचः-हे भगवन्! एक धाना भेदनकरी। ऐसैं ॥ ॥ उद्दालक उवाचः-जब धाना भेदनकरी तब तिस इस भेदनकरी धानाविषै क्या देखता हैं? ऐसैं पिताकरि उक्त हुया पुत्र कहैहैः-श्वेतकेतुरुवाचः-हे भगवन्! कछुबी नहीं देखताहूं। ऐसैं [पुत्रनैं कहा] ॥ १ ॥

टीकाः-तिस पुत्रकूं पिता कहते भयेः-उद्दालक उवाचः-हे सोम्य! भेदनकरी व-

न निभालयस एतस्य वै सोम्यैषोऽणिम्न एवं महान्यग्रोधस्तिष्ठति । श्रद्धत्स्व सोम्येति ॥ २ ॥

नहीं देखताहैं। हे सोम्य! इस अणिमाकाहीं यह ऐसैं महान्यग्रोध स्थित होवैहै। हे सोम्य! श्रद्धाकूं कर! ऐसैं ॥ २ ॥

टधाना (वटबीज)विषै जिस इस वटबीजके अणिमा (सूक्ष्मभाव)कूं तूं नहीं देखताहैं। तथापि हे सोम्य! इस अणिमारूप (सूक्ष्म अरु अदृश्यमान) बीजका कार्यभूत स्थूल शाखा स्कंध फल अरु पलाश (पत्र)-वाला यह महान्यग्रोध (बडावटवृक्ष) उत्पन्न हुया स्थित होवैहै। वा बाहिर स्थित होवैहै [इहां बाहिरका वाचक "उत्" शब्द अध्याहार करनेकूं योग्य है] ॥ यातैं हे सोम्य! अणिमा(अतिसूक्ष्म)रूप सत्तैंहीं स्थूलनामरूपादिवाला कार्यरूप जगत् उत्पन्न भया है।

वटबीजदृष्टांतसैं सूक्ष्मतैं स्थूलोत्पत्तिकरि सदुपदेश ३

ऐसैं श्रद्धाकूं कर ॥ ॥ यद्यपि[३७२] न्याय (युक्ति) अरु आगम (श्रुति)करि निर्द्धारित अर्थ[जैसैं] होवै तैसैंहीं निश्चय करियेहै ॥ तथापि अत्यंतसूक्ष्मअर्थनविषै बाह्यविषयनमैं आसक्त मनवाले अरु स्वभावकरि प्रवृत्तिवाले पुरुषकूं अत्यंत भारी श्रद्धाके न होते दुरवगम (दुर्ज्ञेय)पना होवैगा। यातैं "श्रद्धाकूं कर" ऐसैं पिता कहते भये ॥ श्रद्धाके[३७३] होते तो जाननेकूं इच्छित अर्थविषै मनकूं समाधान होवैहै औ तातैं तिस अर्थकी अवगति(निश्चय) होवैहै ॥ "मैं अन्यत्र[३७४] मनवाला होताभया" इत्यादि श्रुतितैं ॥ २ ॥

३७२ "हे सोम्य! सत्रूप मूलवाली" इत्यादि श्रुतिकरि औ "देखियेहै" तो इस न्यायकरि जगत्की सत्की कार्यताके सिद्ध हुये। श्रद्धा विनाबी ताके निर्णयके संभवतैं। श्वेतकेतु "श्रद्धाकूं कर" ऐसैं पिताकरि क्यूं आज्ञाका विषय करियेहै? तहां कहैहैं ॥

३७३ श्रद्धाके होतेबी बाह्यविषयनविषै आसक्त मनवालेकूं अत्यंत सूक्ष्म अर्थनविषै कैसैं निश्चय होवैगा? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

३७४ मनके समाधान (एकाग्रपनैं)के वशतैं बुभुत्सित (जाननेकूं इच्छित) अर्थका निश्चय होवैहै। इस अर्थविषै बृहदारण्यक श्रुतिकूं कथन करैहैं ॥

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदꣳ सर्वं तत्सत्यꣳ स आत्मा " तत्त्वमसि " श्वेतकेतो! इति ॥ भूय एव मा

अर्थः—सो जो यह अणिमा है । इसकरिआत्मावाला यह सर्व है । सो सत्य है सो आत्मा है । हे श्वेतकेतो! "तत्त्वमसि (सो तूं हैं)" । ऐसैं [पिता कहतेभये] ॥ ॥

टीकाः—सो जो । इत्यादिवाक्य उक्तअर्थवाला है ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—जब[375] सो सत् जगत्का मूल है तब सो काहेतैं नहीं देखियेहै । यह[376] दृष्टांतकरि मेरेकूं भगवान् फेरहीं विज्ञापन करहूं ? ऐसैं [पुत्र पूंछताभया] ॥ ॥

३७५ प्रत्यक्षकरि अप्रतीयमान होनेतैं नहीं है? ऐसैं मानताहुया श्वेतकेतु शंका करैहै ॥

३७६ अप्रतीयमानकें बी सद्भावकूं आशंकाकरिके पुत्र कहैहै ॥

भगवान् विज्ञापयत्विति ॥ तथा सोम्येति होवाच ॥ ३ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य द्वादशः खण्डः ॥ १२ ॥

श्वेतकेतुरुवाचः—फेरहीं मेरेकूं भगवान् विज्ञापनकरहु ? ऐसैं [पुत्र पूंछताभया] हे सोम्य ! तथाऽस्तु ! ऐसैं [पिता] कहतेभये ३

इति श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपाठ०द्वादशःखंडः१२॥

इति श्रीपंचमोपदेशः समाप्तः ॥ ५ ॥

---

[३७७] हे सोम्य ! तथाऽस्तु । ऐसैं पिता कहतेभये ॥ ३ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य द्वादशः खंडः॥१२॥

इति श्रीपंचमोपदेशः समाप्तः ॥ ५ ॥

---

३७७ अप्रत्यक्षबी जगत्के मूलके अस्तित्वकूं प्रतिपादनकरनेकूं श्रुति उत्तरग्रंथकूं प्रकट करैहै ॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकस्य द्वादशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १२ ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य त्रयोदशःखंडः १३

लवणमेतदुदकेऽवधायाथ मा प्रात-रुपसीदथा इति ॥ स ह तथा चकार ॥ तᳪं

अथ श्री॰मूलभाषा॰षष्ठप्रपाठकस्यत्रयोदशः खंडः १३

अथ श्रीषष्ठोपदेशप्रारंभः ॥ ६ ॥

अर्थः—उद्दालक उवाचः—इस लवणकूं उदकविषै डारिके अनंतर मेरेप्रति प्रातः-कालमैं आवना! ऐसैं [पिता कहतेभये] ॥ ॥ सो तैसैं करता भया ॥ ॥ ताकूं [पि-

---

अथ श्रीभाष्यभाषा॰षष्ठप्रपाठकस्य त्रयोदशः खंडः १२

लवणदृष्टांतसैं अप्रत्यक्षसत्की अस्तिताकरि सदुपदेश ३

अथ श्रीषष्ठोपदेशप्रारंभः ॥ ६ ॥

टीकाः—उद्दालक उवाचः—हे पुत्र! विद्यमा-नबी वस्तु अपने प्रकारसैं नहीं प्रतीत होवैहै। प्रकारांतरसैं तो प्रतीत होवैहै ॥ इसरीतिके इस अर्थकूं प्रत्यक्ष करनेकूं जब इच्छताहैं। तब दृष्टांतकूं इहां श्रवण कर! पिंड (गड्डा)रूप इस लवणकूं घटादिकमैं उदकविषै डालिके अनंतर मेरे-

होवाच-यद्दोषा लवणमुदकेऽवाधा अङ्ग! तदाहरेति ॥ तद्धावमृश्य न विवेद ॥१॥

ता] कहतेभये ॥ उद्दालक उवाचः—हे अंग! जिस लवणकूं रात्रिविषै उदकमैं डारता भया हैं ताकूं ल्याव! ऐसैं ॥ ॥ ताकूं विचारिके नहीं जानताभया ॥ १ ॥

प्रति कल्ह प्रातःकालमैं आवना ऐसैं [पिता कहतेभये] ॥ ॥ सो पिता३७८करि उक्त अर्थकूं प्रत्यक्ष करनेकूं इच्छताहुया तिस प्रकारसैं

अथ श्री०षष्ठप्रपाठकगतत्रयोदशखंडस्य टिप्प० १३

३७८ इहां नहीं प्रतीत होवैहै "अपने प्रकारसैं" यह शेषहै औ इसरीतिके इस अर्थकूं प्रत्यक्ष करनेकूं जब इच्छता हैं तब दृष्टांतकूं इहां श्रवण कर! ऐसैं योजना है औ रात्रिकी निवृत्तिकी अनंतरता। अथ (अनंतर) शब्दका अर्थ है ॥ जगत्का मूल स्वतः अप्रत्यक्ष हुयाबी उपायांतरसैं प्रत्यक्ष होवैहै। ऐसैं पितानैं कहा जो अर्थ ताकूं प्रत्यक्ष करनेकूं इच्छता हुया घटादिकमैं उदकविषै पिंडरूप लवणकूं रात्रिमैं डालिके ता (रात्रि)की निवृत्तिके अनंतर प्रातःकालविषै पिताके समीप श्वेतकेतु गमनकरताभया। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां जैसैं सो पिंडरूप लवण जलविषै डालनेतैं पूर्व होताभया। तैसैं नहीं जानताभया। ऐसैं संबंध है ॥

यथा विलीनमेवाङ्गास्यान्तादाचा-

अर्थः—उद्दालक उवाचः—हे अंग! जैसें

करताभया। ताकूं॥ ॥ आगिले दिवसविषै प्रातःकालमैं पिता कहतेभये ॥ उद्दालक उवाचः—हे अंग (हे वत्स)! जिस लवणकूं तूं रात्रिविषै जलमैं डालता भया हैं। ताकूं ल्याव!॥ ॥ऐसें उक्त हुया पुत्र तिस लवणकूं ल्यावनेकूं इच्छता हुया विचार करिके जैसें सो पिंडरूप लवण डालनेतैं पूर्व होता भया। तैसा उदकविषै नहीं जानताभया॥ कहिये सो लवण विद्यमानहीं[३७९] हुया [३८०]जलविषै लीन (मिलित) होता भया॥ १॥

टीकाः—उद्दालक उवाचः—जैसैं[३८१](यद्यपि) वि-

---

३७९ उदकविषै डाल्या जो लवण सो विचार करिके बी जब नहीं जानियेहै तब सो असत् (अविद्यमान)हीं होवैगा? यह आशंका करिके कहैहैं॥

३८० जब विद्यमान है तब चक्षुकारि वा स्पर्श(त्वचा)करि क्यूं नहीं प्रतीत होवैहै ? तहां कहैहैं॥

३८१ तब ताका विद्यमानपना कैसैं जान्या ? तहां कहैहैं॥

मेति । कथमिति ॥ लवणमिति ॥ मध्यादाचामेति । कथमिति ॥ लवण-

विलीनहीं भया है इसके अंत (ऊपर) तैं आचमनकर! ऐसैं [कहिके] किसप्रकारसैं है? ऐसैं [पिता पूंछते भये]॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—लवण है। ऐसैं [पुत्र क॰]॥ ॥

लीनभये लवणकूं तूं चक्षुकरि अरु स्पर्शनकरि नहीं जानताहैं । तथापि सो पिंडरूप लवण अगृह्यमाण हुयाबी जलोंविषै अन्य उपायकरि प्रतीयमान होवैहै । ऐसैं यह पुत्रकूं प्रतीति करावनेकूं इच्छते हुये पिता कहैहैं ॥

इहां यह अर्थ हैः—यद्यपि पिंड (गट्ठा) रूप उदकविषै डाले लवणकूं विचारकरिकेबी चक्षु अरु स्पर्शनकरि तूं नहीं जानताहैं। तथापि सो तिसविषै विद्यमानहीं है। जातैं तिन (चक्षु अरु स्पर्शन) करि अगृह्यमाणबी तहां उपायांतरसैं प्रतीत होवैहै। इस अर्थकूं पुत्रके तांई प्रतीति करावनेकूं उत्तर वाक्य है। औ "यथा (जैसैं)" शब्द जो है सो "यद्यपि" इस अर्थविषै है ॥

मित्यंतादाचामेति । कथमिति ॥ ल-
वणमित्यभिप्राश्यैनदथ मोपसीदथा इ-

उद्दालक उवाचः—मध्यतैं आचमनकर! ऐ-
सैं [कहिके] किस प्रकारसैं है? ऐसैं [पि-
ता पूंछतेभये] ॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—
लवण है। ऐसैं [पुत्र क०]॥ ॥ उद्दालक
उवाचः—अंत (नीचे) तैं आचमनकर! ऐ-
सैं [कहिके]किस प्रकारसैं है ? ऐसैं [पिता
पूंछतेभये] ॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—लवण
है। ऐसैं [पुत्र क०]॥ ॥ उद्दालक उवा-
चः—इसकूं आचमन करिके अनंतर मेरे-
प्रति समीपआवना! ऐसैं [पिता क०]

उद्दालक उवाचः—हे अंग ! इस उदकके
अंततैं (ऊपरतैं ग्रहण करिके) आचमनकर !
ऐसैं कहिके तैसैं करनेवाले पुत्रके प्रति पिता
कहेहैं:—किस प्रकारसैं है ? ऐसैं ॥ ॥ इतर

ति॥ तद्ध तथा चकार। तच्छश्वत्संवर्त्तते

॥ ॥ ताकूं तैसैं करताभया ॥ सो (लवण) नित्य सम्यक् वर्तताहै। ऐसैं [पुत्र कह-

---

(पुत्र) कहैहै ॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः-स्वादतैं लवण है। ऐसैं ॥ ॥ उद्दालक उवाचः-तैसैं उदकके मध्यतैं ग्रहण करिके आचमन कर! ऐसैं कहिके तैसैं करनेवाले पुत्रकेप्रति कहैहैं:- किसप्रकारसैं है? ऐसैं॥ श्वेतकेतुरुवाचः-लवण है। ऐसैं [पुत्र कहताभया] ॥ ॥ उद्दालक उवाचः-तैसैं अंततैं (अधोदेशतैं) ग्रहण करिके आचमनकर! ऐसैं कहिके तैसैं करनेवाले पुत्रकेप्रति कहैहैं:-किसप्रकारसैं है? ऐसैं ॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः-लवण है। ऐसैं [पुत्र कहताभया] ॥ ॥ उद्दालक उवाचः-जब ऐसैं है तब इस जलकूं आचमनकरिके परित्याग करिके अ-

तꣳ होवाचात्र वाव किल तत्सोम्य ! न निभालयसेऽत्रैव किलेति ॥ २ ॥

ताभया] ॥ ॥ ताकूं [पिता]कहतेभये ॥ उद्दालक उवाचः—हे सोम्य ! इहां (देह-विषै) [गुरुके उपदेशसैं मुजकरि] स्मरण किये सत्कूं नहीं जानताहैं । इहांहीं [अन्य उपायसैं जानैगा] ऐसैं ॥ २ ॥

नंतर मेरेप्रति आवनाः—ऐसैं ॥ ॥ ताकूं तैसैं करताभया । अर्थ यह जोः—[382]लवणकूं परित्याग करिके । "जो मैंनें रात्रिविषै डाल्याथा सो लवण तिसींहीं जलविषै नित्य वर्तताहै कहिये विद्यमानहीं हुया सम्यक् वर्तताहै" इस वचनकूं कहता हुया पिताके समीप आवताभया ॥ ॥ [383]इस प्रकारसैं कहनेवाले

---

३८२ "ताकूं" इत्यादिवाक्यकूं व्याख्यान करैहैं ॥ इहां सम्यक् वर्त्तताहै । ऐसैं इस वचनकूं कहता हुया [पुत्र] आगमन करताभया । ऐसैं संबंध है ॥

३८३ दृष्टांतकूं अनुवादकरिके दार्ष्टांतकूं कहैहैं ॥

तिस पुत्रकूं पिता कहतेभये ॥ उद्दालक उवाचः—जैसैं यह लवण दर्शन अरु स्पर्शनकरि पूर्व ग्रहण कियाथा । सो फेर जलविषै विलीनहुया तिन (दर्शन अरु स्पर्शन)करि अगृह्यमाण हुयाबी विद्यमानहीं है । काहेतैं अन्य उपायसैं (जिह्वाकरि) प्रतीयमान होनेतैं । हे सोम्य ! ऐसैंहीं इहांहीं कहिये इसीहीं तेज जल अरु अन्नआदिकके कार्य शुक्ररूप देहविषै गुरुउपदेशसैं मुजकरि [384]स्मरणकिये [इहां "वाव । किल" ये दो शब्द आचार्यके उपदेशकरि स्मरण किये वस्तुके दिखावनेरूप अर्थवाले हैं] तेज जल अरु अन्न आदिक शुक्रके कारण वटबीजके अणिमाकीन्यांई विद्यमानहीं सत्कूं इन्द्रियनकरि तूं नहीं जानता है ॥ [385]जैसैं इहांहीं उदकविषै दर्शन स्पर्शनकरि

---

३८४ जगत्के मूल सत्का इस देहविषै सद्भाव तुमनैं कैसैं जान्या ? यातैं पिता कहैहैं ॥

३८५ "अत्र वाव किल (इस देहविषै स्मरणकिये) " इत्यादि रूप वाक्यकरि "अत्रैव किल (इस देहविषै प्रसिद्ध-

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदꣳ सर्वं

अर्थः—सो जो यह अणिमा है। इस-करि आत्मावाला यह सर्व है सो सत्य है।

अप्रतीयमान लवणकूं विद्यमानहीं जिह्वाकरि जानता हैं ॥ ऐसैंहीं इहांहीं (इसशरीरविषैहीं) विद्यमान जगत्के मूल सत्कूं उपायांतरकरि लवणके अणिमा (सूक्ष्मभाव)कीन्यांई प्राप्त होवैगा (तूं निश्चय करैगा)! यह वाक्यशेष है ॥२॥

टीकाः—सो जो। इत्यादिवाक्य समान है॥ ॥

श्वेतकेतुरुवाचः—[३८६]जब ऐसैं लवणके अणिमा-कीन्यांई इन्द्रियनकरि अप्रतीयमानबी जगत्का मूल सत् अन्य उपायकरि जाननेकूं शक्य

कूं)" इस पदकी पुनरुक्तिकूं आशंकाकरिके। अर्थकी विलक्षणताकूं दिखावैहैं ॥

३८६ अन्य उपायकी जिज्ञासाकरि श्वेतकेतु पूंछताहै ॥ इहां "तब (तदा)" ऐसैं अध्याहारकिये पदका "ताके" इत्यादिरूप वाक्यके साथि संबंध है ॥

लवणदृष्टांतसैं अप्रत्यक्षसत्की अस्तिताकरि सदुपदेश ३

तत्सत्यꣳ स आत्मा "तत्त्वमसि" श्वेत-
केतो! इति ॥ भूय एव मा भगवान् वि-
ज्ञापयत्विति ॥ तथा सोम्येति होवा-
च ॥ ३ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य त्रयोदशः खण्डः ॥ १३ ॥

सो आत्मा है। हे श्वेतकेतो! "तत्त्वमसि
(सो तूं हैं)" ऐसैं [पिता कहतेभये] ॥ ॥
श्वेतकेतुरुवाचः—फेरहीं मेरेकूं भगवान् वि-
ज्ञापन करहू? ऐसैं [पुत्र पूंछताभया] ॥ ॥
हे सोम्य! तथाऽस्तु। ऐसैं [पिता] कहते-
भये ॥ ३ ॥

इति श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपा०त्रयोदशःखंडः १३

इति श्रीषष्ठोपदेशः समाप्तः ॥ ६ ॥

होवैहै। ३८७जाके ज्ञानतैं मैं कृतार्थ होऊंगा औ
जाके अज्ञानतैं अकृतार्थ होउंगा। तब ताहीके
ज्ञानविषै कौंन उपाय है। यह फेरहीं मेरेकूं

३८७ सत्‌रूप मूलके ज्ञानके हुये वा अज्ञानके होते क्या होवैहै? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य चतुर्दशः खंडः १४

यथा सोम्य! पुरुषं गन्धारेभ्योऽभि-

अथ श्री० मूलभाषा० षष्ठप्रपा० चतुर्दशः खंडः ॥१४॥

अथ श्रीसप्तमोपदेशप्रारंभः ॥ ७ ॥

अर्थः-उद्दालक उवाचः-हे सोम्य! जै-
सैं गंधार [देश]नतैं बद्धचक्षु पुरुषकूं

भगवान् दृष्टांतकरि विज्ञापन करहू? हे सो-
म्य! तथाऽस्तु[३८८] ऐसैं पिता कहते भये ॥३॥

इति श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य त्रयोदशः खंडः१३॥

इति श्रीषष्ठोपदेशः समाप्तः ॥ ६ ॥

अथ श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य चतुर्दशःखंडः १४

गंधारदेशतैं आनीतपुरुषदृष्टांतसैं सदद्वैतोपदेश २

अथ श्रीसप्तमोपदेशप्रारंभः ॥ ७ ॥

टीकाः-उद्दालक उवाचः-जैसैं[३८९] लोकविषै

---

३८८ जाननेकूं इच्छित उपायकूं दिखावनेकूं श्रुति उत्तर ग्रंथकूं ग्रहण करैहै ॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकगतत्रयोदशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १३ ॥

अथ श्री०षष्ठप्रपाठकगतचतुर्दशखंडस्य टिप्प० १४

३८९ जैसैं यह उपाय जाननेकूं शक्य है। तैसैं लोकविषै दृष्टांत देखियेहै। ऐसैं कहैहैं ॥

नद्धाक्षमानीय तं ततोऽतिजने विसृजेत्स यथा तत्र प्राङ्वा उदङ्वाऽधराङ्वा प्रध्मायिताभिनद्धाक्ष आनीतोऽभिनद्धाक्षो विसृष्टः ॥ १ ॥

ल्यायके ताकूं तिसतैं जनशून्य देशविषै छोडै। सो जैसैं तहां पूर्वमुख वा उत्तरमुख वा अधोमुख वा पश्चिममुख हुया पुकारैः—बद्धनेत्र ल्याया हुया बद्धनेत्र छोड्यागयाहूं ॥ १ ॥

३९०
हे सोम्य! जिस किसीबी गंधार देशनतैं बद्ध चक्षुवाले पुरुषकूं अरण्यविषै ल्यायके द्रव्यहर्ता तस्कर (चोर) तिस बद्धचक्षुवाले अरु बद्धहस्तकूंहीं तिसतैंबी अत्यंत विगत जनवाले (जनरहित) देशविषै छोडदेवै ॥ जैसैं

---

३९० तिसींहीं दृष्टांतकूं व्याख्यान करैहैं ॥ जैसैं दिशाओंके भ्रमकरि युक्त पुरुष जिस किसीबी दिशाके सन्मुख हुया पुकारताहै । तैसैं सो (गंधार देशवासी) तहां (विजन देशविषै) शब्दकूं करै । ऐसैं संबंध है ॥

तस्य यथाऽभिनहनं प्रमुच्य प्रब्रूया-

अर्थः—ताके बंधनकूं अनुसरिके छोडि-

दिशाओंके भ्रमकरि युक्त होवै तैसैं सो पुरुष तहां प्राङ् कहिये[391] प्रांगश्चन(पूर्व दिशाके तरफ)। अर्थ यह जोः—पूर्वा[392]भिमुख। वा तैसैं उत्तराभिमुख। वा अधराभिमुख। वा पश्चिमाभिमुख हुया शब्द (पुकार)कूं करैः—बद्धचक्षु हुया मैं गंधारदेशनतैं तस्करकरि ल्याया हुया बद्धचक्षुहीं छोड्या गया हूं ऐसैं ॥ १ ॥

टीकाः—ऐसैं ताके पुकारते हुये यथाबंधन (बंधनकूं अनुसरिके) ताकूं मुक्तकरिके कोई-कवी कारुणिक पुरुष इस दिशाकेतांईं उत्तरतरफ गंधार देश हैं इस दिशाकेप्रति गमनकर! ऐसैं कहै। सो ऐसैं कारुणिक पु-

---

३९१ "प्राङ्" इसपदके अर्थकूं कहैहैं ॥

३९२ ताहींके विवक्षित अर्थकूं कथन करैहैं ॥ इहां आगे कहनेके प्रकारोंकरि विकल्परूप अर्थवाला वा शब्द है ॥

देतां दिशं गन्धारा एतां दिशं व्रजेति ॥
स ग्रामाद्ग्रामं पृच्छन् पण्डितो मेधावी

के कहैः—इस दिशाके तांईं गंधार हैं। इस
दिशाकेप्रति गमन कर ऐसैं ॥ सो ग्रामतैं
ग्रामकूं पूंछता हुया पंडित मेधावी हुया

रुषकरि बंधनतैं मुक्त हुया ग्रामतैं ग्रामांतर-
कूं पूंछता हुया पंडित (उपदेशवान्) अरु
मेधावी (परकरि उपदेशकिये ग्रामप्रवेशके
मार्गके निश्चयविषै समर्थ) हुया गंधारदेश-
नकूंहीं प्राप्तहोवै। [393]ईतर मूढमति वा दे-
शांतरोंके देखनेकी तृष्णावाला नहीं प्राप्त हो-
वैहै ॥ [394]जैसैं यह दृष्टांत वर्णन किया किः—गं-
धारनामक स्वदेशनतैं पुरुष तस्करोंकरि बद्ध-
चक्षु मार्गोंके विवेकसैं रहित दिशाओंविषै मू-

---

३९३ पंडित अरु मेधावी। इन दो विशेषणोंके व्यवछेद्य
(भिन्नकरि दिखावनेकूं योग्य ऐसे व्यावर्त्य)कूं दिखावैहैं ॥

३९४ व्याख्यान किये दृष्टांतकूं उपस्कर (सामग्री) स-
हित अनुवाद करैहैं ॥

गन्धारानेवोपसम्पद्येतैवमेवेहाचार्य्यवा-

गंधारनकूंहीं प्राप्त होवै ॥ ऐसैं हीं इहां आचार्यवान् पुरुष जानताहै । ताकूं ता-

ढ क्षुधा तृषाआदिमान् व्याघ्र तस्करआदिक अनेक भयरूप अनर्थौंके समूहकरि युक्त अरण्यकेप्रति प्रवेशित दुःखार्थ अरु पुकारता हुया बंधनोतैं मुक्त होनेकी इच्छावाला हुया स्थित होवैहै ॥ सो किसीप्रकारसैंबी किसीबी कारुणिक (दयालु) पुरुषकरि मुक्त हुया गंधारनामक स्वदेशनकूंहीं प्राप्त हुया निर्वृत (सुखी) होता भया ॥ ऐसैंहीं[३९५] जगत्के आत्मस्वरूप सत्तैं तेज जल अरु अन्नआदिमय अरु वात पित्त कफ रुधिर मेद मांस अस्थि मज्जा शुक्र कृमि मूत्र पुरीषवाले अरु शीत उष्णआदिक अनेक द्वंद्वधर्मरूप दुःखवाले ईस[३९६]देहरूप अर-

३९५ दार्ष्टांतकूं व्याख्यान करैहैं ॥ इहां आदिशब्दकरि वायु अरु आकाश ग्रहण करिये हैं औ इधर "मयट्" प्रत्यय जो है सो विकाररूप अर्थवाला है ॥

३९६ देहरूप अरण्यकी अनेक अनर्थरूप संकटवान्ताकूं

न् पुरुषो वेद।तस्य तावदेव चिरं यावन्न विमोक्ष्येऽथ सम्पत्स्य इति ॥ २ ॥

वत् (तहांलगि)हीं चिर है। यावत्(जहांलगि) विमोक्ष (प्रारब्धके क्षयकरि देहपात) नहीं होवैगा। तबहीं प्राप्त होवैगा ऐसैं ॥ २ ॥

ण्यकेप्रति मोहरूप पट (वस्त्र)करि बद्धचक्षु अरु भार्या पुत्र मित्र पशु औ बंधुआदिक दृष्ट अनेक विषयनकी तृष्णारूप पाशकरि बांध्या अरु पुण्यपापआदिक तस्करोंकरि प्रवेशकूं पाया हुया
३९७ "मैं अमुकका पुत्र हूं।मेरे ये बांधव हैं।मैं सुखी हूं।

कथन करैहैं ॥ इहां शीतोष्णादि । इस आदिपदकरि राग द्वेष आदिक द्वंद्व ग्रहण किया है । तिस अनेक द्वंद्वकरि भया जो सुख अरु दुःख । तिसकरि युक्त यह देहरूप अरण्य है । यह अर्थ है औ बंधुआदि । यह आदिशब्द मित्र अरु क्षेत्रआदिक विषय (अर्थ) वाला है औ पुण्य पाप आदिक । यह आदिपद अविद्या काम अरु वासनाके संग्रहअर्थ है ॥

३९७ देहरूप अरण्यके प्रति प्रवेशकूं पाये जंतुके पुकारनेके प्रकारकूं कारणसहित सूचन करैहैं ॥

दुःखीहूं मूढहूं पंडितहूं बधुमान्हूं जन्म्या हूं मर्याहूं जीर्ण (जरायुक्त) भयाहूं पापीहूं । पुत्र मेरा मृत भया । धन मेरा नष्ट भया । हा हतभयाहूं । कैसें जीवूंगा । मेरी कौंन गति होवैगी । मेरा कौंन त्राण (रक्षक) है " इसरीतिसैं अनेक शत सहस्र अनर्थजालवान् होयके पुकारताहुया [३९८] किसी प्रकारसैं बी पुण्यके अतिशयतैं परम कारुणिक किसी बी सद्ब्रह्मरूप आत्माके जाननेवाले विमुक्तबंधन [३९९] ब्रह्मनिष्ठकूं जब पावताहै औ तिस ब्रह्मवेत्ताकरि करुणातैं दिखायाहै संसारविषयक दोषदर्शनका मार्ग जिसकूं ऐसा अरु संसारके विषयनतैं विरक्त हुया " तूं

---

३९८ ता जंतुके सदा दुःखीपनैकी शंकाकूं निवारण करैहैं ॥

३९९ आपात (ऊपर)तैं ब्रह्म वेत्तापनैंमात्रकरि मुक्तबंधनवान्ताकी असिद्धितैं ब्रह्मवेत्ताकूं विशेषण देतेहैं ॥ इहां जब पावताहै तब सुखी होवैहै । ऐसैं उत्तर वाक्यविषै संबंध है औ संसारविषयक दोषदर्शन जो ताके क्षयिष्णुपनै आदिकका ज्ञान । ताका मार्ग जो विवेक सो जिसकूं आचार्यनैं विद्यातैं दिखायाहै । सो दिखाया है संसारविषयक दोषदर्शनका मार्ग जिसकूं ऐसा है ॥

संसांरी अमुकके पुत्रपनैंआदिक धर्मवान् नहीं हैं। किंतु जो सत् है "तत्वमसि (सो तूं हैं)" ऐसैं अविद्या अरु मोहरूप बंधनतैं मुक्त हुया औ गंधारदेशके पुरुषकीन्यांईं अपने सत्रूप आत्माकूं पायके तब सुखी(निर्वृत) होवै ॥ इसीं हीं अर्थकूं पिता कहैहैः—इहां आचार्यवान् पुरुष जानताहै ऐसैं ॥ तिस इस ऐसैं आचार्यवान् अरु मुक्तअविद्यारूप बंधनवाले पुरुषकूं तावत्हीं (तितनाहीं काल) चिर कहिये क्षेप (विलंब) है। सत्रूप आत्मस्वरूपकी प्राप्तिका। यह शेष है॥ ॥कितना काल चिर है?

---

४०० आचार्यकरि साधनचतुष्टय संपन्न अधिकारीके संसारतैं मुक्त होनेके प्रकारकूं दिखावैहैं ॥ इहां यह भाव हैः— यद्यपि वाक्यार्थके ज्ञानविषै वाक्यहीं उपाय है। तथापि आचार्यके उपदेशतैं जनित अतिशयके देखनेतैं ता (आचार्य) का उपदेश अपरोक्षनिश्चयपर्यंत वाक्यार्थके ज्ञानविषै प्रथम हेतु है। औ उपदेशमात्रतैं जाकूं अपरोक्षनिश्चयपर्यंत वाक्यार्थका ज्ञान नहीं होवैहै ताकूं प्रमाण आदिककी असंभावनाके निरसनविषै समर्थ विचार (शास्त्राभ्यासरूप द्वितीय श्रवण औ मनन) मेधावीशब्दकरि विहित है। काहेतैं ता (मेधावी शब्द)के प्रज्ञाके अतिशयवान् पुरुषविषै प्रयोगतैं ॥

यह कहियेहैः–यावत् (जहांलगि) विमोक्ष (प्रारब्धका क्षय) नहीं होवैगा तावत्। इहां पुरुषके व्यत्ययकरि कहिये यह श्रुतिउक्त उत्तम-पुरुषके ठिकाने प्रथम पुरुषके कथनरूप व्यत्यय (फेरफार) करि अर्थ है। सामर्थ्यतैं[401] ॥ अर्थ यह जोः–जिंसैं[402] कर्मनैं शरीर आरंभ कियाहै ताके उ-पभोगकरि क्षयतैं देहपात यावत् होवै तावत् ॥ अथ (तबीहीं) सत्कूं पावताहै । यह पूर्व-

---

४०१ व्याकरणकी प्रक्रियाविषै क्रियापदके उत्तम मध्यम अरु प्रथम भेदकरि तीनपुरुष कहियेहैं ॥ इहां श्रुतिविषै छांदस प्रयोगकरि "विमोक्ष्ये (मुक्त होऊंगा)" ऐसा उत्तम पुरुषका क्रियापद है । इस प्रसंगविषै ताके असंभवतैं भाष्यविषै ताका पर्यायरूप "विमोक्ष्यते (मुक्त होवैगा)" ऐसा प्रथम पुरुषका क्रियापद धर्‍याहै । ऐसैं पुरुषका व्यत्यय (फेरफार) कियाहै ॥ तिस पुरुषके व्यत्ययविषै आचार्य्य हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः–अस्मत् (अहं आदिक) रूप उपपदके न होते उत्तम पुरुषके प्रयोगके असंभवतैं वा ऐसैं हुये देहादिककी स्थितिके असंभवतैं [इहां पुरुषका व्यत्यय कियाहै] ॥

४०२ "यावत् (जहांलगि)" इत्यादि वाक्यके अर्थकूं स्पष्ट करैहैं ॥ इहां "पूर्वकी न्यांईं" कहिये "विमोक्ष्ये" इस पूर्व उक्त क्रियापदकी न्यांईं । ऐसैं इहां (संपत्स्ये । इस क्रियापदविषै) बी सामर्थ्यतैं पुरुषके व्यत्ययकूं लखावतेहैं ॥

कीन्यांई है ॥ [४०३]जौतैं देहमोक्षके औ सत्संपत्ति (सत्की प्राप्ति)के कालका भेद नहीं है। जिसकरि अथ शब्द अनंतरतारूप अर्थवाला होवै [यातैं अथ शब्दका तबीहीं कहिये देहपातके समकालहीं। यह अर्थ है] ॥ ॥ [४०४]नंनु जैसैं सत्के विज्ञानतैं अनंतरहीं देहपात औ सत्संपत्ति (विदेहमुक्ति) नहीं होवैहै कर्मशेषके वशतैं। तैसैं अप्रवृत्तफलवाले ज्ञानकी उत्पत्तितैं पूर्व [इस जन्मविषै किये औ] जन्मांतरोंविषै संचितबी कर्म हैं। यातैं तिनके फलभोगकेअर्थ इसदेहके पतित हुये अन्य शरीर आरंभ करनेकूं योग्य है औ ज्ञानके उत्पन्न हुये बी जीवनपर्यंत विहित वा प्रतिषिद्ध कर्मोंकूं करताहीं है। यातैं तिनके फलके उपभोगअर्थ अवश्य अन्यशरीर आरंभ करनेकूं योग्य है औ

---

४०३ ननु अथशब्दका सत्संपत्ति (विदेहमुक्ति)की देहमोक्षतैं अनंतरता (पीछे होना) अर्थ होवैगा ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

४०४ " तबीहीं सत्कूं पावैगा " ऐसैं उक्त विदेहमुक्तिके प्रति पूर्ववादी आक्षेप करैहै ॥ इहां यह अर्थ है:—विवादके विषय जे कर्म वे ब्रह्मज्ञानसैं क्षयकूं पावते नहीं। कर्म होनेतैं। प्रवृत्तफलवाले (प्रारब्ध कर्म)की न्यांई ॥

तिसतैं कर्म होवैंगे तिनतैं अन्यशरीर होवैगा। यातैं ज्ञानकी व्यर्थता होवैगी। कर्मोंकूं फलवान् होनेतैं ॥ औ [४०५] जब ज्ञानवान्के कर्म क्षीण होवैहैं। [४०६] तब ज्ञानप्राप्तिके समकालहीं ज्ञानकूं सत्संपत्तिका हेतु होनेतैं मोक्ष होवैगा। यातैं [ज्ञान समकालहीं] शरीरका पात होवैगा॥ तैसैं हुये (ज्ञानसमकालहीं आचार्यके देहपातके होनेतैं) आचार्यका अभाव होवैगा। यातैं "आचार्यवान् पुरुष जानताहै" इस अर्थका असंभव औ ज्ञानतैं मोक्षके अभावका प्रसंग होवैगा। वा [४०७] देशांतरकी प्राप्तिके उपायके ज्ञानकीन्यांई ज्ञा-

---

४०५ "या (ज्ञानी)के कर्म क्षयकूं पावतेहैं" औ "नानाग्नि सर्व कर्मोंकूं भस्मकी न्यांई करैहै" इत्यादि श्रुति स्मृतिके विरोधतैं इहां कालके अतिक्रमणका मिषपना (कपटपना) है? ऐसैं पूर्वपक्षविषै सिद्धांती शंका करैहैं ॥

४०६ अतिप्रसंग (मर्यादाके उल्लंघन)तैं उक्त श्रुति स्मृतिकूं यथाश्रुत अर्थवानृता नहीं है। ऐसैं पूर्वपक्षी परिहार करैहै

४०७ ज्ञानकी व्यर्थताकूं कहिके। अब अन्य पक्षकूं पूर्ववादी कहैहै ॥ इहां यह अर्थ है:—जैसैं ग्रामप्राप्तिका उपाय अश्व है वा रथ है। ऐसे ज्ञानके होते अंतराय (प्रतिबंधक)के न होते किसीकूंहीं ग्रामकी प्राप्ति होवैहै। औ अंतरायवालेकूं

नकूं अनैकांतिक (अनियमित) फलवान्‌ता हो-
वैगी? सो[४०८] कथन बनै नहीं:—काहेतैं कर्मोंके प्र-
वृत्त अरु अप्रवृत्त फलवान्‌ताकरि विशेष (भेद)
के संभवतैं॥ ॥ जो[४०९] कहा किः—अप्रवृत्तफलवाले
(संचित अरु क्रियमाण) कर्मोंकूं ध्रुव (आव-
श्यक) फलवाले होनेतैं ब्रह्मवेत्ताकूं शरीरके प-
तितभये अप्रवृत्तकर्मोंके फलके उपभोगअर्थ अ-
न्यशरीर आरंभकरनेकूं योग्य है? यह असत् है:—
काहेतैं विद्वा[४१०]नकूं "ता (ज्ञानी)कूं तावत्‌हीं चिर
है" इस श्रुतिके प्रामाण्यतैं [अन्य देहके आरं-
भके हुये ताके विरोधके प्रसंगतैं] यह शेष है॥ ॥

तो ताके ज्ञानके होतेबी जैसैं ता (ग्राम)की प्राप्ति नहीं हो-
वैहै॥ तैसैं सम्यक्‌उत्पन्नज्ञानवाले बी किसीहीं भोगकरि
क्षीणकर्माशयकूं कहिये भोगकरि क्षीणभये हैं कर्मके आशय
(संस्कार) जिसके ऐसे पुरुषकूं। मोक्ष होवैहै। ज्ञानमात्रतैं
नहीं॥ ऐसैं ज्ञानकूं अनियमित फलवान्‌पना है॥

४०८ "कर्म होनेतैं" इस हेतुकी अप्रयोजकताकूं कहते
हुये सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं॥

४०९ संग्रहरूप वाक्यकूंहीं प्रपंचन करते हुये आदिविषै
नञ् शब्द (नकार)के अर्थकूं स्पष्ट करैहैं॥

४१० तिसविषै हेतुकूं कहैहैं॥

[411] ननु "पुण्यकर्मकरि पुण्यरूप होवैहै" इत्यादि श्रुतिका बी प्रामाण्यहीं है? [412] सत्य ऐसैं है। [413] तथापि प्रवृत्तफलवाले प्रारब्ध औ अप्रवृत्तफलवाले (संचित औ क्रियमाण) कर्मोंका विशेष (विलक्षणपना) है॥ [414] कैसैं किः—जे प्रवृत्तफलवाले कर्म हैं। [415] जिनोंनैं विद्वान्का शरीर आरंभ किया है। तिनोंका उपभोगसैंहीं क्षय होवैहै॥ [416] जैसैं

४११ अन्यश्रुतिकूं आश्रयकरिके पूर्ववादी शंकाकरैहै॥ इहां तैसैं हुये अनारब्ध (संचित अरु क्रियमाण) कर्मके वशतैं विद्वान्काबी अन्य देह आरंभ होनेकूं योग्य है। यह शेषहै॥

४१२ अब सिद्धांती ता (श्रुति)की प्रमाणताकूं अंगीकार करैहैं॥

४१३ तब विद्वान्कूंबी अन्यदेह अनारब्धकर्मके वशतैं आरंभ करनेकूं योग्य है? तहां सिद्धांती सो बनै नहीं ऐसैं कहैहैं॥

४१४ विशेषकूंहीं आकांक्षाद्वारा स्पष्ट करैहैं॥

४१५ प्रारब्धके प्रवृत्तफलवान्पनैकूंहीं स्पष्ट करैहैं॥

४१६ उक्त अर्थकूं दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं॥ इहां यह अर्थ हैः—लक्ष्यका वेध जो भेदन ताके समकालहीं [गतिका प्रयोजन है] बाणआदिकका पीछे गतिका प्रयोजन नहीं है। यातैं इस प्रयोजनके अभावतैं स्थिति नहीं होवैहै किंतु लक्ष्य (निसान)कूं उद्देश करिके छूटे तिस बाणकी अप्रतिबंधकरि तिससैं संपादित आरंभकिये वेगके क्षयतैं हीं स्थिति होवै-

आरंभ किये वेगवाले औ लक्ष्य (निशान)केप्रति छोडे बाणआदिककी वेगके क्षयतैंहीं स्थिति होवैहै । लक्ष्यवेधके समकालहीं तो । प्रयोजन नहीं है (पीछे प्रयोजनका अभावहै) यातैं नहीं । ताकी न्यांईं ॥ परन्तु [४१७]अन्य अप्रवृत्त फलवाले जे इहां (वर्तमानशरीरविषै) ज्ञानकी उत्पत्तितैं पूर्व औ ऊर्ध्व किये क्रियमाण वा अतीत (गत) जन्मांतरोंविषै किये अप्रवृत्तफलवाले कर्म हैं वे [४१८]प्रायश्चित्तसैं पापके दाहकीन्यांई ज्ञानसैं दाहकूं पावतेहैं औ " तैसैं [४१९]ज्ञानाग्नि सर्व कर्मोंकूं भस्मकीन्यांई करैहै " इस स्मृतितैं औ

है ॥ इस दृष्टांतकीन्यांई विद्यारूपअर्थवाले देहविषै विद्याके लाभके अनंतर फल नहीं है यातैं (इस फलके अभावतैं) कर्म निवर्त्त नहीं होवैहै किंतु भोगके क्षयतैं हीं निवर्त्त होवैहै । काहेतैं ताकूं लब्ध वृत्ति (प्राप्त प्रवृत्ति)वाला होनेतैं ॥

४१७ प्रवृत्तफलवाले प्रारब्धकर्मोंतैं अप्रवृत्तफलवाले (संचित औ क्रियमाण) कर्मोंकी विलक्षणताकूं कहैहैं॥

४१८ औ अप्रवृत्तफलवाले कर्मोंका क्षय अप्रसिद्ध नहीं है । काहेतैं तिस प्रकारकेहीं पापके प्रायश्चित्तकरि क्षयके योगतैं ॥

४१९ आरब्धफलवाले कर्मोंतैं भिन्न कर्मोंकी ज्ञानतैं निवृत्तिविषै श्रुति स्मृतिकूं दिखावैहैं ॥

" इसके कर्म क्षीण होवैहैं " ऐसैं अथर्वणवेदके वाक्यविषै कहा है। [420]यांतैं ब्रह्मवेत्ताकूं जीवनादिप्रयोजनके अभावके हुयेबी [421]मुक्तबाणकीन्यांईं प्रवृत्त फलवाले कर्मोंका अवश्यहीं फलोपभोग होवैगा। यातैं " ताकूं तहांलगिहीं चिर है" यह युक्तहीं कहाहै ॥ यातैं यथोक्त दोषकी शंकाका असंभव है॥ औ [422]ज्ञानकी उत्पत्तितैं ऊ-

४२० प्रवृत्त अरु अप्रवृत्त कर्मोंविषै विलक्षणताके सिद्ध हुये फलितकूं कहैहैं ॥ जीवन आदि । इस आदिशब्दकरि पुत्र कलत्र आदिक ग्रहणकरियेहै औ मुक्त (छूटे) प्रतिबंधरहित बाणआदिकके वेगके क्षयपर्यंत गतिकी आवश्यकतारूप व्यवहारकीन्यांईं प्रारब्धकर्मोंके फलका भोग अवश्य होवैगा। ऐसैं संबंध है ॥

४२१ औ जातैं प्रारब्धकर्मोंका भोगतैंहीं क्षय होवैहै तातैं " ताका तहांलगिहीं " इत्यादि वाक्यकरि जो विद्वानकूं सत्संपत्ति (विदेहमुक्ति)का चिरपना (विलंब) कहा है सो युक्तहीं है। ऐसैं कहिके यथोक्त सद्यः—शरीरपातादिरूप दोषकी आशंकाका असंभव है। ऐसैं उपसंहारकरैहैं ॥ इहां प्रथम जो इति (यातैं) शब्दहै ताका "ताकूं" इस पदसैं संबंधहै ॥

४२२ औ जो ज्ञानके उत्पन्न हुये बी जीवनपर्यंत विहित [आदिक] कर्मोंकूं करताहीं है? ऐसैं जो पूर्ववादीनैं कहाथा तहां सिद्धांती कहैहैं ॥

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदꣳसर्व्वं तत्सत्यꣳ स आत्मा "तत्त्वमसि" श्वेत-

---

अर्थः—सो जो यह अणिमा है। इसकरि आत्मावाला यह सर्व है। सो सत्य है। सो आत्मा है। हे श्वेतकेतो! "तत्वमसि (सो

र्ध्व ब्रह्मवेत्ताके कर्मके अभावकूं "ब्रह्मसंस्थ (ब्रह्मनिष्ठ) अमृतभावकूं पावताहै" इस याके द्वितीयप्रपाठकके २३ वें खंडके वाक्यविषे हम कहते भये। ताकूंबी तूं (वादी)स्मरण करनेकूं योग्यहैं २

टीकाः—सो जो। इत्यादि वाक्य उक्त अर्थवाला है ॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—आचार्यवान्[४२३] विद्वान् जिसक्रमकरि सत्कूं पावताहै तिसक्र-

---

४२३ ज्ञानकी व्यर्थता नहीं है काहेतैं अविद्या तत्कार्यके निवर्त करनेकरि सत्संपत्तिका हेतु होनेतैं ॥ औ ज्ञानकूं व्यभिचारी फलवान्ता बी नहीं है। काहेतैं अंतराय (प्रतिबंध)के अभावतैं। ऐसैं कहा॥ अबी अर्चिरादि मार्गकी प्राप्तिकरि (क्रमकरि) वा इहांहीं अविद्याकी निवृत्तिमात्रकरि (अक्रमकरि) सत्संपत्ति होवैहै ? इस संदेहकरि युक्त हुया श्वेतकेतु शंका करैहै ॥

केतो! इति ॥ भूय एव मा भगवान्विज्ञापयत्विति ॥ तथा सोम्येति होवाच ॥ ३ ॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य चतुर्दशः खण्डः ॥ १४ ॥

तूं हैं)" ऐसैं [पिता कहतेभये] ॥ ॥ श्वेतकेतुउवाचः—फेरहीं मेरेकूं भगवान् विज्ञापन करहू? ऐसैं [पुत्र पूंछताभया] ॥ ॥ हे सोम्य! तथाऽस्तु। ऐसैं [पिता] कहतेभये ॥ ३ ॥

इति श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपा०चतुर्दशःखंडः॥१४॥

इति श्री सप्तमोपदेशःसमाप्तः ॥ ७ ॥

मकूं दृष्टांतकरि फेरहीं मेरेकूं भगवान् विज्ञापन करहू? ऐसैं [पुत्र पूंछता भया] ॥ ॥ हे सोम्य! तथाऽस्तु[४२४]। ऐसैं पिता कहतेभये॥३॥

इति श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य चतुर्दशः खंडः॥१४॥

इति श्रीसप्तमोपदेशःसमाप्तः ॥ ७ ॥

---

४२४ संशययुक्तके सम्यक् बोधनअर्थ उत्तरवाक्यकूं अवतार देतेहैं ॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकगतचतुर्दशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १४ ॥

अथ षष्ठप्रपाठकस्य पंचदशःखंडः १५॥

पुरुषꣳसोम्योतोपतापिनं ज्ञातयः पर्य्युपासते-जानासि मां जानासि मामि-

---

अथ श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपा०पंचदशःखंडः ॥ १५ ॥

अथ श्रीमदष्टमोपदेशप्रारंभः ॥ ८ ॥

अर्थः–उद्दालक उवाचः–हे सोम्य! उपतापी पुरुषकूं ज्ञाति "मेरेकूं जानताहैं। मेरेकूं जानताहैं" ऐसैं पूंछते हुये घेरिके

अथ श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य पंचदशः खंडः१५

मुमूर्षुपुरुषोदाहरणसैं सत्संपत्तिका क्रम कहिके सदुपदेश ३

अथ श्रीमदष्टमोपदेशप्रारंभः ॥ ८ ॥

टीकाः–उद्दालक उवाचः–हे सोम्य! उपतापी कहिये ज्वरआदिक उपतापवाले अरु मरनेहारे पुरुषकूं ज्ञाति(बांधव) "मुज तेरे पिताकूं वा पुत्रकूं वा भ्राताकूं जानताहैं" ऐसैं पूंछतेहुये घेरिके उपासतेहैं (पास बैठतेहैं)॥ तिस मरनेवालेकी यावत् वाक् मनविषै नहीं

ति ॥ तस्य यावन्न वाङ्मनसि सम्पद्य-
ते मनः प्राणे प्राणस्तेजसि तेजः परस्यां
देवतायां तावज्जानाति ॥ १ ॥

अथ यदाऽस्य वाङ्मनसि सम्पद्यते

पास बैठते हैं" ॥ ताकी यावत् वाक् मन-
विषै नहीं संपन्न (लीन) होवैहै । मन प्राण-
विषै । प्राण तेजविषै । तेज परदेवताविषै ।
तावत् जानताहै ॥ १ ॥

अर्थः—अनंतर जब इसकी वाक् मन-

संपन्न (विलीन) होवै। मन प्राणविषै। प्राण
तेजविषै । तेज परदेवताविषै । [यह वाक्य
पूर्वउक्त अर्थवाला है] तावत् जानताहै ॥१॥

टीकाः—संसारीका[४२५] जो मरणका क्रमहै । सोई

अथ श्री०षष्ठप्रपाठकगतपंचदशखंडस्य टिप्पणम् १५

४२५ ननु यह संसारीके मरणका क्रम है । विद्वान्की सत्संपत्तिका क्रम तो नहीं है । काहेतैं तिन दोनूं क्रमोंके विशेष (भेद)कूं कहने योग्य होनेतैं ? यातैं कहैहैं ॥ करणोंके उपरम हुये औ तेजसहित भूत सूक्ष्मनके उपसंहार (लय)के

मनः प्राणे प्राणस्तेजसि तेजः परस्यां देवतायामथ न जानाति ॥ २ ॥

विषै संपन्न होवै। मन प्राणविषै। प्राण तेजविषै। तेज परदेवताविषै। तब नहीं जानताहै ॥ २ ॥

यह विद्वान्काबी सतूसंपत्तिका क्रम है। यह कहैहैः—परदेवताविषै तेजके संपन्न (लीन) हुये अनंतर नहीं जानताहै ॥ [तिनमैं] [४२६]अविद्वान् तो सतूतैं उत्थानकरिके पूर्वभावनाकिये व्याघ्रादि भावकेतांई वा देव मनुष्यादि भावकेतांई प्रवेश करैहै ॥ विद्वान् तो शास्त्र अरु आचार्यके उपदेशसैं जनित ज्ञानदीपकरि प्रकाशित सतू ब्रह्मरूप आत्माकेप्रति आवर्त्तन करता नहीं (पुनर्जन्मकूं पावतानहीं)। ऐसा यह सतूसंपत्ति (ब्रह्मकी

हुये विशेषविज्ञानका अभाव विद्वान् अरु अविद्वान् दोनूंकूं समानहीं है ॥

४२६ तब तिन दोनूंविषै कौंन विशेष है? तहां कहैहैं ॥ इहां सतूतैं "याका तिस अज्ञात सदात्मातैं। यह अर्थ है ॥

प्राप्ति)का क्रम है ॥ ॥ [427]अँन्यतो मस्तकविषै स्थित सुषुम्णानामक नाडीकरि उत्क्रमणकरिके (देहतें बाहिर निकसिके आदित्यआदिक द्वारसैं) सत् (ब्रह्म)केप्रति गमन करैहैं ? ऐसें कहते हैं । सो असत् है:—काहेतें देशकालरूप निमित्तवाले फलके अभिसंधान (निश्चय)सैं गमनके दर्शनतें॥ [428]जातें सत्‌रूप आत्माकी एकताके दर्शनवाले अरु सत्याभिसंध(सत्यप्रतिज्ञावाले)कूं देशकालरूप निमित्तवाले फलआदिक अनृतकी अभिसंधि (प्रतिज्ञा) नहीं संभवैहै । विरोधतें ॥ औ [429]अविद्या काम अरु कर्मरूप गमनके निमित्तनकूं सतके विज्ञानरूप हुताशनकरि नष्ट होनेतें

---

४२७ एकदेशीके मतकूं उठायके निषेध करैहैं ॥

४२८ विद्वान्‌काबी ता (सत्‌की) अभिसंधि (प्रतिज्ञा) पूर्वक गमन होहु ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां आदि शब्दकरि गति अरु आगति (गमन अरु आगमन) ग्रहण करियेहैं ॥

४२९ सत्‌के विज्ञानवालेके गमनके अयोगविषै अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदꣳ सर्व्वं

अर्थः—सो जो यह अणिमा है । इसकरि आत्मावाला यह सर्व है। सो सत्य है।

विद्वान्कूं गमनका असंभवहीं है औ "[430] पूर्णकाम कृतात्मा (कृतार्थ भये पुरुष)के तो सर्वकाम इहांहीं प्रविलीन होवैहैं" इत्यादि अथर्वणवेदके वाक्यविषै कहा है [431] अरु नदी-समुद्ररूप दृष्टांतकी श्रुतितैं ॥ २ ॥

टीकाः—सो जो । इत्यादि समान है ॥ ॥

श्वेतकेतुरुवाचः—[432] जैसैं मरनेवालेकूं औ मोक्ष हो-

४३० विद्वान्के अविद्या काम अरु कर्मके अभावविषै प्रमाणकूं कहैहैं ॥

४३१ ननु कामका प्रविलयहीं इहां सुनियेहै । अविद्या काम अरु कर्मका निर्मोक (निवर्त्तन) नहीं ? तहां कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:—"जैसैं गंगाआदिक नदियां नामरूपकूं छोडिके समुद्रके प्रति प्रवेश करैहैं । तैसैं विद्वान् नामरूपकूं छोडिके परम पुरुषकूं पावताहै" इस दृष्टांतपूर्वक श्रुतितैं नामरूपकी बीजावस्थारूप अविद्याका लय जानियेहै औ अविद्या अरु कामके अभावके हुये कर्मका संभव नहीं है । तातैं विद्वान्कूं गतिपूर्वक सत्संपत्ति नहीं होवैहै ॥

४३२ विवादका विषय जो सत्संपन्न (ब्रह्मकूं प्राप्तभया

तत्सत्यꣳस आत्मा "तत्त्वमसि" श्वेतकेतो! इति॥ भूय एव मा भगवान् विज्ञापयत्विति॥ तथा सोम्येति होवाच॥ ३॥

इति षष्ठप्रपाठकस्य पञ्चदशः खण्डः॥ १५॥

सो आत्मा है। हे श्वेतकेतो! "तत्वमसि (सो तू हैं)" ऐसैं [पिता कहते भये]॥ ॥ श्वेतकेतुरुवाचः—फेरहीं मेरेकूं भगवान् विज्ञापन करहू ऐसैं [पुत्र पूंछता भया]॥ ॥ हे सोम्य! तथाऽस्तु ऐसैं [पिता] कहते भये॥ ३॥

इति श्री०मूलभाषा०षष्ठप्रपा०पंचदशःखंडः१५॥

इति श्री मदष्टमोपदेशः समाप्तः॥ ८॥

नेवालेकूं सत्संपत्ति (ब्रह्मकी प्राप्ति) तुल्य है।

मुक्त पुरुष) सो पुनरावृत्तिकूं योग्य होवैहै। सत्संपन्न होनेतैं मरणकालविषै सत्संपन्नकी न्यांई॥ वा विवादका विषय जो विशेषविज्ञानका अभाव सो विद्वान्का आत्यंतिक नहीं है। विशेषविज्ञानका अभाव होनेतैं। मरणकालसंबंधी विशेषविज्ञानके अभावकी न्यांई? इस अनुमानतैं विद्वान् अरु अविद्वान्के अविशेषकूं मानता हुया श्वेतकेतु शंकाकरैहै॥

तब विद्वान् सत्कूं संपन्न(प्राप्त)हुया आवर्तन करता नहीं औ अविद्वान्तो आवर्तन करताहै। इस ठिकाने कारणकूं दृष्टांतकरि फेरहीं मेरेकूं भगवान् विज्ञापन करहू? ऐसैं [पुत्र पूंछताभया] ॥॥ हे सोम्य![४३३] तथाऽस्तु। ऐसैं [पिता] कहतेभये ॥ ३ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०षष्ठप्रपाठकस्य पंचदशः खंडः॥१५॥

इति श्रीमदष्टमोपदेशः समाप्तः ॥ ८ ॥

---

४३३ तहां अनृतरूप प्रतिज्ञावान्पना औ तैसी प्रतिज्ञावान्विषै स्थितपना उपाधि (उक्त अनुमानका दोष विशेष) है। ऐसैं उक्त दो अनुमानोंकूं दूषण देनेकूं उत्तर ग्रंथकूं उठावतेहैं ॥

इति श्री०षष्ठप्रपाठकगतपंचदशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १५ ॥

अथ श्रीछान्दोग्योपनिषदः षष्ठप्रपाठकस्य षोडशः खंडः प्रारभ्यते ॥ १६ ॥

पुरुषꣳ सोम्योत हस्तगृहीतमानय-

अथ श्री॰मूलभाषा॰षष्ठप्रपा॰षोडशः खंडः ॥ १६ ॥

अथ श्रीनवमोपदेशप्रारंभः ॥ ९ ॥

अर्थः—उद्दालक उवाचः—हे सोम्य! हस्तगृहीत पुरुषकूंबी ल्यावतेहैं ॥ अपहरण

अथ श्रीछांदोग्योपनिषद्भाष्यभाषादीपिकायाःषष्ठप्रपाठकस्य षोडशः खंडः प्रारभ्यते ॥ १६ ॥

चौरतप्तपरशुग्रहणदृष्टांतसैं सत्प्राप्त मुक्त मृतकी क्रमसैं अनावृत्ति आवृत्ति-हेतूक्तिकरि सदुपदेश २

अथ श्रीनवमोपदेशप्रारंभः ॥ ९ ॥

टीकाः—उद्दालक उवाचः—हे सोम्य! श्रवण कर! जैसैं चौर्यकर्मविषै संदेहके विषय बद्धहस्त बी पुरुषकूं निग्रह (दंड)केअर्थ वा परीक्षा करनेकेअर्थ राजपुरुष ल्यावतेहैं ॥ यह क्या करताभया है? ऐसैं पूंछे हुये। वे कहते हैं

न्त्यपहार्षीत्स्तेयमकार्षीत्परशुमस्मै त-
पतेति॥स यदि तस्य कर्त्ता भवति तत

करताभया है। स्तेयकूं करता भया है। या-
केअर्थ परशुकूं तपावो ऐसैं ॥ सो जब ता
(चौर्य)का कर्ता होवैहै । ताहींतैं अनृत-

किः—यह इसके धनकूं हरण करता भया है॥
औ फेर वे (प्रच्छक) कहते हैं किः—क्या अप-
हरण (परधनके ग्रहण) मात्रकरि बंधनकूं योग्य
होवैहै। अन्यथा (ऐसैं बंधनकी योग्यताके हुये)
धनके दिये हुयेबी बंधनके प्रसंगतैं? ऐसैं उक्त हुये
राजपुरुष फेर कहतेभयेः—यह स्तेय (चौर्य) कूं
करताभया है कहिये चौर्यकरि धनकूं हरण क-
रता भयाहै ऐसैं ॥ तिनोंके ऐसैं कहते हुये इ-
तर (चोर) "मैं तिस (चौर्य)का कर्त्ता नहीं हूं"
ऐसैं कपटकरि आपकूं ढांपताहै ॥ औ वे (राज-
पुरुष) संदेहके विषय पुरुषकेप्रति कहते भयेः—
"तूं याके धनके स्तेय (चौर्य)कूं करताभयाहैं"

एवाऽनृतमात्मानं कुरुते। सोऽनृताभि-
सन्धोऽनृतेनात्मानमन्तर्धाय परशुं तप्तं

रूप आपकूं करताहै । सो अनृताभिसंध
अनृतकरि आपकूं ढापिके तप्त परशुकूं

ऐसैं ॥ औ तिस (चोर)के कपटकारि ढांपते हुये
वे कहते भये:—याकेअर्थ परशुकूं तपावो ऐसैं।
सो आत्मा (आप)कूं शोधन करहू ऐसैं ॥ सो
जब तिस चौर्यका कर्ता होवैहै औ बाहिर
आपकूं ढापताहै । सो एवंभूत (इस प्रकारका
पुरुष) ताहींतैं अनृत कहिये[434] अन्यथारूप हुये

अथ श्री०षष्ठप्रपाठ०षोडशखंडस्य टिप्पणम् ॥१६॥

४३४ इहां परीक्षण (परीक्षाकरने)के अर्थ। याका परी-
क्षारूप द्वारकरि रक्षाकेअर्थ। यह अर्थ है ॥ औ परधनके
ग्रहणमात्रकरि बंधनके हुये प्रतिग्रहीता (धनदानग्रहणके
कर्ता)कूं बी बंधनके प्रसंगतैं तन्मात्र (परधन ग्रहणमात्र) बं-
धनका कारण नहीं है। ऐसैं कहैहैं॥ इहां ताहीतैं। याका अ-
नृतविषै अभिसंध (आसक्त) होनेतैं हीं। यह अर्थ है औ
द्वितीय वाक्यविषै "ताहीतैं" याका स्तैन्य (चौर्य) रूप कर्मका
अकर्ता होनेतैं हीं। यह अर्थ है ॥

प्रतिगृह्णाति । स दह्यतेऽथ हन्यते ॥ १ ॥
अथ यदि तस्याकर्त्ता भवति तत

ग्रहण करताहै । सो दाहकूं पावताहै अनंतर हनन करियेहै ॥ १ ॥

अर्थः—औ जब ता (चौर्य)का अकर्ता

आत्माकूं अन्यथा (विपरीत) करताहै । सो तैसैं अनृत (जूठी) प्रतिज्ञावाला हुया अनृत (जूठ) करि आपकूं अंतर्धानकरिके (ढांपिके) तप्त परशुकूं मोह (भ्रांति)तैं ग्रहणकरताहै । सो दाहकूं पावताहै । अनंतर अपनेकिये जूठी प्रतिज्ञारूप दोषसैं राजपुरुषनकरि हनन (ताडन)कूं प्राप्त करियेहै ॥ १ ॥

टीकाः—औ जब तिस (चौर्य) कर्मका अकर्ता होवैहै । ताहींतैं सत्यआत्माकूं करता है। सो सत्यकरि कहिये तिस चौर्यके अकर्ता भावकरि आपकूं ढापिके तप्त परशुकूं ग्रहण करताहै । सो सत्यप्रतिज्ञावाला हुया सत्य-

एव सत्यमात्मानं कुरुते। स सत्याभिसन्धः सत्येनात्मानमन्तर्धाय परशुं तप्तं प्रतिगृह्णाति। स न दह्यतेऽथ मुच्यते ॥२॥

होवैहै। ताहींतें सत्य आपकूं करताहै। सो सत्याभिसंध सत्यकरि आपकूं ढांपिके तप्तपरशुकूं ग्रहण करताहै। सो दाहकूं पावता नहीं। अनंतर मुक्त होवैहै ॥ २ ॥

करि व्यवधान (ढांपने)तैं दाहकूं पावता नहीं औ अनंतर मिथ्या आरोपके कर्ताओंतैं मुक्त होताहै ॥ [435] तप्तपरशु अरु हस्ततलके संयोगकी चौर्यके कर्ता अरु अकर्ता दोनूंविषै तुल्यताके हुये बी। जूठी प्रतिज्ञावाला दाहकूं पावताहै। सत्यप्रतिज्ञावाला तो [दाहकूं पावता] नहीं॥२॥

---

४३५ दृष्टांतविषै विवक्षित अंशकूं अनुवाद करैहैं ॥

स यथा तत्र नादाह्येतैतदात्म्यमि-

अर्थः—सो जैसैं तहां दाहकूं पावै नहीं॥

टीकाः—४३६जैसैं सो सत्यप्रतिज्ञावाला तिस तप्त परशुके ग्रहणरूपकर्मविषै सत्यकरि ढांपे हुये हस्ततलवाला होनेतैं दाहकूं पावता नहीं। यह अर्थ है ॥ ऐसैं सद्ब्रह्मविषै सत् प्रतिज्ञावाले अरु इतर (असत् प्रतिज्ञावाले)के शरीरपातके कालविषै सत्संपत्ति (ब्रह्मकी प्राप्ति)के तुल्यहुये बी विद्वान् सत्कूं पायके फेर व्याघ्र देवआदिक देहके ग्रहणअर्थ आवर्त्तनकूं करता नहीं औ विकाररूप अनृतकी प्रतिज्ञावाला अविद्वान्तो फेर व्याघ्रादिभावकूं वा देवतादिभावकूं यथाकर्म (कर्मानुसार) अरु यथाश्रुत (शास्त्रानुसार) पावताहै ॥ ४३७जिसैं आत्मा(स्वरूप)की प्रतिज्ञा अरु अप्रतिज्ञाके किये मोक्ष अरु बंधन हैं औ

४३६ ता (दृष्टांत)के अनुवादपूर्वक दार्ष्टांतकूं कहैहैं ॥

४३७ "सो जो यह अणिमा है" इत्यादि वाक्यकूं व्याख्यान करैहैं ॥

द९ं सर्व्वं तत्सत्य९ंस आत्मा "तत्त्वम-

इसकरि आत्मावाला यह सर्व है। सो स-
त्य है। सो आत्मा है। हे श्वेतकेतो! "त-

जो जगत्का मूल है औ जिस आयतन (आश्र
य) वाली अरु जिस प्रतिष्ठा (लय)वाली सर्व
प्रजा हैं औ जिस स्वरूपवाला सर्व है औ
जो अज अमृत अभय शिव अद्वितीय है। सो
सत्य है। सो तेरा आत्मा है। यातें हे श्वे-
तकेतो! "तत्वमसि (सो तूं हैं)" यह वाक्य
वारंवार उक्त अर्थवाला है॥ ॥ कौंन[४३८] फेर यह
"त्वं" शब्दका अर्थ श्वेतकेतु है। जो[४३९] "मैं श्वे-

---

४३८ "तूं सो हैं" ऐसैं त्वंपदके अर्थके उद्देशकरि त-
त्पदके अर्थका भाव विधान करियेहै। तहां उद्देशकरनेकूं
योग्य दोनूं शरीरनकरि विशिष्टका विरोधतैं अशरीर ब्रह्मस्व-
रूपपना विधान करनेकूं अशक्य है? ऐसैं मानताहुया पूर्व-
पक्षी शंका करैहै॥

४३९ त्वंपदकरि वाच्य जो है ताके ब्रह्मभावका अयोग
तेरेकरि कहियेहै। वा त्वंपदकरि लक्ष्य जो है ताके ब्रह्मभा-

सि" श्वेतकेतो! इति ॥ तद्धास्य विजज्ञा-
विति विजज्ञाविति ॥ ३ ॥

इति श्रीछान्दोग्योपनिषदि षष्ठप्रपाठकस्य
षोडशः खण्डः समाप्तः ॥ १६ ॥

त्वमसि (सो तूं हैं)" ऐसैं [पिता कहते भ-
ये] ॥ ॥ इस (पिता)के तिस (उक्त)कूं
जानताभया इति । जानताभया इति ॥ ३ ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषदो मूलमात्रभाषा-
दीपिकायां षष्ठप्रपाठ०षोडशःखंडःसमाप्तः ॥१६॥

इति श्रीनवमोपदेशः समाप्तः ॥ ९ ॥

तकेतु उद्दालकका पुत्रहूं" ऐसैं जानिके आत्मा-
कूं जानताहै ॥ औ आदेश (उपदेश)कूं सुनिके
मनन करिके अरु जानिके अश्रुतकूं अमतकूं

वका अयोग? तिनमैं प्रथम पक्ष बनै नहीं:—काहेतैं हमोंकरि
अंगीकारतैं औ द्वितीयपक्ष बनै नहीं:—काहेतैं दो शरीर विशि-
ष्टताकरि उपलक्षित अरु श्रोत्रआदिकके अध्यासके आस्पद
(अधिष्ठान) त्वंपदकरि लक्ष्यके ब्रह्मभावके विधान (करने)-
विषै विरोधके अस्फुरणतैं ॥ ऐसैं सिद्धांती परिहार करैहैं ॥
इहां जानिके जानता भया । ऐसैं पूर्वके साथि संबंध है ॥

अविज्ञातकूं जाननेकूं पिताकेप्रति "हे भगवन् ! सो आदेश कैसैं होवैहै?" ऐसैं पूंछताभया ॥ सो यह अधिकारी श्रोता मंता विज्ञाता । तेज[440] जल अरु अन्नमय कार्यकरणके संघातकेप्रति नामरूपके व्याकरण (विस्पष्ट करने) अर्थ आदर्शविषै पुरुषकीन्यांई अरु जलआदिकविषै प्रतिबिंबरूपसैं सूर्यआदिककीन्यांई प्रवेशपायी परदेवताहीं है ॥ सो आत्मा[441] (आप)कूं कार्यकारणोंतैं विभक्त (भिन्न) सत्‌रूप सर्वात्मा स्वरूप पितातैं श्रवणतैं पूर्व नहीं जानताभया ॥ अनंतर अबी पिताकरि " तत्वमसि (सो तूं हैं) " ऐसैं दृष्टांतनकरि अरु हेतुनकरि प्रतिबोधकूं प्राप्तहुया इस पिताके तिस उक्तकूं सत्‌हीं "मैं हूं" ऐसैं जानताभया ॥ इहां दोवार जो वचन है सो अध्याय (इस षष्ठप्रपाठक)की परिसमाप्ति

---

४४० ताका सत्‌तैं औपाधिक भेद है वस्तुतैं तो ऐक्य है। ऐसैं मानिके कहैहैं ॥

४४१ त्वंपदके अर्थरूप श्वेतकेतुकूं निर्धार करिके " इस (पिता)के तिस (उक्त)कूं" इत्यादि वाक्यकूं व्याख्यान करैहैं ॥ ॥

अर्थ है ॥ ॥ ननु[442] फेर षष्ठप्रपाठकविषै वाक्यरूप प्रमाणकरि जनितफल इस आत्माविषै क्या भया? श्रवणकरनेकूं मनन करनेकूं अरु अविज्ञातके विज्ञानरूप फलअर्थ अधिकारकूं प्राप्त-भये जिस त्वं शब्दके वाच्यरूप अर्थकूं हम कहतेभये ताके स्वात्माविषै[443] कर्तापनै अरु भोक्तापनैविषै अधिकारीभावके विज्ञानकी निवृत्ति वाक्यरूप प्रमाणका फल है ॥ औ[444] ईसैं विज्ञानतैं पूर्व मैं ऐसैं अग्निहोत्रादिक कर्मोंकूं करूंगा।

---

४४२ अज्ञात अर्थका प्रकाशन प्रमाणका फल है। ताका स्वप्रकाशब्रह्मविषै असंभव है? ऐसैं मानता हुया पूर्ववादी शंका करैहै ॥ इधर। इहां आत्माविषै। ऐसैं संबंध हैं ॥

४४३ स्वप्रकाशविषै प्रकाशके अतिशयरूप प्रमाण फलके असंभवके हुयेबी अध्यस्तकी निवृत्तिरूप ता (प्रमाण)का फल होवैगा। ऐसैं सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं ॥ इहां अश्रुतके श्रवण अर्थ अमतके मननअर्थ औ अविज्ञातके विज्ञानरूप फलकी सिद्धिअर्थ अधिकारकूं प्राप्तभये जैसैं त्वंपदके वाच्य अर्थकूं हम कहते भये। ताकूं स्वात्माविषै क्रियाके कर्तापनैविषै अरु फलके भोक्तापनैविषै जो मिथ्याहीं अधिकारीपनैका विज्ञान है। ताकी निवृत्ति प्रमाणका फल है। ऐसैं योजना है ॥ औ इधर मैंहीं इहां अधिकारी हूं। ऐसैं चकारका संबंध है औ "ताकूं" याका अज्ञानीकूं। यह अर्थ है ॥

४४४ प्रमाणके फलकूं प्रपंचन करैहैं ॥

अरु मैं इनविषै अधिकारी हूं औ इनकर्मोंके फलकूं इस लोकविषै अरु परलोकविषै भोगूंगा। वा कर्मोंके किये हुये कृतकर्तव्य (कृतकृत्य) होऊंगा। इस रीतिसैं मैं कर्तापनै अरु भोक्तापनैविषै अधिकारी हूं। ऐसा आत्माविषै जो तिस (अज्ञानी)कूं विज्ञान (विपरीतज्ञान) होताभया। सो जो सत् जगत्‌का मूल एकहीं अद्वितीय है "तत्वमसि (सो तूं हैं)" इस वाक्यकरि प्रतिबुद्धभये पुरुषकूं निवर्त होवैहै। विरोधतैं।[४४५] जौतैं एक अद्वितीय आत्माके " यह मैं हूं " ऐसें विज्ञात हुये मेरेकूं यह अन्य इसकरि कर्तव्य है। वा इसकूं करिके याके फलकूं भोगूंगा ऐसा भेदका विज्ञान नहीं संभवैहै॥ [४४६] तातैं सत् (ब्रह्म) रूप सत्य अद्वितीय आत्माके विज्ञानके हुये विकार अनृतरूप जीवात्माका विज्ञान नि-

---

४४५ विरोधकूंहीं स्पष्ट करैहैं॥

४४६ प्रमाणके फलकूं उपसंहार करैहैं॥

वर्त होवैहै। यह युक्त है ॥ ॥ ४४७ नैंनुँ "तत्वमसि इस वाक्यविषै त्वंशब्दके वाच्यरूप अर्थविषै सत् (ब्रह्म)की बुद्धि उपदेश करिये है। जैसैं आदित्य अरु मनआदिकनविषै ब्रह्मआदिककी बुद्धि है औ जैसैं लोकविषै प्रतिमाआदिकनविषै विष्णुआदिककी बुद्धि है। ताकीन्याँई ४४८ परंतु "सत् हीं तूं हैं" ऐसैं [नहीं उपदेश करियेहै] ॥ जब सत् (ब्रह्म)रूपहीं श्वेतकेतु होवै। तब आत्मा (सत्रूप आप)कूं कैसैं नहीं जानैगा। जिस (नहीं जानने)करि ताकेअर्थ "तत्वमसि (सो सत् तूं हैं)" ऐसैं उपदेश करियेहै ? ४४९ यह शंका बनै नहीं:—काहेतैं आदित्यआदि-

४४७ "तत्वमसि" यह वाक्य मुख्य एकतापरहै। ऐसैं स्वपक्षकूं कहिके। अब परपक्षकूं [पूर्ववादीरूपसैं] शंकाकरैहैं ॥

४४८ आध्यासिक (भ्रमसिद्ध) एकत्व। तत् अरु त्वंपदके सामानाधिकरण्य (समानविभक्तिके बलकरि एक अधिकरणरूप अर्थविषै स्थितपनै) रूप संबंधका आश्रय है। ऐसैं पूर्वपक्षी स्वपक्षकूं दृष्टांतसैं कहिके सिद्धांतकूं दूषण देताहै ॥ इहां यह अर्थ है:—श्वेतकेतुकूं सत् मात्रताके हुये ताके अज्ञानके अयोगतैं वारंवार उपदेशकी असिद्धि होवैगी ॥

४४९ क्या अध्यास (भ्रम)रूप वाक्यके सामान्यतैं आध्या-

कनके वाक्यनतैं याकूं विलक्षण होनेतैं ॥ "आदित्य ब्रह्म है" इत्यादि वाक्यविषे "इति" शब्दके व्यवधान (अंतराय)तैं तिनका साक्षात् ब्रह्मभाव नहीं जानियेहै औ रूपादिमान् होनेतैं आदित्य आदिकनका औ आकाश अरु मनका "इति" शब्दके व्यवधानतैहीं अब्रह्मभाव है औ इहां (इस प्रकरणविषै) तो सत्‌केहीं इहां(संघातविषै) प्रवेशकूं दिखायके "तत्वमसि (सो तूं है)" ऐसें

सिक एकत्व समानाधिकरण्यका आश्रय है। किंवा मुख्य एकताविषै बाधक (दोष)के सद्भावतैं है? ऐसैं विकलपकरिके सिद्धांती प्रथम पक्षके प्रति दूषण देतेहैं ॥ इहां यह अर्थ है:- जैसैं लोकविषै "शुक्तिका रजत है इति (ऐसैं) प्रतीतिकरताहै" इत्यादि वाक्यविषै इति शब्द पर है जिसके ऐसा सामानाधिकरण्य है सो वस्तुनिष्ठ नहीं देख्याहै। तैसैं "आदित्य ब्रह्महै ऐसा आदेश है" इत्यादिक अध्यासरूप वाक्यनकाबी इति शब्द पर है जिसके ऐसा सामानाधिकरण्यहै ताके वशतैं अवस्तुनिष्ठपना जानियेहै ॥ तैसैं "तत्वमसि" इसवाक्यका अवस्तुनिष्ठपना नहीं है। काहेतैं इति शब्दपरताके अभावकरि सामानाधिकरण्यके स्वरूपविषै पर्यवसायि (तात्पर्यवान्)पनैके निश्चयतैं ॥ औ इधर "इहां तो" ऐसैं प्रकरणकी उक्ति है औ इहां प्रवेशकूं दिखायके। इस ठिकाने तेज जल अरु अन्नमय संघातकूं "इहां" ऐसैं कथन करैहैं ॥

निरंकुश सदात्मभाव (सत्स्वरूपता) कूं उपदेश करैहैं ॥ ॥ [यातैं ब्रह्मात्माकी मुख्य एकता है] ॥ ॥ नँनुं[450] पराक्रमआदिकगुणवाला पुरुष "तूं सिंह हैं" ऐसैं [गौणीवृत्तिकरि बोधन करियेहै] ताकीन्यांईं "तत्वमसि (सो तूं हैं)" यह [गौण एकत्व] होवैगा? सो[451] बनैनहीं:—काहेतैं मृत्तिकाआदिकनकीन्यांईं "सत् एकहीं अद्वितीय सत्य (परमार्थ सत्) है" ऐसैं उपदेशतैं ॥ औ उँपँचारके[452] विज्ञानतैं "ताकूं तावत् हीं चिरहै" ऐसैं सत्संपत्ति नहीं उपदेश करि-

---

४५० जीव ब्रह्मके भेदके ग्राहि प्रमाणके विरोधतैं मुख्य एकत्व नहीं है। किंतु चैतन्य (ज्ञान)रूप गुणके योगतैं गौण एतत्व है? ऐसैं द्वितीयपक्षकूं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

४५१ जैसैं मृत्तिका आदिक कारणरूपहीं घटादि कार्य है पृथक् नहीं। तैसैं सर्व यह आकाशादिकार्य सन्मात्र है। तहां सर्व प्रकारके भेदसैं रहित एकरस अबाधित है। ऐसैं उपदेशके देखनेतैं गौण एकता नहीं है। ऐसैं सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं ॥

४५२ यातैं बी उपचरित (गौण) एकता नहीं है। ऐसैं कहैहैं ॥

येगी । काहेतें "[४५३]तूं इंद्र हैं । यम हैं" । याकी न्यांई उपचारके विज्ञानकूं मृषा होनेतें ॥ औ [४५४]स्तुति बी नहीं है। श्वेतकेतुकूं अनुपास्य होनेतें। [४५५]सत् जो है सो श्वेतकेतुपनैके उपदेशकरि स्तुतिका विषय नहीं करियेगा । जातैं राजा जो है सो "तूं दास हैं" ऐसें स्तुति करनेकूं योग्य नहीं होवैगा औ [४५६]सर्वात्मा सत्का "तूं ग्रामाध्यक्ष (एकगामका अधिपति) हैं" ऐसें देशाधिपतिके एकदेशविषै निरोधकीन्यांईं सर्वात्मा सत्का "तत्त्वमसि (त्वंपदका अर्थ श्वेतकेतुरूप सो सत्हैं)" ऐसें एक देशविषै निरोध (परिच्छिन्नभाव) बी युक्त नहीं है औ [४५७]ईहां सदात्मभा-

४५३ उपचारसैं जन्य ज्ञानके मिथ्यापनैविषै दृष्टांतकूं कहैहैं॥

४५४ किंवाः—गौण एकताके कहनेवाले तुज पूर्ववादी करि वाक्यकी स्तुतिअर्थता कहनेकूं योग्य है वा विधिपरता कहनेकूं योग्य है? प्रथमपक्षविषै बी श्वेतकेतुकी स्तुति है वा सत्वस्तुकी स्तुति है? ऐसें दो विकल्पकरिके । तिनमैं श्वेतकेतुकी स्तुतिरूप प्रथम पक्षकूं सिद्धांती दूषण देतेहैं ॥

४५५ उपास्य होनेतें सत्की स्तुति है? इस द्वितीय पक्षकूं आशंकाकरिके सिद्धांती दूषण देतेहैं ॥

४५६ यातैं (इस कहनेके हेतुतैं) बी श्वेतकेतुभावके उपदेशकरि सत्की स्तुति नहीं है । ऐसें कहैहैं ॥

४५७ ननु श्वेतकेतुकी अनुपास्य होनेकरि स्तुतिके असं-

वके उपदेशतैं अन्य अर्थरूप अन्यगति नहीं संभवैहै ॥ ॥ ४५८ नंनु "मैं सत् हूं" ऐसी बुद्धिमात्र इहां विधान करियेहै। परंतु "अज्ञात सत् तूं हैं" ऐसैं विज्ञापन नहीं करियेहै? ऐसैं जो कहै। [तहां सिद्धांती शंकाकरैहैं:-] ४५९ नंनु इस पक्षविषै बी "नहीं सुन्या सुन्या होवैहै" इत्यादिकथन अघटित होवैगा? [ऐसैं सिद्धांतीनैं कहा। तहां पूर्ववादी कहैहैः-] ४६० सो बनै नहीं:- काहेतैं "मैं सत् हूं" ऐसी बुद्धिके विधिकी स्तुतिअर्थ होनेतैं? [ऐसैं पूर्ववादीनैं कहा। तहां

भवके हुयेबी कर्ता होनेतैं कर्मोंविषै ताकी स्तावकता वाक्य (तत्वमसि)कूं युक्त है? यह आशंकाकरिके कर्मविधिके असन्निधानतैं औ सदात्मतामात्रकी प्रतीतितैं इस प्रकार बनै नहीं। ऐसैं सिद्धांती कहैहैं ॥

४५८ अन्यविकल्पकूं पूर्ववादी उद्भव करैहै ॥

४५९ एकके विज्ञानकरि सर्वके विज्ञानके वचनके विरोधतैं वाक्यकूं दृष्टिविधिकी परता नहीं है। ऐसैं सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं ॥ इहां गौणपक्षविषैबी असंभव तुल्य है। यह अपि (बी) शब्दका अर्थ है ॥

४६० ॥ ननु [दृष्टिविधिके माने हुयेबी] एकके विज्ञानकरि सर्वके विज्ञानकी श्रुतिका विरोध नहीं है? ऐसैं पूर्ववादी कहैहै॥

सिद्धांती कहैहैं:-] सो[461] कथन बनै नहीं:-काहेतैं "आचार्यवान् पुरुष जानताहै। ताकूं तहांलगि हीं चिरहै" ऐसैं उपदेशतैं ॥ जातैं[462] जब "मैं सत् हूं" ऐसी बुद्धिमात्र कर्तव्य होनेकरि विधानकरियेहै। त्वं शब्दके वाच्यकी सत्रूपताहीं तो नहीं कहियेहै। तब "आचार्यवान् जानताहै" ऐसैं ज्ञानके उपायका उपदेश वाच्य (कहनेकूं योग्य) नहीं होवै ॥ जैसैं "अग्निहोत्रकूं हवनकरै" इत्यादिवाक्यनविषै अर्थतैं प्राप्तहीं आचार्यवान्पना है। यातैं नहीं उपदेशकरियेहै। ताकीन्यांई? औ "ताकूं[463] तहांलगि चिर

४६१ यह एकके विज्ञानकरि सर्वका विज्ञान जो है सो दृष्टिविधिकी स्तुति नहीं है। काहेतैं कार्यकारणकी अनन्यता आदिक युक्तिनकरि उपपादित होनेतैं औ विधिपक्षके हुये असंभावनाआदिकके निरासविषै समर्थ आचार्यवान्ताके उपदेशकी व्यर्थतातैं अरु उपदेशसैं जन्य ज्ञानमात्रकरि विधिके अनुष्ठानकी सिद्धितैं औ विधिविषै अपेक्षित साधन समूहके तिसीहीं उपदेशकरि आक्षेप (निषेध)तैं। ऐसैं सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं ॥

४६२ ताहींकूं विवरण करैहैं ॥ इहां [जातैं अर्थतैं प्राप्त] आचार्यवान्पना है। यातैं नहीं उपदेशकरियेहै। यह शेष है॥

४६३ यातैंबी यह (तत्वमसि) वाक्य दृष्टिविधिपर अं-

है" ऐसैं कालके क्षेप (विलंब)का करण युक्त नहीं होवै। काहेतैं सत्‌रूप आत्मतत्वके अविज्ञात हुये बी एकवार बुद्धिमात्रके करणके हुये मोक्षके प्रसंगतैं ॥ औ "⁴⁶⁴तत्त्वमसि (सो तूं हैं)"

गीकार करनेकूं योग्य नहीं है। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:-सदात्मभावके साक्षात्कारतैं विनाबी एकवार अनुष्ठानकरी परोक्षबुद्धिमात्रतैं मोक्षके संभवतैं विलंबका कथन व्यर्थताकूं पावैगा। जैसैं एकवार अनुष्ठानकिये बी यागतैं स्वर्ग होवैहै। ताकीन्यांई ॥ औ इहां "चिर है" ऐसैं मोक्षके क्षेप (विलंब)का करणहै ऐसैं। तातैं यह वाक्य दृष्टिविधिके पर नहीं है ॥

४६४ किंवा:-विधिवादीकरि प्रतीयमान अर्थविषै वाक्य का अप्रामाण्य वा विपर्यासलक्षण (ज्ञानकी अनुत्पत्ति) कहनेकूं योग्य है। वे दोनूं दुःखसैं बी कहनेकूं अयोग्य हैं। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:-"तत्वमसि (सो तूं हैं)" ऐसैं अधिकारीके प्रति कहेहुये । प्रमाणभूत तिसवाक्यकरि जनित "सत् ब्रह्म मैं हूं" ऐसी जो ताकी बुद्धि। ताकूं निवर्तकरनेकूं "मैं सत् नहीं हूं" ऐसी बलवती बुद्धि उत्पन्न होवैहै। ऐसैं कहनेकूं शक्य नहीं है। काहेतैं विवेकवाले अरु सुन्या है वाक्य जिसनैं ऐसैं पुरुषकूं तिस प्रकारकी बुद्धिकी अनुत्पत्तितैं॥ वा सुन्या है वाक्य जिसनैं ऐसे अधिकारीकूं "सत् ब्रह्म मैं हूं" ऐसी बुद्धि उत्पन्न नहीं भई। ऐसैं कहनेकूं शक्य नहीं है। काहेतैं "अधिकारीकूं प्रमाका जनक वेद है" इस न्यायतैं औ भेदप्रत्यय (भेदज्ञान) जो है सो यथोक्त बुद्धिका

ऐसैं कहे हुये प्रमाणभूत वाक्यसैं जनित बुद्धि जो है सो "मैं सत् नहीं हूं" ऐसैं निवर्त्त करनेकूं शक्य नहीं है। वा उत्पन्न नहीं भई। ऐसैं कहनेकूं शक्य नहीं है॥ काहेतैं [४६५] सर्व उपनिषदनके वाक्यनके तिस पर होनेकरिहीं उपक्षय (कृतार्थता)तैं॥ [४६६] जैसैं अग्निहोत्रादिकके विधिसैं जनित अग्निहोत्रादिककी कर्तव्यताकी बुद्धिकूं अतथार्थता (अयथार्थता) वा अनुत्पन्नता कहनेकूं शक्य नहीं होवैहै। ताकीन्यांई॥ ॥ जो [४६७] कहा था किः—श्वेतकेतु सदात्मा (सत्स्वरूप) हुया आत्मा (आप)कूं कैसैं नहीं जानैगा? ऐसैं

बाधक नहीं है। काहेतैं ता (भेदप्रत्यय)के स्वप्नगत भेदप्रत्ययकी न्यांई मिथ्यापनैके अनुमानतैं॥

४६५ यातैं बी "तत्वमसि" वाक्य वस्तुपरहीं है। ऐसैं कहैहैं॥

४६६ "तत्वमसि" वाक्यतैं अयथार्थ बुद्धि नहीं होवैहै। औ बुद्धि (ज्ञान) नहीं होवैहै ऐसैं बी नहीं है। इस अर्थकूं दृष्टांतकरि कहैहैं॥

४६७ जीवके भासमान हुये बी अभासमान होनेतैं ताका स्वभाव ब्रह्म नहीं है? ऐसैं पूर्व उक्त [शंका]कूं अनुवादकरिके सिद्धांती दूषण देतेहैं॥

यह दोष बनै नहीं:—काहेतैं [468]कार्यकरणके संघाततैं व्यतिरिक्त मैं जीव कर्त्ता भोक्ता हूं। ऐसैं बी स्वभावतैं प्राणीनकूं विज्ञानके अदर्शनतैं ताकूं सदात्माका विज्ञान [स्वभावतैं नहीं होवैहै यामैं] क्या कहनाहै॥ ऐसैं सदात्माका विज्ञान कैसैं होवै। [469]ऐसैं संघाततैं व्यतिरिक्तके विज्ञानके हुये तिन प्राणीनकूं कर्त्तापनैआदिकका विज्ञान कैसैं संभवै औ देखियेहै। [470]तौंकीन्यांई

---

४६८ लोकायत (देहात्मवादी)तैं अतिरिक्त वादीनके मतविषै देहतैं जीवका भेद स्वाभाविक है तो बी भासता नहीं। तैसैं तिस जीवका ब्रह्मभाव बी अनादि अनिर्वाच्य अज्ञानके सामर्थ्यतैंहीं नहीं भासेगा। तैसैं हुये ता (ब्रह्मभाव)के भासमान हुये बी अभासमान होनेतैं जीवका स्वभाव ब्रह्म नहीं है। यह कथन अयुक्त है। व्याप्तिके अभावतैं। ऐसैं कहैहैं॥

४६९ ननु देहतैं व्यतिरिक्त आत्माके वादीनके मतविषै आत्माके भासते हुये देहतैं व्यतिरिक्त हुयाबी भासताहीं है। ऐसैं व्याप्तिकी सिद्धि है? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥ इहां यह अर्थ है:—देहादिसंघाततैं अतिरिक्त मैं हूं ऐसैं देहतैं व्यतिरिक्त आत्माके विज्ञानके होते तिनकूं कर्ताभाव आदिकका विज्ञान कैसैं संभवै। जातैं संघातके अभिमानके दूरीभये सो नहीं घटताहै औ सो नहीं है ऐसैं नहीं। दृश्यमान होनेतैं॥

४७० दृष्टांतके सिद्ध हुये दार्ष्टांतकूं कहैहैं॥ इहां यह अर्थ है:—देहतैं अतिरिक्त सत्के बी अभानकीन्यांई सत्स्वरूप

ता (श्वेतकेतु)कूं बी देहादिकनविषै आत्मबुद्धिके होनेतैं स्वतः सदात्माका विज्ञान नहीं होवैगा ॥ [४७१]तातैं विकारविषै मिथ्याप्रतिज्ञाके किये जीवात्माके विज्ञानका निवर्तकहीं "तत्त्वमसि" वाक्य है। यह सिद्धभया इति ॥ ३ ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषद्–भाष्यभाषादीपिकायां षष्ठप्रपाठकस्य षोडशः खंडः समाप्तः ॥ १६ ॥

इति श्रीनवमोपदेशः समाप्तः ॥ ९ ॥

समाप्तेयं षष्ठप्रपाठकस्य भाष्यभाषादीपिका ॥ ६ ॥

श्वेतकेतुकूं बी देहादिकविषै आत्माका अभिमानी होनेतैं सत्स्वरूप ब्रह्मविषै विज्ञान नहीं होवै। यातैं ताके स्वभावरूप ब्रह्मभावकाबी अभान अज्ञानकृत है ॥

४७१ वाक्यकी अन्य अर्थपरताके असंभव हुये फलित (सिद्ध अर्थ)कूं उपसंहार करैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—महावाक्यकी उक्तप्रकारकरि अन्य अर्थपरताके असंभवतैं विकारविषै मिथ्याअभिसंधिका किया "यह जीवात्मा है" इस रूपवाला जो मिथ्याज्ञान है। तिस सनिदान (कारणसहित)का निवर्तकहीं यह "तत्वमसि" वाक्य है। परंतु अभूतके प्रादुर्भावरूप फलवाला नहीं है। इस रीतिका जीवब्रह्मका ऐक्य सर्व उपनिषदनका सारभूत स्थित है ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषद्भाष्यभाषादीपिकायां षष्ठप्रपाठकगतषोडशखंडस्य टिप्पणं समाप्तम् ॥ १६ ॥

समाप्तेयं षष्ठप्रपाठकस्य भाष्यभाषाटिप्पणिका ॥ ६ ॥

अथ सप्तमप्रपाठकाऽऽरंभः ७

सनत्कुमार-नारदसंवादसैं नामादिनिर्देशद्वारा

भूमविद्या २९

अथ श्रीछान्दोग्योपनिषदः सप्तमप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः प्रारभ्यते ॥ १ ॥

ॐ ॥ अधीहि भगव इति होपससाद

अथ श्रीछांदोग्योपनिषदो मूलमात्रभाषादीपिकायाः सप्तमप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः प्रारभ्यते ॥ १ ॥

अर्थः–हे भगवन्! "अध्ययन (विज्ञापन)कूं करो" ऐसें [कहिके] नारद

अथ श्रीछांदोग्योपनिषद्-भाष्यभाषादीपिकायाः सप्तमप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः प्रारभ्यते ॥ १ ॥

सनत्कुमार-नारदकेप्रसंगपूर्वक नामब्रह्मोपासन ९

टीकाः–[१]परमार्थतत्वके उपदेशप्रधानपर षष्ठ

अथ श्रीछांदोग्योपनिषद्भाष्यभाषादीपिकायाः सप्तमप्रपाठकगतप्रथमखंडस्य टिप्पणम् ॥ १ ॥

१ षष्ठ अरु सप्तम अध्यायके संबंधकूं कहनेकूं इच्छते हुये

सनत्कुमारं नारदस्तꣳ होवाच-यद्वेत्थ

सनत्कुमारकेप्रति उपसदनकूं करताभया। ताकूं [मुनि]कहतेभये ॥ सनत्कुमार उवाचः—जो जानताहैं तिसकरि मेरेप्रति उ-

अध्याय है।सो सत्(ब्रह्म)अरु आत्माकी एकताके निर्णयपर होनेकरि हीं उपयोगी है ॥ [2]सत्तैं अर्वाक् (पीछले) विकाररूप तत्व निर्देश किये नहीं हैं। यातैं तिन नामआदिक तत्वनकूं क्रमसैं निर्देश करिके तिसद्वारकरिबी भूमानामक निरतिशय तत्वकूं ऐसैं शाखाविषै चंद्रके दर्शनकीन्यांई "निर्देश करूंगी" यह अभिप्राय

आचार्य षष्ठ अध्यायविषै वृत्त (उक्त अर्थ)कूं कीर्तन करैहैं॥ इहां यह अर्थ है:—उत्तमाधिकारीकेप्रति अबाधित तत्वका बोधन प्रधान (मुख्य) है। ताके पर (परायण) अतीत(षष्ठ) अध्याय है। सो सत्रूप ब्रह्मके प्रत्यक्रूपके निश्चयकी पर-ताकरिहीं व्याख्यानकिया ॥

२ अन्य अध्यायकी भूमिकाकूं आचरते हैं ॥ इहां यह अर्थ है:—मध्यम अधिकारीकेप्रति परंपराकरि ब्रह्मकी आत्मरूपताकूं उपदेशकरनेकूं सप्तम प्रपाठककी प्रवृत्ति है ॥

तेन मोपसीद ! ततस्त ऊर्ध्वं वक्ष्यामीति ॥ १ ॥

पसदन कर ! तिसतैं ऊर्ध्व तेरेअर्थ कहूंगा ऐसैं [कहे हुये] सो (नारद) कहताभया॥१॥

है । यातैं श्रुति इस सप्तमप्रपाठक (अध्याय) कूं आरंभ करैहै ॥ वा जातैं सत्तैं पीछले तत्वनके [३]अनिर्देश कियेहुये औ सत्मात्रके निर्देश कियेहुये " अन्यबी अविज्ञात होवैगा " ऐसी आशंका किसीकूं बी होवै । सो मति होवै ।

---

३ ननु इहां (सप्तम अध्यायविषै) बी ब्रह्मकी आत्मरूपताहीं उपदेशकरनेकूं इष्ट (वांछित) है । तब नाम आदिकतत्वनका उपदेश क्यूं करियेहै ? तहां कहैहैं॥ इहां "वा" शब्द जो है सो शंकाके निरासअर्थ है ॥

४ यद्वाः—षष्ठ अरु सप्तम इन दोनूं अध्यायनका अद्वितीय ब्रह्मात्मारूप विषयवान्ताके अविशेष(तुल्य)के हुये बी साक्षात् अरु परंपराकरि अपुनरुक्तपना कहा । अब उत्तरोत्तर अधिकतरताकरि विशिष्ट (श्रेष्ठ) नामआदिकनके सत्मात्रके विज्ञानकरि अविज्ञानतैं एकके विज्ञानसैं सर्वका विज्ञान अयुक्त है ? यह आशंकाकरिके । ब्रह्मवेत्ताकी सर्वज्ञताकूं स्पष्टकरनेकूं उत्तर ग्रंथ (सप्तमाध्याय)का आरंभ है । ऐसैं कहैहैं ॥

यातैं तिन (पीछले तत्वन)कूं श्रुति निर्देश करनेकूं इच्छती है ॥ ⁵अथवाः—सोपानविषै आरोहणकीन्यांई स्थूलतैं आरंभकरिके सूक्ष्म अरु सूक्ष्मतर बुद्धिके विषयकूं विज्ञापन करिके तिनतैं अतिरिक्त स्वाराज्यविषै अभिषेक करूंगी इस अभिप्रायकरिके श्रुति नामआदिकनकूं निर्देश करनेकूं इच्छती है ॥ ⁶अथवाः—नामआदिक उत्तर उत्तर श्रेष्ठ तत्व हैं औ तिनके मध्य अतिशयकरि उत्कृष्टतम भूमानामक तत्व है । यातैं ताकी स्तुतिअर्थ नामआदिकनका क्रमसैं उपन्यास (कहनेका आरंभ) है । ⁷आख्यायिका

---

५ नामआदिकके संकीर्तनके अन्य तात्पर्यकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—अधम जो अधिकारी है सो नामआदिककूं ब्रह्मभावसैं उपासना करिके औ ताके फलकूं भोगिके क्रमसैं साक्षात् ब्रह्मभावकूं पावताहै। ऐसैं दिखावनेकूं उत्तर ग्रंथ है ॥

६ शाखाविषै चंद्रके दर्शनरूप न्याय(दृष्टांत)करि मध्यम अधिकारीकूं ब्रह्मसिद्धिके स्वीकारअर्थ। वा मध्यम अधिकारीके ध्यानअर्थ । नामआदिकका संकीर्तन है । ऐसैं कहा ॥ अब उत्तमअधिकारीकूं हीं आश्रयकरिके भूमा (ब्रह्म)की स्तुतिअर्थ नामआदिकका वचन है । ऐसैं अन्यमतकूं कहैहैं ॥

७ अध्यायके संबंधकूं कहिके। अब आख्यायिकाके संबंधकूं कहैहैं ॥

तो परविद्याकी स्तुतिरूप अर्थवाली है ॥ ॥ कैसैं किं? नारद जो देवर्षि। सो कृतकर्तव्य अरु सर्वविद्यावान् बी हुया अनात्मज्ञानी होनेतैं शोककूंहीं करताभया। तब अन्य अल्पका वेत्ता अकृतपुण्यके अतिशयवाला अकृतार्थ हुया शोककूं करै। यामैं क्या कहनाहै! ऐसैं ॥ अथवाः—आत्मज्ञानतैं अन्य निरतिशय (परम) श्रेयका साधन नहीं है। इसके दिखावनेअर्थ सनत्कुमार अरु नारदकी आख्यायिका आरंभ करियेहै ॥ जिंस कारणकरि सर्वके विज्ञानके सा-

---

८ आख्यायिकाकी स्तुतिअर्थताकूंहीं प्रश्नपूर्वक प्रकट करैहैं॥ इधरः—तैसैं हुये आख्यायिकाकूं परविद्याकरि कृतार्थ होनेतैं ता (परविद्या)की स्तुति इहां विवक्षितहै। यह शेषहै ॥

९ अतीत (षष्ठ) अध्यायविषै उपदेशकिये सत्के आत्मभावके विज्ञानतैं अन्यहीं देवताका उपासन मोक्षका साधन होवैगा? यह आशंकाकरिके। ताके निषेधकरि सत्रूप आत्माके विज्ञानकी हीं मोक्षसाधनताकूं दृढ करनेकूं आख्यायिका प्रवृत्त भई है। ऐसैं अन्यपक्षकूं कहैहैं ॥

१० दूसरे आख्यायिकाके तात्पर्यकूं प्रपंचन करैहैं ॥ इहां सर्व बी ज्ञेयका जो विज्ञान ताका साधन जो उत्पादन तिसविषै शक्तिकरि संपन्न। अर्थ यह जोः—वेद अरु वेदांगोंका अभिज्ञ। ताकाबी ॥ औ नारदका उत्तमकुलविषै जन्म प्रसिद्ध

धनविषै शक्तिकरि संपन्न ऐसे देवर्षि नारदका बी श्रेय (मोक्ष) नहीं होताभया। जिस श्रेयके (नहीं होने) करि नारद उत्तम अभिजन (कुल)। विद्या। वृत्त (सदाचरण)। साधनकी शक्तिकी संपत्तिरूप निमित्तवाले अभिमानकूं त्यागिके। प्राकृतपुरुषकीन्यांई श्रेय (मोक्ष)के साधन (आत्मज्ञान)की प्राप्तिअर्थ सनत्कुमारके प्रति उपगमन करताभया (उपसत्तिपूर्वक शरण होताभया)। यातैं आत्मविद्याका निरतिशय(मोक्ष)की प्राप्तिका साधनपना प्रख्यापन किया होवैहै इति ॥ ॥ "हे भगवन्! अ-

---

है। काहेतैं ब्रह्माका मानस पुत्र होनेतैं औ उत्तम कर्मकी विद्या है औ वृत्त जो सदाचरण सो तो है औ श्रवणध्यान आदिक साधनोंकी शक्तिनकी वा धर्म अधर्मके साधनकी शरीरकी शक्तिकी संपत्ति बी है। जन्मआदिक है निमित्त इस अभिमानका ताकूं त्यागिके। यह अर्थ है औ इधर इति शब्द जो है सो अध्याय अरु आख्यायिकाके संबंधकी उक्तिकी समाप्तिअर्थ है ॥ इहां अध्ययनकरि ज्ञान लक्षणासैं जानियेहै। तैसैं हुये " अध्ययनकर " याका विज्ञापनकर। यह अर्थ है औ मंत्र उपसदन (गुरुकेपास अनुगमन)का है। यह शेषहै औ न्यायतैं। याका "समित्पाणि हुया" इत्यादि शास्त्रउक्त विधिके वशतैं। यह अर्थ है ॥

स होवाचर्ग्वेदं भगवोऽध्येमि यजु-

अर्थः—नारद उवाचः—हे भगवन्! ऋग्वेदकूं अध्ययन (स्मरण) करताहूं। यजु- ध्ययनकूं कराव (ज्ञापन कर)" [यह कहिके] ऐसैं योगीश्वर ब्रह्मिष्ठ सनत्कुमारके प्रति नारद उपसन्न होताभया (उपसत्तिकूं करताभया)॥ [इहां "अधीहि भगवः (हे भगवन्! अध्ययनकूं कराव)" यह उपसदन (गुरुके समीपगमन)का मंत्र है] न्यायतैं उपसन्नभये तिस नारदकूं सनत्कुमार कहतेभये॥ सनत्कुमार उवाचः—तूं आत्माविषै यत्किंचित् (जो कछु) जानताहै। तिसकरि कहिये "यह मैं जानताहूं" ऐसैं ताके प्रख्यापनकरि मेरेप्रति उपसत्तिकूं कर (शरणागत होजा)।मैं तिस तेरे ज्ञानतैं तेरेअर्थ पीछे कहूंगा॥ ॥ ऐसैं सनत्कुमारके कहे हुये। सो नारद कहताभया॥ १॥

टीकाः—नारद उवाचः—हे भगवन्! ऋ-

**वेंदꣳ सामवेदमाथर्व्वणं चतुर्थमितिहा-
सपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदं पित्र्यꣳ रा-
शिं दैवं निधिं वाकोवाक्यमेकायनं दे-**

वेंदकूं । सामवेदकूं । चतुर्थ आथर्वण [वेद] कूं । इतिहास पुराणरूप पंचम [वेद] कूं वेदनके वेदकूं । पित्र्यकूं । राशिकूं । दैवकूं । निधिकूं । वाकोवाक्यकूं । एकायनकूं । दे-

---

ग्वेदकूं अध्ययन करताहूं (स्मरण करताहूं) ["जो[११] जानताहैं" ऐसैं विज्ञानकूं पूंछ्या होनेतैं अध्ययनके वाचिपदकूं स्मरणरूप अर्थपरताहै] ॥ तैसैं यजुर्वेदकूं । सामवेदकूं । चतुर्थ आथर्वण वेदकूं [इहां वेदशब्दकूं प्रसंगविषै प्राप्त होनेतैं आथर्वण आदि शब्दके साथि वेद शब्द कहाहै] । इतिहास पुराणरूप पंचम वेदकूं ।

---

११ अध्ययनकावाचि पद स्मरणपर होनेकरि कैसैं व्याख्यान किया ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां गंधयुक्ति कहिये कुंकुमआदिकका संपादन ॥

वविद्यां ब्रह्मविद्यां भूतविद्यां क्षत्रविद्या नक्षत्रविद्याᳪ सर्पदेवजनविद्यामेतद्भग-वोऽध्येमि ॥ २ ॥

वविद्याकूं । ब्रह्मविद्याकूं । भूतविद्याकूं । क्षत्रविद्याकूं । नक्षत्रविद्याकूं । सर्पदेवजन-विद्याकूं । हे भगवन् ! इसकूं अध्ययन क-रताहूं ॥ २ ॥

भारत है पंचम जिनोंविषै ऐसैं वेदनके वेदकूं। अर्थ यह जोः—व्याकरणकूं ॥ जातैं व्याकरणसैं पद आदिकके विभागकरि ऋग्वेदआदिक जा-नियेहै [यातैं सो वेदनका वेद है]। पित्र्य (श्राद्धकल्प)कूं । राशि (गणित)कूं । दैव (उत्पातके ज्ञान)कूं निधि (महाकालआदि-क निधिशास्त्र)कूं । वाकोवाक्य (तर्कशास्त्र) कूं । एकायन (नीतिशास्त्र)कूं । देवविद्या (निरुक्त)कूं । ब्रह्मविद्या (शिक्षा कल्प छंद अरु चिति ता)कूं। भूतविद्या (भूततंत्र)कूं।

सोऽहं भगवो मन्त्रविदेवास्मि ना-

अर्थः—हे भगवन्! सो मैं मंत्रवित्हीं

क्षत्रविद्या (धनुर्वेद)कूं। नक्षत्रविद्या (ज्यौतिष)कूं सर्पदेवजनविद्याकूं कहिये सर्पविद्या (गारुड)कूं अरु देवजनविद्या जो गंधयुक्ति नृत्य गीत वाद्य शिल्पआदिकके विज्ञान तिनोकूं। इस सर्वकूं हे भगवन्! अध्ययन करताहूं कहिये स्मरण करताहूं ॥ २ ॥

टीकाः—[12]सो मैं हे भगवन्! इस सर्वकूं जानता हुयाबी मंत्रवित्हींहूं। अर्थ यह जोः शब्दार्थमात्रके विज्ञानवालाहीं हूं ॥ जातैं सर्व शब्द अभिधान (नाम) मात्रहैं औ अभिधान सर्व मंत्रनविषै अंतर्भूत होवैहै ॥ मैं मंत्रवित्हीं हूं। अर्थ यह जोः—मंत्रवित् जो कर्मवित्

---

१२ तब सर्वज्ञ स्वतंत्र हुया तूं कृतकृत्य हैं? यह आशंकाकरिके कहैहै ॥

त्मविच्छ्रुतꣳ ह्येव मे भगवद्दृशेभ्यस्तर-
ति शोकमात्मविदिति। सोऽहं भगवः

हूं आत्मवित् नहीं। जातें मेरेकूं आप स-
दृशोंतें श्रुत है हीः—"आत्मवित् शोककूं
तरताहै" ऐसें॥ हे भगवन्! सो मैं शोककूं

सो मैं हूं॥ [13]जातें "मन्त्रोंविषे कर्म है" ऐसें यह
श्रुति आगेकहैगी॥ आत्मवित् नहीं हूं कहि-
ये आत्माकूं नहीं जानताहूं॥ ॥ [14]नंनु आत्मा-
बी मंत्रोंकरि प्रकाशकरियेहीं है। यातें मंत्रवित्-
जो है सो आत्मवित् कैसें नहीं होवैगा? ऐसें

---

१३ मंत्रवित्। इस पदका कर्मवित्। यह व्याख्यान कैसें है? यह आशंकाकरिके कहेहैं॥

१४ मंत्रवित् हीं हूं आत्मवित् नहीं हूं। इस अर्थविषै सनत्कुमारमुनि विरोधकूं आशंकाकरैहैं॥ इहां यह अर्थ हैः—मंत्रवित्पनैके हुये तिसकरि प्रकाश्य आत्मवित्पनाबी होवैगा औ ता (मंत्रवित्पनै)के अभावके हुये मंत्रवित्पना बी युक्त नहीं है॥

शोचामि तं मा भगवाञ्छोकस्य पारं

करताहूं। तिस मेरेकूं भगवान् शोकके पा-

जो कहोगे। [15] सो बनै नहीं:—काहेतैं अभिधान अरु अभिधेयरूप भेदकूं विकाररूप होनेतैं औ विकार जो है सो आत्मा नहीं अंगीकारकरियेहै॥ ॥ [16] ननु आत्माबी आत्मशब्दकरि कहियेहै? [17] सो बनै नहीं:—काहेतैं "जिसतैं वाणीयां निवर्त होवैहैं। जहां अन्य देखता नहीं" इत्यादि श्रुतितैं॥ ॥ [18] तब "आत्माहीं नीचेतैंहै। सो आत्मा है" इत्यादि शब्द आत्माकूं कैसैं

---

१५ अभिधान (वाचक) अरु अभिधेय (वाच्य)। इसरूपवाले भेदकूं विकाररूप होनेकरि मिथ्या होनेतैं औ आत्माकूं विकारवान्‌ताके अनंगीकारतैं मंत्रकरि प्रकाश्यताके अभावतैं विरोध नहीं है। ऐसैं नारद शंकाका परिहार करैहै॥

१६ आत्माकूं विकारवान्‌ताके अभावके हुये बी ताका अभिधेय (वाच्य)पना माननेकूं योग्यहै ऐसैं सनत्कुमार शंका करैहैं॥

१७ श्रुतिके आश्रयकरि नारद निराकरण करैहै॥

१८ आत्मशब्दकरि आत्माकी अभिधेयता (वाच्यता)के अभावहुये वाक्यशेषआदिकका विरोध होवैगा? ऐसैं सनत्कुमार शंका करैहैं॥

तारयत्विति। तꣳ होवाच-यद्वै किञ्चैत-
दध्यगीष्ठा नामैवैतत् ॥ ३ ॥

रकेप्रति तारहू? ऐसें [पूंछताभया] ॥ ॥
ताकूं [मुनि] कहतेभये ॥ सनत्कुमार उ-
वाचः—जोई कछु यह अध्ययन करताभया
है (जानताहै) यह नामहीं है ॥ ३ ॥

प्रतीति करावते हैं? [19] यह दोष नहीं हैः—काहेतें
भेदके विषय देहवाले प्रत्यगात्माविषै प्रयोग
किया जो शब्द सो देहादिकनके आत्मभावके
निषेध किये हुये जो परिशिष्ट (अवशेषरहा) सत्
है तिस अवाच्यकूं बी प्रतीति करावताहै ॥
[20] जैसें राजासहित सेनाके दृश्यमान हुये छत्र

१९ आत्मशब्दकरि अवाच्य आत्माके तिसकरि लक्षणासैं निश्चयके संभवतैं उपक्रम अरु उपसंहारका विरोध नहीं है। ऐसैं नारद उत्तरकूं कहैहै ॥ इहां यह अर्थ हैः—विशिष्ट (विशेषण सहित अर्थ) विषै ग्रहणकिया जो शब्द सो विशेषणके निषेध हुये जो सत्मात्र परिशिष्टहै तिस अवाच्यकूं बी लक्षणासैं बोधन करैहै ॥

२० केवल आत्मारूप विषय (अर्थ)वाले आत्म शब्दका

ध्वज पताकाआदिककरि व्यवहित राजाके दृ-श्यमान हुयेबी "यह राजा देखियेहै" ऐसैं श-ब्दका प्रयोग होवैहै ॥ तहां "कौंन यह राजा है?" ऐसैं राजविशेषके निरूपणकिये हुये दृ-श्यमान इतरोंके निषेध किये अन्य राजाके अ-दृश्य हुयेबी राजप्रतीति होवैहै । ताकीन्यांई ॥ [21] तातैं सो मैं मंत्रवित् कहिये कर्मवितूहीं हूं औ कर्मका कार्य सर्व विकार है । यातैं विकारका ज्ञाताहीं हूं । आत्मवित् नहीं हूं । अर्थ यह जोः— आत्माके प्रकृति (स्वभाव) भूत स्वरूपका ज्ञा-ता नहीं हूं ॥ [22] यौहींतैं "आचार्यवान् पुरुष जान-

---

ता (आत्मा)के दर्शनविना विशिष्ट आत्माके दर्शनमात्रकरि कैसैं प्रयोग होवैगा । वा ताके प्रयोगके हुये बी तिसतैं विव-क्षित (केवल) आत्माका ज्ञान कैसैं होवैगा ? यह आशंकाक-रिके । दृष्टांतकरि परिहार करैहैं ॥

२१ आत्माकी मुख्या(शक्ति) वृत्तिकरि मंत्रसैं प्रकाश्यताके अभावके हुये फलितकूं कहैहै ॥

२२ शब्दार्थके ज्ञानमात्रकरि आत्मवेत्तापना नहीं होवैहै । इसकरि आचार्यके उपदेशसैं जनित ज्ञानवानकूंहीं आत्मवित्-पना है । ऐसैं कहा । तिसविषै प्रमाणकूं कहैहै ॥

ताहै" ऐसैं कहाहै औ "जिसतैं[23] वाणीयां निवर्त होवैहैं" इत्यादि श्रुतिनतैं [उपदेशजनित ज्ञानका अविषय आत्मस्वरूप है] ॥ जातैं मेरेकूं आपसदृश पुरुषनतैं श्रुत[24] (आगमका ज्ञान) है:-आत्मवित् (आत्मज्ञानी) मनके तापमय अकृतार्थबुद्धिरूप शोककूं करताहै (अतिक्रमण करताहै) ऐसैं ॥ यातैं हे भगवन् ! सो मैं अनात्मवित् (अनात्मज्ञानी) होनेतैं अकृतार्थबुद्धिकरि शोककूं करताहूं कहिये सर्वदा संतप्त होताहूं। तिस मुजकूं शोकसागरके पार (अंत)के प्रति भगवान् (पूजावान् आप) आत्मज्ञानरूप उडुप (नाव) करि तारहू कहिये कृतार्थबुद्धिकूं आपादन करहू। अर्थ यह

---

२३ तब आत्माकूं उपदेशसैं जन्य ज्ञानका विषयपना स्वीकार किया ? यह आशंकाकरिके कहैहै ॥

२४ तब तेरेकूं आत्मविद्या मतिहोहू ? यह आशंकाकरिके। शोकनिवृत्तिकी उपायरूप होनेकरि ताकी अपेक्षाकूं सूचन करैहै ॥ इहां आत्मज्ञानरूप उडुपकरि। याका आत्मज्ञाननामक प्लव (नौका) करि। यह अर्थ है ॥

नाम वा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेद

अर्थः-नामहीं ऋग्वेद । यजुर्वेद । सा-

जोः-अभयके तांईं प्राप्तकरहू ॥ ॥ तिस ऐसैं कहनेवाले नारदके प्रति सनत्कुमार मुनि कहतेभये ॥ सनत्कुमार उवाचः-जोई कछु यह तूं अध्ययन करताभया हैं [इहां अध्ययनकरि ताके अर्थका ज्ञान उपलक्षित होवैहै] अर्थ यह जोः-जानताभयाहैं । यह नामहीं (नाममात्र) है । काहेतैं "[२५]वाणीका आरंभण (आश्रय) विकार नामधेय (नाममात्र) है" इस श्रुतितैं ॥ ३ ॥

टीकाः-[२६]नामहीं ऋग्वेद है । यजुर्वेद है। इत्यादि [२७]यह नामहीं है । [२८]नामकूं "ब्रह्म है"

२५ मेरा अर्थका ज्ञान सर्व नाममात्र कैसैं है? यह आशंकाकरिके सनत्कुमार कहैहैं ॥

२६ उक्त अर्थकूं उपपादन करैहैं ॥

२७ ताकूं उपसंहार करैहैं ॥

२८ किसरूपकरि यह नाम आदर करनेकूं योग्य है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

आथर्व्वणश्चतुर्थ इतिहासपुराणः पञ्चमो वेदानां वेदः पित्र्यो राशिर्दैवो निधिर्वाकोवाक्यमेकायनं देवविद्या ब्रह्मविद्या भूतविद्या क्षत्रविद्या नक्षत्रविद्या सर्पदेवजनविद्या नामैवैतन्नामोपास्वेति ॥ ४ ॥

मवेद । चतुर्थ आथर्वण [वेद] । इतिहास पुराण पंचम [वेद] । वेदोंका वेद । पित्र्य । राशि । दैव । निधि । वाकोवाक्य । एकायन । देवविद्या । ब्रह्मविद्या । भूतविद्या । क्षत्रविद्या । नक्षत्रविद्या । सर्पदेवजनविद्या है । यह नामहीं है । नामकूं उपासन कर । ऐसैं ॥ ४ ॥

ऐसैं ब्रह्मबुद्धिकरि उपासन कर ! जैसैं[२९] प्रतिमाकूं विष्णुबुद्धिकरि [जन] उपसताहै । ताकीन्यांई ॥ ४ ॥

---

२९ उपासनाके प्रकारकूं दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥

स यो नाम ब्रह्मेत्युपास्ते यावन्नाम्नो गतं तत्रास्य यथाकामचारो भवति यो नाम ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगवो नाम्नो

अर्थः-जो नामकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै। सो यावत् नामका गत (गोचर) है तहां इसका यथाकामचार होवैहै। जो नामकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै॥ ॥ नारद उवाचः-हे भगवन्! नामतैं अधिकतर

टीकाः-सो[३०] जो तो नामकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै। ताकूं जो फल होवैहै। तिसकूं श्रवण करः-जितना नामका विषय है तहां (तिस नामके विषयविषै) स्वविषय (स्वदेश) विषै राजाके कामचरण (यथाइच्छा आचरण) की न्यांई इसका यथाकामचार (स्व-

---

३० नामके ब्रह्मदृष्टिकरि उपास्यमान हुये क्या फल होवैगा? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

भूय इति ? नाम्नो वाव भूयोऽस्तीति ॥ तन्मे भगवान् ब्रवीत्विति ? ॥ ५ ॥

इति श्रीछान्दोग्योपनिषदि सप्तमप्रपाठकस्य प्रथमः खण्डः समाप्तः ॥ १ ॥

[क्या] है ? ऐसैं [पूंछताभया] ॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः—नामतें हीं अधिकतर है ! ऐसैं [कहतेभये] ॥ ॥ नारद उवाचः—सो भगवान् मेरेअर्थ कहहु ? ऐसैं [पूंछताभया] ॥ ५ ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषदो मूलमात्रभाषादीपिकायां सप्तमप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः समाप्तः॥१॥

इच्छाके अनुसार प्रवृत्ति) होवैहै । जो[31] नामकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै । यह उपसंहार है ॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन् !

---

३१ " जो नामकूं " इत्यादिरूप वाक्यकी पुनरुक्तता होवैहै ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषद्भाष्यभाषादीपिकायां सप्तमप्रपाठकगतप्रथमखंडस्य टिप्पणं समाप्तम् ॥ १ ॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्य द्वितीयः खण्डः २

वाग्वाव नाम्नो भूयसी । वाग्वा ऋ-

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपाठकस्य द्वितीयःखंडः २

अर्थः—वाक्हीं नामतैं अधिकतर है ॥

नामतैं अधिकतर क्या है। अभिप्राय यह है कि:—नामतैं अन्य जो ब्रह्मदृष्टिके योग्य है सो क्या है ? ॥ ॥ सनत्कुमार कहैहैं ॥ सनत्कुमार उवाचः—नामतैं अधिकतर हैहीं ॥ ॥ ऐसैं उक्त हुया नारद कहैहै ॥ नारद उवाचः—जब है तब सो मेरेअर्थ भगवान् कथन करहू ? ऐसैं ॥ ५ ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषद्भाष्यभाषादीपिकायां सप्तमप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः समाप्तः ॥ १ ॥

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठकस्य द्वितीयः खंडः२

नामतैं वाक्की अधिकतरता २

टीकाः—सनत्कुमार उवाचः—वाक्हीं [ना

ग्वेदं विज्ञापयति यजुर्वेदꣳ सामवेदमा-
थर्व्वणं चतुर्थमितिहासपुराणं पञ्चमं वे-
दानां वेदं पित्र्यꣳ राशिं दैवं निधिं
वाकोवाक्यमेकायनं देवविद्यां ब्रह्मवि-
द्यां भूतविद्यां क्षत्रविद्यां नक्षत्रविद्याꣳ
सर्पदेवजनविद्यां। दिवञ्च पृथिवीञ्च वायु-

वाक्हीं ऋग्वेदकूं विज्ञापन करैहै। यजुर्वे-
दकूं। सामवेदकूं। चतुर्थ आथर्वण [वेद]
कूं। इतिहास पुराणरूप पंचम [वेद]कूं।
वेदनके वेदकूं। पित्र्यकूं। राशिकूं। दैवकूं।
निधिकूं। वाकोवाक्यकूं। एकायनकूं। देव-
विद्याकूं। ब्रह्मविद्याकूं। भूतविद्याकूं। क्षत्र-
विद्याकूं। नक्षत्रविद्याकूं। सर्पदेवजनविद्या-
कूं॥ औ स्वर्गकूं अरु पृथिवीकूं अरु वा-

मतैं अधिकतर]है। [३२] वाक् ऐसा इंद्रिय। जि-

अथ श्री०सप्तमप्रपाठकगतद्वितीयखंडस्य टिप्प० २
३२ वाक्हीं नामतैं अधिकतर है। ऐसैं कहा॥ तहां

श्चाकाशश्चापश्च तेजश्च देवाꣳश्च मनुष्याꣳश्च पशूꣳश्च वयाꣳसि च। तृणवनस्पतीꣳ श्वापदान्याकीटपतङ्गपिपीलकं।

युक्कूं अरु आकाशकूं अरु जलकूं अरु तेजकूं अरु देवनकूं अरु मनुष्यनकूं अरु पशुनकूं अरु पक्षिनकूं ॥ तृण वनस्पतिनकूं। श्वापदन (कूकरके सदृश पंचनखवाले जंतुन)कूं कीट पतंग पिपीलिकापर्यंत [ज-

---

ह्वामूलआदिक अष्टस्थानोंविषै स्थित हुया वर्णोंका अभिव्यंजक है औ [३३] वर्ण नाम है। यातैं नामतैं वाक् अधिकतर है। ऐसैं कहियेहै ॥ [३४] औ-

---

वाक् अरु नामकूं एक होनेतैं तिनके व्यापक—व्याप्यभावका असंभव है? यह आशंकाकरिके व्याख्यान करैहैं ॥ इहां जिह्वामूलआदिकनविषै। इस आदिशब्दकरि उरः। कंठ। शिर। दंत। ओष्ठ। नासिका अरु तालु ग्रहण करियेहैं ॥

३३ वाक् इंद्रियकी अभिव्यंग्य वर्णोतैं अधिकतरताके हुये बी नामतैं तो ताकी अधिकतरता किस हेतुतैं होने योग्य है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

३४ तिन नाम अरु वाक्के व्यंग्य अरु व्यंजक भावके हु-

धर्म्मश्चाऽधर्म्मश्च सत्यञ्चाऽनृतञ्च साधु चासाधु च हृदयज्ञश्चाहृदयज्ञश्च । यद्वै वाङ्नाभविष्यन्न धर्म्मो नाधर्म्मो व्य-

---

गत्]कूं औ धर्मकूं अरु अधर्मकूं औ सत्य-कूं अरु अनृत (झूठ)कूं औ साधुकूं अरु अ-साधुकूं औ हृदयज्ञकूं अरु अहृदयज्ञकूं [वि-ज्ञापन करैहै] ॥ जो वाक् नहीं होती तो

तैं कार्यतैं कारण [व्यापक] देख्या है । लोक-विषै जैसैं पुत्रतैं पिता है । ताकीन्यांईं ॥ ॥ औ ३५ वाक् नामतैं अधिकतर कैसैं है? यह कहैहैंः— वाक्हीं ऋग्वेदकूं विज्ञापन करैहै "यह ऋग्वेद है" इस रीतिसैं । तैसैं यजुर्वेदकूं । इत्यादिवाक्य समान है ॥ [हृदयज्ञ कहिये हृदयकूं प्रिय ।

येबी तिनका व्याप्य-व्यापकभाव कैसैं है ? यह आशंकाकरि-के कहैहैं ॥

३५ वाक्की नामतैं अधिकतरताकूं प्रश्नपूर्वक प्रपंचन करैहैं॥

ज्ञापयिष्यन्न सत्यं नानृतं न साधु नासाधु न हृदयज्ञो नाहृदयज्ञो वागेवैतत्सर्व्वं विज्ञापयति। वाचमुपास्वेति ॥१॥

न धर्म न अधर्म विज्ञात होता । न सत्य न अनृत । न साधु न असाधु । न हृदयज्ञ न अहृदयज्ञ [विज्ञात होता] ॥ वाक्हीं इस सर्वकूं विज्ञापन करैहै । वाक्कूं उपासन कर ! ऐसें ॥ १ ॥

तिसतें विपरीत अहृदयज्ञ है] ॥ [३६] जो वाक् नहीं होती तो धर्म आदिक नहीं जाननेमैं आवता काहेतें वाक्के अभावके हुये अध्ययनका अभाव होवैहै । अध्ययनके अभावके हुये ताके अर्थके श्रवणका अभाव होवैहै । ताके श्रवणके अभावके हुये धर्मआदिक नहीं जाननेमैं आवैगा । अर्थ यह जोः—विज्ञात नहीं होवैगा ॥

---

३६ इस कहनेके हेतुतैंबी वाक्की अधिकतरता माननेकूं योग्य है । ऐसें कहैहैं ॥

स यो वाचं ब्रह्मेत्युपास्ते यावद्वाचो गतं तत्रास्य यथाकामचारो भवति यो वाचं ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगवो वाचो भूय

अर्थः—सो जो वाक्कूं "ब्रह्महै" ऐसैं उपासताहै। यावत् वाक्का गत (विषय) है तहां इसका यथाकामचार होवैहै। जो वाक्कूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै ॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन्! वाक्तैं अधिकतर [क्या] है? ऐसैं [पूंछताभया] ॥ ॥ स-

---

[३७]तातैं वाक्हीं शब्दके उच्चारणकरि इस सर्वकूं विज्ञापन करैहै। यातैं वाक् नामतैं अधिकतर है। तातैं वाककूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासना कर १

---

३७ अन्वय अरु व्यतिरेककरि ता (वाक्)की अधिकतरताके सिद्धभये फलितकूं कहैहैं ॥ इहां "सो जो वाक्कूं" इत्यादिवाक्य अन्य ऐसैं कहियेहै ॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतद्वितीयखंडस्य टिप्पणम् ॥ २ ॥

इति ? वाचो वाव भूयोऽस्तीति ॥ तन्मे भगवान् ब्रवीत्विति ? ॥ २ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य द्वितीयः खण्डः ॥ २ ॥

नत्कुमार उवाचः—वाक्तैं अधिकतर है हीं। ऐसैं [कहतेभये] ॥ ॥ नारद उवाचः—सो मेरेअर्थ भगवान् कहहू ? ऐसैं [पूंछताभया] ॥ २ ॥

इतिश्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपाठ०द्वितीयःखंडः२

टीकाः—अन्य समान है ॥ २ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपा० द्वितीयः खंडः ॥२॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्य तृतीयः खण्डः ३

मनो वाव वाचो भूयो यथा वै द्वे

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपा॰ तृतीयः खंडः ॥ ३ ॥

अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—मनहीं वा-

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठकस्य तृतीयः खंडः ३

वाक्तैं मनकी अधिकतरता २

टीकाः—सनत्कुमार उवाचः—[38]मन जो मनस्यनकरि विशिष्ट अंतःकरण है। सो वाक्तैं अधिकतर है॥ [39]जातैं सो मनस्यनरूप व्यापारवाला हुया वाक्कूं वक्तव्यविषै प्रेरण करैहै। तिसकरि वाक् मनविषै अंतर्भावकूं पावती है॥ [40]औ जो जिसविषै अंतर्भावकूं पावैहै। सो ताका

अथ श्री॰सप्तमप्रपाठकगत तृतीयखंडस्य टिप्पणम् ३

३८ मनः शब्दकी वृत्तिमात्ररूप विषयवान्ताकूं व्यावर्तन करैहैं॥

३९ ता (मन)की वाक्तैं अधिकतरता कैसैं है? सो कहैहैं॥

४० वाक्के मनविषै अंतर्भावके हुये बी मनकी तिसतैं अधिकतरता काहेतैं है? तहां कहैहैं॥

वाऽऽमलके द्वे वा कोले द्वौ वाऽक्षौ मुष्टि-
रनुभवत्येवं वाचञ्च नाम च मनोऽनु-

क्ततें अधिकतर हैं ॥ जैसें दो आमलकोंकूं
वा दो बदरनकूं वा दो अक्ष(बिभीतक)
नकूं मुष्टि अनुभवकरैहै । ऐसें वाक्कूं
औ नामकूं मन अनुभव करैहै ॥ सो (पु-

व्यापक होनेतें तिसतें अधिकतर होवैहै ॥
[41] जैसें लोकविषै दोनूं आमलक फलोंकूं वा दो-
नूं कोलन (बदर फलों)कूं वा दोनूं अक्षन
(बेहेडेके फलों)कूं मुष्टि अनुभवकरैहै क-
हिये मुष्टि तिन दोनूं फलनके प्रति व्याप्त हो-
वैहै । जातें मुष्टिविषै वे दोनूं फल अंतर्भावकूं
पावतेहैं ॥ ऐसें वाक्कूं औ नामकूं आमलक
आदिककीन्यांई मन अनुभव करैहै (तिनके
प्रति व्याप्त होवैहै) ॥ सो [42] पुरुष जब जिस का-

---

४१ मनकी वाक्आदिकतैं व्याप्तिकूं दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥
४२ इस हेतुतैं बी मनकी अधिकतरताहै । ऐसैं कहैहैं ॥

भवति।स यदा मनसा मनस्यति मन्त्रा-
नधीयीयेत्यथाधीते । कर्माणि कुर्वी-
येत्यथ कुरुते।पुत्रा१ँश्च पशू१ँश्चेच्छेये-

रुष) जब मनकरि मनस्यनकूं करताहै:-
मंत्रनकूं अध्ययन करूं ऐसें। [करिके]
अनंतर अध्ययनकूं करताहै। कर्मनकूं करूं।
ऐसें [करिके] अनंतर करताहै। पुत्र-
नकूं अरु पशुनकूं इच्छों (पावों)। ऐसें

लविषै मन (अंतःकरण)करि मनस्यनकूं क-
रताहै। कहिये मनस्यन जो विवक्षावाली बुद्धि
ताकूं करैहै॥ कैसें किः-"मंत्रनकूं अध्ययन
करूंगा (उच्चारण करूंगा)" इस प्रकारकी
यह विवक्षावाली बुद्धि है। तिस विवक्षाकूं करिके
अनंतर अध्ययनकूं करताहै॥ तैसें "कर्मों-
कूं करूंगा" ऐसें चिकीर्षा (कर्मकरनेकी इच्छा)

इहां विवक्षाबुद्धि। ताकूं करैहै। यह शेष है औ इच्छूंगा।
ऐसें इच्छाकूं करिके। यह शेष है॥

त्यथेच्छत इमञ्च लोकममुञ्चेच्छेयेत्यथे-
च्छते। मनो ह्यात्मा मनो हि लोको मनो
हि ब्रह्म मन उपास्स्वेति ॥ १ ॥

[करिके] अनंतर इच्छताहै। इस अरु उस लोककूं इच्छों। ऐसें [करिके] अनंतर इच्छताहै ॥ जातें मन आत्मा है। जातें मन लोक है। जातें मन ब्रह्म है। [तातें] मनकूं उपासनाकर ! ऐसें ॥ १ ॥

वाली बुद्धिकूं करिके अनंतर करताहै औ "पुत्रनकूं अरु पशुनकूं इच्छूंगा" ऐसें प्राप्तिकी इच्छाकूं करिके तिनकी प्राप्तिके उपायके अनुष्ठानकरि अनंतर इच्छताहै। अर्थ यह जो: पुत्रादिकनकूं पावताहै॥ तैसें "इस अरु उस (स्वर्ग) लोककूं उपायकरि इच्छताहूं" ऐसें इच्छाकूं करिके ताकी प्राप्तिके उपायके अनुष्ठानकरि अनंतर इच्छताहै (पावताहै) ॥ जातें

स यो मनो ब्रह्मेत्युपास्ते यावन्मनसो गतं तत्रास्य यथाकामचारो भवति

अर्थः—सो जो मनकूं "ब्रह्म है" ऐसें उपासताहै। यावत् मनका विषय है तहां इस (उपासक)का यथाकामचार होवैहै।

मन आत्मा है। [४३]आत्माकूं कर्तापना अरु भोक्तापना मनके होते होवैहै अन्यथा नहीं। यातैं मनहीं आत्मा है ऐसें कहियेहै ॥ जातैं मन लोक है। [४४]जातैं मनके होतेहीं लोक होवैहै औ ताकी प्राप्तिके उपायका अनुष्ठान होवैहै। यातैं मनहीं लोक है। जातैं ऐसें है तातैं मन ब्रह्म है ॥ जातैं ऐसें है तातैं मनकूं उपासनाकर ऐसें [कहतेभये] ॥ १ ॥

टीकाः—सो जो मनकूं। इत्यादिवाक्य स-

---

४३ ता (मन)की आत्मताकूं उपपादन करैहैं ॥

४४ ता (मन)की लोकरूपताकूं साधतेहैं ॥

इति श्री॰सप्तमप्रपाठकगततृतीयखंडस्य टिप्पणम् ॥ ३ ॥

यो मनो ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगवो मनसो भूय इति? मनसो वाव भूयोऽस्तीति ॥ तन्मे भगवान् ब्रवीत्विति ॥ २ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य तृतीयः खण्डः ॥ ३ ॥

जो मनकूं "ब्रह्महै" ऐसैं उपासताहै ॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन्! मनतैं अधिकतर [क्या] है? ऐसैं [पूंछताभया] ॥ ॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः—मनतैं अधिक हैहीं! ऐसैं [कहतेभये] ॥ ॥ नारद उवाचः—सो मेरेअर्थ भगवान् कहहू? ऐसैं पूंछताभया ॥ २ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपा० तृतीयः खंडः ३

मान है ॥ २ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठकस्य तृतीयः खंडः ॥३॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्य चतुर्थः खंडः ॥४॥

सङ्कल्पो वाव मनसो भूयान्यदा वै

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपा॰चतुर्थः खंडः ॥ ४ ॥

अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—संकल्पहीं मनतैं अधिकतर है ॥ जबहीं संकल्पकूं क-

---

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपा॰ चतुर्थः खंडः ॥४॥

मनतैं संकलपकी अधिकतरता ३

टीकाः— सनत्कुमार उवाचः—सं[४५]कल्पहीं मनतैं अधिकतर है ॥ संकल्पबी मनस्यनरूप वृत्तिकीन्यांई अंतःकरणकी वृत्ति है जो [४६]कर्तव्य अरु अकर्तव्यरूप विषयके विभागकरि समर्थन है ॥ [४७]जाँतैं विभागकरि समर्थनकिये विषयविषै

अथ श्री॰ सप्तमप्रपा॰ चतुर्थखंडस्य टिप्पणम् ॥ ४ ॥

४५ संकल्प शब्दके अर्थकूं कहैहैं ॥

४६ कौंन सो अंतःकरणकी वृत्तिहै जो संकलपशब्दकरि कहिये है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां द्विविध विषय विभागकरि समर्थनकिये हैं ॥

४७ यथोक्त संकलपकी मनतैं अधिकतरता कैसैंहै ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—संकलपकूं कारण होनेतैं औ मनकूं कार्य होनेतैं ताका तिसतैं अधिकता है ॥

सङ्कल्पयतेऽथ मनस्यत्यथ वाचमीर-

रताहै अनंतर मनस्यन (विवक्षाकी बुद्धि) कूं करताहै। अनंतर वाक्कूं प्रेरणकरैहै।

चिकीर्षा (करनेकी इच्छा)वाली बुद्धि मनस्यनके अनंतर होवैहै ॥ ॥ कैसैंकि[48]:- जब संकल्पकूं करताहै कहिये "यह करनेकूं युक्त है। ऐसैं कर्तव्य आदिक विषयनकूं विभागकरताहै अनंतर "मंत्रनकूं अध्ययन करों" इत्यादि मनस्यनकूं करताहै। अनंतर मंत्रआदिकके उच्चारणविषै वाक्कूं प्रेरणकरैहै औ तैं[49] वाक्कूं नामविषै नामकरि उच्चारणनिमित्त विवक्षा (कहनेकी इच्छा)कूं करिके प्रेरणकरैहै। नामविषै कहिये नामोंके सामान्यविषै मंत्र (शब्दविशे-

४८ तिन दोनूंके कार्यकारणभावकूं आकांक्षापूर्वक स्पष्ट करैहैं ॥

४९ मनतैं वाक्की अनंतरभाविताविषै विशेषकूं दिखावैहैं ॥

यति तासु नाम्नीरयति नाम्नि मन्त्रा एकं भवन्ति मन्त्रेषु कर्माणि ॥ १ ॥

ता (वाक्)कूं नामविषै प्रेरण करैहै। नाम (नाम सामान्य) विषै मंत्र एक होवैहै। मंत्रनविषै कर्म [एक होवैहै] ॥ १ ॥

ष) हुये एक होवैहैं। अर्थ यह जोः–अंतर्भावकूं पावतेहैं। [50]जांतैं सामान्यविषै विशेष अंतर्भावकूं पावताहै॥ मंत्रनविषै कर्म एक होवैहैं मंत्रैं[51]नकरि प्रकाशित कर्म करियेहै। अमंत्रक (मंत्ररहित) कर्म नहींहै॥ [52]जोई मंत्र (मंत्र-

---

५० नामविषै मंत्रनके अंतर्भावकूं समर्थन करैहैं ॥

५१ मंत्र(संहिता)नविषै (अनुपलब्ध अप्रकाशित) कर्मनका अंतर्भाव कैसैं है? तहां कहैहैं ॥

५२ ननु कर्म अमंत्रक नहीं है। यह कैसैं कहियेहै। ब्राह्मणभागविषै विहितबी कर्मके देखनेतैं? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः–ब्राह्मणकूं मंत्रनका व्याख्यानरूप होनेतैं अतिस्पष्ट मंत्रकी अप्रतीतिके हुये बी ब्राह्मण विहित कर्मकी मंत्रकरि उक्तता अर्थापत्तिप्रमाणसैं कल्पनाकरियेहै ॥

भाग)के प्रकाशकरि लब्धसत्तावाला हुया कर्म है सो ब्राह्मण (ब्राह्मणभाग) करि यह कर्म इस फलकेअर्थ कर्तव्य है ऐसैं विधानकरियेहै॥ कर्मोंकी जो[53] उत्पत्ति ब्राह्मणोंविषैबी देखियेहै। सो (उत्पत्ति) बी मंत्रनविषै लब्धसत्तावालेहीं कर्मोंका स्पष्टीकरण है। जातैं मंत्रनकरि अप्रकाशितकर्म किंचित्बी ब्राह्मणविषै उत्पन्न हुया नहीं देखियेहै। औ त्रैंयी[54] (वेद) विषै विहित कर्म है यह लोकविषै प्रसिद्ध है औ त्रैंयी[55] शब्द जो है सो ऋक् यजु अरु सामकी समाख्या (संज्ञा) है [औ अथर्वणवेदविषैबी तीनि वेदनके सदृशमंत्र हैं। यातैं ताकाबी त्रयीविषै अंतर्भाव है]। औ "मंत्रनविषै[56] जे कर्म हैं तिनकूं

५३ याहींकूं प्रपंचन करैहैं ॥

५४ एक शाखामैं जो कर्म मंत्रनविषै अनुपलब्ध है। सो कर्म अन्यशाखाके मंत्रकरि प्रकाशकिया होवैगा। इस अर्थ विषै अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥

५५ तथापि तिसका मंत्रकरि प्रकाशितपना कैसैं है? तहां कहैहैं ॥ ॥

५६ मंत्रनविषै कर्म अंतर्भावकूं पावते हैं। इस अर्थविषै अन्य श्रुतिकी अनुमतिकूं कथन करैहैं ॥

तानि ह वैतानि सङ्कल्पैकायनानि सङ्कल्पात्मकानि सङ्कल्पे प्रतिष्ठितानि।

अर्थः–वे प्रसिद्ध ये (मनआदिक) संकल्प रूप एक आयतनवालेहैं। संकल्पात्मक है। संकल्पविषै प्रतिष्ठितहैं॥ संक-

---

कवि देखतेभये" ऐसैं आथर्वणविषै कहाहै। तातैं मंत्रनविषै कर्म एक होवैहैं। यह कथन युक्त है॥ १॥

टीकाः–वे[57] प्रसिद्धये मनआदिक संकल्परूप एक अयनवाले हैं। संकल्प एक है गमन (प्रलय[58]) जिनका वे संकल्परूप एक अयनवाले कहियेहैं। वे उत्पत्तिविषै संकल्पस्वरूप हैं औ स्थितिविषै संकल्पमैं स्थितहैं॥ जा-

---

५७ तथापि संकल्पकी अधिकतरता कैसैं है? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

५८ अयनशब्दके पर्यायपनैकरि उक्त गमनके क्रियापनैकूं निषेध करैहैं॥

समक्लृपतां द्यावापृथिवी समकल्पेतां वा
युश्चाकाशञ्च समकल्पतामापश्च तेजश्च॥
तेषाꣳ संक्लृप्त्यै वर्षꣳ सङ्कल्पते वर्षस्य सं-

ल्पकूं करतेहुयेकीन्यांई स्वर्ग अरु पृथिवी
हैं वायु अरु आकाश संकल्प करते हुये-
कीन्यांई हैं जल अरु तेज संकल्पकूं करते
हुयेकीन्यांई हैं ॥ तिन (पृथिवी आदिकन)
की संक्लृप्तिअर्थ (संकल्पनिमित्त) वर्षा स-
मर्थ होवैहै । वर्षाकी संक्लृप्तिअर्थ अन्न स-

तैं संकल्पकूं[५९] करते हुयेकीन्यांई स्वर्ग अरु पृ-
थिवी निश्चल लखिये हैं । ऐसैं संकल्पकूं कर-
ते हुयेकीन्यांई वायु अरु आकाश ये दोनूं बी
लखिये हैं । तैसैं संकल्पकूं करते हुयेकीन्यां-

५९ इस हेतुतैं बी संकल्पकी अधिकतरता है । ऐसैं क-
हेहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—जातैं स्वर्ग अरु पृथिवी आदिकन-
विषै महत्पनैके हुये बी संकल्पकी अनुवृत्ति देखियेहै ॥ यातैं
बी ताका महत्पना जानियेहै । केवल कारणपनैतैं हीं नहीं ॥

क्लृप्त्या अन्नꣳ सङ्कल्पतेऽन्नस्य संक्लृप्त्यै
प्राणाः सङ्कल्पन्ते प्राणानाꣳ संक्लृप्त्यै
मन्त्राः सङ्कल्पन्ते मन्त्राणाꣳ संक्लृप्त्यै

मर्थ होवैहै । अन्नकी संक्लृप्तिअर्थ प्राण समर्थ होवैहैं । प्राणोंकी संक्लृप्तिअर्थ मंत्र समर्थ होवैहैं । मंत्रनकी संक्लृप्ति अर्थ कर्म

ईजल अरु तेज अपने रूपसैं निश्चल लखियेहैं ॥ जातैं तिन[६०] स्वर्ग अरु पृथिवीआदिकनकी संक्लृप्तिकेअर्थ (संकल्पके निमित्त) वर्ष (वर्षा) समर्थकीन्याई होवैहै । तैसैं वर्षकी संक्लृप्तिअर्थ (संकल्पनिमित्त) अन्न समर्थकीन्याई होवैहै । जातैं [६१]वृष्टितैं अन्न होवै

---

६० यातैं बी ताका महत्पना माननेकूं योग्य है । ऐसैं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—वृष्टिकूं स्वर्गलोक आदिकका कार्य होनेतैं ता (स्वर्गलोक आदिक)के संकलपकूं ता (वृष्टि)की निमित्तताके उपचारतैं ता (वृष्टि)की अधिकतरताकी असिद्धि है ॥

६१ वृष्टिके वशतैं अन्न समर्थ होवैहै । इस अर्थविषै प्रसिद्धिकूं प्रमाण करैहैं ॥

कर्माणि सङ्कल्पन्ते कर्मणाꣳ संक्लृप्त्यै लोकः संकल्पते लोकस्य संक्लृप्त्यै सर्वꣳ

समर्थ होवैहैं। कर्मोंकी संक्लृप्ति अर्थ लोक (फल) समर्थ होवैहै। लोककी संक्लृप्तिअर्थ

है॥ अन्नकी संक्लृप्तिअर्थ प्राण समर्थकी न्यांई होवैहैं। जातैं [62] अन्नमय प्राण [63] अन्नरूप आश्रयवाले हैं औ जातैं "[64] अन्न दाम है" यह श्रुति है॥ तिन प्राणोंकी संक्लृप्तिअर्थ मंत्र समर्थकीन्यांई होवैहैं। जातैं [65] प्राणवान् पुरुष मंत्रनकूं अध्ययन करताहै अबल (प्राणोके

---

६२ अन्नके अधीन प्राणका सामर्थ्य है। इस अर्थविषै हेतुकूं कहैहैं॥

६३ "जलमय प्राण है" ऐसैं पूर्व कथन किया होनेतैं प्राणकी अन्नमयता कैसैं है? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

६४ तहां (प्राणकी अन्नरूप आश्रयवान्‌ताविषै) वाजसनेयक (बृहदारण्यक)की श्रुतिकूं प्रमाण करैहैं॥

६५ प्राणकी मंत्रनके अध्ययनकी कारणता बोधन करैहैं॥ इहां "तातैं" याका मंत्र(संहिताभाग)करि प्रकाशित कर्मके वशतैं, यह अर्थ है॥

सङ्कल्पते । स एष संकल्पः संकल्पमुपास्वेति ॥ २ ॥

सर्व समर्थ होवैहै ॥ सो यह संकल्प है । संकल्पकूं उपासनाकर! ऐसैं ॥ २ ॥

बलसैं रहित) नहीं औ जातैं मंत्रनकी संक्लृप्तिअर्थ अग्निहोत्रादिक कर्म समर्थकीन्यांई होवैहैं कहिये मंत्रनकरि प्रकाशित कर्म अनुष्ठान किये हुये फलकेअर्थ समर्थ होवैहैं । तातैं (कर्मोंकी संक्लृप्तिअर्थ) लोक (फल) समर्थकीन्यांई होवैहै । अर्थ यह जोः—कर्म अरु कर्ताके समवायीभावकरि समर्थ होवैहै ॥ लोककी संक्लृप्तिअर्थ सर्व जगत् स्वरूपकी अविकलता (पूर्णता) अर्थ समर्थकीन्यांई होवैहै । ⁶⁶जातैं प्रसिद्ध यह सर्व जगत् जिस फलरूप अ-

---

६६ कर्मफलके वशतैं सर्व जगत्की अविकलता (संपूर्णता)के हुये बी संकलपका महत्पना कैसैं है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

स यः संकल्पं ब्रह्मेत्युपास्ते क्लृप्तान्
वै स लोकान् ध्रुवान् ध्रुवः प्रतिष्ठितान्

अर्थः–सो जो संकल्पकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै। सो संक्लृप्त (ब्रह्माकरि संकल्पित) ध्रुव(नित्य) प्रतिष्ठित व्यथार-

---

वसानवालाहै। सो सर्व संकलपरूप मूलवाला है। [67]यांतैं सो यह संकल्प विशिष्ट (श्रेष्ठ) है। यातैं संकल्पकूं उपासनाकर॥ ॥ऐसैं कहिके ताके उपासकके फलकूं कहैहैं॥ २॥

टीकाः–सो जो संकल्पकूं "ब्रह्म है" ऐसैं ब्रह्मबुद्धिकरि उपासताहै। सो विद्वान् धाता (ब्रह्मा) करि "इसके ये लोक फल हैं" ऐसैं क्लृप्त कहिये समर्थित नाम संकलिपत औ ध्रुव कहिये नित्य नाम [68]अत्यंत अध्रुवनकी अपेक्षाकरि

६७ ता (संकलप)के महत्पनैके हुये फलितकूं कहैहैं॥
६८ आत्मातैं भिन्नलोकनकी नित्यता कैसैं है? यातैं कहैहैं॥

प्रतिष्ठितोऽव्यथमानानव्यथमानोऽभि-
सिद्ध्यति । यावत्संकल्पस्य गतं तत्रा-
स्य यथाकामचारो भवति यः संक-

हित लोकनकूं ध्रुव प्रतिष्ठित व्यथारहित हुया अभिसिद्ध (प्राप्त) होवैहै ॥ जितना [आपके] संकल्पका विषय है तहां इसका यथाकामचार होवैहै । जो संकल्पकूं "ब्रह्म

नित्य । ऐसे लोकनकूं आप ध्रुव हुया [पावता है] ॥ ६९जातैं लोकी (लोकवाले) की अध्रुवताके हुये लोकविषै ध्रुवकी कल्पना व्यर्थ है । यातैं [इहां ध्रुव हुया ऐसैं कहा] औ प्रतिष्ठितनकूं । अर्थ यह जोः—उपकरण (भोगसामग्री) करि संपन्न लोकनकूं "पँशु पुत्र आदिकनकरि प्रतिष्ठित होवैहै" ऐसैं देखनेतैं आप प्रतिष्ठित

---

६९ ननु ऐसैं लोकनका ध्रुवपना कहनेकूं योग्यहै । लोकी (लोकवासी) का सो ध्रुवपना क्यूं कहियेहै ? तहां कहैहैं ॥

७० उपकरणकरि संपन्नोंविषै प्रतिष्ठित शब्द कैसैं होवैहै? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

ल्पं ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगवः संकल्पा-
द्भूय इति? संकल्पाद्वाव भूयोऽस्ती-

है" ऐसैं उपासताहै ॥ ॥ हे भगवन्! सं-
कल्पतैं अधिकतर [क्या] है? ऐसैं [पूं०]
॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः—संकल्पतैं अधि-
कतर हैहीं! ऐसैं [क०] ॥ ॥ नारद उवा-

हुया कहिये आपके उपकरणकरि संपन्न हुया
औ व्यथारहितनकूं कहिये अमित्रादिकनके
त्रासतैं रहित लोकनकूं आप व्यथारहित हु-
या अभिसिद्ध होवैहै। अर्थ यह जोः—च्यारी
औरतैं प्राप्त होवैहै ॥ औ ँआत्मा (आप) के
संकल्पका [परंतु सर्वके संकल्पका नहीं। ँउत्तर

---

७१ "जितना संकल्पका" इत्यादिरूप श्रुतितैं विषयके संकोचकूं दिखावैहैं ॥ इहां संकल्पका जितना गोचर है तहां इसका कामचार होवैहै। ऐसैं संबंध है ॥

७२ निरंकुश (संकोचरहित) संकल्प शब्दके हुये कौन हानि है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः— जब संकल्पमात्रके विषयविषै संकल्पके उपासकका काम-

ति ॥ तन्मे भगवान् ब्रवीत्विति ? ॥ ३ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य चतुर्थः खण्डः ॥ ४ ॥

चः—सो मेरे अर्थ भगवान् कहहू ? ऐसें [पूं०] ॥ ३ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपा०चतुर्थः खंडः ४॥

फलके विरोधतैं] जितना गोचर (विषय) है तहां इस (उपासक)का यथाकामचार होवैहै। जो संकल्पकूं "ब्रह्म है" ऐसें उपासताहै। इत्यादिवाक्य पूर्वकी न्यांई है ॥ ३ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठकस्य चतुर्थः खंडः ॥ ४॥

चार होवैहै। तब सर्व संकल्पकूं विचित्र होनेकरि सर्वगोचरताके संभवतैं "जितना चित्तका गत (विषय है)" इत्यादि वाक्यकरि आगे कहनेका फल विरोधकूं पावैगा ॥ जातैं संकल्पके उपासनतैं हीं सर्व फलके सिद्धभये चित्तआदिकका उपासन वा तिसका फल पृथक् कथनकरनेकूं उचित नहीं है। यातैं " जितना संकल्पका " इत्यादि श्रुतितैं उक्त संकोच युक्त है ॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतचतुर्थखंडस्य टिप्पणम् ॥ ४ ॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्य पंचमः खंडः॥५॥

चित्तं वाव सङ्कल्पाद्भूयो यदा वै चेतयतेऽथ मनस्यत्यथ वाचमीरयति ता-

---

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपा॰पंचमः खंडः ॥ ५ ॥

अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—चित्तहीं संकल्पतैं अधिकतर है ॥ जबहीं चेतनाकूं करैहै तब संकल्पकूं करताहै। अनंतर मनस्यनकूं करताहै। अनंतर वाक्कूं प्रेरण

अथ श्री॰ भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठकस्य पंचमःखंडः ॥५॥

संकल्पतैं चित्तकी अधिकतरता ३

टीकाः—सनत्कुमार उवाचः—चित्तहीं संकल्पतैं अधिकतरहै कहिये चित्त[७३] जो चेतयितापना नाम प्राँप्तकालके[७४] अनुसार बोधवानूप-

---

अथ श्री॰सप्तमप्रपाठकगतपंचमखंडस्य टिप्पणम् ५

७३ चित्तशब्दकी मनःशब्दकरि पुनरुक्तिकूं परिहार करैहैं।

७४ ता (चित्त)की आत्मताकूं निषेध करैहैं॥ इहां यह अर्थ हैः—यह वस्तु ऐसैं प्राप्तभया। ऐसैं प्राप्तकालवाले वस्तुतैं वस्तुका अनुसारी जो चेतना नामक वृत्तिविशेष तिसवानूपना जो है सो चित्तपना है॥

मु नाम्नीरयति नाम्नि मन्त्रा एकं भवन्ति मन्त्रेषु कर्माणि ॥ १ ॥

करै है। ता (वाक्)कूं नामविषै प्रेरण करै है। नामविषै मंत्र एक होवैहैं। मंत्रनविषै कर्म [एक होवैहैं] ॥ १ ॥

ना औ ७५अतीत अनागत (भूत भविष्यत्) विषयके प्रयोजनके निरूपणका सामर्थ्य है । सो संकल्पतैंबी अधिकतर है ॥ ॥ ७६कैसैं किः—जबहीं प्राप्त वस्तुकूं "यह इसरीतिसैं प्राप्तभयाहै", ऐसैं चेतनाकूं करताहै । तब ग्रहणकेअर्थ वा त्यागकेअर्थ संकल्पकूं करताहै। अनंतर मनस्यनकूं करताहै। इत्यादि" ७७पूर्वकी न्यांई है ॥ १ ॥

७५ अतीत भोजन तृप्तिका साधन देख्याहै। भोजन होनेतैं आगामि तिस भोजनकाबी सोई प्रयोजन है। इस निरूपणका सामर्थ्य चित्तहै यह प्रसिद्ध है। यह कहैहैं ॥

७६ यथोक्त चित्तकी संकल्पतैं अधिकतरतारूप प्राप्त अपूर्वपनैकूं बोधन करैहैं ॥

७७ संकल्पके प्रकरणकूं स्मरण करैहैं ॥

तानि ह वा एतानि चित्तैकायनानि चित्तात्मानि चित्ते प्रतिष्ठितानि। तस्माद्यद्यपि बहुविदचित्तो भवति। नायमस्तीत्येवैनमाहुर्यदयं वेद यद्वाऽयं विद्वा-

---

अर्थः–वे प्रसिद्ध ये (संकल्पआदिक) चित्तरूप एक आयतनवालेहैं। चित्तस्वरूप हैं। चित्तविषै प्रतिष्ठित हैं। तातैं यद्यपि बहुवित् हुया अचित्त होवैहै "यह नहीं है" ऐसैंहीं इसकूं कहतेहैं॥ यह जो [कछु] जानताहै [सो बी वृथाहीं है] "जब

टीका:–वे[७८] ये संकल्पआदिक कर्मफलपर्यंत जे वस्तुहैं वे चित्तरूप एक अयनवाले हैं। चित्तस्वरूपहैं (चित्ततैं उत्पत्तिवाले हैं)। चि-

---

७८ जैसैं संकल्पकी निमित्तताके हुये स्तुतिअर्थ अधिकरणता युक्त है। तैसैं विभक्त (विभागकूं प्राप्त) चित्तकी संकल्पआदिकनाविषै निमित्तताके हुये बी स्तुतिअर्थहीं ताकी अधिकरणताकूं कहैहैं॥

न्नेत्थमचित्तः स्यादित्यथ यद्यल्पविच्चि-
त्तवान् भवति तस्मा एवोत शुश्रूषन्ते॥

यह विद्वान् होवै तब ऐसें अचित्त न होवै"
ऐसें [कहतेहैं]॥ औ जब अल्पवित् हु-
या चित्तवान् होवैहै तब ताके अर्थहीं बी
सुननेकूं इच्छतेहैं ॥ चित्तहीं इनका एका-

त्तविषै प्रतिष्ठित हैं। (चित्तविषै स्थित हैं)।
यहबी पूर्वकी न्यांईहै ॥ ॥ किंवा:—चित्तका मा-
हात्म्यः—जातैं चित्त जो है सो संकलपआदिक-
नका मूल है तातैं यद्यपि बहुवित् (बहुशा-
स्त्रादिकका परिज्ञानवान्) हुवा अचित्त हो-
वैहै कहिये प्राप्तआदिकके चेतयितापनैके सा-
मर्थ्यतातैं विरहित होवैहै । ताकूं निपुण लौ-
किक जन यह नहींहै कहिये विद्यमान हुया
बी असत्के समहींहै। ऐसें इसकूं कहते हैं।

७९ यातैं बी चित्तकी श्रेष्ठता है। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां य-
द्यपि बहुशास्त्रार्थका परिज्ञानवान् हुवा। तथापि जब अचित्त
(चेतनायुक्तताकरि रहित) होवैहै। ऐसैं योजना है ॥

चित्तꣳह्येवैषामेकायनं चित्तमात्मा चित्तं प्रतिष्ठा चित्तमुपास्स्वेति ॥ २ ॥

यन है। चित्त आत्मा है। चित्त प्रतिष्ठा है। चित्तकूं उपासनाकर! ऐसैं [क०] ॥ २ ॥

औ यह यत् किंचित् शास्त्रआदिककूं जानता है (सुनता भयाहै)। सो बी इसका वृथाहीं है। ऐसैं कथन करतेहैं ॥ ॥ कांहेतैं किः—जब यह विद्वान् होवै तब ऐसा अचित्त न होवै [जातैं अचित्तहै] तातैं इसका श्रुतबी अश्रुतहींहै। ऐसैं कहतेहैं। यह अर्थ है ॥ [८१] औ जब अल्पवित् (अल्पशास्त्रादिकका वेत्ता) हुयाबी

---

८० चित्तरहित पुरुषकी असत् (अविद्यमान)की समता औ सुनेशास्त्रकी व्यर्थता है। ऐसैं उक्त अर्थकूं प्रश्नद्वारा विवरण करैहैं ॥ इहां श्रुत (सुन्या) बी। इस बी (अपि) शब्दकरि सत्व ग्रहणकरिये है ॥

८१ चित्तके अभावके हुये श्रुत आदिककी व्यर्थताकी उक्तिकरि तिसचित्तकी श्रेष्ठता उपदेशकरी। अब ताकी श्रेष्ठताविषै अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥

स यश्चित्तं ब्रह्मेत्युपास्ते चित्तान्वै स लोकान् ध्रुवान् ध्रुवः प्रतिष्ठितान् प्रतिष्ठितो ऽव्यथमानानव्यथमानो ऽभिसि-

---

अर्थः—सो जो चित्तकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै। सो चित्त (पूजित) ध्रुव प्रतिष्ठित व्यथारहित लोकनकूं ध्रुव प्रतिष्ठित व्यथारहित हुया अभिसिद्ध (प्राप्त) हो-

---

जब चित्तवान् होवैहै तब। तिस इसके अर्थ कहिये तिसकरि उक्त अर्थके ग्रहणअर्थहींबी श्रवणकरनेकूं इच्छतेहैं। औ तौतैं चित्तहीं इन संकल्पआदिकनका एक (मुख्य) अयन (आश्रय) है। इत्यादि पूर्वकी न्यांई है ॥ २ ॥

टीकाः—सो चित्तका उपासक चित्तनकूं कहिये बुद्धिमानोके गुणोंकरि पूजितनकूं अरु

---

८२ चित्तवान्करि उक्त अर्थके ग्रहणअर्थ सुननेकूं इच्छा लोककूं होवैहै। इस अर्थविषै हेतुकूं कहैहैं ॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतपंचमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ५ ॥

द्भयति। यावच्चित्तस्य गतं तत्रास्य यथा-कामचारो भवति। यश्चित्तं ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगवश्चित्ताद्भूय इति ? चित्ताद्वाव भूयोऽस्तीति ॥ तन्मे भगवान् ब्रवीत्विति? ॥ ३ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य पञ्चमः खंडः ॥ ५ ॥

वैहै ॥ जितना चित्तका विषय है तहां इसका यथाकामचार होवैहै । जो चित्तकूं " ब्रह्म है " ऐसें उपासताहै ॥ ॥ नारद उवाचः–हे भगवन् ! चित्ततैं अधिकतर [क्या]है ? ऐसें [पूं०]॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः–चित्ततैं अधिकतर हैहीं ! ऐसें [क०] ॥ ॥ नारद उवाचः–सो मेरेअर्थ भगवान् कहहू ? ऐसें [पूं०] ॥ ३ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपा०पंचमःखंडः॥५॥

ध्रुव [लोक]नकूं । इत्यादिवाक्य पूर्व उक्त अर्थवाला है ॥ ३ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठकस्य०पंचमः खंडः ॥५॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्य षष्ठः खंडः॥६॥

ध्यानं वाव चित्ताद्भूयो । ध्यायतीव

अथ श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपाठकस्य षष्ठः खंडः ॥६॥

अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—ध्यानहीं चित्ततैं अधिकतर है ॥ पृथिवी ध्यान करते

अथ श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठकस्य षष्ठःखंडः ॥६॥

चित्ततैं ध्यानकी अधिकतरता २

टीकाः—सनत्कुमार उवाचः—ध्यानहीं[८३] चित्ततैं अधिकतर है ॥ ध्यान नाम शास्त्रोक्त देवतादिक आलंबनोंविषै अचल अरु भिन्न[८४] जातियों (विजातीय प्रत्ययों) करि अंतरायरहित प्रत्ययोंका संतान है । जाकूं[८५] "एकाग्रता" ऐसैं

अथ श्री०सप्तमप्रपाठकगतषष्ठखंडस्य टिप्पणम् ॥६॥

८३ सो ध्यान क्या है? इस अपेक्षाके हुये कहैहैं ॥

८४ अचलताकूं साधते हैं ॥

८५ ता (ध्यान)की चित्ततैं अधिकतरता कैसैं है? यह आशंकाकरिके । अनेकाग्रतारूप दोषकरि उपहतके अतीतादि फलके निरूपणकरि सामर्थ्यके अदर्शनतैं औ एकाग्रतारूप ध्यानपदार्थ चेतयिता (चेतनाका कर्ता) होनेतैं ता (चित्त)

पृथिवी ध्यायतीवान्तरिक्षं ध्यायतीव द्यौर्ध्यायंतिवाऽऽपो ध्यायन्तीव पर्वता

हुयेकी न्यांई है। अंतरिक्ष ध्यान करते हुयेकी न्यांई है। स्वर्ग ध्यानकरते हुयेकी न्यांई है। जल ध्यानकरते हुयेकी न्यांई हैं।

कहतेहैं ॥ औ ध्यानका माहात्म्य फलतैं देखियेहै ॥ ॥ कैसैं कि:—जैसैं योगी ध्यानकूं करताहुया ध्यानके फलके लाभके हुये निश्चल होवैहै। ऐसैं पृथिवी ध्यान करते हुयेकीन्यांई निश्चल देखियेहै। अंतरिक्ष ध्यान करते हुयेकीन्यांई। इत्यादि अन्य समान है॥ इहां जे देव अरु मनुष्य वे देव मनुष्य हैं। वा

का कारण होनेतैं ता (चित्त)तैं अधिकहीं है। इस अभिप्राय करिके कहैहैं ॥

८६ यातैं बी ता (ध्यान)की अधिकतरता है। ऐसैं कहैहैं॥

८७ फलद्वारा ता ध्यानके माहात्म्यकूं प्रश्नपूर्वक दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥

ध्यायन्तीव देवमनुष्यास्तस्माद्य इह मनुष्याणां महत्तां प्राप्नुवन्ति ध्याना-

---

पर्वत ध्यानकरते हुयेकी न्यांई हैं। देव मनुष्य ध्यानकरते हुयेकी न्यांई हैं ॥ तातैं जे इहां मनुष्यनके मध्य महत्ताकूं पावतेहैं

जे [88]मनुष्यहीं देवसम हैं वे [89]शमादि गुणोंकरि संपन्न मनुष्य देवमनुष्य हैं। अर्थ यह जोः—जे देवस्वरूपकूं त्यागते नहीं वे देवमनुष्य कहियेहैं ॥ [90]तातैं ऐसैं विशिष्ट (श्रेष्ठ) ध्यान है। तातैं जे इस लोकविषै मनुष्यनके मध्यहीं धनोंकरि विद्याकरि वा गुणनकरि म-

---

८८ गौरव दोषके परिहारअर्थ पक्षांतरकूं कहैहैं ॥

८९ मनुष्यनकेहीं होते देवपना किस कारणतैं है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—ध्यानका फल जो निश्चलपना सो महान् जे पृथिवी आदिक तिनविषै देख्या है। तैसैं हुये ता ध्यानकी श्रेष्ठता है ॥

९० तहांहीं अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां ध्यानका आपादन जो अनुष्टान तिसकरि ताके फलका लाभ लक्षणासैं जानिये है। ताका अंश जिनकूं है वे तैसैं हैं ॥

पादाꣳशा इवैव ते भवन्त्यथ येऽल्पाः कलहिनः पिशुना उपवादिनस्तेऽथ ये

वे ध्यान आपादनके अंशवानोंकी न्यांईंहीं होवैंहैं ॥ औ जे अल्प कलही पिशुन (चुगलीखोर) अरु उपवादी हैं वे [तिनतैं

हतपनैकूं पावतेहैं । अर्थ यह जोः— धनादिकरि महतपनैविषै हेतु[उत्कृष्ट कर्म]कूं पावतेहैं । वे ध्यानके आपादके अंशवालोंकीन्यांईंहीं होवैंहैं । कहिये ध्यानका जो आपादन नाम आपाद । अर्थ यह जोः—ध्यानके फलका लाभ । ताका अंश जो अवयव कहिये कोईककला । तिस वालोंकीन्यांईंहीं । अर्थ यह जोः— ध्यानफलके लाभकी कलावानोंकीन्यांईंहीं । वे होवैंहैं । कहिये निश्चलोंकीन्यांई[९१] लखियेहैं क्षुद्रोंकीन्यांई[९२] नहीं ॥ औ[९३] जे फिर

९१ ध्यान फलके लाभकी कलावान्‌ताकूंहीं स्पष्ट करैहैं ॥
९२ एवकारके अर्थकूं कहैहैं ॥
९३ महतपुरुषनविषै ध्यानके फलकी अनुवृत्ति (अनुगति) देखी है । ऐसैं अन्वयकूं कहिके व्यतिरेककूं कहैहैं ॥

प्रभवो ध्यानापादांऽशा इवैव ते भव-
न्ति । ध्यानमुपास्वेति ॥ १ ॥
स यो ध्यानं ब्रह्मेत्युपास्ते यावद्ध्या-

विपरीत होवैंहैं] ॥ औ जे प्रभुहैं वे ध्यान
आपादनके अंशवानोंकी न्यांईहीं होवैंहैं ॥
ध्यानकूं उपासन कर! ऐसैं [क०] ॥ १ ॥
अर्थः—सो जो ध्यानकूं "ब्रह्म है—" ऐ-
सैं उपासताहै । जितना ध्यानका विषय

अल्प (क्षुद्र) कहिये धनआदिककरि महत्ता-
के एक देशकूं अप्राप्त हैं । वे पूर्वोक्त मनुष्यनतैं
विपरीत कलही (कलहशील)। पिशुन (पर-
दोषके प्रकाशक) । अरु उपवादी । समीपता-
करि युक्तहीं परदोषके प्रति कहनेकूं शील (स्व-
भाव)है जिनोंका वे उपवादी कहियेहैं । ऐसे
होवैंहैं ॥ [९४] औ जे धनादिनिमित्तवाले महत्पने-

९४ व्यतिरेककूं दिखायके अन्वयकूं उपसंहार करैंहैं ॥
इहां महत्पुरुषविषै निश्चलताका दर्शन अतः (यातैं)शब्दका
अर्थ है ॥

नस्य गतं तत्रास्य यथाकामचारो भवति यो ध्यानं ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगवो ध्यानाद्भूय इति ? ध्यानाद्वाव भूयोस्तीति ॥ तन्मे भगवान् ब्रवीत्विति ?॥२॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य षष्ठः खंडः ॥ ६ ॥

है तहां इसका यथाकामचार होवैहै । जो ध्यानकूं "ब्रह्महै" ऐसें उपासता है ॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन् ! ध्यानतें अधिकतर [क्या] है ? ऐसें [पूं०] ॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः—ध्यानतें अधिकतर हैहीं! ऐसें [क०] ॥ ॥ नारद उवाचः—सो मेरे-अर्थ भगवान् कहहू ? ऐसें [पूं०] ॥ २ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपा०षष्ठःखंडः ॥६॥

कूं प्राप्त भये हैं । वे अन्योंके प्रति प्रभु होवैहैं । यातैं विद्याचार्य अरु राज्येश्वरआदिक जे प्रभु हैं वे ध्यानफललाभके अंशवानोंकीन्यांईहीं हैं ।

अथ सप्तमप्रपाठकस्य सप्तमः खंडः॥७॥

विज्ञानं वाव ध्यानाद्भूयो विज्ञानेन वा ऋग्वेदं विजानाति यजुर्वेदꣳसाम-

---

अथ श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपाठ० सप्तमः खंडः ७

अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—विज्ञानहीं ध्यानतैं अधिकतर है ॥ विज्ञानकरिहीं ऋग्वेदकूं विशेष जानताहै । यजुर्वेदकूं ।

इत्यादिवाक्य उक्त अर्थवाला है ॥ यौंतैं ध्या-नका फलतैं महत्पना देखियेहै । यातैं ध्यान चित्ततैं अधिकतर है। यातैं ता ध्यानकूं उपास-नाकर! इत्यादि वाक्य उक्त अर्थवाला है॥१॥२॥

इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठकस्य षष्ठः खंडः ॥ ६ ॥

अथ श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठकस्य सप्तमः खंडः७॥

ध्यानतैं विज्ञानकी अधिकतरता २

टीकाः—सनत्कुमार उवाचः—विज्ञानहीं ध्यानतैं अधिकतरहै ॥ विज्ञान जो शास्त्रके

---

९५ महत्पनैके फलकूं कहैहैं ॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतषष्ठखंडस्य टिप्पणम् ॥ ६ ॥

वेदमाथर्वणं चतुर्थमितिहासपुराणं प-ञ्चमं वेदानां वेदं पित्र्यꣳ राशिं दैवं निधिं वाकोवाक्यमेकायनं देवविद्यां ब्रह्मविद्यां भूतविद्यां क्षत्रविद्यां नक्षत्र-

---

सामवेदकूं । चतुर्थ आथर्वण [वेद]कूं । इतिहास पुराणरूप पंचम [वेद]कूं । वे-दनके वेदकूं । पित्र्यकूं । राशिकूं । दैवकूं । निधिकूं । वाकोवाक्यकूं । एकायनकूं । देव-विद्याकूं । ब्रह्मविद्याकूं । भूतविद्याकूं । क्षत्र-

---

अर्थकूं विषय करनेवाला ज्ञान । ताकूं ध्यानका कारण होनेतैं ध्यानतैं अधिकतरताहै ॥ ॥ औ तौं[९६] (विज्ञान)की अधिकतरता कैसैंहै ? यह कहैहैं:– विज्ञानसैंहीं ऋग्वेदकूं जानताहै "यह ऋग्वेदहै" ऐसैं । प्रमाणताकरि जिंस[९७] (शा-

---

अथ श्री॰सप्तमप्रपाठक॰सप्तमखंडस्य टिप्पणम् ७

९६ विज्ञानकी उक्त अधिकतरताकूं प्रश्नपूर्वक दिखावैहैं ॥

९७ यद्यपि प्रमाणताकरि सो ज्ञान शास्त्रार्थके ज्ञानपूर्वक

विद्याꣳ सर्पदेवजनविद्यां दिवञ्च पृथिवीञ्च वायुञ्चाकाशञ्चापश्च तेजश्च देवाꣳश्च मनुष्याꣳश्च पशूꣳश्च वयाꣳसि च तृणवनस्पतीञ्छ्वापदान्याकीटपतङ्गपिपीलकं धर्मञ्चाधर्मञ्च सत्यञ्चानृतञ्च

विद्याकूं। नक्षत्रविद्याकूं। सर्पदेवजनविद्याकूं॥ औ स्वर्गकूं अरु पृथिवीकूं अरु वायुकूं अरु आकाशकूं अरु जलोंकूं अरु तेजकूं॥ औ देवनकूं अरु मनुष्यनकूं अरु पशुनकूं अरु पक्षीनकूं॥ तृणवनस्पतिनकूं। श्वापदों (पंचनखवाले कूकर आदिकन) कूं कीट पतंग पिपीलिका पर्यंतकूं॥ औ धर्मकूं अरु अधर्मकूं औ सत्यकूं अरु अनृतकूं औ सा-

स्त्र)के अर्थका ज्ञान ध्यानका कारणहै [यातें सो ध्यानतैं श्रेष्ठहै]॥ तैसैं यजुर्वेदकूं। इत्यादि॥
किंवा:-पशु आदिकनकूं औ शास्त्रकारि सिद्ध

है। तथापि ताकी तिसतैं अधिकतरता कैसैं है? तहां कहैहैं॥
९८ यातैं बी ताकी ध्यानतैं अधिकतरता है। ऐसैं कहैहैं॥

साधु चासाधु च हृदयज्ञश्चाहृदयज्ञश्चा-
न्नञ्च रसञ्चेमञ्च लोकममुञ्च विज्ञानेनैव
विजानाति । विज्ञानमुपास्वेति ॥ १ ॥

धुकूं अरु असाधुकूं औ हृदयज्ञकूं अरु अ-
हृदयज्ञकूं औ अन्नकूं अरु रसकूं औ इस
अरु उस लोककूं । विज्ञानकरि हीं विशेष
जानताहै ॥ विज्ञानकूं उपासन कर ! ऐसैं
[क०] ॥ १ ॥

धर्म अधर्मकूं औ लोकतैं सिद्ध वा स्मार्त्त (स्मृ-
तिसिद्ध)साधु असाधुकूं औ अदृष्टविषयकूं वि-
ज्ञानकरिहीं जानताहै । यह अर्थहै ॥ तातैं
ध्यानतैं विज्ञानकी अधिकतरता युक्तहै । [99]यांतैं
[100]विज्ञानकूं उपासनाकर ! ऐसैं [क०] ॥ १ ॥

---

९९ अधिकतरताके फलकूं कहैहैं ॥
१०० ज्ञान अरु विज्ञान शब्दके अर्थके भेदकूं कथन करैहैं ॥

स यो विज्ञानं ब्रह्मेत्युपास्ते विज्ञानवतो वै स लोकान् ज्ञानवतोऽभिसिद्ध्यति। यावद्विज्ञानस्य गतं तत्रास्य यथाकामचारो भवति यो विज्ञानं ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगवो विज्ञानाद्भूय इ-

---

अर्थः—सो जो विज्ञानकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै। सो विज्ञानवाले अरु ज्ञानवाले लोकनकूं पावताहै। जितना विज्ञानका विषय है तहां इसका यथाकामचार होवैहै। जो विज्ञानकूं " ब्रह्म है " ऐसैं उपासताहै॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन्! विज्ञानतैं अधिकतर [क्या] है? ऐसैं [पूं०]॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः—विज्ञानतैं अधिकतर

टीकाः—उपासनके फलकूं श्रवणकरः—विज्ञान जिनलोकनविषैहै वे विज्ञानवाले लोक हैं तिन विज्ञानवाले औ ज्ञानवाले लोकनकूं अभि-

ति ? विज्ञानाद्वाव भूयोऽस्तीति ॥ तन्मे भगवान् ब्रवीत्विति ? ॥ २ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य सप्तमः खण्डः ॥ ७ ॥

हैहीं ! ऐसैं [क०] ॥ ॥ नारद उवाचः—सो मेरेअर्थ भगवान् कहहू ? ऐसैं [पूं०] ॥२॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपाठ०सप्तमः खंडः७

सिद्ध होवैहै कहिये पावताहै । अर्थ यह जोः— विज्ञान जो शास्त्रके अर्थकूं विषयकरनेवाला ज्ञान है औ ज्ञान जो अन्यकूं विषयकरनेवाला निपुणपना है तिसैं[१०१]वालेनकरि युक्त लोकनकूं पावताहै ॥ जितना विज्ञानका । इत्यादिवाक्य पूर्वकी न्यांई है ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठकस्य सप्तमः खंडः ॥७॥

---

१०१ तथापि अचेतन लोकनकूं तिन ज्ञान अरु विज्ञान दोनूंकी आश्रयता काहेतैं है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतसप्तमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ७ ॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्याष्टमः खंडः ॥८॥

बलं वाव विज्ञानाद्भूयोऽपि ह शतं विज्ञानवतामेको बलवानाकम्पयते।स यदा बली भवत्यथोत्थाता भवत्युत्तिष्ठन् परि-

---

अथ श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपाठकस्याष्टमः खंडः ॥८॥

अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—बलहीं विज्ञानतैं अधिकतर है॥ विज्ञानवानोंके शतकूंबी एक बलवान् च्यारीओरतैं कंपावताहै। सो जब बली होवैहै अनंतर उत्थाता होवैहै। उत्थित हुया परिचरिता (सेवक) हो-

---

अथ श्री० भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठकस्याष्टमः खण्डः ८

विज्ञानतैं बलकी अधिकतरता २

टीकाः—सनत्कुमार उवाचः—बलहीं विज्ञानतैं अधिकतरहै ॥ बल यह अन्नके उपयोगसैं जनित मनका विज्ञेय (विषय) विषै प्रतिभानका सामर्थ्य है। काहेतैं " भो भगवन्!

चरिता भवति। परिचरन्नुपसत्ता भवत्यु-
पसीदन्द्रष्टा भवति। श्रोता भवति। मन्ता
भवति। बोद्धा भवति। कर्त्ता भवति। विज्ञा

वैहै। परिचरण (सेवन)कूं करता हुया उप-
सत्ता (गुरुसमीप जानेवाला) होवैहै। उप-
सदन (समीपगमन)कूं करताहुया द्रष्टा
होवैहै। श्रोता होवैहै। मंता होवैहै। बोद्धा
होवैहै। कर्त्ता होवैहै। विज्ञाता होवैहै॥ ब-

---

[102]अनशनतैं ऋक्आदिक मेरेकूं नहीं प्रतिभान
होतेहैं" इस (पूर्वउक्त) श्रुतितैं [103]शरीरविषै बी
सोई (अन्नके उपयोगसैं जनितहीं) उत्थानआ-
दिकका सामर्थ्य है जातैं [104]विज्ञान (शास्त्रार्थके

अथ श्री० सप्तमप्रपाठकगताष्टमखंडस्य टिप्पणम् ८

१०२ यथोक्त बलशब्दके अर्थविषै श्वेतकेतुके वाक्यकूं प्र-
माणकरैहैं॥

१०३ तब शरीरके सामर्थ्यविषै बलशब्दका प्रयोग कैसैं
है? तहां कहैहैं॥ इहां "सोई" याका अन्नके उपयोगसैं
जनितहीं। यह अर्थ है॥

१०४ केवल कारण होनेतैं हीं बल विज्ञानतैं अधिकतर

ता भवति॥ बलेन वै पृथिवी तिष्ठति बलेनान्तरिक्षं बलेन द्यौर्बलेन पर्वता बलेन देवमनुष्या बलेन पशवश्च वयाꣳसि च

लकरिहीं पृथिवी स्थित होवैहै । बलकरि अंतरिक्ष। बलकरि स्वर्ग। बलकरि पर्वत। बलकरि देवमनुष्य। औ बलकरि पशु। अरु

ज्ञान) वानोंके शतकूं बी एक बलवान् प्राणी कंपावताहै ।जैसैं मत्तहस्ती सम्यक् उदयकूं पाये बी मनुष्यनके शतकूं कंपावताहैं। जांतैं ऐसैं अन्न आदिकके उपयोगरूप निमित्तवाला बल है तातैं सो पुरुष जब बली कहिये बलकरि तद्वान् होवैहै अनंतर उत्थाता कहिये उत्थानका कर्ता

नहीं। किंतु प्रत्यक्ष बी ताका विज्ञानतैं अधिकपना है। ऐसैं कहैहैं ॥ तातैं बलका विज्ञानतैं अधिकपना है। यह शेष है औ सम्यक् उदयहुयेकूं कंपावता है तैसैं अन्य ठिकाने बी देखनेकूं योग्यहै। ऐसैं संबंध है ॥

१०५ जातैं ऐसैं बलकी कारणता है औ विज्ञानकी कार्यता है। तातैं ताकी अधिकतरता है। इस अर्थविषै इन दोनूंके कार्य-कारणभावकूं उपपादन करैहैं ॥

तृणवनस्पतयः श्वापदान्याकीटपतङ्ग-पिपीलकं। बलेन लोकस्तिष्ठति। बलमुपास्वेति ॥ १ ॥

स यो बलं ब्रह्मेत्युपास्ते यावद्बलस्य

पक्षी। तृण वनस्पतियां। श्वापद। कीट पतंग चीटीपर्यंत [जगत्]। बलकरि लोक स्थित होवैहै॥ बलकूं उपासन कर! ऐसैं [क०] ॥ १ ॥

अर्थः—सो जो बलकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै। जितना बलका विषय है। तहां

होवैहै औ उत्थानकूं करता हुया गुरुनका अरु आचार्यका परिचरिता कहिये परिचरण जो शुश्रूषा ताका कर्ता होवैहै। परिचरण करता हुया उपसत्ता कहिये तिनके समीपगत। नाम अंतरंग। अर्थ यह जोः—प्रिय होवैहै औ उपसदन (सांनिध्यगमन)कूं करता हुया एकाग्रताकरि आचार्यका औ अन्य

गतं तत्रास्य यथाकामचारो भवति । यो बलं ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगवो बलाद्भूय इति? बलाद्वाव भूयोऽस्तीति ॥ तन्मे भगवान् ब्रवीत्विति? ॥ २ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्याष्टमः खण्डः ॥ ८ ॥

इसका यथाकामचार होवैहै । जो बलकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै ॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन्! बलतैं अधिकतर [क्या] है? ऐसैं [पूं०] ॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः—बलतैं अधिक है हीं! ऐसैं [क०]॥ ॥नारद उवाचः—सो मेरेअर्थ भगवान् कहहू? ऐसैं [पूं०] ॥ २ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपाठ०अष्टमः खंडः८

उपदेष्टा गुरुका द्रष्टा होवैहै । तातैं तिनकरि उक्तका श्रोता होवैहै । तातैं "यह इनोंनैं कहा । सो ऐसैं संभवैहै" ऐसी उपपत्ति (युक्ति) तैं मंता होवैहै औ मनन करताहुया "ऐसैंहीं

अथ सप्तमप्रपाठकस्य नवमः खण्डः ९

अन्नं वाव बलाद्भूयस्तस्माद्यद्यपि द-

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपा॰नवमः खंडः ॥ ९ ॥

अर्थः–सनत्कुमार उवाचः–अन्नहीं बलतैं अधिकतर है ॥ तातैं यद्यपि दशरात्रि

यह है" ऐसैं बोद्धा होवैहै । तातैं ऐसैं निश्चय करिके तिनोंकरि उक्त अर्थका कर्ता (अनुष्ठाता) होवैहै । फेर विज्ञाता । अर्थ यह जोः– अनुष्ठानके फलके अनुभवका कर्ता होवैहै ॥ किंवा[१०६]:–बलका माहात्म्यः–बलकरिहीं पृथिवी स्थित होवैहै । इत्यादिवाक्य सरल अर्थवाला है ॥ १ ॥ २ ॥

इति श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठकस्याष्टमः खंडः ॥ ८ ॥
अथ श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठकस्य नवमः खंडः ९

बलतैं अन्नकी अधिकतरता २

टीकाः–सनत्कुमार उवाचः–अन्नहीं ब-

---

१०६ इस हेतुतैं बी बलकी अधिकतरता माननेकूं योग्य है । ऐसैं कहैहैं ॥

इति श्री॰सप्तमप्रपाठकगताष्टमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ८ ॥

शरात्रीर्नाश्नीयाद्यद्यु ह जीवेदथवाऽद्र-
ष्टाऽश्रोताऽमन्ताऽबोद्धाऽकर्त्ताऽविज्ञाता

भोजनकूं न करै। अथवा जब जीवै। अद्रष्टा
अश्रोता अमंता अबोद्धा अकर्त्ता अविज्ञाता

लतैं अधिकतर है। बलका हेतु होनेतैं ॥ ॥
अन्नकूं बलकी हेतुता कैसैं है? यह कहियेहैः—
जातैं बलका कारण अन्नहै तातैं यद्यपि कोई-
कवी दशरात्रि भोजनकूं नकरै। सो अन्नके
उपयोगरूप निमित्तवाले बलकी हानिकरि म-
रताहै ॥ अथवा जब सो नहीं मरताहै औ
किसी प्रकारसैं बी जीवै। जातैं मासपर्यंतबी
नहीं भोजनँ करनेवाले जीवते देखियेहैं। तब

अथ श्री॰सप्तमप्रपाठकगतनवमखंडस्य टिप्पणम् ९

१०७ इहां अथवा जब सो भोजनकूं करता हुयाबी किसी प्रकारसैं जीवै। तब जीवता हुयाबी सो अद्रष्टा है ऐसैं संबंध है॥ तहां भोजनराहितका जीवन कैसैं होवै है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

भवत्यथाऽन्नस्याऽऽये द्रष्टा भवति। श्रोता भवति। मन्ता भवति। बोद्धा भवति। कर्त्ता भवति॥ विज्ञाता भवत्यन्नमुपास्वेति ॥ १ ॥

होवैहै ॥ जब अन्नका आयी(प्राप्तिवाला) होवै तब द्रष्टा होवैहै। श्रोता होवैहै। मंता होवैहै। बोद्धा होवैहै। कर्त्ता होवैहै। विज्ञाता होवैहै ॥ अन्नकूं उपासन कर! ऐसैं [क०]१

सो जीवता हुयाबी गुरुकाबी अद्दष्टा होवैहै। ताहीतैं भोजन नकरता हुवा अश्रोता। इत्यादि पूर्वतैं विपरीत सर्व होवैहै। [१०८] औ जब बहुत दिन भोजनरहित होयके दर्शनादिक्रियाओंविषै असमर्थ हुया अन्नका आयी होवै। आगमन जो आय। अर्थ यह जोः—अन्नकी प्राप्ति। सो जिसकूं विद्यमान है सो अन्नका आयी है [इहां

---

१०८ अन्नके उपयोगके अभावहुये बलकी हानि होवैहै। ऐसैं व्यतिरेककूं कहिके। ताके उपयोगके हुये बल होवैहै। ऐसैं अन्वयकूं कहैहैं ॥

स योऽन्नं ब्रह्मेत्युपास्तेऽन्नवतो वै स

अर्थः–सो जो अन्नकूं "ब्रह्म है" ऐसैं

"आँये"[109] ऐसा यह पद वर्णके फेरफारकरि है] औ जब "अन्नस्याऽऽयै (अन्नके आयीअर्थ)" ऐसा बी पाठ होवै। तब बी यहहीं अर्थ है। काहेतैं द्रष्टा[110]। इत्यादि कार्यके श्रवणतैं॥ जौंतैं[111] अन्नके उपयोगके हुये दर्शन आदिकका सामर्थ्य देखियेहै ताकी अप्राप्तिके हुये नहीं। यातैं अन्नकूं उपासना कर! ऐसैं [क०]॥ १॥

टीकाः–औ फलः–सो अन्नवाले (बहुत अ-

---

१०९ "जब अन्नके आय (लाभ)केहुये" यहबी पाठहै। तहां अन्नके आयकेहुये। ऐसा यहहीं पद अन्नकी प्राप्तिपर होनेकरि व्याख्यान करनेकूं होग्य है। काहेतैं "आये" इस पदविषै एकारकूं "आयी" ऐसैं ईकाररूप होनेकरि पलटायके वर्णके फेरफारके अंगीकारतैं। ऐसैं कहैहैं॥

११० "द्रष्टा श्रोता" इत्यादि अन्नके कार्यके श्रवणतैं बी पाठांतर (दूसरा पाठ) जो है सो अन्नकी प्राप्तिपर होनेकरि व्याख्यान करनेकूं योग्य है। ऐसैं कहैहैं॥

१११ सो (द्रष्टापना आदिक) अन्नका कार्य कैसैं है? यह

लोकान् पानवतोऽभिसिद्धयति। यावद-न्नस्य गतं तत्रास्य यथाकामचारो भ-वति योऽन्नं ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगवोऽ-न्नाद्भूय इत्यन्नाद्वाव भूयोऽस्तीति॥ तन्मे

उपासताहै। सो अन्नवाले अरु पानवाले लोकनकूं पावताहै। जितना अन्नका विषय है तहां इसका यथाकामचार होवैहै। जो अन्नकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन्! अन्नतैं अधिक-तर [क्या०]है? ऐसैं [पूं०]॥ ॥ सनत्कु-मार उवाचः—अन्नतैं अधिक है हीं! ऐसैं [क०]॥ ॥ नारद उवाचः—सो मेरेअर्थ

न्नवाले) औ पानवाले (बहुत उदकवाले) कहिये अन्न अरु पानके नित्यसंबंधवाले लोक-

---

आशंकाकरिकै। अन्वय अरु व्यतिरेककूं दिखावैहैं॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतनवमखंडस्य टिप्पणम्॥ ९॥

भगवान् ब्रवीत्विति ? ॥ २ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य नवमः खण्डः ॥ ९ ॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्य दशमः खंडः १०

आपो वावान्नाद्भूयस्यस्तस्माद्यदा सुवृ-

भगवान् कहहु ! ऐसैं [पूं०] ॥ २ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपा०नवमःखंडः॥९॥

अथ श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपाठकस्य दशमः खंडः १०

अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—जलहीं अन्नतैं अधिकतर हैं ॥ तातैं जब सुवृष्टि नहीं

नकूं अभिसिद्ध (प्राप्त) होवैहै । अन्य समान है ॥ २ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठकस्य नवमः खंडः ॥९॥

अथ श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठकस्य दशमःखंडः१०

अन्नतैं जलकी अधिकतरता २

टीकाः—सनत्कुमार उवाचः—जलहीं अन्नतैं अधिकतर हैं । अन्नके कारण होनेतैं ॥

ष्टिर्न भवति व्याधीयन्ते प्राणा अन्नं कनीयो भविष्यतीत्यथ यदा सुवृष्टिर्भवत्यानन्दिनः प्राणा भवन्त्यन्नं बहु भवि-

---

होवैहै तब प्राण (प्राणी) व्याधियुक्त होवैहैं:-अन्न अल्पतर होवैगा यातैं। औ जब सुवृष्टि होवैहै तब प्राण (प्राणी) आनंदी होवै हैं:-अन्न बहु होवैगा यातैं ॥

---

[११२] जौतैं ऐसें है तातैं जब (जिस कालविषै) सुवृष्टि कहिये सस्य (अन्नवृक्ष)नकी हेतुरूप शोभन वृष्टि नहीं होवैहै। तब प्राण (प्राणी) व्याधियुक्त (दुःखी) होवैहैं ॥ ॥ किसनिमित्त? यह कहैहैं:-इस संवत्सरविषै हमारेअर्थ अन्न अल्पतर (अत्यंत थोरा) होवैगा यातैं ॥ फेर जब सुवृष्टि होवैहै। तब प्राण (प्राणी)

अथ श्री०सप्तमप्रपाठकगतदशमखंडस्य टिप्प० १०

११२ जलोंकूं कारण होनेकरि तिनकी अन्नतैं अधिकतरताकूं अन्वय अरु व्यतिरेककरि साधते हैं ॥

ष्यतीत्याप एवेमा मूर्त्ता येयं पृथिवी यदन्तरिक्षं यद् द्यौर्यत्पर्वता यद्देवमनुष्या यत्पशवश्च वयाᳬंसि च तृणवनस्पतयः श्वापदान्याकीटपतङ्गपिपीलक-

---

जलहीं ये मूर्त्त हैं:-जो यह पृथिवी है। जो अंतरिक्ष है। जो स्वर्ग है। जे पर्वत हैं। जे देवमनुष्य हैं। औ जे पशु हैं। अरु पक्षी हैं। तृणवनस्पतियांहैं। श्वापदहैं। कीट पतंग पिपीलिकापर्यंत है। जलहीं ये

आनंदी कहिये सुखी (हर्षयुक्त) होवैहैं:-अन्न बहुत होवैगा यातैं। [११३]मूर्त्तरूप अन्नकूं जलतैं संभववाले होनेतैं जलहीं ये मूर्त्त हैं कहिये मूर्त्तभेदके आकारकरि परिणामकूं पाये हैं यातैं

---

११३ औ जलोंकूं सर्व जगत्का स्वरूप होनेतैं तिनकी अन्नतैं अधिकतरता उचित है। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां दधि दुग्धआदिककी आहुतिका परिणाम होनेतैं अंतरिक्षआदिकका जलतैं संभवपना निश्चयकरनेकूं योग्य है ॥

माप एवेमा मूर्त्ता अप उपास्स्वेति ॥१॥

स योऽपो ब्रह्मेत्युपास्त आप्नोति सर्वान् कामाꣳस्तृप्तिमान् भवति। याव-

---

मूर्त्त हैं ॥ जलोंकूं उपासन कर! ऐसैं [क०] ॥ १ ॥

अर्थः—सो जो जलोंकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै। [सो] सर्वकामोंकूं पावताहै। तृप्तिमान् होवैहै। जितना जलोंका विषय है

मूर्त्त हैं:—जो यह पृथिवी। जो अंतरिक्ष। इत्यादि[११४] ॥ जलहीं ये मूर्त्त हैं यातें जलकूं उपासन कर! ऐसैं [क०] ॥ १ ॥

टीकाः—फलः—सो जो जलोंकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै। सो सर्व कामोंकूं। अर्थ यह जोः—कामना करनेकूं योग्य मूर्त्तिमान् विषयनकूं पावताहै औ तृप्तिकूं जलतैं संभववा-

---

११४ जलोंकी सर्व मूर्त्तद्रव्यस्वरूपताकूं उपसंहार करैहैं॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतदशमखंडस्य टिप्पणम् ॥ १० ॥

दपां गतं तत्रास्य यथाकामचारो भवति योऽपो ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगवोऽद्भ्यो भूय इत्यद्भ्यो वाव भूयोऽस्तीति॥ तन्मे भगवान् ब्रवीत्विति? ॥ २ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य दशमः खंडः ॥१०॥

तहां इसका यथाकामचार होवैहै । जो जलोंकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै ॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन् ! जलोंतैं अधिकतर क्याहै ? ऐसैं [पूं०] ॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः—जलोंतैं अधिकतर हैहीं ! ऐसैं [क०] ॥ ॥ नारद उवाचः—सो मेरेअर्थ भगवान् कहहू ? ऐसैं [पूं०]॥२॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपा०दशमःखंडः१०

ली होनेतैं जलके उपासनतैं तृप्तिमान् होवैहै । अन्य समान है ॥ २ ॥

इति श्री० भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठ० दशमः खंडः ॥१०॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्यैकादशः खंडः ११

तेजो वा अद्भ्यो भूयस्तद्वा एतद्वायुमुपगृह्याकाशमभितपति। तदाहुर्निशो-

---

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपाठकस्यैकादशः खंडः ११

अर्थः–सनत्कुमार उवाचः–तेजहीं जलोंतैं अधिकतर है ॥ सोई यह वायुकूं निग्रहकरिके आकाशके प्रति अभिव्याप्त हुया तपावताहै। तब "शोककूं करता है

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठ॰एकादशः खंडः ११

जलतैं तेजकी अधिकतरता २

टीकाः–सनत्कुमार उवाचः–तेजहीं जलोंतैं अधिकतर है। तेजकूं जलका कारण होनेतैं ॥ ॥ तेजकूं जलकी कारणता कैसैं है? यह कहैहैं:–जातैं तेज जलका योनि है। तातैं सोई यह तेज वायुकूं ग्रहणकरिके (निरोध करिके) कहिये वायुकूं स्वरूपसैं निश्चलकी न्यांई करिके आकाशकेप्रति च्यारी

चति नितपति वर्षिष्यति वा इति। तेज
एव तत्पूर्वं दर्शयित्वाऽथापः सृजते त-
देतदूर्द्ध्वाभिश्च तिरश्चीभिश्च विद्युद्भिरा-
ह्रादाश्चरन्ति। तस्मादाहुर्विद्योतते स्तन-

तपावताहै वर्षाकूं करैगा प्रसिद्ध है ऐसें
कहतेहैं ॥ सो तेजहीं पूर्व [आपकूं] दि-
खायके अनंतर जलोंकूं स्त्रजताहै औ सो
यहः–उच्च अरु टेढी बिजलीयोंकरि आह्ला-
द (गर्जनरूप शब्द) विचरतेहैं। तातैं
"बिजलीकूं करताहै गर्जताहै वर्षाकूं करैगा

ओरतैं व्याप्त हुया जब तपावताहै तब नि-
शोचताहै सामान्यकरि जगतकूं सम्यक् तप-
ताहै देहनकूं तपावताहै। वा यातैं वर्षाकूं
करैगा। ऐसें लौकिकजन कहतेहैं। ११५ जौतैं लोक-

अथ श्री०सप्तमप्रपाठकगतैकादशखंडस्य टि० ११

११५ इहां इति (ऐसें) शब्द जो है सो " तब कहतेहैं "
इस पदके साथि संबंधकूं पावताहै औ मूलगत " वै " श-
ब्दके अर्थकूं दिखावैहैं ॥

यति वर्षिष्यति वा इति । तेज एव तत्पूर्वं दर्शयित्वाऽथापः सृजते । तेज उपास्वेति ॥ १ ॥

प्रसिद्ध है" ऐसैं कहतेहैं ॥ सो तेजहीं पूर्व [आपकूं] दिखायके अनंतर जलोंकूं स्रजताहै ॥ तेजकूं उपासनकर! ऐसैं [क०]॥१॥

विषै उद्योगयुक्त कार्यकूं देखनेवालेका कार्य होवैगा। ऐसा विज्ञान प्रसिद्ध है ॥ [116] सो तेजहीं पूर्व आपकूं उद्भूत दिखायके अनंतर जलोंकूं स्रजताहै। यातैं जलका स्रष्टा होनेतैं तेज जलोंतैं अधिकतर है ॥ [117] किंवाँः—अन्यबी है किः—सो यह तेजहीं स्तनयित्नु (बिजली)रूपसैं वर्षाका हेतु होवैहै ॥ ॥ कैसैं किः—

---

११६ जल अरु तेजके उक्त कार्यकारणभावकूं आश्रय करिके फलितकूं कहैहैं ॥

११७ जल अरु तेजके अन्यप्रकारसैं कार्यकारणभावकूं दिखावै हैं ॥

स यस्तेजो ब्रह्मेत्युपास्ते तेजस्वी वै स तेजस्वतो लोकान् भास्वतोऽपहतत-

अर्थः—सो जो तेजकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै। सो तेजस्वी होवैहै औ तेजवाले भास्वान् अपहततमवाले लोकनकूं

[118] ऊर्ध्व (ऊर्ध्वगामिनी) औ तिरश्ची (तिर्यक्गत) बिजलियोंकेसाथि आल्हाद (स्तननरूप शब्द) विचरते हैं। तातैं ताके दर्शनतैं लौकिकजन कहते हैं किः—विद्योतन (बिजली)कूं करताहै स्तनन (गर्जन)कूं करताहै। वर्षाकूं करैगा ऐसैं। इत्यादिवाक्य उक्त अर्थवाला है॥ [119] यातैं तेजकूं उपासनाकर! ऐसैं [क०]॥ १॥

टीकाः—तिस तेजके उपासनका फलः— तेजस्वीहीं होवैहै। औ तेजवालेहीं अरु भा-

११८ ताहीकूं उपपादन करैहैं॥

११९ तेजकी अधिकताके फलकूं कहैहैं॥

मस्कानभिसिद्ध्यति। यावत्तेजसो गतं तत्रास्य यथाकामचारो भवति यस्तेजो ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगवस्तेजसो भूय इति? तेजसो वाव भूयोऽस्तीति ॥ तन्मे भगवान् ब्रवीत्विति? ॥ २ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्यैकादशः खंडः ॥ ११ ॥

पावताहै। जितना तेजका विषय है तहां इसका यथाकामचार होवैहै। जो तेजकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै ॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन्! तेजतैं अधिकतर [क्या] है? ऐसैं [पूं०] ॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः—तेजतैं अधिकतर हैहीं! ऐसैं [क०] ॥ ॥ नारद उवाचः—सो मेरेअर्थ भगवान् कहहू? ऐसैं [पूं०] ॥ २ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्र०एकादशः खंडः ११

स्वान् (प्रकाशवाले) अरु अपहततमस्क (१२०बां-

---

१२० तमः शब्दके अर्थकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:—

अथ सप्तमप्रपाठकस्य द्वादशःखंडः १२
आकाशो वाव तेजसो भूयानाकाशे

अथ श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपा०द्वादशः खंडः ॥ १२॥
अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—आकाशहीं तेजतैं अधिकतर है ॥ आकाशविषैहीं सूर्य

ह्य अरु आध्यात्मिक अज्ञानादिरूप [121] दूरी कियाहै तम [जिनोंतैं ऐसैं] लोकनकूं अभिसिद्ध (प्राप्त) होवैहै ॥ अन्य वाक्य सरलअर्थवाला है ॥ २ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठकस्यैकादशःखंडः॥११॥
अथ श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठ० द्वादशः खंडः १२
तेजतैं आकाशकी अधिकतरता २
टीकाः—सनत्कुमार उवाचः—आकाशहीं

बाह्य तम (अंधकार) रात्रिका प्रसिद्ध है औ आध्यात्मिक (आंतर) तम अज्ञान अरु रागादिरूप है । सो दोनूं " अपहततमस्कान् " (दूरी कियाहै तम जिनोंतैं) इस वाक्यविषै तमःशब्दका वाच्य है ॥

१२१ अपहत (अपनीत) शब्दके अर्थकूं कहैहैं ॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतैकादशखंडस्य टिप्पणम् ॥ ११ ॥

वै सूर्याचन्द्रमसावुभौ विद्युन्नक्षत्राण्यग्नि-
राकाशेनाऽऽह्वयत्याकाशेन शृणोत्या-

अरु चंद्रमा दोनूं औ विद्युत् नक्षत्र अरु
अग्नि हैं ॥ आकाशकरि आह्वानकूं करैहै।
आकाशकरि सुनताहै। आकाशकरि प्रति-

तेजतैं अधिकतर है। आकाशकूं वायुसहित
तेजका कारण होनेतैं। "वायुकूं निग्रह करिके"
ऐसैं तेजकरि सहित वायु[122] पूर्व कहाहै। यातैं
इहां तेजतैं पृथक् नहीं कहा ॥ [123]जातैं लोकविषै
कार्यतैं कारण अधिक देख्या है। जैसैं घटादि-
कनतैं मृत्तिका अधिक है। तैसैं आकाश वायु-
सहित तेजका कारण है। यातैं तिसतैं अधिकतर

अथ श्री०सप्तमप्रपाठकगतद्वादशखंडस्य टि० १२

१२२ वायुतैं आकाश अधिकतर है ॥ ऐसैं कहने योग्यके हुये तेजतैं अधिकतर है। यह कैसैं कहा? यातैं कहैहैं ॥

१२३ कारणताके हुये बी आकाशकी वायुसहित तेजतैं कैसैं अधिकतरता है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

काशेन प्रतिशृणोत्याकाशे रमत आका-
शे न रमत आकाशे जायत आकाश-

श्रवणकूं करताहै ॥ आकाशविषै रमताहै।
आकाशविषै नहीं रमताहै । आकाशविषै
जन्मताहै । आकाशकूं अभिलक्षकरिके ज-

है ॥ ॥ [124] कैसैं कि ? आकाशविषै प्रसिद्ध सूर्य
चंद्र दोनूं तेजरूप हैं औ विद्युत् नक्षत्र अरु
अग्नि तेजरूप हुये आकाशके भीतर हैं औ जो
जिसके भीतरवर्त्ति है सो अल्प है । इतर अ-
धिक है ॥ [125] किंवा:—आकाशकरि अन्य अन्यकूं
आव्हान करैहै (बुलावताहै) औ आहूत (बु-
लाया) हुया इतर आकाशकरि सुनताहै औ
अन्यकरि उक्त शब्दकूं अन्य आकाशकरि
प्रतिश्रवण करैहै ॥ औ सर्व आकाशविषै

---

१२४ वायुसहित तेजतैं आकाशकी अधिकतरताकूं प्रश्न-
पूर्वक प्रकारांतरकरि दिखावैहैं ॥

१२५ यातैं बी आकाशकी अधिकतरता है । ऐसैं कहैहैं ॥

मभिजायत आकाशमुपास्स्वेति ॥ १ ॥

स य आकाशं ब्रह्मेत्युपास्त आका-

जन्मताहै ॥ आकाशकूं उपासनकर! ऐसैं [क०] ॥ १ ॥

अर्थः–सो जो आकाशकूं"ब्रह्म है" ऐसैं

परस्पर रमण (क्रीडा)कूं करताहै। तैसैं आकाशविषै वधू आदिकके वियोगके हुये रमणकूं नहीं करताहै। आकाशविषै जन्मकूं पावताहै कहिये मूर्तद्रव्यकरि निरोधकूं पावता नहीं। तैसैं आकाशकूं अभिलक्षकरिके अंकुरादि उपजताहै। प्रतिलोम (उलटा) नहीं ॥ [१२६] यातैं आकाशकूं उपासन कर ॥ १ ॥

टीकाः–फलकूं श्रवण करः–सो विद्वान् आकाशवाले कहिये विस्तारयुक्त अरु प्रका-

---

१२६ ता (आकाश)की अधिकतरताके फलकूं कहैहैं ॥

शवतो वै स लोकान् प्रकाशवतोऽसम्बाधानुरुगायवतोऽभिसिद्ध्यति यावदाकाशस्य गतं तत्रास्य यथाकामचारो भवति य आकाशं ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगव आ-

---

उपासताहै । सो आकाशवाले प्रकाशवाले संबाधरहित विस्तीर्णगतिवाले लोकनकूं पावताहै। जितना आकाशका विषय है तहां इसका यथाकामचार होवैहै । जो आकाशकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै ॥ ॥ नारद उवाचः–हे भगवन् ! आकाशतैं अधिकतर

शवाले कहिये [१२७] प्रकाश अरु अप्रकाशके नित्यसंबंधतैं प्रकाशवाले अरु असंबाध कहिये संबाधन जो संबाध (अन्योऽन्यपीडा) तिसतैं रहित अरु उरुगायवाले कहिये विस्तीर्णगतिवाले (विस्तीर्णप्रचारवाले) लोकनकूं पावता-

---

१२७ आकाशके उपासककूं प्रकाशकरि व्याप्त लोकनकी प्राप्ति कैसैं होवैहै ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

इति श्री॰सप्तमप्रपाठकगतद्वादशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १२ ॥

काशाद्भूय इत्याकाशाद्वाव भूयोऽस्तीति॥तन्मे भगवान् ब्रवीत्विति ?॥ २ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य द्वादशः खण्डः ॥ १२ ॥

अथ सप्तमप्रपाठ०त्रयोदशः खंडः॥१३॥

स्मरो वा आकाशाद्भूयस्तस्माद्यद्यपि

[क्या०] है ? ऐसैं [पूं०]॥ ॥सनत्कुमार उवाचः—आकाशतैं अधिकतर हैही ! ऐसैं [क०] ॥ ॥ नारद उवाचः—सो भगवान् मेरेअर्थ कहहू ? ऐसैं [पूं०] ॥ २॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपा०द्वादशःखंडः१२

अथ श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपा०त्रयोदशःखंडः ॥१३॥

अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—स्मर (स्म-

है ॥ जितना आकाशका गोचर है । इत्यादिवाक्य पूर्व उक्त अर्थवाला है ॥ २ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठकस्य द्वादशः खंडः॥१२॥

अथ श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठ०त्रयोदशः खंडः १३

आकाशतैं स्मरणकी अधिकतरता २

टीकाः—सनत्कुमार उवाचः—स्मर (स्मर-

बहव आसीरन्न स्मरन्तो नैव ते कञ्चन शृणुयुर्न मन्वीरन्न विजानीरन् । यदा वाव ते स्मरेयुरथ शृणुयुरथ मन्वीरन्नथ

रण)हीं आकाशतैं अधिकतर है ॥ तातैं यद्यपि बहुत नहीं स्मरण करतेहुये बैठे होवैं । वे किसीकूंबी सुनते नहीं । मनन करते नहीं । जानते नहीं ॥ जबहीं वे स्मरण

ण)हीं आकाशतैं अधिकतर है । स्मरणरूप अंतःकरणका धर्म स्मर है । सो आकाशतैं अधिकतर है । ऐसैं लिंग[१२८]के फेरफारकरि देखनेकूं योग्य है ॥ जातैं स्मरणकर्ताकूं [१२९]स्मरणके होते आकाशादि सर्व अर्थवाला होवैहै । स्मरणवान्-

---

अथ श्री० सप्तमप्रपाठकगतत्रयोदशखंडस्य टि० १३

१२८ "भूयः" ऐसैं श्रुतिकरि सुन्या जो नपुंसक लिंग । सो "भूयान्" ऐसैं पुल्लिंगपनैंकरि कैसैं व्याख्यान किया ? यह आशंका करिके । श्रुतिगत "स्मरः" ऐसैं पुल्लिंगके उपक्रमकूं आश्रयकरिके आचार्य कहैहैं ॥

१२९ फेर स्मरणकी आकाशतैं अधिकतरता कैसैं है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

विजानीरन्। स्मरेण वै पुत्रान्विजानाति स्मरेण पशून् स्मरमुपास्स्वेति ॥ १ ॥

स यः स्मरं ब्रह्मेत्युपास्ते यावत् स्म-

करतेहैं तब सुनतेहैं । तब मनन करतेहैं। तब जानतेहैं ॥ स्मरणकरिहीं पुत्रनकूं जानताहै। स्मरणकरि पशुनकूं ॥ स्मर (स्मरण)कूं उपासनकर! ऐसैं [क०] ॥ १ ॥

अर्थः—सो जो स्मरणकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै। जितना स्मरणका विषय है

का भोग्य होनेतैं। औ [130] स्मरणके नहोते तो सत् (विद्यमान हुया वस्तु)बी असत्हीं है। सत्व (सत्तारूप)कार्यके अभावतैं ॥ [131] स्मृतिके अभावके हुये आकाशआदिकनका सत्व (सद्भाव)बी जाननेकूं शक्य नहीं है। यातैं स्मरणकी

---

१३० अन्वयकूं कहिके व्यतिरेककूं दिखावैहैं ॥

१३१ आकाशआदिकके स्मरणके अभावके हुये बी सत्वकूं अंगीकार करिके भोग्यताके अभावतैं ताका व्यर्थपना कहा। अब असरणके हुये तिनका सत्वहीं नहीं है। ऐसैं कहैहैं ॥

रस्य गतं तत्रास्य यथाकामचारो भ-
वति यः स्मरं ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगवः

तहां इसका यथाकामचार होवैहै । जो
स्मरणकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै ॥ ॥
नारद उवाचः—हे भगवन् ! स्मरणतैं अधि-

आकाशतैं अधिकतरता है ॥ [132]जातैं लोकविषै
स्मरणकी अधिकतरता देखियेहै तातैं यद्यपि
सम्यक् उदयकूं प्राप्त हुये बहुतपुरुष एक ठि-
काने बैठे होवैं वे तहां बैठे हुये जब परस्परके
भाषितकूंबी नहीं स्मरण करते हुये होवैं त-
ब वे किसीबी शब्दकूं नहीं सुनतेहैं । तैसैं
नहीं मनन करते हैं कहिये मनन करनेयोग्यकूं
जब स्मरण करै हैं तब मनन करैहैं । स्मृतिके
अभावतैं नहीं मनन करैहैं । तैसैं नहीं जानै

---

१३२ स्मरणकी अधिकताकूं अनुभवके अनुसारकरि सा-
धतेहैं ॥ इहां "हि" शब्दका अर्थ " जातैं " ऐसैं कहा ॥

स्मराद्भूय इति? स्मराद्वाव भूयोऽस्तीति॥ तन्मे भगवान् ब्रवीत्विति ? ॥ २ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य त्रयोदशः खण्डः ॥ १३॥

कतर [क्या०] है? ऐसैं [पूं०] ॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः—स्मरणतैं अधिकतर हैहीं! ऐसैं [क०] ॥ ॥ नारद उवाचः—सो मेरे-अर्थ भगवान् कहहू ? ऐसैं [पूं०] ॥ २ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्र०त्रयोदशः खंडः १३

हैं ॥ जबहीं[133] वे मंतव्यकूं विज्ञातव्यकूं अरु श्रोतव्यकूं स्मरण करैहैं तब सुनते हैं। तब मनन करतेहैं। तब जानते हैं ॥ तैसैं[134] स्मरणकरिहीं "मेरे ये पुत्र हैं" ऐसैं पुत्रनकूं जानताहै। स्मरणकरि पशुनकूं जानता है।

---

१३३ स्मरणके अभावके हुये श्रवणादिकके अभावरूप व्यतिरेककूं कहिके। ता (स्मरण)के भावके हुये तिन (श्रवणादिकन)के भावरूप अन्वयकूं कहैहैं ॥

१३४ यातैं बी स्मरणकी अधिकता है। ऐसैं कहैहैं ॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्य चतुर्दशःखंडः १४

आशा वाव स्मराद्भूयस्याशेद्धो वै

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपा॰चतुर्दशः खंडः॥१४॥

अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—आशाहीं स्मरणतैं अधिकतर है ॥ आशाकरि वर्द्धि-

---

[135]यातैं अधिकतर होनेतैं स्मर (स्मरण)कूं उपासन कर ! ऐसैं [क॰] अन्यवाक्य उक्त अर्थवाला है ॥ १ ॥ २ ॥

इति श्री॰ भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठ॰त्रयोदशः खंडः॥१३॥

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठ॰चतुर्दशः खंडः १४

स्मरणतैं आशाकी अधिकतरता २

टीकाः—सनत्कुमार उवाचः—आशाहीं स्मरतैं अधिकतर है । अप्राप्तवस्तुकी आकांक्षा (अन्यतैं प्राप्त होनेकी इच्छा) आशा है । जाकूं आशा तृष्णा काम इन पर्यायोंकरि कह-

---

१३५ ता (स्मरण)की अधिकताके हुये फलितकूं कहैहैं ॥

इति श्री॰सप्तमप्रपाठकगतत्रयोदशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १३ ॥

स्मरो मन्त्रानधीते कर्म्माणि कुरुते पु-

त स्मररूप (स्मरणकरता)हुया मंत्रनकूं
अध्ययन करताहै । कर्मोंकूं करताहै औ

तेहैं। सो स्मरतैं अधिकतर है॥ ॥ कैसैं[१२६] किः—
जातैं अंतःकरणविषै स्थित आकाशकरि स्मरण
करनेयोग्यकूं स्मरण करताहै। आशाके विष-
यके रूपकूं स्मरण करता हुया यह पुरुष स्मर
होवैहै। यातैं आशेद्ध कहिये आशाकरि अ-
भिवर्द्धित हुया स्मरभूत पुरुष ऋक्आदिक
मंत्रनकूं स्मरण करता हुया अध्ययन कर-
ताहै औ अध्ययन करिके तिनके अर्थकूं औ
विधिनकूं ब्राह्मणोंतैं समजिके कर्मोंकूं तिनके
फलकी आशाकरिहीं करताहै औ कर्मके फ-
लभूत पुत्रनकूं अरु पशुनकूं आशाकरिहीं इ-

अथ श्री०सप्तमप्रपाठकगतचतुर्दशखंडस्य टि०॥१४॥

१२६ आशाकी अधिकतरताकूं आकांक्षाद्वारा व्युत्पादन करैहैं ॥ ॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतचतुर्दशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १४ ॥

त्राꣳश्च पशूꣳश्चेच्छत इमञ्च लोकममु-
ञ्चेच्छत आशामुपास्वेति ॥ १ ॥

पुत्रनकूं अरु पशुनकूं इच्छताहै औ इस-
लोककूं अरु उसलोककूं इच्छताहै ॥ आ-
शाकूं उपासनकर ! ऐसें [क०] ॥ १ ॥

च्छताहै (अभिवांछाकूं करताहै) अरु तिन-
के साधनोंकूं अनुष्ठान करताहै औ आशाकरि
अभिवर्द्धित हुयाहीं स्मरण करता हुया इस
लोककूं लोकसंग्रहके हेतुनकरि इच्छताहै औ
आशाकरि अभिवर्द्धित हुया स्मरण करता हुया
उस (स्वर्ग) लोककूं ताके साधनोंके अनुष्ठान-
करि इच्छता है ॥ यातैं आशारूप रशनाकरि
अवबद्ध जो विपरीत क्रमसैं स्मर अरु आका-
शसैं आदिलेके नामपर्यंत जगत् है सो प्रति-
प्राणि (प्राणी प्राणीके प्रति) चक्रीभूत है
यातैं आशाकी स्मरतैंबी अधिकतरता है । यातैं
आशाकूं उपासन कर ॥ १ ॥

स य आशां ब्रह्मेत्युपास्ते आशया-
ऽस्य सर्व्वे कामाः समृध्यन्त्यमोघा हा-
स्याशिषो भवन्ति यावदाशाया गतं
तत्रास्य यथाकामचारो भवति य आ-
शां ब्रह्मेत्युपास्तेऽस्ति भगव आशाया

अर्थः—सो जो आशाकूं "ब्रह्म है" ऐसैं
उपासताहै। आशाकरि इसके सर्व काम
समृद्धिकूं पावते हैं। इसकी आशिष अ-
मोघ होवैहैं। जितना आशाका विषय है
तहां इसका यथाकामचार होवैहै। जो
आशाकूं "ब्रह्म है" ऐसैं उपासताहै॥ ॥
नारद उवाचः—हे भगवन्! आशातैं अ-

टीकाः—जो तो आशाकूं "ब्रह्म है" ऐसैं
उपासताहै ताके फलकूं श्रवण करः—सदा उ-
पासित आशाकरि इस उपासकके सर्वकाम
समृद्धिकूं पावते हैं। इसकी आशिष (प्रा-

भूय इत्याशाया वाव भूयोऽस्तीति ॥ त-
न्मे भगवान् ब्रवीत्विति ? ॥ २ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य चतुर्दशः खण्डः ॥ १४ ॥

धिकतर [क्या] है ? ऐसें [पूं०] ॥ ॥ स-
नत्कुमार उवाचः–आशातें अधिकतर है
हीं ! ऐसैं [क०] ॥ ॥ नारद उवाचः–सो
मेरेअर्थ भगवान् कहहू ? ऐसैं [पूं०]॥२॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्र०चतुर्दशः खंडः१४

र्थना) सर्व अमोघ (सफल) होवै हैं । अ-
र्थ यहहै किः–जो प्रार्थितहै सो सर्व अवश्य
होवैहै ॥ जितना आशाका विषयहै । इ-
त्यादि पूर्वकी न्यांई है ॥ २ ॥

इति श्री० भाष्यभाषा० सप्तमप्रपाठकस्य चतुर्दशः खंडः१४

अथ सप्तमप्रपाठकस्य पंचदशः खंडः १५

प्राणो वा आशाया भूयान्यथा वा

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपाठ॰ पंचदशः खंडः १५

अर्थः–सनत्कुमार उवाचः–प्राणहीं आशातैं अधिकतर है ॥ जैसैं हीं अर [र-

---

अथश्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठकस्य पंचदशःखंडः१५

आशातैं प्राणकी अधिकतरता ४

टीकाः–सनत्कुमार उवाचः–नाँम[१३७] है उपक्रमविषै जिसके औ आशा है अंतविषै जिसके

अथ श्री॰सप्तमप्रपाठकगतपंचदशखंडस्य टि॰॥१५॥

१३७ प्राणकी सर्वास्पदताकरि अधिकताकूं कथन करैहैं॥ इहां प्रकृत श्रुतिके वशतैं सो (नाम) है उपक्रमविषै जिस जगत्के सो तैसा है औ पाठके क्रमकूंहीं आश्रयकरिके आशा अंतविषै जिसके है सो जगत् तैसा है। इस प्रकारसैं विग्रह है औ कार्यकारणभाव कहींक होनेवाला है अरु उपादान उपादेय (ग्रहण ग्राह्य) भावरूप निमित्तनैमित्तिकपना बी कहींक होनेवाला है औ उत्तरोत्तरकी अधिकताकरि। याका पूर्व पूर्व नामादिकतैं उत्तरोत्तर वाक्आदिककी अधिकताकरि। यह अर्थ है औ स्मृतिके निमित्त है सद्भाव जिसका सो तैसा है॥

अरा नाभौ समर्पिता एवमस्मिन् प्राणे सर्वꣳ समर्पितं ॥ प्राणः प्राणेन याति

थकी] नाभिविषै समर्पित हैं। ऐसैं इस प्राणविषै सर्व समर्पित है ॥ प्राणकरि

ऐसा औ कार्यकारणभावसैं अरु निमित्तनैमित्तिकभावसैं उत्तर उत्तर अधिकतरताकरि अवस्थित औ स्मृतिनिमित्तसद्भाववाला औ आशारूप रशनाके पाशोंकरि विपाशित (बद्ध) ऐसा जो सर्व जगत्। सो तंतुनकरि सर्वओरतैं [१३८] बिस (कमलनाल)की न्यांई जिस प्राणविषै समर्पितहै औ जिसं [१३९] सर्व ओरतैं व्यापी अरु अंतर्बहिर्गतसूत्रकरि सूत्रविषै मणिगणोंकीन्यांई

---

१३८ आशानामक रशनाके पाशोंकरि सर्व ओरतैं विपाशित है। इस अर्थविषै दृष्टांतकूं कहैहैं ॥ इहां बिसशब्द मृणाल (कमलनाल)कूं विषय करनेवाला है औ यथोक्त जगत् जिस (प्राण)विषै अर्पित है सो यह (प्राण) अधिकतर है। ऐसैं संबंध है ॥

१३९ सर्व जगत्के इसविषै अर्पितपनैकूंहीं दृष्टांतद्वारा स्पष्ट करैहैं ॥ इहां सर्वओरतैं व्यापी [करि] याहींका स्पष्टीकरण अंतर्बहिर्गतकरि। ऐसैं है ॥

प्राणः प्राणं ददाति प्राणाय ददाति।
प्राणो ह पिता प्राणो माता प्राणो भ्रा-

जाता है। प्राण प्राणकूं देताहै। प्राणअर्थ
देता है। प्राणहीं पिता है। प्राण माता

ग्रथित अरु विधृत (धारण किया)है। सो यह
प्राणहीं आशातैं अधिकतरहै॥ ॥ [140] ईसं
(प्राण)की अधिकतरता कैसैंहै? यह दृष्टांत-
करि ताकी अधिकतरताकूं समर्थन करते हुये
मुनि कहै हैं:—जैसैंहीं लोकविषै रथचक्रके अर
(काष्ठदंडविशेष) रथकी नाभिविषै समर्पित
(प्रोत)। अर्थ यह जोः—सम्यक् प्रवेशकूं प्रा-
प्तभये हैं। ऐसैं इस लिंगके संघातरूप [141] प्रज्ञास्व-

---

१४० प्राणकी आशातैं अधिकताकूं आकांक्षापूर्वक प्रति-
पादन करैहैं॥ इहां लिंग जे व्यष्टिसूक्ष्मशरीर तिनका संघात
जो समुदाय तिसरूप (समष्टिस्वरूप) प्राणविषै। यह अर्थ है॥

१४१ उपाधि अरु इसवाले (उपहित)की एकताकूं अभि-
प्रायकी विषय करिके विशेषण देतेहैं॥

ता प्राणः स्वसा प्राण आचार्य्यः प्राणो ब्राह्मणः ॥ १ ॥

है । प्राण भ्राता है । प्राण स्वसा (भगिनी) है । प्राण आचार्य है । प्राण ब्राह्मण है ॥ १ ॥

रूप दैहिक[142] (देहगत) मुख्य[143] जिसैं[144] प्राणविषै परादेवता नामरूपके व्याकरण (विस्पष्टकरने) अर्थ आदर्शआदिकविषै प्रतिबिंबकीन्यांई जीवस्वरूपकरि अनुप्रविष्ट है[145] औ जो (प्राण) महारा-

---

१४२ तिसींहीं अध्यात्म अधिभूत अरु अधिदैवरूप अवस्थानकूं सूचन करैहैं ॥

१४३ अन्य प्राणकूं निषेध करैहैं ॥ इहां यथोक्त इस प्राणविषै सर्व समर्पित है । ऐसैं उत्तरग्रंथविषै संबंधहै ॥

१४४ "प्रज्ञास्वरूप" जिसविषै ऐसैं प्राणकूं परमात्माकी उपाधिरूपता कही ताकूं उपपादन करैहैं ॥ इहां तिसविषै सर्व समर्पित है । ऐसैं पूर्वकी न्यांई संबंध है ॥

१४५ चक्षुआदिकके विद्यमान हुये मुख्य प्राणकूंहीं परमात्माका उपाधिपना क्यूं प्राप्त भया ? यह आशंका करिके कहै हैं ॥ ॥

जकीन्यांई ईश्वरका सर्वाधिकारीहै "किसके[१४६] उत्क्रांत हुये मैं उत्क्रांत होऊंगा वा किसके प्रतिष्ठित हुये मैं प्रतिष्ठित होऊंगा । ऐसैं सो प्राणकूं स्रजताभया" इस श्रुतितैं औ[१४७] जो छायाकी न्यांई ईश्वरकेप्रति अनुगत है "तहां[१४८] जैसैं रथके अरोंविषै नेमि अर्पितहै । नाभिविषै अर अर्पित हैं ॥ ऐसैंहीं ये भूतमात्रा प्रज्ञामात्राओंविषै अर्पित हैं । प्रज्ञामात्रा प्राणविषै अर्पित हैं । सो[१४९] यह प्राणहीं प्रज्ञात्मा है" ऐसी कौषी-

---

१४६ महाराजके सर्वाधिकारीकी न्यांई प्राणके ईश्वरके प्रति सर्वाधिकारीपनेविषै अन्य श्रुतिकूं प्रमाण करैहैं ॥

१४७ ईश्वरकेप्रति प्राणकेहीं उपाधिपनैविषै अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां बी पूर्वकी न्यांई अन्वय है ॥

१४८ प्राण छायाकी न्यांई ईश्वरकेप्रति अनुगमन करैहै । इस अर्थविषै अन्य श्रुतिकूं प्रमाण करैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:— भूतनकी मात्रा जे शब्दादिक अरु पृथिवीआदिक विषयहैं वे प्रज्ञाकी मात्राओंविषै कहिये शब्दादिकनके ज्ञानोंविषै वा तिन ज्ञानोंके जनक इंद्रियनविषै अर्पित हैं ॥

१४९ तिनोंका प्राणविषै अर्पितपना होहु । तथापि प्राणकी छायाकी न्यांई ईश्वरकेप्रति अनुगति कैसैं है? तहां कहैहैं ॥ इहां कौषीतकी शाखावाले ब्राह्मणोकी श्रुति है । यह

तकी शाखावाले ब्राह्मणोंकी श्रुति है ॥ [150]यातैं ऐसैं (यथोक्त) इसप्राणविषै यथोक्त सर्व जगत् समर्पित (स्थित)है ॥ [151]यातैं सो यह प्राण अपरतंत्र हुया प्राणकरि कहिये स्वशक्तिकरि जाताहै । अर्थ यह जोः—गमनादिक्रियाओंविषै याका सामर्थ्य जो है सो अन्यका किया नहींहै ॥ [152]सर्व क्रिया कारक अरु फलके भेदका समूह प्राणहींहै । प्राणतैं बहिर्भूत नहीं है । यह प्रकरणका अर्थहै ॥ [153]प्राण प्राणकूं दे-

शेष है औ प्राणकी यथोक्त विशेषणोंकरि विशिष्टता अतः (यातैं) शब्दका अर्थ है ॥

१५० व्याख्यानकिये भागकूं अनुवादकरिके अवशेषरहे अंश (भाग)कूं व्याख्यान करैहैं ॥

१५१ " प्राण प्राणकरि जाताहै " इस वाक्यके अर्थकूं कहैहैं ॥ इहां "यातैं" याका सर्वका आस्पद (स्थान) होनेतैं । यह अर्थ है ॥

१५२ " प्राण प्राणकरि जाता है " इस आदिवाले औ " प्राणहीं इन सर्व भूतनकूं " इस अंतवाले वाक्यके तात्पर्य रूप अर्थकूं संक्षेपकरिके कथन करैहैं ॥

१५३ दाता देय (दान) अरु संप्रदान (दानके ग्राहक) की प्राणसैं अभिन्नताकूं प्रकट करैहैं ॥ इहां " सो वी " ऐसैं दीयमान (दान) कहियेहै औ आप (दाता)कूं अरु संप्रदान

स यदि पितरं वा मातरं वा भ्रातरं वा स्वसारं वाऽऽचार्य्यं वा ब्राह्मणं वा कि-

---

अर्थः सो जब पिताकूं वा माताकूं वा भ्राताकूं वा स्वसाकूं वा आचार्यकूं वा ब्राह्मणकूं अनुचितकी न्यांई किंचित् [वचन]

ताहै। कहिये जाकूं देताहै सो स्वात्मभूतहीं है अरु जिसके अर्थ देताहै सोबी प्राणके अर्थहीं है॥ यातैं पिताआदिक नामवालाबी प्राणहीं है ॥ १ ॥

टीकाः—पिता[154]आदिक शब्दनकूं प्रसिद्ध अर्थके त्यागकरि प्राणविषयता (प्राणरूप अर्थवानता) कैसैं है? यह [155]कहियेहैः—पिताआदिक-

---

(प्रतिग्रहीता)कूं प्राणसैं अभिन्न होनेतैं "प्राणके अर्थहीं" ऐसैं कहा औ प्राणकी सर्वात्मता अतः (यातैं) शब्दका अर्थ है॥

१५४ प्रसिद्धि उल्लंघन करनेकूं योग्य नहीं है? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

१५५ अन्वय अरु व्यतिरेककरि पिताआदिक शब्दनकूं

ञ्चिद् भृशमिव प्रत्याह धिक्त्वाऽस्त्वीत्ये-
वैनमाहुः पितृहा वै त्वमसि मातृहा
वै त्वमसि भ्रातृहा वै त्वमसि स्वसृहा

केप्रति कहै। [तब] इसकूं कहते हैं किः-
तुजकूं धिक्कार होहू। तूं पितृहा हैं। तूं
मातृहा हैं। तूं भ्रातृहा हैं। तूं स्वसृहा हैं।

नविषै प्राणके होते पिताआदिक शब्दनके प्रयो-
गतैं औ ता (प्राण)की उत्क्रांतिके हुये प्रयोगके
अभावतैं॥ ॥[१५६] सो कैसैं है? यह कहै हैंः-सो
जो कोईकबी पिताआदिकनके मध्य तिस
अन्यतम (एक)कूं जब ताके अननुसारी-

प्राणरूपविषयवाले होनेतैं प्रसिद्धिका उल्लंघन नहीं है। ऐसैं सिद्धांती कहैहैं॥

१५६ अन्वय अरु व्यतिरेककूंहीं प्रश्नपूर्वक प्रकट करैहैं॥ इहां पिताआदिकनविषै प्राणके होते जो पिताआदि शब्दनका प्रयुज्यमानपना (उच्चारण) है औ अन्यथा अप्रयुज्यमानपना है सो "तत् (सो)" ऐसैं कहिये है औ त्वंकार आदिककरि युक्त। इस आदिपदकरि तिरस्कारका भेद ग्रहण करियेहै॥

वै त्वमस्याचार्य्यहा वै त्वमसि ब्राह्मणहा वै त्वमसीति ॥ २ ॥

अथ यद्यप्येनानुत्क्रान्तप्राणान् शू-

तूं आचार्यहा हैं । तूं ब्राह्मणहा हैं । ऐसैं ॥ २ ॥

अर्थः—जब त्यक्त प्राणवाले इनोंकूं य-

की न्यांई किंचित् त्वंकारादियुक्त वचनके प्रति कहै । तब इसकूं पार्श्वविषै स्थित विवेकी पुरुष कहतेहैं किः—तुजकूं धिक् होहू तुजकूं धिक्होहू ऐसैं । तूं पितृहा[१५७] हैं कहिये पिताका हंताहैं । इत्यादि ॥ २ ॥

टीकाः—अनंतर[१५८] उत्क्रांत प्राणवाले कहिये

---

१५७ पिताआदिकनविषै अप्रियवादीकेप्रति विवेकीनके धिक्कारके वचनविषै हेतुकूं कहैहैं ॥

१५८ प्राणके होते पिताआदिकनविषै पिताआदिक शब्दनका प्रयुज्यमानपना (प्रयोगका करना) है अरु ऐसैं अन्वयकूं कहिके । व्यतिरेककूं कहैहैं ॥ इहां समासकरिके कहिये पुंज

लेन समासं व्यतिसन्दहेन्नैवैनं ब्रूयुः पि-
तृहाऽसीति। न मातृहाऽसीति। न भ्रातृ-

द्यपि शूलकरि ढेरकीन्यांई करिके अवयव-
नकूं विभागकरिके दाह करै। [तब]इसकूं
पितृहा हैं ऐसें नहीं कहते हैं। मातृहा हैं

त्यक्त देहके नाथवाले इनोंकूं (पिताआदिककूं)
यद्यपि शूलकरि समास करिके (पुंजकी न्यांई
करिके) व्यत्ययकरिके (अवयवनकूं विभाग
करिके) सम्यक् दाहकूं करै। ऐसैंबी (तथापि)
अति क्रूर [159] समास व्यत्यासआदि प्रकारसैं दाह-

(ढेर)की न्यांई करिके औ व्यत्ययकरिके। याका अवयवनकूं विभाग करिके। यह अर्थ है औ यद्यपि। इस उपक्रमतैं "ऐसैं बी" यह पद "तथापि" इस अर्थविषै देखनेकूं योग्य है ॥

१५९ तिसीहीं अतिक्रूर कर्मकूं विशेषण देतेहैं ॥ इहां अवयवनका विभाग आदिशब्दका अर्थ है औ तिसके देहसैं संबद्ध। इस ठिकाने जो तत् (तिस) शब्द है सो क्रूरपिता आदिक विषयवाला है ॥ यद्यपि त्यक्त प्राणवाले देहनविषै बी पिताआदिकशब्द देख्याहै। तथापि यह तिस विषयविषै

हाऽसीति। न स्वसृहाऽसीति। नाचार्य्य-
हाऽसीति। न ब्राह्मणहाऽसीति ॥ ३ ॥
प्राणो ह्येवैतानि सर्वाणि भवति। स

ऐसैं नहीं। भ्रातृहा हैं ऐसैं नहीं। स्वसृहा
हैं ऐसैं नहीं। आचार्यहा हैं ऐसैं नहीं।
ब्राह्मणहा हैं ऐसैं नहीं [कहतेहैं] ॥ ३ ॥
अर्थः—प्राणहीं ये सर्व होवैहै। सोई यह

करनेरूप तिनके देहसंबंधीहीं कर्मकूं करनेवाले
इस (पुत्रादिक)कूं "तूं पितृहाहैं" इत्यादि न-
हीं कहते हैं। [160]तातैं अन्वय अरु व्यतिरेककरि
जानियेहै किः—इन पिताआदिक नामवालाबी
प्राणहीं है। ऐसैं ॥ ३ ॥

टीकाः—[161]तातैं प्राणहीं इन चल अरु स्थिर

मुख्य नहीं है। काहेतैं दाहादि क्रूरकर्मके अनुष्ठानके हुये बी
शिष्टपुरुषनकरि कृत निंदाके अदर्शनतैं। यह भाव है ॥

१६० उक्त अन्वयव्यतिरेकके फलकूं उपसंहार करैहैं ॥

१६१ प्राणकीहीं पिताआदिक संज्ञकताके हुये क्या हो-
वैहै? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

वा एष एवं पश्यन्नेवं मन्वान एवं वि-
जानन्नतिवादी भवति। तञ्चेद् ब्रूयुरति-

ऐसैं देखताहुया ऐसैं मनन करताहुया ऐसैं विशेषकरि जानताहुया अतिवादी होवैहै ॥ ताकूं जब कहैंकिः—"तूं अतिवादी

पिताआदिक सर्व होवैहै। सोई[162] यह प्राणवित्[163] ऐसैं (यथोक्त प्रकारसैं) देखता हुया कहिये फलतैं अनुभव करता हुया। ऐसैं मनन करताहुया कहिये युक्तियोंकरि चिंतन करता हुया। ऐसैं जानता हुया। अर्थ यह जोः— युक्तियोंकरि योजना करिके "ऐसैंहीं है" इस प्रकारसैं निश्चयकूं करता हुया ॥ जातैं मनन[164]

१६२ ऐसैं प्राणकी अधिकताकूं बोधनकरिके। ताके विज्ञानके फलकूं कहैहैं ॥ इहां प्राणवित् अतिवादी होवैहै। ऐसैं संबंध है ॥

१६३ प्राणवित्पना कैसैं है? इस अपेक्षाके हुये कहैहैं ॥ इहां सर्वात्मभाव जो है सो यथोक्तप्रकार है औ फलतैं अनुभव जो है सो स्वरूपभावकरि साक्षात्कार है ॥

१६४ ताके अनुदर्शनकरिहीं प्राणवित्पनैके सिद्धहुये

वाद्यसीत्यतिवाद्यस्मीति ब्रूयान्नापह्नुवीत ॥ ४ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य पंचदशः खण्डः ॥ १५ ॥

हैं" ऐसैं । "मैं अतिवादी हूं" ऐसैं कहै । कपटकरि छिपावै नहीं ॥ ४ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपा०पंचदशःखंडः१५

अरु विज्ञानकरि संभूत शास्त्रार्थ निश्चित देख्या होवैहै । यातैं ऐसैं देखता हुया अतिवादी होवैहै । अर्थ यह जोः—नामसैं आदिलेके आशापर्यंत जगतूकूं अतिक्रमण करिके वदनशील होवैहै ॥ ताकूं जब कहैंः—कहिये जब ऐसैं

मनन अरु विज्ञान क्यूं पृथक् उपन्यास करियेहैं ? तहां कहैहैं ॥ इहां उक्त अन्वय अरु व्यतिरेकनामक युक्तिसहित किये वाक्यतैं जो प्राणविषयक ज्ञान उपजताहै सो इहां विज्ञान विवक्षित होवैहै औ ताके फलका साक्षात्करण दर्शन है । यह भेद है औ मनन अरु विज्ञानविना दर्शनका असंभव अतः (यातैं) शब्दका अर्थ है औ ऐसैं । याका मननआदिकद्वारसैं । यह अर्थ है ॥

सर्वदा सर्व शब्दनकरि तिस अतिवादीकूं कहिये [165] नाँमसैं आदिलेके आशापर्यंत जगत्कूं अतिक्रमण करिके वर्त्तमान अरु "प्राणकूंहीं कहते हैं" ऐसैं देखनेवाले अतिवदनशील अरु "ब्रह्मासैं आदिलेके स्तंबपर्यंत प्रसिद्ध जगत्का प्राणरूप आत्मा मैं हूं" ऐसैं कहनेवाले अतिवादीकेप्रति जब केईक कहैं किः–"तूं अतिवादी हैं" ऐसैं। तब "बाढ (सत्य)मैं अतिवादी हूं" ऐसैं कहै। कपटकरि छुपावै नहीं ॥ [166] किसकारणतैंहीं यह कपटकरि छुपावै जातैं सर्वेश्वर प्राणके तांई "यह मैं हूं" ऐसैं आत्मभावकरि प्राप्तभया है ॥ ४ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठ०पंचदशः खंडः ॥१५॥

---

१६५ अतिवादीपनैकूं व्युत्पादन करैहैं ॥

१६६ "कपटकरि ढांपता (छिपावता) नहीं" ऐसैं उक्त अर्थकूं स्पष्ट करैहैं ॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतपंचदशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १५ ॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्य षोडशःखंडः १६

एष तु वा अतिवदति यः सत्येनातिवदति॥सोऽहं भगवः सत्येनातिवदा-

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपाठ॰षोडशः खंडः ॥१६॥

अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—यहहीं तो अतिवदनकूं करताहै जो सत्यकरि अतिवदनकूं करताहै॥ ॥नारद उवाचः—हे भगवन्!

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठ॰ षोडशः खंडः १६

सत्यहीं जाननेकूं योग्य है। यह उपदेश १

टीकाः—सो[१६७] यह नारद सर्वातिशय प्राणरूप स्वआत्माकूं सर्वात्मा सुनिके "यातैं पर नहीं है" ऐसैं जानिके उपराम होता भया। [१६८]पूर्वकी

अथ श्री॰सप्तमप्रपाठ॰षोडशखंडस्य टिप्पणम् १६

१६७ जातैं यह विद्वान् सर्वेश्वरकूं "मैं प्राण हूं" ऐसैं प्राप्तभया है। तातैं ढांपनेविषै हेतुके अभावतैं आपके अतिवादीपनैकूं ढांपता (छिपावता) नहीं है। इस अर्थविषै प्राणपर्यंत उपदेशकूं सुनिके नारदके तूष्णीभावविषै क्या कारण है? इस आशंकाके हुये कहैहैं॥

१६८ ताकी उपरति कैसैं जानी? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥ ॥

नीति? सत्यं त्वेव विजिज्ञासितव्यमि-
ति ॥ सत्यं भगवो विजिज्ञास इति ? ॥१॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य षोडशः खण्डः ॥ १६ ॥

सो मैं सत्यकरि अतिवदनकूं करूं ? ऐसें [पूंछताभया]॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः— सत्यहीं तो विशेषकरि जाननेकूं योग्य है ! ऐसें [क०]॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन् ! सत्यकूं विशेष करि जाननेकूं इच्छताहूं ? ऐसें [पूंछताभया] ॥ १ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपा०षोडशःखंडः १६

न्यांई "हे भगवन् ! प्राणतैं अधिकतर क्या है" ऐसें नहीं पूंछता भया ॥ जातैं तिसैं[१६९] ऐसें विकार अनृतरूप ब्रह्मके विज्ञानकरि परितुष्ट (सं-

---

१६९ तब उपेक्षाके प्राप्त हुये आचार्य आपहीं क्यूं बोधन करैहैं ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां "इस (परमात्मा)तैं प्राण उपजताहै" इस अन्य श्रुतितैं प्राणका विकाररूपताकरि अनृतपना "वाणीका आरंभण विकार नाममात्र है" ऐसें कहा तिस अनृतमय प्राणरूप ब्रह्मविषै जो विज्ञान है तिसकरि । यह अर्थ है ॥

तोषकूं प्राप्तभये) अकृतार्थ [१७०]परमार्थसत्यकरि अतिवादी आपकूं माननेवाले योग्य[१७१] शिष्यकूं मिथ्याग्रहविशेषतैं डिगावते हुये भगवान् सनत्कुमार कहतेभये॥ सनत्कुमार उवाचः- यह तो अतिवादकूं करैहै (अतिवादी है)जिसकूं मैं कहूंगा। प्राणवित् जो है सो परमार्थतैं अतिवादी नहीं है। [१७२]नामआदिककी अपेक्षावाला तो ता (प्राणवित्)का अतिवादीपना है॥ [१७३]परंतु जो भूमानामक सर्वकूं अतिक्रांत तत्वकूं परमार्थ सत्य जानताहै सो अतिवादी है॥ ॥ सो अतिवादी है ऐसा जातैं है यातैंहीं नारद-

---

१७० परितुष्टताके हुये अकृतार्थपना कैसैं है? यह आशंकाकरिके। मिथ्याज्ञानकरि युक्त होनेतैं है। ऐसैं कहैहैं॥

१७१ औ ता (नारद)कूं उपेक्षाकी योग्यता नहीं है। ऐसैं कहैहैं॥ इहां मिथ्याग्रहविशेष कहिये प्राणतैं पर (श्रेष्ठ) नहीं है ऐसा अभिमान॥

१७२ तब प्राणवित्का अतिवादीपना कैसैं कहा? तहां कहैहैं॥ ॥

१७३ तब परमार्थतैं अतिवादी कौंन है? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥ इहां सो अतिवादी है। ऐसा जातैं सनत्कुमारका अभिप्राय है याहीतैं [नारद] कहैहै। ऐसैं योजना है॥

मुनि कहैहै ॥ नारद उवाचः–यह तो निश्चयकरि अतिवादकूं करताहै । जो सत्यकरि कहिये परमार्थ सत्यका विज्ञानवान् होनेकरि अतिवादकूं करताहै ॥ हे भगवन् ! सो मैं तुह्मारेप्रति प्रपन्न (शरणागत) भया सत्यकरि अतिवदनकूं करूं । तैसैं मेरेकूं भगवान् योजना करहू । जैसैं मैं सत्यकरि अतिवादकूं करूं? यह अभिप्राय है ॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः– जब ऐसैं सत्यकरि अतिवाद करनेकूं इच्छता हैं तब सत्यहीं तो प्रथम विशेषकरि जिज्ञासितव्य (जाननेकूं योग्य) है ॥ ॥ ऐसें उक्तहुया नारद कहैहै ॥ नारद उवाचः–तथाऽस्तु[१७४] हे भगवन् ! तब तुह्मारेतें मैं सत्यकूं विशेषकरि जाननेकूं इच्छताहूं ? ऐसैं [पूं०]॥१॥

इति श्री० भाष्यभाषा० सप्तमप्रपाठ० षोडशः खंडः ॥१६॥

---

१७४ ननु नारदकूं अद्यापि सत्यका विज्ञान उत्पन्न भया नहीं "सत्यकरि अतिवादकूं करूं" इस प्रकारसैं कैसैं पूंछता है ? तहां कहैहैं ॥

इति श्री० सप्तमप्रपाठकगतषोडशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १६ ॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्य सप्तदशः खंडः १७

यदा वै विजानात्यथ सत्यं वदति

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपाठकस्य सप्तदशः खंडः १७

अर्थः–सनत्कुमार उवाचः–जबहीं [स-

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठ॰सप्तदशः खंडः १७

विज्ञानहीं जाननेकूं योग्य है। यह उपदेश १

टीकाः–सनत्कुमार उवाचः–जँबहीं[175] सत्यकूं परमार्थतैं जानताहैः–"यँहँ[176] परमार्थतैं सत्य है" ऐसैं। तातैं अनृतरूप विकारके समूह वाचारंभण (वाणीके आश्रय)कूं त्यागिके सर्व

अथ श्री॰सप्तमप्रपाठकगतसप्तदशखंडस्य टि॰ १७

१७५ "जबहीं जानता है" इत्यादिवाक्यकूं व्याख्यानकरते हुये सनत्कुमारमुनि उत्तरकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः– जब विश्व अनुगत सत्रूपतैं भिन्न असत्हीं होवै औ जब तो अभिन्न सत्मात्रहीं परमार्थ सत्य सिद्धहोवै। ऐसैं, परमार्थतैं सत्यकूं जबहीं जानताहै ॥

१७६ विज्ञानके प्रकारकूं आकारकरि दिखावैहैं ॥ इहां तातैं (तब) अनृतरूप विकारके समूहकूं त्यागिके सत्हीं सत्य है ऐसैं करिके जो कहताहै सो ताहीकूं कहताहै। ऐसैं योजना है औ सत्यके विज्ञानकी ताके वदन (सत्यके कथन)-केप्रति हेतुताके प्रकाशनअर्थ अथ शब्द है ॥

विज्ञानहीं जाननेकूं योग्य है । यह उपदेश १

नाविजानन्न सत्यं वदति । विजानन्नेव सत्यं वदति । विज्ञानं त्वेव विजिज्ञासित-

त्यकूं] विशेषकरि जानताहै तब सत्यकूं कहताहै । विशेषकरि नहीं जानताहुया सत्यकूं नहि कहताहै । विशेषकरि जानताहुया हीं सत्यकूं कहताहै । विज्ञान हीं तो

विकारोंविषै स्थित सत्हीं एक सत्य है । ऐसैं करिके अनंतर जो कहताहै सो ता (सत्य)-हींकूं कहताहै ॥ ॥ [177] ननु विकारबी सत्यहीं है। काहेतैं "नामरूप दो सत्य हैं तिन दोनूंकरि यह प्राण ढांप्या है । "प्राणहीं सत्य हैं तिनका यह सत्य है" इस अन्य श्रुतितैं ? यह तैनें स-[178]त्यं कहाः—अन्य श्रुतिविषै विकारकी सत्यता है । [179]परंतु [सो विकारका सत्यपना] परमार्थकी

१७७ अन्य श्रुतिके आश्रयकरि भेदाभेदवादी शंका करैहै ॥

१७८ क्या बृहदारण्यकश्रुतिनैं विकारकी सत्यता कहीहै। इतना मात्र कहियेहै । किंवा ताकी परमार्थ सत्यता है? ऐसैं विकल्प करिके सिद्धांती प्रथम पक्षकूं अंगीकार करैहैं ॥

१७९ द्वितीय पक्षकूं दूषण देतेहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—

व्यमिति ॥ विज्ञानं भगवो विजिज्ञास इति? ॥ १ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य सप्तदशः खण्डः ॥ १७ ॥

विशेषकरि जाननेकूं योग्य है। ऐसैं [क०] ॥ ॥ हे भगवन्! विज्ञानकूं विशेषकरि जाननेकूं इच्छताहूं? ऐसैं [पूं०] ॥ १ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्र०सप्तदशःखंडः १७

अपेक्षावाला नहीं कहा। किंतु इंद्रियनकी विषयता अरु अविषयताकी अपेक्षावाला सत् अरु

भेद अरु अभेदके विरोधतैं एक उपाधिविषै अयोगतैं औ विकारके रज्जुसर्पकी न्यांई मिथ्यापनैके अनुमानतैं अत्यंत अबाध्यताके अभिप्रायकरि चेतनकी सत्यता अन्य श्रुतिनैंहीं कही है॥

१८० तब प्राणादिकनविषै सत्यता कैसैं कही है? यह आशंकाकरिके अंगीकारकूं स्पष्ट करैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:— इंद्रियजनित सत्बुद्धिकी विषयताकी अपेक्षावाले पृथिवी आदिक तीनिभूत "सत्" ऐसैं कहियेहैं औ ताकी अविषयताकी अपेक्षावाले दो भूत "त्यत्" ऐसैं व्यवहारकरियेहैं। तैसैं हुये भूतनके पंचककूं सत् औ त्यत् ऐसैं बोधनकरिके "सत्य है" इस प्रकारसैं जैसैं कहा औ तैसैं ताके बीजभूत नामरूपकूं तिसस्वरूप होनेतैं प्राणोंकी सत्यता व्यावहारिक इष्ट है ॥

विज्ञानहीं जाननेकूं योग्य है । यह उपदेश १

त्यत् है ऐसैं सत्य है यह कहा औ तिसँ[181] द्वार-करि परमार्थ सत्य(ब्रह्म)की उपलब्धि (अवगति) विवक्षित है। ऐसैं औ “[182]प्राणहीं सत्य हैं तिनका यह सत्य है” ऐसैं कहा। [183]ईहांबी सो इष्टहीं है॥ [184]ईहां तो प्राणकूं विषय करनेवाले परमार्थसत्यके विज्ञानके अभिमानतैं नारदकूं व्युत्थानकरिके जो सत्हीं भूमानामक परमार्थतैं सत्य है ताकूं विज्ञापन करूंगा। ऐसा यह वि-

---

१८१ औ यातैं मिथ्याभूत प्राणआदिकनविषै सत्यकी श्रुति अविरुद्ध है। ऐसैं कहैहैं॥ इहां यह अर्थ है:—प्राण आदिकनकी व्यावहारिक सत्यताके अनुवादरूप द्वारकरि अध्यारोप अरु अपवादन्यायसैं परमार्थ सत्यरूप ब्रह्मकी अवगति (ज्ञान) विवक्षित है। ऐसैं करिके तिन (प्राणादिकन)विषै बी सत्यताकी श्रुति अविरुद्ध है॥

१८२ यथोक्त अर्थ बृहदारण्यकश्रुतिविषै विवक्षित है। इस अर्थविषै प्रमाणकूं कहैहैं॥

१८३ ननु अन्य श्रुतिविषै विकारकी बी व्यावहारिक सत्यता इष्ट है। प्रकृतविषै तो सो नहीं अंगीकार करिये है। भूमाकीहीं सत्यताके अंगीकारतैं। तैसैं हुये विरोधकी समता है? यातैं सिद्धांती कहैहैं॥

१८४ जब प्राणकी बी व्यवहारतैं सत्यता प्राप्त भई। तब सनत्कुमारकूं क्या विवक्षित है? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

शेषकरि विवक्षित अर्थ है ॥ [१८५]नहीं जानता-हुया सत्यकूं नहीं कहताहै । [१८६]जो तो नहीं जानताहुया कहताहै सो अग्निआदिक शब्द-करि अग्निआदिकनकूं परमार्थसत्रूप मानता-हुया कहताहै । [१८७]परंतु वे अग्निआदिक तीन रूपनतैं भिन्नताकरि परमार्थतैं नहीं हैं । [१८८]तैसैं वे रूपबी सत्की अपेक्षाकरि नहीं हैं । [१८९]यातैं नहीं जानताहुया सत्यकूं नहीं कहता है ।

---

१८५ जबहीं जानताहै तब सत्यकूं कहताहै । ऐसैं जो व्याख्यान किया ताकूं अन्वयव्यतिरेककरि स्पष्टकरते हुये आदिविषै व्यतिरेककूं कहैहैं ॥

१८६ परमार्थ सत्यकूं नहीं जानताहुयाबी अग्निआदि-कनकूं कहताहै ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

१८७ तब सत्हीं परमार्थ सत्य है । ऐसैं कहनेवाले तुम सिद्धांतीके अभीष्टकी सिद्धि कैसैं होवैगी ? यह आशंकाकरि-के कहैहैं ॥

१८८ तब वेई तीनिरूप पृथक् विद्यमान हैं ? तहां नहीं ऐसैं कहैहैं ॥

१८९ यातैं इसकी सत्यवादिता नहीं है । किंतु असत्य-वादिताहीं है । ऐसैं उपसंहार करैहैं ॥

विज्ञानहीं जाननेकूं योग्य है । यह उपदेश १

[190]जांनता हुयाहीं सत्यकूं कहताहै औ[191] सो सत्यका विज्ञान अविजिज्ञासित (अप्रार्थित) हुया नहीं जानियेहै । ऐसें कहैहैं:-विज्ञानहीं तो विजिज्ञासितव्य (जाननेकूं योग्य) है! ऐसें [क०] ॥ ॥ नारद उवाचः-जब ऐसें है तब हे भगवन्! विज्ञानकूं विशेषकरि जाननेकूं इच्छताहूं ? ऐसें [पूं०] ॥ औ[192] ऐसें सत्यसें आदिलेके करोति (करताहै) इस अंतवाले उत्तर उत्तरकूं पूर्व पूर्वकी हेतुता व्याख्यान करनेकूं योग्य है ॥ १ ॥

इति श्री० भाष्यभाषा० सप्तमप्रपाठ० सप्तदशः खंडः १७

---

१९० व्यतिरेककूं दिखायके अन्वयकूं कहैहैं ॥

१९१ तब सत्यके विज्ञानपूर्वक अतिवादीपना होहू ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां जब ऐसें है । याका जिज्ञासाद्वारा सत्यका विज्ञान जानने योग्य है ऐसें जब इष्ट होवै । यह अर्थ है

१९२ सत्यवदनकेप्रति सत्यके विज्ञानका जैसें कारणपना कहा । तैसें पूर्व पूर्वका उत्तर उत्तर कारणपनैकरि देखनेकूं योग्यहै । ऐसें अतिदेश करैहैं ॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगत सप्तदशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १७ ॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्याष्टादशःखंडः १८

यदा वै मनुतेऽथ विजानाति नामत्वा विजानाति। मत्वैव विजानाति।म-

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपाठकस्याष्टादशः खंडः १८

अर्थः–सनत्कुमार उवाचः–जबहीं मननकरताहै तब विशेषकरि जानताहै । नहीं मननकरिके विशेषकरि जानता नहीं । मननकरिके हीं विशेषकरि जानताहै । मति (मनन) हीं तो विशेषकरि जाननेकूं योग्य है! ऐसैं [क॰] ॥ ॥ नारद उवाचः–हे

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठ॰अष्टादशः खंडः १८

मतिहीं जाननेकूं योग्य है। यह उपदेश १

टीकाः–जबहीं मननकूं करता है॥ऐसैं इहां [१९३]मंति कहिये मनन औ तर्क कहिये मनन क-

---

अथ श्री॰सप्तमप्र॰गताष्टादशखंडस्य टिप्पणम् १८

१९३ विज्ञानकी कारणभूत मतिकूं व्याख्यान करैहैं ॥

इति श्री॰सप्तमप्रपाठकगताष्टादशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १८ ॥

तिस्त्वेव विजिज्ञासितव्येति ॥ मतिं भगवो विजिज्ञास इति? ॥ १ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्याष्टादशः खण्डः ॥ १८ ॥

अथ सप्तमप्रपा० एकोनविंशः खंडः १९

यदा वै श्रद्दधात्यथ मनुते नाश्रद्द-

भगवन्! मतिकूं विशेषकरि जाननेकूं इच्छताहूं? ऐसें [पूं०] ॥ १ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्र०अष्टादशःखंडः १८

अथ श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपाठ० एकोनविंशः खंडः १९

अर्थः–सनत्कुमार उवाचः–जबहीं श्रद्धाकूं करताहै तब मननकूं करताहै। अश्र-

---

रने योग्य विषयविषै आदर ॥ १ ॥

इति श्री० भाष्यभाषा० सप्तमप्रपाठ० अष्टादशः खंडः १८

अथ श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्र०एकोनविंशः खंडः १९

श्रद्धाहीं जाननेकूं योग्य है। यह उपदेश १

टीकाः–[१९४]आस्तिक्यबुद्धि (विश्वास) जो है सो

अथ श्री०सप्तमप्रपा०एकोनविंशखंडस्य टि० ॥१९॥

१९४ मननकी हेतुभूत श्रद्धाकूं व्याख्यान करैहैं ॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतैकोनविंशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १९ ॥

धन् मनुते। श्रद्दधदेव मनुते। श्रद्धा त्वेव विजिज्ञासितव्येति। श्रद्धां भगवो विजिज्ञास इति? ॥ १ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्यैकोनविंशः खण्डः ॥ १९ ॥

द्धाकूं करता हुया मननकूं करता नहीं। श्रद्धाकूं करता हुयाहीं मननकूं करताहै। श्रद्धाहीं तो विशेषकरि जाननेकूं योग्य है। ऐसें [क०] ॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन्! श्रद्धाकूं विशेषकरि जाननेकूं इच्छताहूं? ऐसें [पूं०] ॥ १ ॥

इति श्री०मूलभा०सप्तमप्र०एकोनविंशः खंडः १९

श्रद्धा है ॥ १ ॥

इति श्री० भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठ०एकोनविंशः खंडः१९

अथ सप्तमप्रपाठकस्य विंशः खंडः ॥२०॥

यदा वै निस्तिष्ठत्यथ श्रद्दधाति ना-निस्तिष्ठन् श्रद्दधाति। निस्तिष्ठन्नेव श्रद्द-धाति। निष्ठा त्वेव विजिज्ञासितव्येति ॥

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपा॰ विंशः खंडः ॥ २०॥

अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—जबहीं नि-ष्ठाकूं करताहै तब श्रद्धाकूं करताहै। निष्ठा-कूं नहि करताहुया श्रद्धाकूं नहीं करताहै । निष्ठाकूं करताहुया हीं श्रद्धाकूं करताहै । निष्ठा हीं तो विशेषकरि जाननेकूं योग्य है! ऐसें [क॰] ॥ ॥ नारद उवाचः—हे

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठ॰विंशः खंडः ॥२०॥

निष्ठाहीं जाननेकूं योग्य है । यह उपदेश १

टीकाः—निष्ठा[१९५] कहिये गुरुशुश्रूषाआदिक जो

अथ श्री॰सप्तमप्रपा॰विंशखंडस्य टिप्पणम् ॥२०॥

१९५ श्रद्धाकी हेतु निष्ठाकूं व्याख्यान करैहैं ॥

इति श्री॰सप्तमप्रपाठकगतविंशखंडस्य टिप्पणम् ॥ २०॥

निष्ठां भगवो विजिज्ञास इति ? ॥ १ ॥
इति सप्तमप्रपाठकस्य विंशः खण्डः ॥ २० ॥
अथ सप्तमप्रपाठकस्यैकविंशःखंडः २१
यदा वै करोत्यथ निस्तिष्ठति ना-

भगवन्! निष्ठाकूं विशेषकरि जाननेकूं इ-
च्छताहूं ? ऐसैं [पूं०] ॥ १ ॥
इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपाठ०विंशः खंडः२०
अथ श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपाठकस्यैकविंशःखंडः २१
अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—जबहीं कर-
ताहै तब निष्ठाकूं करताहै । न करिके नि-

है ब्रह्मविज्ञानकेअर्थ ताके परायण होना ॥ १ ॥
इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठक० विंशः खंडः ॥२०॥
अथ श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठ०एकविंशः खंडः२१
कृतिहीं जाननेकूं योग्य है । यह उपदेश १
टीकाः—जबहीं करताहै । ऐसैं कृति कही
है । [१९६]कृति कहिये इंद्रियनका संयम औ चित्त-

अथ श्री०सप्तमप्रपाठकगतैकविंशखंडस्य टि० २१
१९६ निष्ठाके निदान (कारण) कृतिकूं विभाग करैहैं ॥

कृतिहीं जाननेकूं योग्य है। यह उपदेश १

कृत्वा निस्तिष्ठति। कृत्वैव निस्तिष्ठति॥ कृतिस्त्वेव विजिज्ञासितव्येति॥ कृतिं भगवो विजिज्ञास इति?॥ १॥

इति सप्तमप्रपाठकस्यैकविंशः खण्डः॥ २१॥

ष्ठाकूं करता नहीं। करिकेहीं निष्ठाकूं करताहै। कृति हीं तो जाननेकूं योग्य है! ऐसें [क०]॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन्! कृतिकूं विशेषकरि जाननेकूं इच्छताहूं॥१॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्र०एकविंशःखंडः २१

की एकाग्रताका करण॥ जातैं ताँ[१९७] (कृति)के होते निष्ठासैंआदिलेके विज्ञानरूप अवसानवाले यथोक्त साधन होवैहैं॥ १॥

इति श्री० भाष्यभाषा० सप्तमप्रपाठ०एकविंशः खंडः २१

---

१९७ फेर इनके मध्य उत्तर उत्तर पूर्व पूर्वका कारण कैसें होवैहै? तहां कहैहैं॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतैकविंशखंडस्य टिप्पणम्॥ २१॥

अथ सप्तमप्रपाठकस्य द्वाविंशःखंडः२२

यदा वै सुखं लभतेऽथ करोति नासुखं लब्ध्वा करोति। सुखमेव लब्ध्वा क-

---

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपा॰द्वाविंशः खंडः ॥२२॥

अर्थः—सनत्कुमार उवाचः—जबहीं सुखकूं पावताहै तब करताहै । असुखकूं पायके करता नहीं । सुखकूं हीं पायके कर-

---

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठ॰द्वाविंशः खंडः २२

सुखहीं विजिज्ञासितव्य है । यह उपदेश १

टीकाः—सनत्कुमार उवाचः—सो[१९८] कृतिबी जबहीं सुखकूं पावताहै कहिये निरतिशय[१९९] वक्ष्यमाण जो सुख है सो मुजकरि पावनेकूं योग्य है ऐसैं मानताहै तब होवैहै । यह अर्थ

अथ श्री॰सप्तमप्रपाठकगतद्वाविंशखंडस्य टि॰ २२

१९८ तब कृति काहेतैं होवैहै ? तहां कहैहैं ॥ इहां जब सुखकूं पावताहै तब [कृति] होवैहै । ऐसैं संबंध है ॥

१९९ ननु सुखलाभके इन्द्रियसंगमादिक विना अभावतैं सुखके लाभके अधीन कृति कैसै है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:—आगे कहनेके सुखकी प्राप्त होनेकी योग्यताके अभिमानतैंहीं यथोक्त कृति सिद्ध होवैहै ॥

सुखहीं विजिज्ञासितव्य है । यह उपदेश १

रोति । सुखं त्वेव विजिज्ञासितव्यमिति ॥
सुखं भगवो विजिज्ञास इति ? ॥ १ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य द्वाविंशः खण्डः ॥ २२ ॥

ताहै ॥ सुखहीं तो विशेषकरि जाननेकूं योग्य है! ऐसैं [क॰] ॥ ॥ नारद उवाचः— हे भगवन्! सुखकूं विशेषकरि जाननेकूं इच्छताहूं ? ऐसैं [पूं॰] ॥ १ ॥

इति श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपा॰द्वाविंशःखंडः२२

है ॥ जैसैं[200] दृष्टफलजन्य सुखके उद्देशपूर्वक कृति है । तैसैं इहांबी असुखकूं पायके नहीं करताहै । [201]भविष्यत् फलकूंबी पायके [करता है] ऐसैं कहियेहै । काहेतैं ता (भविष्यत्फल)कूं

---

२०० सुखकूं पायके करताहै । यह दृष्टांतकरि साधतेहैं॥ इहां यह अर्थ हैः—दृष्ट फल जो पुत्र पशु आदिक तिसकरि जन्य सुखके उद्देशपूर्वक लोकविषै कृति देखी है । तैसैं आत्माविषै बी सुखकूं पायके करताहै परंतु ताके उद्देश विना नहीं ॥

२०१ ननु इन्द्रियनके औ मनके संयमपूर्वक सुख होवैहै। तैसैं हुये ताकूं पायके करताहै यह कैसैं कहियेहै ? तहां कहैहैं ॥

अथ सप्तमप्रपाठ० त्रयोविंशःखंडः २३

यो वै भूमा तत् सुखं नाल्पे सुख-

अथ श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपा०त्रयोविंशः खंडः॥२३॥

अर्थः-सनत्कुमार उवाचः-जोई भूमा है सो सुख है। अल्पविषै सुख नहीं है।

उद्देशकरिके प्रवृत्तिके संभवतैं॥ ॥ अंबे[202] कृति-आदिक उत्तर उत्तरके होते सत्य आपहीं भान होता है। यातैं ताके विज्ञानअर्थ पृथक् यत्न करनेकूं योग्य नहीं है? ऐसैं प्राप्तभया। तातैं यह कहियेहैः-सुखहीं तो विशेषकरि जिज्ञासित करनेकूं योग्य है! इत्यादि॥ ॥ नारद उवाचः-हे भगवन्! सुखकूं विशेषकरि जाननेकूं इच्छता हूं?॥ ॥ ऐसैं अभिमुख भये नारदकेअर्थ मुनि कहैहैं॥ १॥

इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठ०द्वाविंशः खंडः॥२२॥

अथ श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठ०त्रयोविंशः खंडः२३

भूमाहीं विजिज्ञासितव्य है। यह उपदेश १

टीकाः-सनत्कुमार उवाचः-जोई भूमा

२०२ उत्तरग्रंथकूं आकांक्षापूर्वक उठावते हैं॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठगतद्वाविंशखंडस्य टिप्पणम्॥ २२॥

भूमाहीं विजिज्ञासितव्य है। यह उपदेश १

मस्ति। भूमैव सुखं। भूमा त्वेव विजिज्ञा-
सितव्य इति॥ भूमानं भगवो विजिज्ञास
इति?॥ १ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य त्रयोविंशः खण्डः ॥ २३ ॥

भूमा हीं सुख है॥ भूमाहीं तो विशेषकरि जिज्ञासितव्य (जाननेकूं योग्य) है! ऐसें [क०]॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन्! भूमाकूं विशेषकरि जाननेकूं इच्छताहूं? ऐसें [पूं०]॥ १ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्र०त्रयोविंशःखंडः २३

कहिये महत् निरतिशय बहु है सो सुख है।
२०३
तिसतैं अर्वाक् (निकृष्ट) जो है सो सातिशय होनेतैं अल्प है। यातैं तिस अल्पविषै सुख

अथ श्री०सप्तमप्रपा०त्रयोविंशखंडस्य टि०॥ २३॥

२०३ भूमातैं अर्वाक् (निकृष्ट) बी विषयजनित सुख है? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

नहीं है । काहेतैं [२०४]अल्पकूं अधिकतृष्णाका हेतु होनेतैं । औ तृष्णा दुःखका बीज है। [२०५]जांतैं लोकविषै दुःखका बीज ज्वरआदिक सुखरूप देख्या नहीं ॥ तातैं अल्पविषै सुख नहीं है । यह युक्त है ॥ [२०६]यांतैं भूमाहीं सुख है । काहेतैं भूमाकूं तृष्णाआदिक दुःखकी बीजरूपताके असंभवतैं ॥ १ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठ०त्रयोविंशः खंडः॥२३॥

---

२०४ अल्पताके हुये बी सुखरूपता कैसैं निवारण करिये है? तहां कहैहैं ॥

२०५ दुःखरूप तृष्णाकेप्रति अल्पसुखकूं हेतुताके हुये बी आप सुख कैसैं नहीं होवैहै ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

२०६ अल्पसुखके दुःखविषै अंतर्भावके सिद्ध हुये फलितकूं कहैहैं ॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतत्रयोविंशखंडस्य टिप्पणम् ॥ २३ ॥

अथ सप्तमप्रपाठ॰चतुर्विंशः खंडः २४

यत्र नान्यत्पश्यति नान्यच्छृणोति नान्यद्विजानाति स भूमाऽथ यत्रान्य-

---

अथ श्री॰मूलभाषा॰सप्तमप्रपा॰चतुर्विंशः खंडः ॥२४॥

अर्थः–सनत्कुमार उवाचः–जहां अन्यकूं देखता नहीं। अन्यकूं सुनता नहीं। अन्यकूं विशेषकरि जानता नहीं। सो भूमा (परिपूर्ण) है॥ औ जहां अन्यकूं देखता-

---

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰सप्तमप्रपाठ॰चतुर्विंशः खंडः २४

भूमा (ब्रह्म)के लक्षणका कथन २

टीकाः–किंसंलक्षणवाला[२०७] यह भूमा है? यह कहैहैं॥ सनत्कुमार उवाचः–जहां कहिये जिसभूमारूप तत्वविषै दृश्यतैं विभक्त जो अ-

---

अथ श्री॰सप्तमप्रपाठकगत चतुर्विंशखंडस्य टि॰ २४

२०७ भूमाकी सविशेष (भेदसहित) रूपताहै वा निर्विशेष (भेदरहित) रूपता है? ऐसैं प्रश्नपूर्वक निर्विशेषरूपताकूं निर्धार करैहैं॥ इहां अन्यकूं सुनता नहीं सो भूमा है। ऐसैं संबंध है॥

त्पश्यत्यन्यच्छृणोत्यन्यद्विजानाति त-
दल्पं। यो वै भूमा तदमृतमथ यदल्पं

है। अन्यकूं सुनताहै। अन्यकूं विशेषकरि
जानताहै। सो अल्प है॥ जोई भूमा है
सो अमृत है। औ जो अल्प है सो मर्त्य है

न्य दृष्टा है सो। अन्य द्रष्टव्य (देखनेयोग्य)
कूं अन्य करणकरि देखता नहीं है। तैसैं अ-
न्यकूं सुनता नहीं है औ विषयभेदके २०८ नाम-
रूपविषैहीं अन्तर्भावतैं तिनके ग्राहक दर्शन
औ श्रवणकाहीं इहां जो ग्रहण है। सो २०९ अन्य
(स्पर्शनआदिक)नके उपलक्षण होनेकरि है औ
मनन तो इहां (लक्षणवाक्यविषै) "अन्यकूं

---

२०८ स्पर्शनआदिकनकेबी होते दर्शन औ श्रवणकाहीं निषेध करनेकी योग्यताकरि इहां क्यूं ग्रहण है? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

२०९ अनुक्त स्पर्श आदिकनके उपलक्षणअर्थ होनेकरि इहां दर्शन औ श्रवण दोनूंका ग्रहण है। काहेतैं स्पर्शनआदिककी अविषयताकेबी भूमाविषै भावतैं। ऐसैं कहैहैं॥ इधर "इहां" ऐसैं लक्षणवाक्यकी उक्ति है॥

तन्मर्त्यँ स भगवः कस्मिन् प्रतिष्ठित इति स्वे महिम्नि यदि वा न महिम्नीति ॥ १ ॥

॥ ॥ नारद उवाचः—हे भगवन्! सो (भूमा) किसविषै स्थित है? ऐसैं [पूं०] ॥ ॥ सनत्कुमार उवाचः जब [स्थितिकूं इच्छताहैं तब] महिमाविषै [स्थित] है। वा न महिमाविषै [स्थित] है! ऐसैं [क०] ॥ १ ॥

नहीं मनन करताहै" ऐसै कहा हुया देखनेकूं योग्य है। काहेतैं विज्ञांनकूं[210] बहुत करिके मननपूर्वक होनेतैं॥ ऐसैं अन्यकूं विशेषकरि जानता नहीं। ऐसे लक्षणवाला[211] जो है सो

२१० तहां हेतुकूं कहैहैं ॥

२११ जिस अधिकरण(आश्रय)विषै विचारके हुये। अन्य अन्यकूं नहीं देखताहै ॥ नहीं सुनता है। नहीं मननकरताहै। नहीं जानताहै। सो भूमा है। ऐसैं द्रष्टा अरु दृश्यआदिक त्रिपुटीरूप विकलपके निषेधकरि अध्यासकी अधिकरणताकरि उपलक्षितका विकलपका अविषयपना हीं भूमाका लक्षण है। ऐसैं उपसंहार करैहैं ॥

भूमा (ब्रह्म) है ॥ ॥ इहां[212] "अन्यकूं देखता नहीं" इत्यादि वाक्यकरि क्या भूमाविषै प्रसिद्ध अन्य दर्शनका अभाव है? यह कहियेहै। किंवाः—तब अन्यकूं नहीं देखताहै। आत्माकूं देखताहै। यह कहियेहै ॥ औ[213] यातैं क्या भया? [तहां कहैहैंः—] जैंब[214] अन्य दर्शनआदिकका अभावमात्र [ताका लक्षण] है ऐसैं कहियेहै। तब द्वैतव्यवहारतैं विलक्षण भूमा है ऐसैं कथन किया होवैहै ॥ जैंब[215] अन्य दर्श-

---

२१२ उक्त भूमाके लक्षणकूं हीं स्पष्ट करनेकूं विचारकूं करैहैं ॥ इहां लोकप्रसिद्ध दर्शनआदिककी विषयताका अभावमात्र भूमाका लक्षण है। वा ताके निषेधकरि अपनी ज्ञेयता भूमाका लक्षण है? यह विचारका अर्थ है ॥

२१३ किस पक्षविषै कौंन लाभ है वा कौंन दोष है? ऐसैं शिष्य पूंछताहै ॥

२१४ प्रथमपक्षकूं अनुवादकरिके आचार्य्य तहां लाभकूं दिखावैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—अन्य प्रसिद्ध दर्शनआदिककी विषयता भूमाविषै नहीं है। जब इतनामात्र ताका लक्षण है ऐसैं कहियेहै। तब सर्व विकल्पातीत प्रत्यगात्मा भूमा है। इस हमारे पक्षकी सिद्धि होवैहै। यह अर्थ है ॥

२१५ द्वितीयपक्षकूं अनुवादकरिके तिसविषै दोषकूं आचार्य सूचन करैहैं ॥

नविशेषके प्रतिषेधकरि आत्माकूं देखताहै ऐसें कहियेहै । तब एकविषैहीं क्रिया कारक अरु फलका भेद अंगीकार किया होवैहै ॥ ॥ [२१६] जब ऐसें है तब कौंन दोष होवैगा? निश्चयकरि यहहीं संसारकी अनिवृत्तिरूप दोष है। [२१७] जातें क्रिया कारक औ फलका भेद संसार है यातें ॥ ॥ [२१८] ननु आत्माकी एकताके हुयेहीं क्रियाकारक अरु फलभेदरूप संसारतैं विलक्षण है? ऐसें जो कहै। [२१९] सो बनै नहीं:—काहेतें आत्माकी निर्विशेष एकताके अंगीकारके हुये दर्शनआदिक क्रिया कारक औ फलके भेदके अंगीकारकूं शब्दमात्र (कथनमात्र) होनेतें ॥ ॥ [२२०] ननु अन्यके दर्शन-

---

२१६ तिसीहीं दोषकूं प्रश्नपूर्वक स्पष्ट करैहैं ॥

२१७ ननु क्रिया कारक अरु फल भेदके होते संसारकी अनिवृत्ति कैसें होवैगी? तहां कहैहैं ॥

२१८ भेदके होते क्रिया आदिककी संसाररूपता लोकविषै देखी है। तातें विलक्षण होनेतें एकविषै हीं क्रियाकारकके भावकूं संसाररूपता नहीं है? ऐसें शिष्य शंका करैहै ॥

२१९ एकविषै क्रियाआदिकके भेदके असंभवकूं दिखावतेहुये आचार्य्य उत्तरकूं कहैहैं ॥

२२० द्वितीयपक्षके दुष्टपनैके स्पष्ट किये हुये प्रथमपक्षका

आदिकके अभावकी उक्तिके पक्षविषै बी "जहां" ऐसा औ "अन्यकूं नहीं देखताहै" ऐसा। ये दो विशेषण व्यर्थ होवैंगे ? ऐसैं जो कहै २२१ कहिये लोकविषै प्रसिद्ध देखियेहै किः—जह शून्य गृहविषै "अन्यकूं नहीं देखताहै" ऐसैं कहे हुये। स्तंभआदिकनकूं औ आत्मा (आप)कूं नहीं देखताहै यह नहीं जानियेहै। ऐसैं

बी समान दुष्टपना है? ऐसैं शिष्य शंका करैहै॥ इहां यह अर्थ हैः—प्रथमपक्षविषैबी "नहीं देखताहै" इतने करिहीं दर्शनआदिकके अभावके लाभके "जहां" ऐसा औ "अन्य" ऐसा ये दो विशेषण व्यर्थ होवैंगे ॥

२२१ इस प्रकारका वचन व्यर्थहीं है? ऐसी आचार्य्यकी शंका मनमैं ल्यायके शिष्य आपहीं कहैहै ॥ इहां यह अर्थ हैः—लोकविषैहीं जहां शून्यग्रहविषै अन्यकूं नहीं देखताहै सो देवदत्तका है। ऐसा प्रयोग देखीये है औ ताकी व्यर्थता इष्ट नहीं है व्यवहारका अंग होनेतैं। औ जैसैं तिस यथोक्त धनधान्यआदिकनके अदर्शनके हुये बी स्तंभ आदिकनकूं औ गृहकूं नहीं देखताहै ऐसैं सुने वस्तुकी व्यर्थता नहीं जानिये है। किंतु तहां स्तंभ आदिकनका औ ता (गृह)का दर्शन इष्ट नहीं है। तैसैं "जहां अन्यकूं नहीं देखताहै" इहां बी विशेषणकी व्यर्थताके हुये समाधान कहनेकूं योग्य है ॥

इहांबी है? ऐसैं जो कहै। सो[222] बनै नहीं:- काहेतैं "तत्त्वमसि (सो तूं हैं)" ऐसैं एकताके उपदेशतैं अधिकरण अरु अधिकर्त्तव्य (आश्रय अरु आश्रित)के भेदके असंभवतैं। तैसैं "सत् एकहीं अद्वितीय सत्य है" ऐसैं षष्ठप्रपाठकविषै निर्धारित होनेतैं औ "अदृश्य[223] अनात्म्यविषै। सदृशविषै इसका रूप नहीं स्थित होवैहै। अरे! विज्ञाताकूं किसकरि जानैगा" इत्यादि श्रुतिनतैं स्वात्माविषै दर्शन आदिकका असंभव है॥ ॥ ननु "जहां[224]" यह विशेषण व्यर्थ प्राप्तभया? ऐसैं जो कहै। सो बनै नहीं:-काहे-

---

२२२ क्या विशेषणकी अर्थवान्ताके असंभवकरि भूमाविषै अधिकरण अधिकर्त्तव्यभाव (आधार आधेयभाव) औ स्वात्मदर्शन कहनेकूं योग्य है ऐसैं कहियेहै। किंवा:-सुने अर्थकी गति कहनेकूं योग्य है। ऐसैं तुजकरि पूंछियेहै? ऐसैं विकल्पकरिके सिद्धांती तिनमैं प्रथमपक्षकूं दूषण देतेहैं॥ इहां तैसैं। याका "तत्त्वमसि" इस वाक्यकीन्यांईं। यह अर्थ है औ निर्धारित होनेतैं अधिकरण औ अधिकर्त्तव्यके भेदका असंभव है। यह शेष है॥

२२३ औ जो "अन्यकूं नहीं देखताहै" इस विशेषणतैं आत्माका दर्शन कहनेकूं योग्य है? ऐसैं कहाथा। तहां कहैहैं॥

२२४ द्वितीयपक्षकूं अनुवाद करिके गतिकूं कहैहैं॥

तैं अविद्याकृतभेदकी अपेक्षावाला होनेतैं । [225]जैसैं प्रकृत सत्य एकत्व अद्वितीयकी बुद्धिकूं अपेक्षाकरिके सत् एकहीं अद्वितीय है ऐसैं संख्याआदिकके अयोग्यबी वस्तु कहियेहै । [226]ऐसैं एकहीं भूमाविषै " जहां " यह विशेषण है औ [227]अविद्या अवस्थाविषै अन्यदर्शनके अनुवादकरि भूमाके ता (अन्यदर्शन आदिक)के अभावत्वारूप लक्षणकूं विवक्षित होनेतैं "अन्यकूं देखता नहीं" यह विशेषण है । [228]तातैं संसारव्यवहार भू-

२२५ समाधानके भागकूं दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥

२२६ एकहीं भूमाविषै " जहां " ऐसा विशेषण अनुचितबी प्रयोग करियेहै । काहेतैं प्रसिद्धके अनुवादकरि अधिकरणआदिक विकल्पोंकी अविषयतारूप भूमाके लक्षणकूं विवक्षित होनेतैं । ऐसैं कहैहैं ॥

२२७ औ जो अविद्याअवस्थावाला अन्य दर्शनआदिक है ताके अनुवादकरि " अन्यकूं देखता नहीं " ऐसा विशेषण भूमाविषै विरोधकूं पावता नहीं । काहेतैं दर्शनआदिककी अविषयतारूप भूमाके लक्षणकूं विवक्षित होनेतैं । ऐसैं कहैहैं ॥

२२८ लक्षणके अर्थकूं उपसंहार करैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:-दर्शनआदिक सकल संसारसंबंधी व्यवहारके अभावकरि उपलक्षिततत्त्व भूमा है ॥

माविषै नहीं है। यह समुदायका अर्थ है ॥ [२२९] औ जहां (अविद्याविषै) अन्य अन्यकरि अन्यकूं देखताहै ऐसैं-है। सो अल्प है। अर्थ यह जोः—अल्पकालभावि है ॥ [२३०] जैसैं स्वप्नविषै दृश्यवस्तु प्रबोधतैं पूर्व तत्कालभावि (स्वप्नकालविषै होनेवाला) ऐसैं है। ताकीन्यांई ॥ ताहीतैं सो स्वप्नवस्तुकीन्यांई हीं मर्त्य (विनाशी) है। तिसतैं विपरीत भूमा जो है सो अमृत है [इहां [२३१] तत् (सो) शब्द अमृतभावपर है] ॥ ॥

नारद उवाचः—हे भगवन् ! तब [२३२] सो ऐसे लक्षणवाला भूमा किसविषै स्थित है? ॥ ॥

---

२२९ "औ जहां" इत्यादि वाक्यकूं व्याख्यान करैहैं ॥

२३० परिच्छिन्नके अविद्याकालविषै भावीपनैंकूं दृष्टांतकरि विवरण करैहैं ॥ इहां ताहीतैं। याका परिच्छिन्न होनेतैं। यह अर्थ है ॥

२३१ "सो अमृत है" ऐसैं भूमाविषै तत् (सो) शब्दका प्रयोग कैसैंहै? तहा कहैहैं ॥

२३२ औ भूमाकी सुखरूपताके वचनतैं ताके आश्रयकूं शिष्य पूंछताहै ॥

गोअश्वमिह महिमेत्याचक्षते हस्ति-

अर्थः—गौ अश्व हस्ती हिरण्य दास भा-

[233] ऐसैं कहनेवाले नारदके प्रति सनत्कुमारमुनि कहैहैं ॥ सनत्कुमार उवाचः—स्वमहिमाविषै कहिये आपका महिमा जो माहात्म्य (विभूति) तिसविषै स्थित भूमा है। [234] जब कहांबी प्रतिष्ठा (स्थिति)कूं इच्छताहैं ॥ [235] वा जब परमार्थकूंहीं पूंछताहैं तब महिमाविषैबी नहीं स्थित है। ऐसैं हम कहतेहैंः—अर्थ यह जोः—कहीं बी अप्रतिष्टित (अनाश्रित) भूमा है ॥ १ ॥

टीकाः—जब स्वमहिमाविषै स्थित भूमा है

२३३ व्यवहारदृष्टिकरि प्रश्न है। वा वस्तुदृष्टिकरि? ऐसैं विकल्प करिके सिद्धांती प्रथमपक्षकेप्रति कहैहैं ॥

२३४ द्वितीय पक्षकूं अनुवाद करिके निराकरण करैहैं ॥

२३५ पूर्वापरके विरोधकूं आशंकाकरिके परिहार करैहैं ॥ इहां भूमाके स्वतः (आपकरि) अन्यविषै स्थितपनैंका अभाव "इहां" ऐसैं कहियेहै। तहां "अन्यहीं अन्यविषै" इत्यादि वाक्यके हेतुताकरि हेतुरूप तिस अंतरायसहित वाक्यके साथि "मैं ऐसैं नहीं कहताहूं" इस वाक्यका संबंध है। ऐसैं योजना है ॥

हिरण्यं दासभार्य्यं क्षेत्राण्यायतनानी-
ति नाहमेवं ब्रवीमि ब्रवीमीति ह होवा-

र्या क्षेत्र अरु गृहोंकूं इहां "महिमा" ऐसैं
कहतेहैं। ऐसैं अन्यविषैहीं अन्य स्थित हो-

तब अप्रतिष्ठ (अस्थित) कैसैं कहियेहै ? तहां
श्रवण करः—गो अश्व आदिककूं इहां "महिमा"
ऐसैं कहतेहैं [इहां गौआं अरु अश्व वे गो अश्व
हैं। ऐसैं द्वंद्वैकवद्भाव समास है]। सर्वत्र गौ
अश्वादिक महिमा है ऐसैं प्रसिद्ध है। ताके आ-
श्रित कहिये तिसविषै स्थित (कोईक पुरुष)
होवैहै। ऐसैं मैं आपतैं अन्य महिमाकूं आ-
श्रित भूमा है। चैत्र पुरुषकीन्यांई। इस प्रका-
रसैं नहीं कहता हूं ॥ तिस अर्थविषै हेतु होने-
करि अन्यहीं अन्यविषै स्थित होवैहै इसरीतिसैं
व्यवहित (अंतरायसहितग्रंथ)सैं संबंध है ॥
किंतु[२३६] ऐसैं कहताहूं। इसप्रकारसैं सन-

---

२३६ बत तुम कैसैं कहते हो ? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥
इति श्री० सप्तमप्रपाठगतचतुर्विंशखंडस्य टिप्पणम् ॥ २४ ॥

चान्यो ह्यन्यस्मिन् प्रतिष्ठित इति ॥२॥
इति सप्तमप्रपाठकस्य चतुर्विंशः खंडः ॥ २४ ॥
अथ सप्तम प्रपाठ० पंचविंशः खंडः २५
स एवाधस्तात् स उपरिष्ठात् स

वैहै ॥ मैं ऐसैं कहता नहीं [किंतु] ऐसैं (वक्ष्यमाण प्रकारसैं) कहताहूं ॥ २ ॥
इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्र०चतुर्विंशःखंडः २४
अथ श्री०मूलभाषा०सप्तमप्रपाठ०पंचविंशः खंडः २५
अर्थः–सो (भूमा) ई नीचेतैं है । सो

त्कमारमुनि कहते भये:–"सोई" इत्यादि॥२॥
इति श्री० भाष्यभाषा० सप्तमप्रपाठ० चतुर्विंशः खंडः२४
अथ श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठ०पंचविंशः खंडः२५
ताका सर्वत्र पूर्णत्व अहंकारादेश औ आत्मादेश २
टीका:–[237]काहेतैं फेर कहींबी नहीं स्थित है? यह कहियेहै:–जातैं सोई भूमा नीचेतैं है ।

अथ श्री०सप्तमप्रपाठगतपंचविंशखंडस्य टि० २५
२३७ अवतारकूं प्राप्त कियेहीं वाक्यकूं प्रश्नपूर्वक अतवार देके व्याख्यान करैहैं ॥

पश्चात् स पुरस्तात् स दक्षिणतः स उत्तरतः स एवेदꣳ सर्वमित्यथातोऽहङ्कारादेश एवाहमेवाधस्तादहमुपरिष्टा-

---

उपरतैं है। सो पश्चात् (पश्चिमतैं) है। सो पूर्वतैं है। सो दक्षिणतैं है। सो उत्तरतैं है। सोई यह सर्व है। इति ॥ ॥ इसतैं अनंतर अहंकाराऽऽदेशहीं है:—मैंहीं नीचेतैं हूं।

तिसतैं व्यतिरेककरि अन्य विद्यमान नहीं है जिसविषै प्रतिष्ठित होवै ॥ तैसें उपरतैं है। इत्यादि समान है ॥ कहिये भूमातैं[२३८] अन्य विद्यमान वस्तुविषैहीं भूमा स्थित होवै। सो तो नहीं होवैहै किंतु सोई सर्व है यातैं। तातैं यह (भूमा) कहींबी स्थित नहीं है ॥ ॥ "जहां[२३९] अन्यकूं देखता नहीं" ऐसें अधिकरण अरु अधिकर्त्तव्य भावके निर्देशतैं औ "सोई नीचेतैं है"

---

२३८ उक्तअर्थकूं हीं व्यतिरेकद्वारा विवरण करैहैं ॥

२३९ अहंकार अरु आत्मभावके उपदेशके अभिप्रायकूं कहैहैं ॥

दहं पश्चादहं पुरस्तादहं दक्षिणतोऽहमु-
त्तरतोऽहमेवेदं सर्व्वमिति ॥ १ ॥

अथात आत्माऽऽदेश एवात्मैवाऽध-

मैं उपरतैं हूं। मैं पश्चिमतैं हूं। मैं दक्षिणतैं हूं। मैं उत्तरतैं हूं। मैंहीं यह सर्व हूं। इ-ति ॥ १ ॥

अर्थः—इसतैं अनंतर आत्माऽऽदेशहीं

ऐसैं परोक्ष निर्देशतैं द्रष्टाजीवतैं अन्य भूमा होवैगा ? ऐसी आशंका किसीकूंबी मति होवै। यातैं इसतैं अनंतर अहंकारका आदेश है॥ अहंकारकरि आदेश करियेहै यातैं अहंकारादेश है। कहिये[240] द्रष्टातैं अनन्यताके दर्शनअर्थ भू-माहीं अहंकारकरि निर्देश करिये हैः—मैंहीं नी-चेतैं हूं। इत्यादि वाक्यकरि॥ १ ॥

टीकाः—[241]अहंकारकरि देहादिसंघातबी अवि-

---

२४० कौंन यह अहंकारकरि आदेश करियेहै ? यह आ-शंका करिके। प्रयोजनके अनुवादपूर्वक कहैहैं ॥

२४१ अहंकारके आदेशतैं पृथक् आत्माके आदेशके ता-त्पर्यकूं कहैहैं ॥

स्तादात्मोपरिष्टादात्मा पश्चादात्मा पुरस्तादात्मा दक्षिणत आत्मोत्तरत आत्मैवेदꣳसर्वमिति। स वा एष एवं पश्य-

---

है:-आत्माहीं नीचेतें है। आत्मा ऊपरतें है। आत्मा पश्चिमतें है। आत्मा पूर्वतें है। आत्मा दक्षिणतें है। आत्मा उत्तरतें है। आत्माहीं यह सर्व है। इति ॥ ॥ सोई यह

वेकी पुरुषनकरि आदेश करियेहै। यातें ता (संघात)की आशंका मति होवै। इस प्रकारसैं अनंतर आत्माका आदेश केवल सत्स्वरूप शुद्ध आत्माकरिहीं आदेश करियेहै॥ "[२४२]आत्माहीं सर्व ओरतें सर्व है" इसरीतिसैं एक अज सर्व ओरतें व्योमवत् पूर्ण अन्य शून्यकूं देखता हुया सोई यह विद्वान् मनन अरु

---

२४२ उक्त आत्माके विज्ञानवालेकी कृतकृत्यताकूं कहैहैं॥ इहां "एक" ऐसैं सजातीय भेदसैं रहितताकी उक्ति है औ "अन्यशून्य" ऐसैं विजातीय भेदकरि शून्यता कहियेहै॥

न्नेवं मन्वान एवं विजानन्नात्मरतिरात्म-
क्रीड आत्ममिथुन आत्मानन्दः स स्व-

(ज्ञानी) ऐसैं देखताहुया ऐसैं मनन कर-
ताहुया ऐसैं विशेषकरि जानताहुया आ-
त्मरति आत्मक्रीड आत्ममिथुन आत्मानंद

विज्ञानकरि आत्मरति हुया कहिये आत्मा-
विषैहीं है रति (रमण) जिसकी सो यह आ-
त्मरति है ऐसा हुया। तैसैं आत्मक्रीड हुया॥
[२४३]देहमात्रसाधनवाली रति (रमण) है औ बाह्य-
साधनवाली क्रीडा है। [२४४]लोकविषै स्त्रियोंकेसाथि
अरु सखाओंकेसाथि क्रीडाकूं करताहै ऐसैं दे-
खनेतैं तैसैं विद्वान्की नहीं है। किंतु आत्मावि-
ज्ञानरूप निमित्तवालीहीं दोनूं (रति अरु क्रीडा)
होवैहैं। यह अर्थ है॥ औ आत्ममिथुन क-
हिये मिथुन जो द्वंद्वजनित सुख सो बी द्वंद्व

---

२४३ रति औ क्रीडाके अवांतर भेदकूं दिखावैहैं॥
२४४ क्रीडा बाह्य साधनवाली है। इस अर्थविषै लोक-
संमतिकूं कहैहैं॥

राड् भवति तस्य सर्व्वेषु लोकेषु काम-
चारो भवत्यथ येऽन्यथाऽतो विदुरन्य-

है। सो स्वराट् होवैहै। ताका सर्व लोकन-
विषै कामचार होवैहै॥ ॥ औ जे इसतैं
अन्यथा (विपरीतताकरि) जानतेहैं। वे

(युगल)की अपेक्षासैं रहित जिस विद्वान्का है।
तैसा आत्मानंद है। शब्दादिनिमित्तवाला आ-
नंद अविद्वानोंका है तैसा इस विद्वान्का नहीं।
किंतु आत्मारूप निमित्तवालाहीं सर्व सर्वदा औ
सर्वप्रकारसैं है। अर्थ यह जोः—[२४५]देहके जीवि-
त अरु भोगादिकके निमित्त बाह्यवस्तुविषै नि-
रपेक्ष विद्वान् है॥ [२४६]सो ऐसे लक्षणवाला विद्वा-
न् जीवता हुयाहीं स्वाराज्यविषै अभिषिक्त (अ-
भिषेककूं प्राप्तभया)है औ देहके पतित हुयेबी

---

२४५ औ देहके जीवितविषै अरु भोगत्यागविषै निमित्त
बाह्य वस्तु है तहां सर्वत्र निरपेक्ष अरुयदृच्छालाभोंविषै आ-
संगवर्जित विद्वान् है। ऐसैं कहैहैं॥

२४६ जीवन्मुक्तिकूं कहिके विदेहमुक्तिकूं दिखावैहैं॥

राजानस्तेऽक्षय्यलोका भवन्ति तेषां सर्व्वेषु लोकेष्वकामचारो भवति ॥ २ ॥

इति सप्तमप्रपाठकस्य पञ्चविंशः खण्डः ॥ २५ ॥

अन्य राजावाले क्षय्य लोकवाले होवैहैं। तिनका सर्व लोकनविषै अकामचार होवैहै ॥ २ ॥

इति श्री०मूलभाषा०सप्तमप्र०पंचविंशःखंडः २५

स्वराट् (आपहीं विराजमान)हीं होवैहै । [247]जातैं ऐसैं होवैहै तातैंहीं ताका सर्व लोकनविषै कामचार होवैहै ॥ [248]प्राणआदिक पूर्व भूमियोंविषै "तहां इसका" ऐसैं तितनामात्र परिच्छिन्न

---

२४७ स्वाराज्यकूं निमित्त करिके अन्य फलकूं कहैहैं ॥

२४८ स्वाराज्य अरु सर्व लोकनविषै कामचारके तात्पर्यकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:– "जितना नामका विषय है तहां इसका यथाकामचार होवैहै " इत्यादि वाक्यकरि परिच्छिन्न अरु परतंत्र पूर्वभूमियोंविषै फल कहा । इहां तो परमानंदकी प्राप्तिके हुये तिनकी निवृत्ति कहियेहै । परंतु सोपाधिकरूप नहीं कहियेहै ॥

कामचारपना कहा औ अन्यराजपना अर्थतैं प्राप्त है सातिशय होनेतैं ॥ इहां यथाप्राप्त स्वाराज्य अरु कामचारताके अनुवादकरि तिस तिसकी निवृत्ति कहियेहै "सो स्वराट् होवैहै" इत्यादि वाक्यकरि ॥ [२४९] औ फेर जे इस उक्त दर्शनतैं अन्यथा (विपरीतताकरि) जानते हैं। वा यथोक्तकूंहीं सम्यक् नहीं जानते हैं वे अन्यराजा (अन्यराजावाले) होवैहैं । अन्य(पर) है राजा (स्वामी) जिनोंका वे अन्यराजा हैं ऐसे होवैहैं । किंवाः—वे क्षय्यलोक (क्षय्यलोकवाले) होवैहैं । क्षय्य (विनाशी)है लोक जिनोंका वे क्षय्यलोक हैं । काहेतैं [२५०] भेददर्शनकूं अल्प (परिच्छिन्न) विषयवाला होनेतैं औ "अल्प जो है सो मर्त्य" (विनाशी) है ऐसैं पूर्व कहते-

२४९ फलके दिखावनेरूप द्वारकरि विद्याकूं स्तुतकरिके । ताकूं अविद्वान्‌की निंदाद्वारा बी स्तुत करैहैं ॥ इहां क्षयलोकवाले होवैहैं । ऐसैं संबंध है ॥

२५० भेददर्शनकी विनाशीफलवान्‌ताविषै हेतुकूं कहैहैं॥ इहां परिच्छिन्नके विनाशिताके वचनकूं "तातैं" ऐसैं स्मरण करावैहैं ॥

इति श्री०सप्तमप्रपाठकगतपंचविंशखंडस्य टिप्पणम् ॥२५॥

अथ श्रीछान्दोग्योपनिषदः सप्तमप्रपाठकस्य षड्विंशः खंडः ॥ २६ ॥

तस्य ह वा एतस्यैवं पश्यत एवं

अथ श्रीछान्दोग्योपनिषदो मूलमात्रभाषादीपिकायां सप्तमप्रपाठकस्य षड्विंशः खंडः प्रारभ्यते ॥ २६ ॥

अर्थः–तिस प्रसिद्ध इस ऐसैं देखनेवा-

भये । तातैं जे द्वैतदर्शी हैं वे स्वदर्शनके अनुसारकरिहीं क्षय्यलोकवाले होवैहैं । याहीतैं तिनका सर्व लोकनविषै अकामचार होवैहै ॥ २ ॥

इति श्री० भाष्यभाषा० सप्तमप्रपाठकस्य पंचविंशः खंडः२५
अथ श्री०भाष्यभाषा०सप्तमप्रपाठ०षड्विंशः खंडः ॥२६॥

ऐसैं जाननेवालेकूं फलका कथन २

टीकाः–तिसैं[२५१] प्रसिद्ध इसके। इत्यादि।

अथ श्री०सप्तमप्रपाठकगतषड्विंशखंडस्य टिप्प०२६

२५१ उक्त विद्याकी स्तुतिअर्थ हीं विद्वान्‌के स्रष्टापनैकूं कहैहैं ॥ इहां तैसैं । याका विद्वान्‌के स्रष्टापनैके व्यवहारकी न्यांई । यह अर्थ है औ क्रीडा आदिक अन्य व्यवहार है ।

मन्वानस्यैवं विजानत आत्मतः प्राण आत्मत आशाऽऽत्मतः स्मर आत्मत आकाश आत्मतस्तेज आत्मत आप आत्मत आविर्भावतिरोभावावात्मतोऽन्नमात्मतो बलमात्मतो विज्ञानमात्मतो ध्यानमात्मतश्चित्तमात्मतः स-

लेके ऐसैं माननेवालेके ऐसैं विशेषकरि जाननेवालेके आत्मातैं प्राण [होवैहै]। आत्मातैं आशा। आत्मातैं स्मरण। आत्मातैं आकाश। आत्मातैं तेज आत्मातैं जल। आत्मातैं आविर्भाव। तिरोभाव। आत्मातैं अन्न। आत्मातैं बल। आत्मातैं विज्ञान। आत्मातैं ध्यान। आत्मातैं चित्त।

याका स्वाराज्यकूं प्राप्त भये प्रकृत विद्वान्के। यह अर्थ है ॥ सत्रूप आत्माके विज्ञानतैं पूर्व स्वात्मातैं अन्य सत् (ब्रह्म)तैं प्राणसैं आदिलेके नामपर्यंतके उत्पत्ति औ प्रलय होतेभये। अबी सत्रूप आत्माके विज्ञानके भये तो वे दोनूं स्वा-

ङ्कल्प आत्मतो मन आत्मतो वागा-
त्मतो नामात्मतो मन्त्र आत्मतः क-
र्म्माण्यात्मत एवेदꣳ सर्वमिति ॥ १ ॥
तदेष श्लोको न पश्यो मृत्युं पश्यति

आत्मातैं संकल्प। आत्मातैं मन। आत्मातैं वाक्। आत्मातैं नाम। आत्मातैं मंत्र। आत्मातैं कर्म। आत्मातैंहीं यह सर्व [होवैहै]। इति ॥ १ ॥

अर्थः—तिसविषै यह श्लोक हैः—पश्य

त्मातैं हीं अंगीकार किये। तैसैं सर्वबी अन्य व्यवहार विद्वान्का आत्मातैंहीं है ॥ १ ॥

टीकाः—किंवौः[२५२]—तिस इस अर्थविषै यह श्लोक (मंत्र) बी होवैहैः—पश्य जो है सो नहीं दे-

---

२५२ केवल ब्राह्मण उक्त इहां विद्याका फल नहीं है। किंतु मंत्र उक्त बी है। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां तत् (तिस) शब्दका अर्थ सप्तमीकरि निर्देशकरियेहै औ सो विद्याका फलरूप है ॥

न रोगं नोत दुःखताꣳ सर्व्वꣳ ह पश्यः पश्यति सर्व्वमाप्नोति सर्वश इति ॥ स

(ज्ञानी) न मृत्युकूं न रोगकूं न दुःखभावकूं बी देखताहै। पश्य सर्वकूंहीं देखताहै सर्वकूं सर्वप्रकारोंसैं पावताहै। ऐसैं ॥ सो

खैताहै[२५३]। अर्थ यह जोः—पश्य जो यथोक्तदर्शी विद्वान्। सो मृत्यु (मरण)कूं अरु रोग (ज्वरादि)कूं अरु दुःखता (दुःखभाव)कूं नहीं देखताहै। सो पश्य (ज्ञानी) सर्वकूं हीं आत्मारूपहीं देखताहै। तातैं सर्वप्रकारोंसैं सर्वकूं पावताहै ऐसैं है। किंवा[२५४]:—सो विद्वान्

२५३ "पश्य मृत्युकूं नहीं देखताहै" इस मंत्रकूं लेके व्याख्यान करैहैं॥ इहां सर्वकूं पावताहै। यह पूर्णता परिच्छेदके भ्रमके निवारणकरि विवक्षित है। परंतु ता पश्य(ज्ञानी)कूं कृमि कीटआदिकभाव नहीं। काहेतैं अपुरुषार्थपनैंके प्रसंगतैं। ऐसैं देखनेकूं योग्य है ॥

२५४ विद्यास्तुतिकी पुष्कलता अर्थ सगुणविद्याके फलकूंबी निर्गुणब्रह्मवित् पावताहै। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां त्रिधा कहिये तेज जल अरु अन्नरूपसैं औ शब्द स्पर्श आदिक आदिशब्दका अर्थ है ॥

एकधा भवति त्रिधा भवति पञ्चधा सप्तधा नवधा चैव पुनश्चैकादशः स्मृतः॥

एकधा होवैहै। त्रिधा होवैहै। पंचधा सप्तधा औ नवधा हीं [होवैहै] औ फेर एका-

---

सृष्टिभेदतैं पूर्व एकधाहीं होवैहै औ एकधाहीं (एकप्रकारसैंहीं) हुया सृष्टिकालविषै त्रिधा आदिक भेदोंकरि अनंतभेदरूप प्रकारवाला होवैहै। फेर संहारकालविषै मूलरूपहीं अपनैं पारमार्थिक एकधाभावकूं स्वतंत्र हुया हीं पावताहै। ऐसैं विद्याकूं फलकरि प्ररोचन करते हुये स्तुतिकी विषय करैहैं॥ ॥ [२५५] अनंतर अब यथोक्त विद्याका मुख अवभासके कारण आदर्शकीन्यांई सम्यक् अवभासका कारण ऐसा विशुद्धिका कारण साधन उपदेश करियेहैः—आहारकी शु-

---

२५५ विद्याकूं ताके फलकूं औ तिसविषै अपेक्षित स्तुतिकूं कहिके अब "आहारशुद्धिके हुये" इत्यादि वाक्यके तात्पर्यकूं कहैहैं॥

शतञ्च दश चैकश्च सहस्राणि च विंˆ-
शतिराहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः सत्त्व-

दशरूप कहा है औ शत अरु दश अरु एक अरु सहस्र अरु विंशति [रूप होवैहै] ॥ ॥ आहार (विषयविज्ञान)की शुद्धिके हुये सत्वकी शुद्धि [होवैहै]। सत्वशुद्धि-

---

द्धिके हुये कहिये आहरण[256] (इन्द्रियनसैं संपादन) करियेहै सो इहां आहार कहियेहै। शब्दादिक विषयनका विज्ञान भोक्ताके[257] भोग अर्थ आहारण करियेहै सो आहार है। तिस विषयनकी उपलब्धिरूप विज्ञानकी जो शुद्धि सो आहारशुद्धि है। अर्थ यह जोः—राग[258] द्वेष अरु मो-

---

२५६ " रागद्वेषकरि रहित इंद्रियनसैं विषयनकेप्रति विचरता हुया तो " इत्यादि गीतास्मृतिकूं आश्रयकरिके आहार शब्दकूं व्याख्यान करैहैं ॥

२५७ ताका आह्रियमाणपना (आहारपना) कैसैं है? तहां कहैहैं ॥

२५८ ता (आहार)की शुद्धि कैसी है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

शुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः स्मृतिलम्भे सर्व्वग्र-
न्थीनां विप्रमोक्षस्तस्मै मृदितकषाया-

के हुये ध्रुवा स्मृति [होवैहै]। स्मृतिके
लाभ हुये सर्व ग्रंथिनका विप्रमोक्ष [होवैहै]
॥ ॥ श्रुतिरुवाचः—तिस मृदितकषाय-

हरूप दोषनकरि अभिलषित विषयनका विज्ञान [आहारशुद्धि]है।तिसँ[२५९] आहारशुद्धिके हुये तिसवाले अंतःकरण[शब्दकेवाच्य]सत्वकी शुद्धि (निर्मलता) होवैहै औ सत्वशुद्धिके[२६०] होते यथाज्ञात भूमारूप आत्माविषै ध्रुवा (अविछिन्ना) स्मृति कहिये अविस्मरण होवैहै औ तिसैं[२६१] (स्मृति)के प्राप्तहुये कहिये स्मृतिलाभके हुये सर्व अविद्याकृत अनर्थमय पाशरूप अनेकजन्म जन्मांतरोंके अनुभवोंकी भावनाकरि कठिनकी-

---

२५९ आहारशुद्धिके फलकूं कहैहैं ॥

२६० अंतःकरणशुद्धिके फलकूं कथन करैहैं।

२६१ स्मृतिलाभके फलकूं दिखावैहैं॥ इहां होवैहै। यातैं आहारकी शुद्धि अपेक्षित है। यह शेष है॥

य तमसस्पारं दर्शयति भगवान् सन-

वाले [नारद]केअर्थ तमके पारकूं भग-
वान् सनत्कुमार दिखावैहैं ॥ ता (सनत्कु-

न्यांई किये हृदयरूप आश्रयवाले ग्रंथिनका वि-
प्रमोक्ष कहिये विशेषकरि प्रमोक्षण (विनाश)
होवैहै। यातैं आहारकी शुद्धि अपेक्षित है ॥
२६२जातैं यह उत्तरउत्तर यथोक्त जो है सो आहारकी
शुद्धिरूप मूलवाला है तातैं सो(आहारकी शुद्धि)
करनेकूं योग्य है। यह अर्थ है ॥ २६३सर्व शास्त्रा-
र्थकूं अशेषतैं कहिके श्रुति । आख्यायिकाकूं
उपसंहार करैहै॥ श्रुतिरुवाचः—तिस मृदित-
कषायवालेकेअर्थ कहिये वार्क्ष (वृक्षविशेष-
जनित रंग) आदिककीन्यांई कषाय जो रागद्वे-
षादि दोष है। सत्व (अंतःकरण)की रंजना

---

२६२ प्रकृतवाक्यके तात्पर्यकूं उपसंहार करैहैं ॥

२६३ "तिस मृदितकषायवालेकेअर्थ" इत्यादि वाक्यकूं अवतार देके व्याख्यान करैहैं ॥ इहां आगतिकूं अरु गतिकूं कहिये आय व्यय (गमनागमन)कूं ॥

त्कुमारस्तꣳ स्कन्द इत्याचक्षते तꣳ स्कन्द इत्याचक्षते ॥ २ ॥

इति श्रीछान्दोग्योपनिषदि सप्तमप्रपाठकस्य षड्विंशः खंडः समाप्तः ॥ २६ ॥

मार)कूं "स्कंद" ऐसैं कहतेहैं। ताकूं "स्कंद" ऐसैं कहतेहैं ॥ २ ॥

इति श्रीछान्दोग्योपनिषदो मूलमात्रभाषादीपिकायां सप्तमप्रपाठकस्य षड्विंशः खंडः समाप्तः २६

(रंग)रूप होनेतैं। सो ज्ञानवैराग्यके अभ्यासरूपक्षारकरि क्षालित कहिये मृदित (विनाशित) भया है जिस नारदका तिस योग्य मृदितकषायवाले नारदकेअर्थ अविद्यारूप तम (अंधकार)के परमार्थ तत्वरूप पारकूं सनत्कुमार भगवान् दिखावैहैं:—अर्थ यह जो:—दिखावतेभये ॥ ॥ कौंन यह भगवान् है? "भूतनकी उत्पत्तिकूं। औ प्रलयकूं आगति (आगमन)कूं औ गति (गमन)कूं। विद्याकूं औ अविद्याकूं

ऐसैं जाननेवालेकूं फलका कथन २

जानताहै सो भगवान् वाच्य (कहनेकूं योग्य) है" इस प्रकारके धर्मवाला सनत्कुमार है ॥ [264] तिसीहीं सनत्कुमार देवकूं "स्कंद (कार्त्तिकस्वामी अवतरता भया) है ऐसैं ताके वेत्ता कथन करते हैं ॥ इहां दोवार कथन अध्यायकी परिसमाप्तिअर्थ है ॥ २ ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषद्भाष्यभाषादीपिकायां सप्तमप्रपाठकस्य षड्विंशः खंडः समाप्तः ॥ २६ ॥

समाप्तेयं छान्दोग्योपनिषद्-सप्तमप्रपाठकस्य भाष्यभाषादीपिका ॥ ७ ॥

---

२६४ ता (सनत्कुमार)की अन्य विशिष्टता (विशेषणयुक्तता)कूं कहैहैं ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषद्भाष्यभाषादीपिकायां सप्तमप्रपाठकगतषड्विंशखंडस्य टिप्पणं समाप्तम् ॥ २६ ॥

समाप्तेयं सप्तमप्रपाठकस्य टिप्पणिका ॥ ७ ॥

अथाष्टमप्रपाठकाऽऽरंभः ८

दहराद्युपासन । ब्रह्मा-विरोचनेंद्रसंवाद औ शेषोक्ति १५

अथ श्रीछान्दोग्योपनिषदष्टमप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः प्रारभ्यते ॥ १ ॥

अथ यदिदमस्मिन् ब्रह्मपुरे दहरं

अथ श्रीछान्दोग्योपनिषदो मूलमात्रभाषादीपिकाया-मष्टमप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः प्रारभ्यते ॥ १ ॥

अर्थः—अनंतर जो यह इस ब्रह्मपुर (श-

अथ श्रीछांदोग्योपनिषद्-भाष्यभाषादीपिकाया अष्ट-मप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः प्रारभ्यते ॥ १ ॥

दहरपुंडरीकमैं ब्रह्मका उपासन ६

टीकाः—यद्यपि दिशा देश कालआदिकभेद-

अथ श्रीछांदोग्योपनिषद्-भाष्यभाषादीपिकाया अष्टमप्रपाठकगतप्रथमखंडस्य टिप्पणं प्रारभ्यते॥१॥

१ पूर्वले दो अध्यायनविषै निर्विशेष अवच्छेदरहित सदा आनंदैकतान आत्मतत्व जनाया । तैसैं हुये उपनिषद्के आरंभके कृतार्थ हुये क्या अवशेष रहताहै जिसअर्थ अन्य अध्याय है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यातैं ताके नि-

पुण्डरीकं वेश्म दहरोऽस्मिन्नन्तराका-

रीर)विषै दहर (अल्प) हृदयकमलरूप गृह
है। इसविषै दहर (अल्प) अंतराकाश

करि शून्य ब्रह्म सत् एकहीं अद्वितीय है औ आ-
माहीं यह सर्व है। ऐसैं षष्ठ अरु सप्तम अ-
ध्यायविषै निश्चित भया। तथापि इहां मंदबु-
द्धिवालोंकी दिशा देशआदिक भेदवाला वस्तु
है ऐसी भावनावाली बुद्धि तत्काल परमार्थकूं
विषयकरनेवाली करनेकूं शक्य नहीं होवैहै
औ ऐसैं ब्रह्मकूं नहीं जानिके पुरुषार्थकी सिद्धि
नहीं होवैहै। यातैं ता (ब्रह्म)के निश्चयअर्थ हृ-
दयपुंडरीकरूप देश उपदेश करनेकूं योग्य है॥
[2]यद्यपि सत्रूप सम्यक्ज्ञान-एकका विषय अरु

श्चयअर्थ विशिष्ट (श्रेष्ठ) देश उपदेश करनेकूं योग्य है। ऐसैं संबंध है औ अर्थ यह है किः—तब मंदबुधिवालोंकूं परमार्थ वस्तु ब्रह्मका ज्ञान अपेक्षित है॥

२ केवल मंदअधिकारीनकूं ब्रह्मज्ञानका शेष (उपकारक) होनेकरि हृदयदेशका उपदेशहीं इहां करनेकूं योग्य नहीं है किंतु पूर्वग्रंथविषै अनुक्तगुणआदिक अर्थांतरका उपदेशबी करनेकूं योग्य है। ऐसैं कहैहैं॥

शस्तस्मिन् यदन्तस्तदन्वेष्टव्यं तद्वाव-
विजिज्ञासितव्यमिति ॥ १ ॥

है। तिसविषै जो भीतर है सो [आश्रय-
सहित] खोजनेकूं योग्य है। सोई विशे-
षकरि जिज्ञासितव्य (ज्ञातव्य) है ॥ १ ॥

निर्गुन आत्मतत्व है। तथापि मंदबुद्धिवालोंकूं
गुणवान्ताकूं इष्ट होनेतैं सत्यकामादि गुणवान्-
तावी कहनेकूं योग्य है॥ [३] तैसें [४] यद्यपि ब्रह्मवेत्ता-
ओंकूं स्त्रीआदिकविषयनतैं आपहीं उपरम (उ-
परति) होवैहै। तथापि अनेकजन्मोंविषै विष-

---

३ उपदेश करनेकूं योग्य अवशेष रहे अर्थांतरकूं कहैहैं॥
इहां मंदबुद्धिवालोंकूं ब्रह्मज्ञानका शेष (उपकारक) होनेकरि
देशविशेषकीन्यांई औ गुणविशेषकीन्यांई ब्रह्मचर्य आदिक
साधनविशेष विधान करनेकूं योग्य है। ऐसैं संबंध है॥

४ शब्दजन्य ब्रह्मज्ञानवालोंकूं विधिविनावी विषयनतैं
विमुखताके संभवतैं विधिसैं क्या है? यह आशंकाकरिके
कहैहैं॥

५ जैसैं साधनविशेष कहनेकूं योग्य अवशेष रहताहै।
तैसैं उपासकोंकी गतिवी कहनेकूं योग्य है। यातैं अवशेष
रहे अर्थांतरकूं कहैहैं॥

यनकी सेवाके अभ्याससैं जनित विषयनकूं विषयकरनेवाली तृष्णा सद्य निवर्त्तकरनेकूं शक्य नहीं होवैहै । यातैं ब्रह्मचर्यादिसाधनविशेष विधान करनेकूं योग्य है ॥ तैसैं यद्यपि[६] आत्माकी एकताके वेत्ताओंकूं गंता गमन औ गंतव्यके अभावतैं अविद्याविशेषरूप देहस्थितिके निमित्तके क्षयहुये आकाशविषै विद्युत्कीन्यांई अरु उद्भूतवायुकीन्यांई अरु दग्धइंधनवाले अग्निकीन्यांई स्वात्माविषैहीं निवृत्ति होवैहै । तथापि गंता गमन आदिककी वासनाकरि युक्त बुद्धिवाले हृदयदेशरूप गुणविशिष्टब्रह्मके उपासकोंकी मस्तकगत [सुषुम्णानामक] नाडीकरि गति क-

---

६ एकत्व दर्शिनके गंताआदिक सर्वभेद प्रत्ययनके अस्तमयतैं देहस्थितिके निमित्त अविद्याविशेष(लेशाविद्या)के क्षयकेहुये स्वात्माविषैहीं निवृत्तिके संभवतैं किस कारणतैं गति कहनेकूं योग्य है ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥ इहां शेषकी स्थितिके निमित्त अविद्याआदिकके क्षयहुये स्वात्माविषैहीं निवृत्ति होवैहै । ऐसैं उत्तरग्रंथसैं संबंध है ॥

७ स्वात्माविषै निर्वाणके हुयेबी कृतक (कर्मसाध्य)रूपके त्यागकरि स्वाभाविक स्वरूपसैं अवस्थान होवैहै । इस अर्थविषै अनेक दृष्टांतनकूं कहैहैं ॥ इहां अनेक उदाहरणोंका जो ग्रहण है सो बुद्धिकी सुकरताअर्थ है ॥

हनेकूं योग्य है । यातैं अष्टमप्रपाठक आरंभ करियेहै ॥ जातैं दिशा देश गुण गति अरु फलके भेदकरि शून्य परमार्थ सत् अद्वय ब्रह्म मंदबुद्धिवालोंकूं असत्कीन्यांई भासताहै । वे प्रथम सन्मार्गविषै स्थित होवहू । तदनंतर शनैः (धीरेसैं) परमार्थसत्कूंबी ग्रहण करावूंगी ऐसैं श्रुति मानती है:-[11] अनंतर [12] जो यह वक्ष्यमाण दहर (अल्प) पुंडरीक (कमलसदृश) वेश्म (गृह) कीन्यांई

---

८ उक्तहीं अध्यायके तात्पर्यकूं संक्षेपकरिके दिखावैहैं ॥ इहां दिशाकरि देशकरि गुणोंकरि गतिकरि अरु फलभेदकरि शून्य । अर्थ यह जो:-तिनोंकरि अवच्छेदरहित ॥

९ ता ब्रह्मकी दिशाआदिकके अवच्छेदकारि रहिततावि‍षै हेतुकूं कहैहैं ॥

१० तब तिनकूं भ्रमके दूरीकरनेअर्थ परमार्थ सत् अद्वय ब्रह्म ग्रहण करावनेकूं योग्य है । क्यूं ऐसैं अन्यथा उपदेश करियेहै ? तहां कहैहैं ॥

११ अध्यायके तात्पर्यकूं संक्षेप अरु विस्तारकरि दिखायके । अब श्रुतिके अक्षरनकूं व्याख्यान करैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:-उत्तमबुद्धिमानोंकेप्रति निर्विशेष ब्रह्मके उपदेशके अनंतर मंदबुद्धिमानोंकेप्रति सविशेष ब्रह्म उपदेश करियेहै ॥

१२ तहां प्रथम उपास्यके स्थानकूं निर्देश करैहैं ॥

वेश्म [13]द्वारपाल आदिकवाला होनेतैं ईस ब्रह्म-
पुरविषै है ॥ [15]जैसैं राजाका अनेकप्रकृतिवाला
पुर होवैहै। तैसैं यह अनेक इंद्रिय मन अरु बु-
द्धिरूप स्वामीकेअर्थ कार्योंकरि युक्त है यातैं पर-
ब्रह्मका पुर है ॥ औ [16]पुरविषै जैसैं राजाका वे-
श्म (गृह) होवैहै। तैसैं तिस ब्रह्मपुररूप शरी-
रविषै दहररूप वेश्म है। अर्थ यह जो:—[17]ब्रह्म-
की उपलब्धिका अधिष्ठान है। जैसैं विष्णुका
शालिग्राम है ॥ जातैं ईस अपने विकाररूप
कार्य देहविषै नामरूपके विस्पष्टकरनेअर्थ प्रवे-

---

१३ हृदयपूंडरीककी गृहसादृश्यताविषै हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां " तिस प्रसिद्ध इस हृदयके पंच शुषि (छिद्र) हैं " इत्यादि पूर्व उक्त श्रुतितैं उक्त हेतुकी सिद्धि है ॥

१४ ताके आश्रयकूं दिखावैहैं ॥

१५ शरीरकी ब्रह्मपुरताकूं दृष्टांतकरि साधतेहैं ॥

१६ तहां उक्त गृहकूं दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥

१७ फेर सर्वगत निरवयव ब्रह्मका यथोक्तगृहविषै स्थितपना कैसैं है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

१८ ननु ब्रह्मतैं भिन्न संसारीका स्वकर्मकरि संपादित शरीरके साथि स्वामीभावरूप संबंध है । ताके असंबंधी ब्रह्मकी तहां (शरीरविषै) उपलब्धि कैसैं होवैहै? यातैं कहैहैं ॥

शकूं पाया सत्नामक ब्रह्म "जीवस्वरूपकरि" ऐसें कहा है । तातें[19] इस हृदयपुंडरीकरूप गृहविषै निरुद्धकरणवाले बाह्यविषयनतें विरक्त औ विशेषकरि ब्रह्मचर्य अरु सत्यरूप साधनकरि युक्त वक्ष्यमाण गुणवालेकूं ध्यान करनेहारे पुरुषनकरि ब्रह्म उपलब्ध होवैहै । यह प्रकरणका अर्थ है ॥ इस दहर (हृदयकमलरूप अल्प)गृहविषै दहर कहिये अल्पतर [[20]गृहकूं अल्पहोनेतैं ताके भीतरवर्त्तीकी गृहतें अल्पतरता है] अंतराकाश कहिये आकाशनामवाला[21] ब्रह्म है। जातें "आकाशहीं नाम है" ऐसें आगे श्रुति कहैगी औ आकाशकीन्यांई[22] अशरीर होनेतैं

१९ ब्रह्मके सृष्ट कार्यविषै जलार्ककीन्यांई जीवरूपसैं प्रवेशके हुये हृदयकमलका पूर्व उक्त ब्रह्मकी उपलब्धिका अधिष्ठानपना अविरुद्ध है । ऐसें कहैहैं ॥

२० अंतराकाशकी अतिअल्पतरताविषै हेतुकूं कहैहैं ॥

२१ आकाशशब्दकी भूताकाशविषयताकूं निषेध करैहैं ॥

२२ वाक्यशेषविषै बी आकाशशब्द ब्रह्मविषै कैसें वर्तताहै ? तहां कहैहैं ॥ इहां ऐसें योजना है:—तिसविषै जो भीतर है सो आश्रयकरि सहित खोजनेकूं योग्य है । वा तिस स्वमहिमाविषै जो भीतर है सो आकाशनामक ब्रह्म है सो खोजनेकूं

तच्चेद्ब्रूयुर्यदिदमस्मिन् ब्रह्मपुरे दहरं

अर्थः–ता (ऐसें कहनेवाले आचार्य) केप्रति जब [शिष्य] कहैं:–जो यह इस

अरु सूक्ष्मता अरु सर्वगतताके सामान्यतैं॥ तिस आकाशनामकविषै जो भीतर (मध्यविषै) है सो खोजनेकूं योग्य है औ सोई विशेषकरि जिज्ञासित करनेकूं योग्य है । अर्थ यह जोः–गुरुके आश्रय अरु श्रवण आदिक उपायोंकरि साक्षात्कार करनेकूं योग्यहै ॥ १ ॥

टीकाः–तिसैं[23] ऐसैं कहनेवाले आचार्यकेप्रति जब शिष्य कहैं कहिये प्रश्नकरैं ॥ ॥ कैसैं[24]:– जो यह इस परिछिन्न ब्रह्मपुरविषै भीतर अ-

---

योग्य है ॥ वा तिस हृदयकमलकरि अवच्छिन्न मनविषै जो भीतर आकाशनामक ब्रह्म है सो खोजनकूं योग्य है ॥

२३ " दहर (अल्प) इसविषै " इत्यादिरूप वाक्यके यथाश्रुत अर्थकूं ग्रहणकरिके प्रश्नकूं उठावैहैं ॥

२४ ताही प्रश्नकूं आकांक्षाद्वारा विवरण करैहैं ॥

पुण्डरीकं वेश्म दहरोऽस्मिन्नन्तराका-

ब्रह्मपुरविषै दहर कमलरूप गृह है। द-
हर इसविषै अंतराकाश है। क्या सो इ-

ल्प पुंडरीकरूप गृह है तिसतैं बी भीतर अ-
ल्पतर हीं आकाश है॥ पुंडरीकरूपहीं[25] गृह
विषै प्रथम क्या होवैगा। तिसतैं अल्पतर
आकाशविषै जो होवै सो क्या होवैगा?
ऐसैं शिष्य कहतेहैंः—अल्प इसविषै भीतर आ-
काश है क्या। सो इहां विद्यमान है। कैछुबी[26]
विद्यमान नहीं है। यह अभिप्राय है॥ जँब[27]
प्रसिद्ध बदरमात्र कछुबी विद्यमान है तब ताके

२५ परिच्छिन्न शरीरविषै पुंडरीक आकारवाले हृदयकी अ-ल्पताहै औ ता अंतर्वर्त्ती आकाशकी तिसतैं बी अल्पतरता है। तथापि प्रकृतविषै क्या होवैगा? यह आशंका करिके कहैहैं॥ ॥

२६ किं (क्या) शब्दकी प्रश्न विषयताकूं निषेध करैहैं॥

२७ हृदयपुंडरीकके अंतर्वर्त्ती आकाशकूं अंगीकार करिके आचार्य प्रथमपक्षकूं दूषण देतेहैं॥ इहां फलकी अप्रतीति "यातैं" शब्दका अर्थ है औ "तहां" ऐसैं अंतर्वर्त्ती आका-शकी उक्ति है॥

शः किं तदत्र विद्यते यदन्वेष्टव्यं यद्वाव विजिज्ञासितव्यमिति? स ब्रूयात् ॥२॥

हां विद्यमान है [कछुबी नहीं है]! जो खोजनेकूं योग्य (जाननेकूं इच्छा करनेकूं योग्य) है। जोई विशेषकरि जिज्ञासितव्य (जाननेकूं योग्य) है? ऐसें ॥ ॥ सो (आचार्य) कहै ॥ २ ॥

खोजनेकरि वा जिज्ञासन (जानने) करि जिज्ञासुकूं क्या फल होवैगा॥ यातैं जो तहां (अंतर्वर्ति आकाशविषै) खोजनेकूं योग्य है वा जो विशेषकरि जाननेकूं योग्य है तिससैं प्रयोजन नहीं है? ऐसें कहनेवाले शिष्यनके प्रति सो आचार्य कहै:—ऐसैं श्रुतिका वचन है॥२॥

---

२८ ननु शिष्य अरु आचार्यतैं भिन्नकूं इहां प्रसंगविषै अप्राप्त होनेतैं "सो कहै" ऐसा यह नियोग (आज्ञा)रूप वचन कौंनका है? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

यावान्वा अयमाकाशस्तावानेषोऽ-

अर्थः—जितनाहीं यह आकाश है ति-

टीकाः—हे शिष्य! [29]श्रवणकरोः—[30]तहां जो तुम कहते होकिः—हृदयपुंडरीकके भीतरके आकाशकूं अल्प होनेतैं तिसविषै स्थित जो है सो अत्यंत अल्प होवैगा? ऐसैं। [31]सो असत् हैः—काहेतैं जातैं पुंडरीकरूप गृहविषै गत जो आकाश है ताकूं पुंडरीकतैं अत्यंत अल्प मानिके मैं "अल्पइसविषै अंतराकाश है" ऐसैं नहीं कहता

२९ क्या आचार्य कहै? इस अपेक्षाके हुये वक्ष्यमाण अर्थविषै शिष्यनके मनके समाधानकूं आदिविषै आचार्य प्रार्थना करैहै। ऐसैं कहैहैं॥

३० श्रोतव्य अर्थकूंहीं दिखावनेकूं शिष्यकरि उक्त अर्थकूं अनुवाद करैहैं॥

३१ क्या आकाशके स्वाभाविक अल्पपनैंकूं अंगीकार करिके तुमकरि प्रश्न करियेहै। किंवाः—पर उपाधिरूप निमित्तवाले अल्पपनैंकूं अंगीकार करिके प्रश्न करियेहै? ऐसैं विकल्पकरिके आचार्य प्रथमपक्षकूं दूषण देतेहैं॥ इहां औ तातैं ताके स्वाभाविक अल्पपनैकूं आश्रयकरिके प्रश्न अवकाशरहित है। यह शेष है॥

न्तर्हृदय आकाश उभे अस्मिन् द्यावा-
पृथिवी अन्तरेव समाहिते। उभावग्नि-

तना यह भीतर हृदयविषै आकाश है।
इसविषै स्वर्ग अरु पृथिवी दोनूं भीतर-
हीं स्थित हैं औ अग्नि अरु वायु दोनूं।

भया। किंतु[32] पुंडरीक अल्प है तिसका अनुसा-
री तिसविषै स्थित अंतःकरण पुंडरीकके आ-
काशतैं परिछिन्न है। तिस विशुद्धविषै निरुद्ध
करणवाले योगीनकूं स्वच्छ[33]जलविषै प्रतिबिंबके
रूपकीन्यांई औ शुद्ध आदर्शविषै प्रतिबिंबके
रूपकी न्यांई[34] स्वच्छ विज्ञान ज्योतिःस्वरूप

३२ तब आकाशके अल्पपनैकी उक्ति कैसैं है? यह आ-
शंकाकरिके कहैहैं॥ इहां तिस विशुद्धविषै तितनामात्र ब्रह्म
यथोक्त विशेषणवाला। विषयनतैं विमुख किये हैं अंतःकरण
जिनोंनैं ऐसे योगिनकूं प्रतीत होवैहै। ऐसैं संबंध है॥

३३ अंतःकरणकी शुद्धताविषै दृष्टांतकूं कहैहैं॥ इहां ति-
सविषै ब्रह्मकी उपलभ्यमानताविषै प्रतिबिंबके रूपकीन्यांई
यह उदाहरण है औ निश्चयकी सुकरताअर्थ अन्य उदा-
हरण है॥

३४ ब्रह्मकूं स्वाभाविक औ आगंतुक व्यवधान नहीं है।
ऐसैं उपलब्धिकी सिद्धिअर्थ विशेषण देतेहैं॥

श्च वायुश्च सूर्य्याचन्द्रमसावुभौ । वि-

सूर्य अरु चंद्रमा दोनूं । विद्युत् अरु न-

प्रकाशरूप तितनामात्र ब्रह्म प्रतीत होवैहै । यातें "दहर (अल्प) इसविषै अंतराकाश है" ऐसें अंतःकरणमय उपाधिरूप निमित्तवाले ब्रह्मकूं हम कहतेभये । [35]स्वतः तो जितना प्रसिद्ध परिमाणतैं यह भौतक आकाश है । तितना यह हृदयके भीतर आकाश है जिसविषै आश्रयकरि सहित खोजनेकूं योग्य औ विशेषकरि जाननेकूं योग्य हम कहते भये ॥ औ [36]आकाशतुल्य परिमाणवान्ताकूं अभिप्रायकी

३५ तिस प्रकारकेहीं अल्पपनैंकूं लेके जब प्रश्न करियेहै तब अनौपाधि (स्वाभाविक) महत्पनैकूं अंगीकारकरिके समाधान संभवैहै । ऐसैं आचार्य अन्य विकल्पकूं निरसन करैहैं ॥ इहां जिसविषै खोजनेकूं योग्य है आश्रयकरि सहित । यह शेष है ॥

३६ " यावान् तावान् (जितना तितना) " इस वचनतैं आकाशकरि तुल्य परिमाणता ब्रह्मकी अभिप्रेत है । तैसैं हुये आकाशतैं बडा है इत्यादि कथन विरुद्ध होवैगा ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

द्युन्नक्षत्राणि। यच्चास्येहास्ति यच्च नास्ति सर्व्वं तदस्मिन् समाहितमिति ॥ ३ ॥

क्षत्र औ जो इसका इहांहै अरु नहीं है। सर्व सो इसविषै स्थित है ऐसैं [क०] ॥३॥

विषयकरिकेबी "तितना" ऐसैं नहीं कहियेहै किंतु[37] ब्रह्मके अनुसारी अन्य दृष्टांतके अभावतैं कहियेहै ॥ ॥ फेर आकाशकेसमहीं ब्रह्म नहीं है। यह कैसैं जानियेहै? जिसकरि "आवृत आकाशकूं स्वर्गकूं अरु महीकूं। तिस[38]प्रसिद्ध इस आत्मातैं आकाश उपज्या है। हे गार्गी[39]! इस अक्षररूप आकाशविषै" इत्यादि श्रुतिनतैं जा-

---

३७ तब किस अभिप्रायकरि तावान् (तितना) ऐसैं कहा? यातैं कहैहैं ॥ इहां "ताकी प्रतिमा नहीं है" ऐसैं कहा है औ जिसकरि व्याप्त आकाशादि जगत्कूं लोक अनुभव करैहै। तिस अक्षरविषै सर्व ऋक्आदिक स्थित है। यह अर्थ है ॥

३८ कार्य अरु कारणकी अतुल्यपरिमाणताकी प्रसिद्धितैं बी आकाशकी समता ब्रह्मकूं नहीं है। ऐसैं कहैहैं ॥

३९ औ आधार अरु आधेयकूं अतुल्यपरिमाणवाले होनेतैं ऐसैं है। यह कहैहैं ॥

नियेहै ॥ किंवां:[40]—इस बुद्धिरूप उपाधिविशिष्ट ब्रह्मरूप आकाशविषै भीतरहीं स्वर्ग अरु पृथिवी दोनूं सम्यक् स्थित हैं। जातैं "जैसें[41] प्रसिद्ध अर (काष्टदंड) रथकी नाभिविषै हैं" ऐसें कहा है। तैसें दोनूं अग्नि औ वायु। इत्यादि समान है ॥ औ जो इस देहवान् आत्माका आत्मीय (मेरा है इस) भावकरि इसलोकविषै विद्यमान है। औ तैसें जो आत्मीयभावकरि नहीं विद्यमान है। जो नष्ट[42] अरु भविष्यत् है सो नहीं है ऐसें कहियेहै। परंतु सो अत्यंतहीं असत् नहीं है। काहेतैं ताके हृदया-

४० औ यातैं आकाशकी स्वाभाविक दहरता (अल्पता) नहीं है। ऐसें कहैहैं ॥ इहां जातैं कार्य जो है सो स्वर्ग अरु पृथिवी आदिक कारणविषै स्थित है औ सो हृदयविषै ध्यावनेकूं योग्य है। ऐसें अभिप्रायका विषयकरिके "बुद्धि उपाधिविशिष्ट" ऐसें कहा ॥

४१ आकाशविषै स्वर्ग अरु पृथिवी आदिकके स्थित होनेविषै भूमविद्याके संवादकूं दिखावैहैं ॥ इहां नहीं विद्यमान है। सर्व सो इसविषै स्थित है। ऐसें संबंध है ॥

४२ नास्ति (नहीं है) इस शब्दकी अत्यंत असत्विषयवान्ताकूं निषेध करैहैं ॥

तञ्चेद्ब्रूयुरस्मिꣳश्चेदिदं ब्रह्मपुरे सर्व्वꣳ

अर्थः–ताकूं जब कहैं:–जब इस ब्रह्मपुर (अंतराकाश)विषै यह सर्व स्थित है

काशविषै समाधान (रहने)के असंभवतें [सो सर्व इसविषै स्थित है] ॥ ३ ॥

टीकाः–तिसैं[43] ऐसैं कहनेवाले आचार्यके प्रति फेर जब शिष्य कहैंकिः–जब इस यथोक्त ब्रह्मपुरविषै । अर्थ यह जोः–ब्रह्मपुरकरि उपलक्षित अंतराकाशविषै । यह सर्व स्थित है औ सर्व भूत औ सर्व काम [स्थित हैं]॥ ॥ नैनु[44] आचार्यकरि अनुक्त जे काम वे शिष्यनकरि कैसें कहियेहैं ? यँह[45] दोष नहीं हैः–काहेतें

---

४३ आश्रयके नाशतैं आश्रितका नाश होवैहै । इस न्यायकूं आश्रयकरिके शिष्य शंका करैहैं॥ जब इसविषै सर्व स्थित है तातैं (तब) देहके नाशहुये क्या अवशेष रहताहै । ऐसैं संबंध है ॥

४४ शिष्यनकी अधिक उक्तिरूप दोषकूं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

४५ शंकाके विषय किये दोषकूं सिद्धांती परिहार करैहैं ॥

समाहितꣳसर्व्वाणि च भूतानि सर्वे च कामा यदैनज्जरावाप्नोति प्रध्वꣳसते वा किं ततोऽतिशिष्यत इति? ॥ ४ ॥

औ सर्व भूत औ सर्व काम [स्थित हैं]। जिसकालविषै यह (शरीर) जराकूं पावताहै वा विनाशकूं पावताहै। क्या तिसतैं [अन्य] स्थित होवैहै? तैसैं ॥ ४ ॥

जातैं "औ जो इसका इहां है औ जो नहीं है" ऐसैं आचार्यनैं काम कहे हीं हैं औ सर्व शब्दकरिबी काम कहेहीं हैं ॥ ४६जब (जिसकालविषै) इस ब्रह्मपुर नामवाले शरीरकूं वलीपलित (त्वचाकी शिथिलता अरु श्वेतकेश)आदि लक्षणवाली जरा वा वयकी हानि प्राप्त होवै। वा यह शस्त्रआदिककरि छेदित हुया विनाशकूं

इहां "सर्व सो इसविषै स्थित है" इस वाक्यविषै उक्त सर्व शब्दकरि। यह शेष है ॥

४६ शिष्यनके अधिक उक्तिरूप दोषकूं परिहारकरिके। प्रकृत शिष्यनके प्रश्नकूं विवरण करैहैं ॥

स ब्रूयान्नास्य जरयैतज्जीर्य्यति न

अर्थः—सो कहैः—इस (शरीर)की जरा-करि यह (अंतराकाशनामक ब्रह्म) जीर्ण

पावताहै । तदनंतर क्या स्थित होवैहै ॥ अभिप्राय यह है किः—घटके नाशहुये घँटाश्रित क्षीर दधि तैलआदिककीन्यांईं देहके नाशहुये बी देहरूप आश्रयवाला उत्तरउत्तर पूर्व पूर्वके नाशतैं नाशकूं पावताहै ॥ ऐसैं नाशके प्राप्त हुये तिस यथोक्ततैं अन्य क्या स्थित होवैहै कछुबी नहीं स्थित होवैहै । यह अभिप्राय है ॥ ४ ॥

टीकाः—ऐसैं शिष्यनकरि पूंछ्या हुया सो आचार्य तिनकी बुद्धिकूं दूरी करता हुया कहे ॥ [४८] ॥ कैसैं कि? इस देहकी जराकरि यह य-

---

४७ आकाशकी अवशेषताकूं आशंका करिके शिष्य आशंका करैहैं ॥ इहां तिसतैं । याका यथोक्त नाशतैं । ऐसैं संबंध है ॥ ॥

४८ फेर किसरीतिकरि शून्यकूं विषय करनेवाली शिष्यनकी मति दूरी करनेकूं योग्य है ? ऐसैं प्रश्नपूर्वक आचार्यके समाधानकूं विवरण करैहैं ॥

वधेनास्य हन्यत एतत्सत्यं ब्रह्मपुरम-
स्मिन् कामाः समाहिता एष आत्मा-

होता नहीं। इसके वधकरि हननकूं पा-
वता नहीं। यह सत्य ब्रह्मरूप पुर है।
इसविषै काम स्थित हैं॥ यह आत्मा अ-

थोक्त अंतराकाशनामक ब्रह्म जिसविषै सर्व
स्थित है सो जीर्ण होता नहीं। अर्थ यह
जोः—देहकीन्यांई विक्रियाकूं पावता नहीं॥ औ
इस (देह)के वधकरि कहिये शस्त्रआदिकके
घातकरि यह (ब्रह्म) हननकूं पावता नहीं।
जैसैं [४९]आकाश [हननकूं पावता नहीं तब] तिसतैं
बी अत्यंत सूक्ष्म अशब्द अस्पर्श। देहइंद्रियआ-
दिकके दोषनकरि स्पर्शकूं पावता नहीं। यामैं क्या
कहनाहै। यह अर्थ है॥ ॥ देहैं[५०] इंद्रियआदि-

४९ देहादिककी विक्रियाकरि ब्रह्मकूं विक्रिया नहीं है। यह कैमुतिक न्यायकरि साधते हैं॥

५० देहादिकनविषै तादात्म्यकरि जब ब्रह्म स्थित है तब दोषनकरि स्पर्शकूं पाया नहीं। यह अयुक्त है? यह आशंका-

ऽपहतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोको

पहतपाप्मा विजर विमृत्यु विशोक विजि-

कके दोषनकरि कैसें स्पर्शकूं पावता नहीं? इस अवसरविषै कहनेकूं योग्य जो प्राप्त भया। सो। प्रकृत (दहरोपसना) विषै व्यासंग (विक्षेप) मति होहु यातें नहीं कहियेहै। इंद्र[51] अरु विरोचनकी आख्यायिकाविषै ऊपरतें (आगे) युक्तितैं कहैंगे॥ यह[52] सत्य ब्रह्मपुर है। ब्रह्मरूपहीं[53] जो पुर सो इहां ब्रह्मपुर कहियेहै॥ शरीरनामक[54] ब्रह्मपुर तो ब्रह्मके उपलक्षणरूप अर्थवाला होनेतैं

करिके कहैहैं॥ इहां प्रकृत दहरोपासना है। तिसविषै व्यासंग कहिये विक्षेप॥

५१ जब देहादिकके दोषनकरि ब्रह्मका स्पर्शरहितपना नहीं कहियेहै औ ये दोष जब कहीं बी संभवतेहैं तब सो अविवक्षितहीं होवैगा? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

५२ "नहीं इसकी" इत्यादि वाक्यकरि उक्त अर्थविषै हेतुकूं कहैहैं॥

५३ यथोक्त ब्रह्मका पुर सत्य कैसें है? यह आशंका करिके कहैहैं॥ इहां सत्य शब्दके सामानाधिकरण्यतें उक्त समासकी सिद्धि है। यह अर्थ है॥

५४ तब शरीर ब्रह्मपुरहै यह पूर्व कैसें कहा? यातैं कहैहै

विजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्य-
सङ्कल्पो यथा ह्येवेह प्रजा अन्वावि-

घत्स (भोजनेच्छारहित) अपिपास (पाने-
च्छारहित) सत्यकाम सत्यसंकल्प है ॥
जैसैंहीं इहां प्रजा आज्ञानुसार अनुवर्त्तन

है सो[५५] तो अनृत (जूठा)हीं है। काहेतैं "वाणीका
आरंभण विकार नाममात्र है" इस श्रुतितैं ॥
औ ताके[५६] विकार अनृत देहरूप कार्यविषै बी
ब्रह्म प्रतीयमान होवैहै यातैं शरीरकूं [५७]व्यावहा-
रिक ब्रह्मपुर है ऐसैं कहा ॥ [५८]सत्य ब्रह्मपुर तो यह

---

५५ ताहीकूं स्पष्ट करनेकूं शरीरके मिथ्यात्वकूं प्रमाण-
सहित दिखावैहैं ॥

५६ अब मिथ्याभूत तिस शरीरका ब्रह्मपुरपना कैसैं है?
यातैं कहैहैं ॥

५७ किंवा:—व्यावहारिक सत्य यह शरीर है। तातैं तिस
जूठे बी ब्रह्मकी उपलब्धिके अधिष्ठानका ब्रह्मपुरपना युक्त है।
ऐसैं कहैहैं ॥

५८ ब्रह्म तो परमार्थ सत्य है। यातैं बी यहहीं सत्य ब्र-
ह्मपुर है। ऐसैं कहाहै। यह कहैहैं ॥

शन्ति यथाऽनुशासनं यं यमन्तमभिकामा भवन्ति। यं जनपदं यं क्षेत्रभागं। तं तमेवोपजीवन्ति ॥ ५ ॥

करै हैं। जिस जिस प्रदेशके प्रति जिस देशके प्रति जिस क्षेत्रभागके प्रति अर्थवालियां होवैहैं। तिस तिसकेप्रतिहीं उपजीवन (जीविका)कूं करैहैं ॥ ५ ॥

हीं ब्रह्महै। काहेतैं [५९]सर्व व्यावहारोंका आस्पद (अधिष्ठान) होनेतैं ॥ [६०]यातैं इस पुंडरीककरि उपलाक्षित ब्रह्मपुरविषै सर्व काम जे बाहीर तुमकरि प्रार्थना करियेहैं वे इसीहीं स्वात्माविषै स्थित हैं। [६१]यातैं ताकी प्राप्तिके उपायकूंहीं अ-

---

५९ ब्रह्मकूं सत्यताके हुये बी पुरपनैके अयोगतैं ब्रह्मपुरपना काहेतैं होवैगा? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

६० दहराकाश (हृदयाकाश)का अल्पपना औ विनाशीपना है? ऐसैं आशंकाकिये दोषकूं परिहार करिके। उपास्यताकी सिद्धिअर्थ पातनिकाकूं करैहैं ॥

६१ इसविषै सर्व कामोंके समाधान (स्थितपनै)के हुये फलित उपासनकूं उपदेश करैहैं ॥

नुष्ठान करो। बाह्यविषयनकी तृष्णाकूं त्यागो। यह अभिप्राय है॥ [६२]यँह आत्मा कहिये तुह्मारा स्वरूप है॥ ताके लक्षणकूं श्रवण करोः—अपहत पाप्मा है। अपहत (नष्ट भया) है धर्म अधर्मनामक पाप जिसका सो यह अपहत पाप्मा है। तैसैं विजर (विगतजरावाला) औ विमृत्यु (मृत्युरहित) है॥ ॥ [६३]सो (जरामृत्युरहितपना) पूर्व हीं "इसके वधकरि हननकूं पावता नहीं" ऐसैं कहा है। फेर किसअर्थ कहियेहै? [६४]यँद्यपि देहके संबंधि जरा मृत्युके साथि संबंधकूं पावता नहीं। तथापि अन्यथा (और प्रकारसैं बी) तिनके साथि संबंध होवैगा? इस आशंकाकी निवृत्तिअर्थ सो फेर कहाहै॥ औ विशोक (विगतशोक)है। शोक नाम इष्ट आ-

---

६२ यथोक्त दहराकाशविषै किस प्रकारका उपासन कर्तव्यहै? इस अपेक्षाके हुये अहंग्रहकरि कर्त्तव्य है। ऐसैं कहैहैं

६३ पूर्ववादी पुनरुक्तिकूं शंका करैहै॥

६४ ताकूं सिद्धांती परिहार करैहैं॥ इहां अन्यथा। याका देहके संबंधविना स्वभावतैं बी। औ निवृत्ति अर्थ फेर कहियेहै। ऐसैं पूर्व ग्रंथसैं संबंध है॥

दिकके वियोगरूप निमित्तवाला मानस संताप है ॥ औ विजिघत्स (भक्षणकी इच्छासैं रहित) है औ अपिपास (पानकीइच्छासैं रहित) हैं ॥ ॥ [६५]ननु अपहतपाप्मा होनेकरि जरासैं आदिलेके शोकपर्यंत विकार निषेध कियेहीं होवैहैं । काहेतैं [६६]कारणके निषेधतैं । [६७]जातैं वे (जरा आदिक) धर्म अधर्मके कार्य हैं [यातैं जरा आदिकका भिन्न निषेध व्यर्थ है] ॥ वा [६८]जरा आदिकके निषेधकरि कार्यके अभावहुये विद्यमान धर्म अधर्मकीबी असत् समता होवैहै । यातैं धर्म अधर्मका भिन्न प्रतिषेध व्यर्थ होवैगा?

---

६५ पूर्ववादी प्रकारांतरकरि पुनरुक्तिकूं शंका करैहै ॥

६६ शोककी अंत जो किंचित् व्यवधान करिके पिपासा (तृषा)। सो जिनविषै है ऐसे जे जराआदिक वे शोकांत हैं। तिन जराआदिकनकी अपहतपापभावकारि प्रतिषिद्धताविषै पूर्ववादी हेतुकूं कहैहै ॥

६७ धर्म अधर्मके निषेधके हुये जराआदिक विकारनका निषेध कैसैं होवैहै? तहां कहैहैं ॥ इहां ऐसैं पृथक् प्रतिषेध व्यर्थ होवैगा। इस प्रकारसैं संबंध है ॥

६८ जराआदिकके निषेधकी अर्थवान्ताकूं अंगीकारकरिके पापके निषेधकी व्यर्थता है। ऐसैं पूर्ववादी अन्य पक्षकूं कहैहै॥

सत्य[६९] ऐसैं है । तथापि[७०] धर्मके कार्य आनंद (सुख) तैं व्यतिरेककरि स्वाभाविक आनंद जैसैं ईश्वर-विषै है "विज्ञान आनंदरूप ब्रह्म है" इस श्रुति-तैं । तैसैं अधर्मके कार्य जरा आदिकतैं व्यति-रेककरि (भिन्न)बी स्वाभाविक जरा[७१] आदिदुःख-का स्वरूप होवैगा ? ऐसैं आशंका करियेगा । यातैं ता आशंकाकी निवृत्ति अर्थ जराआदिक-नका धर्म अधर्मतैं भिन्न प्रतिषेध युक्त है ॥ इहां जराआदिकनका ग्रहण जो है सो सर्व दुःखनके उपलक्षण (ग्रहण) अर्थ है । औ पाप[७२]-रूप निमित्तवाले दुःखनकूं तो अनंत होनेतैं अरु

६९ धर्मआदिकके निषेधतैं इतर (जराआदिक)का वा जरा आदिकके निषेधतैं इतर (धर्म आदिक)का निषेध सिद्ध होवै-है । ऐसैं सिद्धांती अंगीकार करैहैं ॥

७० तब " अपहतपाप्मा " ऐसैं कहिके "विजर अरु वि-मृत्यु है " ऐसैं क्यूं कहियेहै ? तहां कहैहैं ॥

७१ तथापि दुःखके निषेधके हुये जराआदिक क्यूं निषे-ध करियेहै ? तहां कहैहैं ॥

७२ परंतु जो कार्यके अभाव हुये विद्यमान बी धर्म अ-धर्मकूं उखाडे दंतवाले सर्पकीन्यांई अकिंचित्कर होनेतैं "अ-पहतपाप्मा " ऐसैं पृथक् कहनेकूं योग्य नहीं है ? ऐसैं कहै। तहां कहैहैं ॥

प्रत्येक तिनके प्रतिषेधकूं अशक्य होनेतैं सर्व दुःखके प्रतिषेध अर्थ अपहतपाप्मापनैका वचन युक्तहीं है ॥ औ सत्य हैं काम जिसके सो यह सत्यकाम है ।[73] जैातैं संसारीयोंके काम असत्य (जूठे) होवैहैं । तिनतैं विपरीत ईश्वरके काम हैं ॥[74] तैसें कामके हेतु संकल्पबी[75] सत्यहैं जिसके सो सत्यसंकल्प है । ईश्वरके संकल्प अरु काम शुद्धसत्वगुण उपाधिरूप निमित्तवाले हैं ।[76] चित्रगु (विचित्र गौआंवाले गोप)की न्यांई[77] स्वतः

---

७३ ईश्वरकी सत्यकामताकूं साधतेहैं ॥

७४ जैसें ईश्वरके सत्य काम हैं । तैसें संकल्प बी सत्य हैं ॥ ऐसें कहैहैं ॥

७५ अभावरूप धर्मोंके अद्वैतकी अविद्यास्वरूप होनेकरि संभावितपनैके हुये बी भावरूप धर्म अविद्यास्वरूप कैसें संभवैंगे? यह आशंका करिके कहैहैं ॥ इहां शुद्ध सत्व जो रजोगुण तमोगुणकरि स्पर्शरहित त्रिगुणमायाका अंशभूत । सोई उपाधि है । सो निमित्त है जिनोंका वे तैसे हैं ॥

७६ अस्वाभाविक (उपाधिकृत) संकल्प आदिकनकी ईश्वरकी विशेषणताविषै दृष्टांतकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:— जैसें चित्र (नानाविध) अस्वाभाविक गौआं चित्रगु (देवदत्त) का विशेषण है । ऐसें ब्रह्मकाबी कामादिक विशेषण है ॥

७७ काम आदिक ब्रह्मविषै स्वाभाविक क्यूं नहीं होवैहैं ।

नहीं हैं "नेतिनेति" ऐसैं कथन किया होनेतैं ॥ [७८]यथोक्त लक्षणवालाहीं आत्मा [७९]गुरुनतैं अरु शास्त्रतैं अरु आत्मसंवेद्यताकरि (स्वानुभवकरि) स्वाराज्यकी कामनावाले पुरुषनकरि विशेष करि जाननेकूं योग्य है ॥ ॥ [८०]जब विशेषकरि नहीं जानियेहै तब कौंन दोष होवैगा ? ऐसैं कहोगे! तब इहां दृष्टांतकरि दोषकूं श्रवण करोः-[८१]जैसैंहीं इहां लोकविषै प्रजा । जैसैं अनुशासन है तैसै अनुवर्त्तमान होवैहैं । कहिये जैसैं इहां प्रजा अपनै स्वामीतैं अन्य स्वामीकूं मानती हुयी जैसैं अनुशासन (आ-

---

धर्म धर्मीकेहीं उपचारतैं अद्वैतश्रुतिके संभवतैं ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

७८ अन्य वाक्यकूं अवतारदेनैंकूं पातनिकाकूं करैहैं ॥

७९ ज्ञानके प्रकारकूं निमित्त अरु अधिकारीके प्रदर्शनपूर्वक दिखावैहैं ॥

८० प्रश्नपूर्वक " जैसैंहीं इहां " इत्यादिवाक्यकूं कहैहैं ॥ इधर उक्तहृदयाकाशरूप आत्माका अपरिज्ञान "इहां" ऐसैं स्मरण किया है ॥

८१ अक्षरनतैं ऊठे अर्थकूं "जैसैंहीं" इस दृष्टांतकरि दिखायके वाक्यार्थकूं कथन करैहैं ॥

तद्यथेह कर्म्मजितो लोकः क्षीयत

अर्थः–तहां जैसें इहां कर्मकरि जीत्या

ज्ञा) होवै तैसें अनुवर्त्तमान होवैहैं ॥ ॥ क्यूं[82] किः– जिस जिस अंत (प्रांत)के प्रति अरु जिस देशके प्रति अरु जिस क्षेत्रके भाग-के प्रति कामना करनेवाली (अर्थिनी) होवैहैं आपकी बुद्धिके अनुसार तिस तिसहीं प्रांत-आदिकके प्रति उपजीवनकूं करैहैं ॥ यहै[83] दृष्टांत पुण्यफलके उपभोगविषै अस्वतंत्रतारूप दोष है ताके प्रति है ॥ ५ ॥

टीकाः–अनंतर अन्यदृष्टांत ता (पुण्यकर्म-फलोंके भोग)के क्षयके प्रति है "तहां जैसें इहां" इत्यादि ॥ तहां जैसें इहां (इसलोकविषै) तिनहीं स्वामीके अनुशासनके अनुसार वर्त्तने-

८२ उसी अर्थकूं प्रश्नपूर्वक कथन करैहैं ॥

८३ उक्त दृष्टांतकरि विवक्षित अंशकूं अनुवादकरिके अ-न्य दृष्टांतके तात्पर्यकूं कहैहैं ॥

एवमेवामुत्र पुण्यजितो लोकः क्षीयते। तद्य इहात्मानमननुविद्य व्रजन्त्येताᳲ-

लोक क्षयकूं पावताहै ऐसैंहीं उहां पुण्यकरि जीत्यालोक (भोग)क्षयकूं पावताहै ॥ तहां जे इहां आत्माकूं औ इन सत्यका-

वाली प्रजाओंका सेवा आदिक कर्मकरि जित (संपादित) लोक कहिये पराधीन उपभोग क्षीण होवैहै कहिये अंतवान् होवैहै ॥ ॥ अनंतर अब दार्ष्टांतिककूं उपसंहार करैहैः—ऐसैंहीं उहां (स्वर्गादिलोकविषै) अग्निहोत्रादि पुण्यकरि जित लोक (पराधीन उपभोग) क्षीण होवैहीं है ऐसैं ॥ ईन (नहीं जाननेवालों)कूं दोष कहा है ऐसैं विषयकूं दिखावैहैं "तहां जे" इत्यादिकरिः—तहां जे इसलोकविषै ज्ञान कर्मके अधि-

---

८४ किनकूं यह दोष होवैहै? इस अपेक्षाके लिये कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—कर्मसाध्यकी परतंत्रता अरु क्षयशीलता है। ज्ञानहीन कर्मसाध्य विषयरूप ब्रह्मके उपासकोंकूं यह दोष होवैहै। ऐसैं उत्तर (पीछला) वाक्य दिखावैहै ॥

श्च सत्यान् कामाꣳस्तेषाꣳ सर्वेषु लो-
केष्वकामचारो भवत्यथ य इहात्मान-

मोंकूं नहीं जानिके जाते हैं (मरतेहैं) ।
तिनका सर्व लोकनविषै अकामचार होवैहै॥

कारी योग्य हुये यथोक्त लक्षणवाले शास्त्र अरु
आचार्यकरि उपदेश किये आत्माकूं नहीं जा-
निके कहिये जैसैं उपदेश भया तैसैं पीछे स्व-
संवेद्यताकूं न करिके इस देहतें जातेहैं औ जे
इन यथोक्त सत्य (सत्यसंकल्पके कार्य) स्वा-
त्माविषै स्थित कामोंकूं नहीं अनुभवकरिके
जातेहैं । तिनका सर्व लोकनविषै अकाम-
चार (अस्वतंत्रपना) होवैहै । जैसैं राजाके अ
नुशासनके अनुसार वर्त्तनेवाली प्रजाओंका हो-
वैहै तैसैं । यह अर्थ है ॥ औ जे[८५] अन्य इस

८५ अविद्वानोंकेहीं अस्वतंत्रतारूप दोषकूं कहिके । वि-
द्वानोंके स्वतंत्रतारूप फलकूं कथन करैहैं ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषद्भाष्यभाषादीपिकायामष्टमप्रपा-
ठकगतप्रथमखंडस्य टिप्पणम् समाप्तम् ॥ १ ॥

मनुविद्य व्रजन्त्येताꣳश्च सत्यान् कामाꣳस्तेषाꣳ सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ॥ ६ ॥

इति श्रीछांन्दोग्योपनिषदि अष्टमप्रपाठकस्य प्रथमः खण्डः समाप्तः ॥ १ ॥

औ जे इहां आत्माकूं अरु इन सत्यकामोंकूं जानिके जाते हैं । तिनका सर्व लोकनविषै कामचार होवैहै ॥ ६ ॥

इति श्रीछान्दोग्योपनिषदि मूलमात्रभाषादीपिकायामष्टमप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः समाप्तः॥१॥

लोकविषै आत्माकूं शास्त्र आचार्यके उपदेशकूं अनुसरिके कहिये स्वात्माकी सम्यक् वेद्यताकूं संपादन करिके जाते हैं (मरतेहैं) औ यथोक्त सत्यकामोंकूं अनुभवकरिके जाते हैं। तिनका सर्व लोकनविषै कामचार होवैहै । इस लोकविषै सार्वभौम (चक्रवर्त्ती) राजाकी न्यांई ॥ ६ ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषद्-भाष्यभाषादीपिकायामष्टमप्रपाठकस्य प्रथमः खंडः समाप्तः ॥ १ ॥

अथाष्टमप्रपाठकस्य द्वितीयः खंडः॥२॥

स यदि पितृलोककामो भवति स-

अथ श्री०मूलभाषा०अष्टमप्रपा०द्वितीयः खंडः ॥ २ ॥

अर्थः—सो जब पितृलोककी कामना-

अथ श्री०भाष्यभाषा०अष्टमप्रपाठ०द्वितीयः खंडः ॥२॥

दहरब्रह्मोपासनका फल १०

टीकाः—सर्व[८६] लोकनविषै कामचार कैसें होवैहै? यह कहियेहैः—जो ब्रह्मचर्यादि साधनोंकरि सपन्न हुया यथोक्त लक्षणवाले आत्माकूं वक्ष्यमाण हृदयविषै साक्षात् करताभया औ तिसविषै स्थित सत्य कामोंकूं साक्षात् करताभया। सो त्यक्तदेह हुया जब पितृलोककी कामनावाला कहिये पितर जे जनक वेई सुखके हेतु होनेकरि भोग्य होनेतैं लोक कहियेहैं तिनविषै है काम जिसकूं ऐसा होवै। नाम तिन

अथ श्री०अष्टमप्रपाठकगतद्वितीयखंडस्य टिप्प० २

८६ उक्त अर्थकूंहीं आकांक्षापूर्वक उपपादन करैहैं ॥

ङ्कल्पादेवास्य पितरः समुत्तिष्ठन्ति । तेन पितृलोकेन सम्पन्नो महीयते ॥ १ ॥

अथ यदि मातृलोककामो भवति

वाला होवैहै । इसके संकल्पतैंहीं पितर सम्यक् ऊठते हैं । इससैं पितृलोककरि संपन्न हुया महिमाकूं पावताहै ॥ १ ॥

अर्थः—औ जब मातृलोककी कामना-

पितरनके साथि संबंधकी इच्छा इसकूं होवैहै । ताके संकल्पमात्रतैंहीं पितरदेव सम्यक् ऊठते हैं कहिये आपके संबंधीभावकूं पावतेहैं । काहेतैं विशुद्धसत्ववाला होनेकरि ईश्वरकीन्यांई सत्यसंकल्प होनेतैं ॥ तिससैं पितृलोकरूप भोगकरि संपन्न हुया कहिये संपत्ति जो इष्ट-प्राप्ति तिसकरि समृद्ध हुया पूज्य होवैहै वा बढताहै कहिये महिमाकूं अनुभवकरताहै ॥१॥

टीकाः—अन्य समान है । इहां माता कहिये

सङ्कल्पादेवास्य मातरः समुत्तिष्ठन्ति । तेन मातृलोकेन सम्पन्नो महीयते ॥२॥

अथ यदि भ्रातृलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्य भ्रातरः समुत्तिष्ठन्ति । तेन भ्रातृलोकेन सम्पन्नो महीयते ॥३॥

अथ यदि स्वसृलोककामो भवति

वाला होवैहै । इसके संकल्पतैंहीं माता सम्यक् ऊठतीयां हैं । तिस (ज्ञानके माहात्म्यसैं) मातृलोककरि संपन्न हुया महिमाकूं पावताहै ॥ २ ॥

अर्थः—औ जब भ्रातृलोककी कामनावाला होवैहै । इसके संकल्पतैं भ्राता सम्यक् ऊठतेहैं । तिससैं भ्रातारूप लोककरि संपन्न हुया महिमाकूं पावताहै ॥ ३ ॥

अर्थः—औ जब स्वसा (भगिनी)रूप लोककी कामनावाला होवैहै । इसके सं-

---

अतीत सुखकी हेतुभूत जनयित्री (जननी)

सङ्कल्पादेवास्य स्वसारः समुत्तिष्ठन्ति। तेन स्वसृलोकेन सम्पन्नो महीयते ॥४॥

अथ यदि सखिलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्य सखायः समुत्तिष्ठन्ति। तेन सखिलोकेन सम्पन्नो महीयते ॥५॥

कल्पतैंहीं स्वसा (भगिनियां) सम्यक् ऊठतीयां हैं। तिससैं स्वसालोककरि संपन्न हुया महिमाकूं पावता है ॥ ४ ॥

अर्थः—औ जब सखारूप लोककी कामनावाला होवैहै। इसके संकल्पतैंहीं सखा सम्यक् ऊठते हैं। तिससैं सखालोककरि संपन्न हुया महिमाकूं पावताहै ॥ ५॥

---

[87]सामर्थ्यतैं। [88]जातैं दुःखकी हेतुभूत ग्रामशूकर-

---

८७ सुखकी हेतु भूत। ऐसा माताओंका विशेषण किसकारणतैं है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

८८ ताहीकूं स्पष्ट करैहैं ॥

अथ यदि गन्धमाल्यलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्य गंधमाल्ये समुत्तिष्ठतस्तेन गन्धमाल्यलोकेन सम्पन्नो महीयते ॥ ६ ॥

अथ यद्यन्नपानलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्यान्नपाने समुत्तिष्ठतस्तेनान्नपानलोकेन सम्पन्नो महीयते ॥ ७ ॥

अर्थः—औ जब गंध पुष्परूप लोककी कामनावाला होवैहै। इसके संकल्पतैंहीं गंध पुष्प सम्यक् ऊठते हैं। तिससैं गंध पुष्परूप लोककरि संपन्न हुया महिमाकूं पावताहै ॥ ६ ॥

अर्थः—औ जब अन्नपानरूप लोककी कामनावाला होवैहै। इसके संकल्पतैंहीं अन्नपान सम्यक् ऊठते हैं। तिससैं अन्नपानरूप लोककरि संपन्न हुया महिमाकूं पावताहै ॥ ७ ॥

आदिकजन्मकी निमित्त माताओंविषै विशुद्ध-

अथ यदि गीतवादित्रलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्य गीतवादित्रे समुत्तिष्ठतस्तेन गीतवादित्रलोकेन सम्पन्नो महीयते ॥ ८ ॥

अथ यदि स्त्रीलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्य स्त्रियः समुत्तिष्ठन्ति। तेन स्त्रीलोकेन सम्पन्नो महीयते ॥ ९ ॥

अर्थः—औ जब गीतवादित्र लोककी कामनावाला होवैहै। इसके संकल्पतैंहीं गीतवादित्र सम्यक् ऊठते हैं। तिससैं गीतवादित्र लोककरि संपन्न हुया महिमाकूं पावताहै ॥ ८ ॥

अर्थः—औ जब स्त्रीलोककी कामनावाला होवैहै । इसके संकल्पतैंहीं स्त्रियां सम्यक् ऊठतीयां हैं। तिससैं [अतीत] स्त्रीरूपलोककरि संपन्न हुया महिमाकूं पावताहै ॥९॥

सत्ववाले योगीकूं इच्छा वा तिनसैं संबधयुक्त

यं यमन्तमभिकामो भवति यं कामं कामयते सोऽस्य सङ्कल्पादेव समुत्ति-

---

अर्थः—औ जिस जिस प्रदेशकेप्रति कामनावाला होवैहै। जिस जिस काम-(भोग)कूं कामना करताहै। सो इसके सं-

---

नहीं है ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

टीकाः—जिस जिस प्रदेशके प्रति च्यारीओरतैं कामनावाला होवैहै औ जिस काम-(भोग)कूं कामना करताहै यथोक्ततैं व्यतिरेककरि। सो तिसके भीतर प्राप्त होनेकूं इष्टपदार्थ औ काम इसके संकलपतैं हीं सम्यक् ऊठताहै। औ तिसंकरि इच्छाका विघात होनेसैं अभिप्रेत अर्थकी प्राप्तिकरि संपन्न हुया महि-

---

८९ इहां "तिसकारि" याका ज्ञानके माहात्म्यकरि। यह अर्थ है ॥

इति श्री० अष्टमप्रपाठकगतद्वितीयखंडस्य टिप्पणम् ॥ २ ॥

ष्ठति। तेन सम्पन्नो महीयते॥ १०॥

इत्यष्टमप्रपाठकस्य द्वितीयः खण्डः॥ २॥

अथाष्टमप्रपाठकस्य तृतीयःखंडः॥३॥

त इमे सत्याः कामा अनृतापिधा-

कल्पतें सम्यक् ऊठताहै। तिससैं संपन्न (संयुक्त) हुया महिमाकूं पावताहै॥ १०॥

इति श्री॰मूलभाषा॰अष्टमप्रपा॰द्वितीयः खंडः२

अथ श्री॰मूलभाषा॰अष्टमप्रपाठ॰ तृतीयः खंडः॥३॥

अर्थः—वे ये सत्य काम अनृतरूप अ-

माकूं अनुभव करैहै। यह पद उक्तअर्थवाला है॥ १०॥

इति श्री॰भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्य द्वितीयः खंडः॥२॥

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्य तृतीयः खंडः ३

उक्त ब्रह्मध्यानांग फल। संप्रसाद। नामाक्षरस्तुति ९

टीकाः—यैंथोक्त आत्मध्यानके अनुष्ठानके प्र-

अथ श्री॰अष्टमप्रपाठकगततृतीयखंडस्य टि॰॥३॥

९० "वे ये सत्यकाम हैं" इत्यादिवाक्यके तात्पर्यकूं कहैहैं॥ इहां कहैहै समनंतर श्रुति। यह शेष है॥

नास्तेषाꣳ सत्यानाꣳ सतामनृतमपि-
धानं। यो यो ह्यस्येतः प्रैति न तमिह
दर्शनाय लभते ॥ १ ॥

पिधान (आच्छादन)वाले हैं। तिन सत्यनके
होते अनृत अपिधान है। जातैं इसका जो
जो इहांतैं मरताहै। ताकूं इहां दर्शनके
अर्थ पावता नहीं ॥ १ ॥

ति साधकोंकूं उत्साहके जननअर्थ करुणाकूं कर-
ती हुई श्रुति कहैहै:—[९१]यंह प्रसिद्ध कष्ट वर्त्तता-
है:—जो स्वात्माविषे स्थित प्राप्तहोनेकूं शक्यबी
वे ये सत्य काम अनृतापिधान (अनृतकरि
ढांपे) हैं। तिन आत्माविषै स्थित स्वाश्रयवा-
लेहीं हुये कामोंका अनृत अपिधान (ढांपना)
है। स्त्री अन्न भोजन आच्छादनआदिक [९२]बाह्य

---

९१ तिसीहीं अनुक्रोश (करुणा)कूं दिखावैहै ॥ इहां अ-
नृत है अपिधान (आच्छादन)कीन्यांई अपिधान जिनोंका।
तिनोंका। ऐसैं संबंध है ॥

९२ क्या सो अनृत है? तातैं कहैहैं ॥

विषयनविषै जो तृष्णा है औ तिस निमित्तवाला स्वेच्छाप्रचारवान्‌पना है सो मिथ्याज्ञानरूप निमित्तवाला होनेतैं अनृत ऐसैं कहियेहै ॥ तिसैं[९३] निमित्त सत्यकामोंकी अप्राप्ति है। यातैं सो अपिधान (आच्छादन)कीन्यांईं अपिधान है ॥ ॥ तिनकैं[९४]मोंके अलाभविषै अनृत अपिधानरूप निमित्त कैसैंहै ? यह कहियेहैः—जातैं जो जो इस जंतुका पुत्र भ्राता वा इष्ट इस लोकतैं प्रकर्षकरि जाताहै कहिये मरताहै। तिस इष्ट पुत्र वा भ्राताकूं सो स्वहृदयाकाशविषै विद्यमानकूंबी इहां फेर दर्शनकेअर्थ इच्छता हुयाबी नहीं पावताहै ॥ १ ॥

---

९३ सो (उक्त अनृत) आत्माविषै स्थित कामोंका अपिधान (तिरस्कार) कैसैं है ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

९४ उक्त अर्थकूं आकांक्षापूर्वक उत्तर वाक्यकूं अवतारदेके उपपादनकरैहैं ॥ इहां हृदयाकाशरूप स्वात्माविषै विद्यमान बी तिस (पुत्रादिक)कूं देखनेकूं इच्छता हुयाबी जातैं नहीं पावता है। तातैं अनृतरूप अपिधानकूं निमित्त करिके तिस (पुत्रादिरूपइष्ट)का अलाभ होवैहै। ऐसैं योजना है ॥

अथ ये चास्येह जीवा ये च प्रेता यच्चान्यदिच्छन्न लभते। सर्वं तदत्र ग-

---

अर्थः-औ फेर जे इसके इहां जीव हैं औ जे प्रेत(मरगये) हैं औ जिस अन्यकूं इच्छता हुया नहीं पावताहै। तिस सर्वकूं

टीकाः-औ[९५] फेर जे तिस विद्वान् जंतुके पुत्र वा भ्राताआदिक इहां जीव हैं (जीवतेहैं) औ जे इष्टसंबंधी प्रेत (मृत) हैं औ जो अन्य इसलोकविषै वस्त्र अन्न पानआदिक वा रत्नआदिक वस्तु है ताकूं इच्छता हुया नहीं पावताहै तिस सर्वकूं इहां हृदयाकाशनामकब्रह्मविषै यथोक्तविधिकरि जायके पावताहै ॥ इहां[९६]

---

९५ यातैं बी तिनके अलाभविषै निमित्त अनृतरूप आच्छादनहीं है। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां यथोक्त विधिकरि। ऐसैं उपासनाके प्रकारका कथन है ॥

९६ आत्माविषै स्थित कामोंके उक्त अनृतरूप आच्छादनवान्ताकूं निगमन करैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:-जातैं अविद्वानोंकरि अलभ्य अरु विद्वानोंकरि लभ्य (प्राप्य) सत्यकाम स-

त्वा विन्दतेऽत्र ह्यस्यैते सत्याः कामा अनृतापिधानास्तद्यथाऽपि हिरण्यनिधिं

इस (हृदयाकाशरूपब्रह्म)विषै जायके पावताहै । जातैं तिसविषै इसके ये सत्यकाम अनृतरूप आच्छादनवाले [वर्त्ततेहैं] ॥ तहां जैसैं गाडे हिरण्यनिधिकूं अक्षेत्रज्ञ

(इसहृदयाकाशविषै) जातैं इसके यथोक्त सत्यकाम अनृतरूप अपिधानवाले हुये वर्त्ततेहैं ॥ ॥ किंसप्रकारकीन्यांईं सो अन्याय है ? यह कहियेहैः—तहां जैसैं हिरण्यनिधिकूं । हिरण्य

र्वाधार जगत्के मूलकारण ब्रह्मरूप स्वात्माभूत ब्रह्मविषै वर्त्ततेहैं । तातैं वे अनृतरूप अपिधानवाले होवैहैं । काहेतैं अविद्याके होते तिनकी अप्रतीतितैं औ विद्याकरि तिस अविद्याके नाश हुये तिनकी प्रतीतितैं ॥

९७ जो कहा किः—ब्रह्मरूप स्वात्माविषै काम विद्यमान हुये बी नहीं प्रतीत होवैहैं ऐसैं । यह अन्याय है ? ऐसैं जो कहै । तहां प्रश्नपूर्वक दृष्टांतकूं उठायके व्याख्यान करैहैं ॥ इधर तहां स्वाधीनकी बी अप्राप्तिविषै दृष्टांत निर्देश करियेहै । यह शेष है ॥

निहितमक्षेत्रज्ञा उपर्य्युपरि सञ्चरन्तो
न विन्देयुरेवमेवेमाः सर्वाः प्रजा अह-

उपरि उपरि संचरते हुयेबी नहीं पावतेहैं॥
ऐसैंहीं ये सर्व प्रजा दिनादिनविषै इस ब्रह्म-

(सुवर्ण)हीं फेर ग्रहणअर्थ निधाता (स्थापक)
पुरुषनकरि निधान (स्थापन) करियेहै यातैं
निधि है ॥ ता भूमिके नीचे गाडे हिरण्यनि-
धिकूं जे अक्षेत्रज्ञ कहिये निधिके शास्त्रनकरि
निधिके क्षेत्रकूं नहीं जानतेहैं वे निधिके
उपरि उपरि संचरते हुयेबी जाननेकूं शक्य
निधिकूंबी नहीं पावतेहैं॥ ९८ऐसैंहीं ये अविद्या-
वाली सर्व प्रजा इस यथोक्त हृदयाकाशना-
मक ब्रह्मलोककेप्रति कहिये ब्रह्मरूपहीं जो
लोक सो ब्रह्मलोक है ताके प्रति दिनादिनविषै
सुषुप्तिकालमैं जाते हुयेबी "९९यैंह मैं अद्य ब्र-

---

९८ दार्ष्टांतिककूं व्याख्यान करैहैं ॥
९९ अलाभके प्रकारकूं आकारकरि दिखावैहैं ॥

रहर्गच्छन्त्य एतं ब्रह्मलोकं न विन्द-न्त्यनृतेन हि प्रत्यूढाः ॥ २ ॥

रूप लोकके प्रति जाते हुयेबी नहीं पावतेहैं। जातैं अनृतकरि हरणकिये हैं ॥ २ ॥

ह्मलोकभावकूं पायाहूं" ऐसैं नहीं पावते हैं। जातैं [100]यथोक्त अनृतकरि प्रत्यूढ (हृत) हैं। अर्थ यह जोः–[101]अविद्या आदिक दोषनकरि स्वरूपतैं बाहीर खींचेगये हैं। [102]यांतैं जंतुनकूं यह कष्ट वर्त्तताहैः–जो स्वाधीन हुयाबी ब्रह्म नहीं प्राप्त होवैहै। यह अभिप्राय है ॥ २ ॥

---

१०० तहां हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां यथोक्त (अनृत)करि। याका मिथ्याज्ञानके वाच्य अनादि अनिर्वाच्य अज्ञानकृत तृष्णाके प्रभेद ता (अनृत)के निमित्त इच्छाके प्रचारकरि। यह अर्थ है औ तातैं प्रजाओंकूं स्वात्मभूत ब्रह्मरूप लोकका अलाभ है। यह शेष है ॥

१०१ स्वरूपतैं अनृतकरि हृतपनैंकूंहीं स्पष्ट करैहैं ॥

१०२ प्रकृत आक्रोश (कष्टसूचक वचन)कूं उपसंहार करैहैं ॥ ॥

स वा एष आत्मा हृदि तस्यैतदेव

अर्थः—सो प्रकृत यह आत्मा हृदयविषै

टीकाः—सो[१०३] स्मरण किया ["जो आत्माअ-
पहतपाप्मा है" ऐसा प्रकृत है। वै शब्दकरि ता-
कूं स्मरण करावैहै] यह विवक्षित आत्मा हृ-
दयकमलविषै आकाशशब्दकरि कहाहै । ति-
सैं[१०४] इस हृदयका यहहीं निरुक्त (निर्वचन) है
अन्य नहीं ॥ "हृदयविषै यह आत्मा वर्त्तताहै"
ऐसैं जातैं है तातैं "हृदय" है । अभिप्राय यह
है किः—हृदयनामके निर्वचनकी प्रसिद्धिकरि-
बी स्वहृदयविषै आत्मा है ऐसैं जाननेकूं योग्य
है ॥ प्रतिदिन[१०५] एवंवित् कहिये हृदयविषै य-

---

१०३ अनुक्रोश (करुणा)द्वारा यथोक्त ब्रह्मध्यानके अनु-
ष्ठानविषै प्रयत्नकी कर्त्तव्यता कही । अब नाम आदिकविषै-
की न्याईं हृदयविषै ब्रह्मदृष्टिका आरोपमात्र है? इस शंकाकूं
निवारण करनेकूं अनंतरवाक्यकूं अवतारदेके व्याख्यानकरैहैं ॥

१०४ यथोक्त आत्मा हृदयविषै है । यह कैसैं जानियेहै?
तहां कहैहैं ॥

१०५ यथोक्त ज्ञानके फलकूं कहैहैं ॥

निरुक्तꣳ हृद्ययमिति।तस्माद्धृदयमहर-
हर्वा एवंवित्स्वर्गं लोकमेति ॥ ३ ॥

है । ताका यहहीं निरुक्त (स्पष्टीकरण)है:-
"हृदयविषै यह है" ऐसैं [जातैं है] तातैं हृ-
दय है ॥ दिनदिनविषैहीं एवंवित् स्वर्गलो-
क (हृदयगतब्रह्म)कूं पावताहै ॥ ३ ॥

ह आत्मा है ऐसैं जाननेवाला स्वर्गलोककूं
कहिये हार्द (हृदयगत) ब्रह्मकूं पावताहै ॥ ॥
[106]ननु ऐसैं नहीं जाननेवालाबी सुषुप्तिकालविषै
हार्द ब्रह्मकूं पावताहीं है काहेतें "हे सोम्य! तब
सुषुप्तिकालविषै सत्के साथि संपन्न होवैहै"
ऐसैं कथनाकिया होनेतें ? [107]बाढ (सत्य) ऐसैं है ।
[108]तथापि विशेष है:-[109]जैसैं जानताहुया अरु न

१०६ "एवंवित्" इस विशेषणकूं न सहारता हुया पू-
र्ववादी शंका करैहै ॥

१०७ ऐसैं नहीं जाननेवालेकूंबी सुषुप्तिकालविषै ब्रह्म-
की प्राप्तिकूं सिद्धांती अंगीकार करैहैं ॥

१०८ तब "एवंवित्" ऐसा विशेषण क्यूं है ? यह आ-
शंका करिके कहैहैं ॥

१०९ विद्वान् अरु अविद्वान्की विलक्षणताकूंहीं दृष्टांतक-

जानताहुया सर्व जंतु सत् ब्रह्मरूपहीं है । तथापि "तत्त्वमसि (सो तूं हैं)" ऐसैं आचार्यकरि प्रतिबोधितहुया विद्वान् सत्यहीं होवैहै । अन्य (अविद्वान्) देहादिककूंहीं "मैं हूं" ऐसैं जानताहुया सत्रूपहीं नहीं होवैहै॥ ऐसैंहीं विद्वान् अविद्वान् सुषुप्तिविषै यद्यपि सतकूं पावताहै । तथापि एवंवित्हीं स्वर्गलोककूं पावताहै ऐसैं कहियेहै औ देहपातके हुयेबी विद्याके फलकूं अवश्यभावी होनेतैं । यह विशेष है ॥ सुषुप्तिकालविषै अपने स्वरूपकरि सत्के साथि संपन्न हुया सम्यक् प्रसन्न होवैहै । यातैं विद्वान् संप्रसाद है[110] जाग्रत् अरु स्वप्नविषै विषय

रि स्पष्ट करैहैं ॥ इहां "तूं सो हैं" ऐसैं आचार्यकरि प्रतिबोधकूं पाया विद्वान् सत्हीं होवैहै । अन्य अविद्वान् तो "मैं हूं" ऐसैं देहादिककूंहीं जानताहुया न सत्हीं होवैहै । ऐसैं योजना है औ देहपातके हुयेबी । इस अपि(बी)शब्दकरि जीवत् अवस्था दृष्टांतकूं प्राप्तकरी ॥

११० संप्रसादरूप विद्वान्का जो मुक्तिविषै आलंबनरूप शुद्ध ब्रह्म है । ताके साथि तादात्म्यके उपदेशकरि उपास्यकूं स्तुति करनेकूं संप्रसाद–शब्दके अर्थकूं कथन करैहैं ॥ इहां सम्यक् प्रसन्न होवैहै । यातैं संप्रसाद विद्वान् है । यह शेष है॥

१११ स्वाभाविकहीं आत्माका स्वस्थपना है । सुषुप्ति-

अथ य एष सम्प्रसादोऽस्माच्छरी-

अर्थः—अनंतर जो यह संप्रसाद (सुषुप्तिकूं प्राप्त विद्वान्) इस शरीरतैं सम्यक्

अरु इंद्रियनके संयोगसैं जनित कलुषताकूं त्यागता है ॥ ३ ॥

टीकाः—संप्रसाद[११२] शब्द यद्यपि सर्व जंतुनका साधारण है । तथापि "एवंवित् स्वर्गलोककूं पावताहै" ऐसैं प्रकृत होनेतैं यह (विद्वान्) सं-

---

विषै प्रसन्न होवैहै । यह विशेष कैसैं कहियेहै? तहां कहैहैं ॥

११२ कलुषताकूं त्यागताहै यातैं सुषुप्त (सोया) पुरुष संप्रसाद है । इह विशेष व्युत्पत्तिके बलसैं संप्रसादशब्द सुषुप्तिकूं प्राप्तभये सर्व जीवनकूं साधारण है । तातैं "यह संप्रसाद है" ऐसैं समीप प्राप्तविद्वान्का ग्रहण कैसैं है? तहां कहैहैं ॥ इहां ता(संप्रसादशब्द)की सुषुप्तिगत सर्व जीवनकूं साधारणताके हुयेबी आरंभके वशतैं विद्वान्हीं "यह संप्रसाद है" ऐसैं व्यपदेश करियेहै ॥ जैसैं समीप स्थित अर्थ यत्नविशेषतैं "यह" ऐसैं शब्दशक्तिके वशतैं कहियेहै । तैसैं इहांबी है । यह अर्थ है औ यह एवंवित् प्रकृत संप्रसाद है सो विद्वान् है । यह अर्थ है औ विवेकके अनंतर । अथ शब्दका अर्थ है ॥

रात्समुत्थाय परं ज्योतिरुपसम्पद्य स्वे-
न रूपेणाभिनिष्पद्यत एष आत्मेति हो-

उत्थानकरिके पर ज्योतिकूं (स्वस्थताकूं)
पायके स्वरूपकरि संपन्न होवैहै (पावताहै)
यह आत्मा है ! ऐसें [आचार्य] कहता-

प्रसाद है । ऐसैं सन्निहित अर्थकीन्यांई यत्न-
विशेषतैं ॥ अनंतर सो इस शरीरकूं त्यागिके
इस शरीरतैं सम्यक् उत्थानकरिके । अर्थ
यह जो:–शरीरविषै आत्मभावनाकूं परित्याग-
करिके । [113] परंतु आसनतैं उत्थानकरिके याकी-
न्यांई इहां युक्त नहीं है काहेतैं "स्वरूपसैं" इस
विशेषणतैं । [114] जातैं अन्यतैं उत्थानकरिके स्वरूप
पावनेकूं योग्य नहीं है । जब पावनेकूं योग्य
होवै तब सो स्वरूपहीं नहीं होवैहै ॥ ऐसैं उ-

---

११३ समुत्थान शब्दके मुख्य अर्थवानूपनैकूं निवारण
करैहैं ॥

११४ देहादिकतैं उत्थितकीबी स्वरूपसैं अभिनिष्पत्ति
(प्राप्ति) होवैगी ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

वाचैतदमृतमभयमेतद्ब्रह्मेति। तस्य ह वा एतस्य ब्रह्मणो नाम सत्यमिति ॥ ४ ॥

भया ॥ यह अमृत अभय है। यह ब्रह्म है। ऐसें ॥ तिस प्रसिद्ध इस ब्रह्मका नाम "सत्य"है ऐसें ॥ ४ ॥

स्थानकरिके परमात्मलक्षण विज्ञप्तिस्वभावरूप परज्योतिकूं पायके। अर्थ यह जोः—स्वस्थताकूं पायके। अपने (आत्माके) स्वरूपकरि अभिनिष्पन्न (संपन्न) होवैहै। इसे[115] (सम्यक् ज्ञानरूप) स्वरूप संपत्तितैं पूर्व अविद्याकरि अपररूप देहकूंहीं आत्मभावकरि प्राप्तभयाथा। यातैं ताकी अपेक्षासैं यह स्वरूपकरि ऐसें कहिये है। जातैं अशरीरता[116] आत्माका स्वरूप

---

११५ स्वरूपविषै यह अभिनिष्पत्ति (प्राप्ति)का प्रयोग काहेतैं है? तहां कहैहैं ॥ इहां एतत् (इस) शब्द सम्यक् ज्ञानरूप अर्थवाला है। औ अनात्मस्वरूपकी प्राप्तिकी भ्रांतिकी निवृत्तिकी अपेक्षाकरि स्वरूपकी संपत्ति (प्राप्ति) उपचार(आरोप)सैं कहीं है ॥

११६ ताका स्वरूप क्या है? यातैं सो कहैहैं ॥ इहां यह

है । जिंसैं[117] अपने पर ज्योतिःस्वरूपकूं पावताहै । संप्रसाद यह आत्मा है । ऐसैं कहताभ-या ॥ "सो[118] कहै" ऐसैं जो श्रुतिनैं शिष्यनके-अर्थ नियोग (प्रेरणकूं प्राप्त) कियाथा सो ॥ ॥ किंवा[119]:-यह अमृत अविनाशि भूमा[120] "जोई[121] भूमा है सोई अमृत है" ऐसैं पूर्व कहाहै । याहींतैं अभय है । भूमातैं द्वितीयके अभावतैं।

अर्थ हैः-जैसैं मिथ्यारूप्य(रजत)सैं तादात्म्यकी निवृत्तिके हुये स्वाभाविक अरूप्य स्वरूपसैं शुक्तिस्थित होवैहै । तैसैं शरीरसैं तादात्म्यभ्रांतिकी निवृत्तिके हुये ताके अभावकरि उपलक्षित स्वच्छस्वरूपहीं स्थित होवैहै ॥

११७ यह आत्मा है ऐसैं कहताभया । इस वाक्यविषै एष (यह) शब्दके अर्थकूं कहैहैं ॥

११८ कौंन यह उक्तिका कर्त्ता है? इस आकांक्षाके हुये कहैहैं ॥ ॥

११९ प्रकृतज्योतिका केवल आत्मापनाहीं नहीं किंतु अन्यरूपवान्पना है । ऐसैं कहैहैं ॥

१२० अविनाशीपनैविषै हेतुकूं कहैहैं ।

१२१ तथापि अविनाशीपना कैसैं है? तहां कहैहैं ॥ इहां इति (यातैं) शब्द हेतु अर्थ है । अर्थ यह जोः-जातैं यथोक्त लक्षणवाला ब्रह्म है तातैं सो उपासनाकूं योग्य होवैहै ॥

तानि ह वा एतानि त्रीण्यक्षराणि "स

अर्थः-वे प्रसिद्ध ये तीनि अक्षर हैं:-

यातैं यह ब्रह्म है इति ॥ ॥ तिसैं[122] प्रसिद्ध इस ब्रह्मका नाम (अभिधान) है ॥ ॥ सो क्या है? "सत्य" है ऐसैं। जातैं सत्य ब्रह्म है। जातैं "सो सत्य है सो आत्मा है" ऐसैं पूर्व कहा है ॥ ॥ अनंतर फेर[123] यह नाम किसअर्थ कहिये है ? ताके उपासनके विधिकी श्रुतिअर्थ कहियेहै ॥ ४ ॥

टीकाः-वे[124] प्रसिद्ध ये ब्रह्मके नामके अक्षर हैं:-तीन[125] ये "सती।यं" ऐसे कहिये सकार

---

१२२ उपास्य ब्रह्मके नामकूं निर्देश करैहैं ॥

१२३ उक्तअर्थकी फेर उक्ति व्यर्थ है ? यह आशंकाकरिके परिहार करैहैं ॥

१२४ उपास्यकी स्तुतिअर्थ नामकूं कहिके तिस (स्तुति) अर्थ होनेकरिहीं नामके अक्षरनकूं प्रसंगविषै प्राप्त करैहैं ॥

१२५ वे अक्षर कौंनसे है ? इस अपेक्षाके हुये कहैहैं ॥

ति यमिति" तद्यत्सत्तदमृतमथ यत्ति तन्मर्त्त्यमथ यद्यन्तेनोभे यच्छति। य-

---

"स । ती । यं" ऐसे ॥ सो जो "सत्" है सो अमृत है। औ जो "ति (त्)" है सो मर्त्य (विनाशि) है। औ जो "यं" है तिसकरि

तकार औ यं ऐसे हैं ॥ इहां ईकार[126] तकारविषै उच्चारणअर्थ अनुबंध है। काहेतैं "ति" ऐसे [127]ह्रस्व अक्षरकरिहीं फेर ताके प्रतिनिर्देशतैं ॥ [128]तिनके मध्य तहां जो "सत् (सकार) है"

---

१२६ "तकार" यह कैसैं कहियेहै। ईकारकेबी तहां भावतैं? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

१२७ तहां हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां "ती" ऐसैं दीर्घ ईकार-कूं उद्देशकरिके ह्रस्व [इकार]कूं फेर "ति" ऐसैं अनुवाद क-रतेहुये नामके अक्षरनविषै ता(ईकार)के अविवक्षितपनैकूं-हीं सूचन करैहै। यह अर्थ है ॥

१२८ तीन अक्षरनके अवांतर भेदकूं दिखावैहैं ॥ इहां तिनके मध्य यह षष्ठी निर्धारणविषै है औ वर्णविभागकी अ-नंतरता अथशब्दका अर्थ है औ तकारकूं अक्षरकी समान-तातैं मर्त्यपना है ॥

दनेनोभे यच्छति तस्माद्यमहरहर्वा एवंवित्स्वर्गं लोकमेति ॥ ५ ॥

इत्यष्टमप्रपाठकस्य तृतीयः खण्डः ॥ ३ ॥

दोनूंकूं नियमन करताहै । जातैं इसकरि दोनूंकूं नियममैं रखताहै तातैं "यं" है ॥ दिनादिनविषै (प्रतिदिन)हीं एवंवित् स्वर्गलोककूं पावताहै ॥ ५ ॥

इति श्री०मूलभाषा०अष्टमप्रपा०तृतीयःखंडः ३

सो अमृतरूप सत् ब्रह्म है । अमृतका वाचक होनेतैं अमृतहीं तकाररूप अंतवाला सकार निर्देश किया ॥ अनंतर जो "ति" कहिये तकार है । सो मर्त्य (विनाशि) है ॥ अनंतर जो "यं" अक्षर है । तिस अक्षरकरि अमृत अरु मर्त्य नामवाले पूर्वले दोनूं अक्षरनकूं नियमन करैहै । अर्थ यह जोः—[१२९]आत्माकरि वश-

---

१२९ पूर्वले (सत्) दो अक्षरनकूं "यं" इस अक्षरकरि प्रयोगका कर्त्ता कैसैं नियमन करैहै ? इस आकांक्षाके हुये । नियमनके स्वभावकरि । ऐसैं कहैहैं ॥

कीन्यांई करैहै ॥ जातैं[130] इस "यं" ऐसे अक्षरकरि दोनूंकूं नियमन करैहै तातैं "यं" है ॥ जातैं उक्त दो संयत[131](नियमित)कीन्यांई इंसै[132] "यं" अक्षरकरि लखियेहैं ॥ जब ब्रह्म[133]नामके अक्षरकाबी यह अमृतभावआदिक धर्मवान्पना महाभाग्य है । तब नामवाले ब्रह्मका होवै यामैं क्या कहना है ! ऐसैं उपास्यताअर्थ स्तुति करियेहै ॥ ब्रह्मके नामके निर्वचनकरिहीं नामवाले (ब्रह्म)का वेत्ता [134]एवंवित् है ॥ [135]दिनै-

१३० "यं" इस अक्षरके नियममैं रखनेके स्वभावकूंहीं साधतेहैं ॥

१३१ ताकी तिस स्वभाववान्ताविषै अनुभवकूं अनुकूल करैहैं ॥

१३२ ता (यं इसअक्षर)की पूर्वले दो अक्षरनतैं ऊपरतैं होनेपना तिनकी नियामकताविषै हेतु है । ऐसैं मानिके कहैहैं॥ इहां लखियेहैं पूर्वले दो अक्षर । यह शेष है ॥

१३३ ब्रह्मका "सत्य" यह नाम है । ताका जो निर्वचन (स्पष्टीकरण) किया । ताके प्रयोजनकूं कहैहैं ॥

१३४ फलवाक्यविषै स्थित एवंवित्पदकूं व्याख्यान करैहैं ॥

१३५ वाक्य तो व्याख्यान करनेकूं योग्य नहीं है । काहेतैं पूर्वहीं व्याख्यान किया होनेतैं ॥

इति श्री०अष्टमप्रपाठकगततृतीयखंडस्य टिप्पणम् ॥ ३ ॥

अथाष्टमप्रपाठकस्य चतुर्थःखंडः ॥ ४ ॥

अथ य आत्मा स सेतुर्विधृतिरेषां

अथ श्री॰मूलभाषा॰अष्टमप्रपाठ॰चतुर्थः खंडः ॥ ४ ॥

अर्थः—अब जो आत्मा है सो सेतु वि-

दिनविषै (प्रतिदिन)हीं एवंवित् स्वर्गलोककूं पावताहै। यह वाक्य उक्त अर्थवाला है ॥ ५ ॥

इति श्री॰भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्य तृतीयः खंडः ॥३॥

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्य चतुर्थःखंडः४

ब्रह्मचर्यसैं संबंधअर्थ उक्तसंप्रसादकी स्तुति ३

टीकाः—[१३६]अनंतर जो आत्मा है ऐसैं ॥ ॥ [१३७]उक्त-लक्षणवाला जो संप्रसाद है ताका स्वरूप वक्ष्य-माण उक्त अरु अनुक्त गुणोंकरि फेर स्तुतिका विषय करियेहै । [१३८]ब्रह्मचर्यरूप साधनके संबंध-

---

अथ श्री॰अष्टमप्रपा॰चतुर्थखंडस्य टिप्पणम् ॥ ४ ॥

१३६ अन्यवाक्यकूं ग्रहण करैहैं ॥

१३७ ताके तात्पर्यकूं कहैहैं ॥ इहां प्रकारांतरकरि स्तुतिके प्रारंभ अर्थ वाक्यविषै स्थित अथ शब्द है ॥

१३८ क्यूं ऐसैं स्तुति करियेहै ? इस अपेक्षाके हुये । स्तु-

लोकानामसम्भेदाय । नैतꣳ सेतुमहो-

धृति (विधारक) है इन लोकनके असं-
भेद (अविनाश) अर्थ । इस सेतुकूं दिन

अर्थः—जो यह यथोक्त लक्षणवाला आत्मा है सो सेतु[१३९] (क्षेत्रके पांज)कीन्यांई सेतु है औ [१४०] विधृति कहिये विधरण (विधारक) है ॥ जातें [१४१] ईसकरि सर्व जगत् वर्ण आश्रमआदिक अरु क्रिया कारक फलआदिकके भेदके नियमोंकरि

तिकरने योग्य ब्रह्मरूप आधारविषै ब्रह्मचर्यनामक साधनके संबंधके विधान अर्थ । ऐसैं कहैहैं ॥

१३९ जैसैं मृत्तिका आदिकमय सेतु (क्षेत्रका पांज) "इसका यह क्षेत्र है" ऐसी व्यवस्था (मर्यादा)का हेतु है । तैसैं यह बी व्यवस्थाका हेतु है । ऐसैं कहैहैं॥

१४० सेतुपनैकूं साधतेहैं ॥

१४१ विधारकपनैकूं उपपादन करैहैं ॥ इहां वर्णाश्रमादि । यह आदिशब्द वय अरु अवस्थारूप विषयवाला है औ फलादि । यह आदिशब्द तो ताके अवांतर जातिवाले फलरूप विषयवाला है औ कर्त्ताके अनुसार क्रियाआदिकके भेदरूप विषयके नियमोंकरि सहित वर्णआदिककूं व्यवस्थापन करने-वाले परमेश्वरनैं सर्व जगत् धारण किया है। ऐसैं संबंध है ॥

रात्रे तरतो न जरा न मृत्युर्न शोको न सुकृतं न दुष्कृतम् ॥ १ ॥

रात्रि तरते (पावते) नहीं । न जरा न मृत्यु न शोक न सुकृत न दुष्कृत [तरताहै]। सर्व पाप इसतैं निवर्त्त होतेहैं। जातैं अपहतपाप्मा यह ब्रह्मलोक है ॥१॥

कर्ताके अनुसार विधाता (परमेश्वर)नैं धारण किया है ॥ [142]जातैं ईश्वरकरि नहीं धारणकिया यह विश्व विनाशकूं पावै। तातैं सो (परमेश्वर) सेतु । विधृति है ॥ ॥ [143]किसअर्थ सो सेतु है ? यह कहैहैं:—इन कर्त्ता कर्म अरु फलके आश्रय भूर्आदिक लोकनके असंभेदअर्थ कहिये अविदारणअर्थ। अर्थ यह जोः—अविनाशअर्थ है॥ ॥ किसविशेषणवाला यह सेतु है ? यह कहैहैं:—

---

१४२ अन्वयरूप द्वारकरि उक्त अर्थहीं व्यतिरेकद्वारा कहैहैं॥
१४३ उक्त हीं अर्थकूं प्रश्नपूर्वक स्पष्ट करैहैं ॥

इससे[144] तुरूप आत्माकूं अहोरात्र (दिनरात्रि) जे हैं वे उत्पत्तिवाले सर्वके परिच्छेद हुये तरते नहीं ॥ [145] जैसैं अन्यसंसारी दिनरात्रिरूप कालकरि परिच्छेद पावनेकूं योग्यहैं। तैसैं यह कालकरि परिच्छेद पावनेकूं योग्य नहीं है। यह अभिप्राय है ॥ [146] "जिसतैं अर्वाक् (पीछेका) संवत्सर दिनोंकरि वर्त्तताहै" इस अन्यश्रुतितैं ॥ याहींतैं इसकूं जरा तरति नहीं कहिये पावती नहीं ॥ तैसैं न मृत्यु न शोक न सुकृत न दुष्कृत [इहां सुकृत दुष्कृत धर्म अधर्म हैं] ॥ इहां तरणशब्दकरि प्राप्ति अभिप्रेत है। अतिक्रमण (उल्लंघन) नहीं। जातैं आत्मा [147] कारण है औ जातैं कार्यकरि कारणका अतिक्रमण करनेकूं

१४४ "नहीं इसकूं" ऐसैं प्रतीकका ग्रहण जो है ताकूं व्याख्यान करैहैं ॥

१४५ ताहीकूं विपरीतधर्मवाले दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥

१४६ परमात्माकी कालकरि परिच्छेद्यता नहीं है। इस अर्थविषै अथर्वणवेदकी श्रुतिकूं प्रमाण करैहैं ॥

१४७ तरताहै। ऐसैं "तरति" धातुका अतिक्रमणरूप अर्थ आत्माविषै नहीं संभवैहै। इस अर्थविषै हेतुकूं कहैहैं ॥

शक्य नहीं है औ [148]अहोरात्र आदिक सर्व सत्का कार्य है ॥ जातैं [149]अन्यकरि अन्यकी प्राप्ति वा अतिक्रमण करियेहै परंतु तिसीहींकरि तिसका नहीं ॥ जातैं घटकरि मृतिका प्राप्त करियेहै वा अतिक्रमण करियेहै नहीं ॥ ॥ [150]यद्यपि पूर्व "जो आत्मा अपहतपाप्मा है" इत्यादिवाक्यकरि पापआदिकनका निषेध कहाहींहै? तथापि इहां "नहीं तरैहै" ऐसैं प्राप्तिकी विषयता निषेध करियेहै यह विशेष है। तहां (पूर्व) अविशेष (सामान्य)करि जराआदिकका अभावमात्र कहाहै ॥ [151]अहोरात्रआदिक उक्त अरु अनुक्त अन्य सर्व पाप कहियेहैं। वे इस

१४८ कार्यकूं कारणका अतिक्रमण मति होहु। परंतु अहोरात्र आदिककूं आत्माका अतिक्रमण क्यूं नहीं होवैगा? यह आशंका करिकेकहैहैं ॥

१४९ "तरति" धातुके अतिक्रमणरूप अर्थवान्‌पनैकूं अंगीकारकरिके बी ताके निषेधविषै हेतुकूं कहैहैं ॥

१५० "तरति" वाक्यके अपहतपाप्मा आदिक वाक्यकरि पुनरुक्तिकूं आशंकाकरिके परिहार करैहैं ॥

१५१ विशेषणकूं अनंत होनेतैं एक एकके निषेधके वचनके असंभवकूं अभिप्रायका विषय करिके कहैहैं ॥

ब्रह्मचर्यसैं संबंधअर्थ उक्तसंप्रसादकी स्तुति ३

सर्वे पाप्मानोऽतो निवर्त्तन्तेऽपहतपाप्मा ह्येष ब्रह्मलोकस्तस्माद्वा एतꣳ

अर्थः—तातैं हीं इस सेतुकूं तरिके (पा-

आत्मारूप सेतुतैं निवर्त्त होवैहैं। अप्राप्त होयके। यह अर्थ है॥ जातैं [152] अपहतपाप्मा यह ब्रह्मरूपहीं लोक ऐसा ब्रह्मलोक कहा है॥ १॥

टीकाः—औ [153] जौतैं पापका कार्य अंधपनाआदिक शरीरवालेकूं होवैहै अशरीरकूं तो नहीं। तातैंहीं इस आत्मारूप सेतुकूं तरिके (पायक) अनंध (अंधतारहित) होवैहै। देहवान्‌ताके हुये पूर्व अंध हुया बी॥ तैसैं देह[154]वान्‌ताके हुये विद्ध हुया सो देहके वियोगके हुये सेतुकूं पायके अविद्ध होवैहै॥ तैसैं उपतापी

---

१५२ आपके कार्यनकी आत्माकूं अप्राप्त होयके हीं निवृत्तिविषै हेतुकूं कहैहैं॥

१५३ यथोक्त सेतुकी प्राप्तिके हुये फलितकूं कहैहैं॥

१५४ स्वाभाविक इसकी व्यर्थता है? यह आशंका करिके कहैहैं॥ इहां विद्ध कहिये दुःखआदिकका संबंधी॥

सेतुं तीर्त्वाऽन्धः सन्ननन्धो भवति विद्धः सन्नविद्धो भवत्युपतापी सन्ननुपतापी भवति। तस्माद्वा एतꣳ सेतुं तीर्त्वाऽपि

यके) अंधहुया अनंध होवैहै। विद्ध हुया अविद्ध होवैहै । उपतापी हुया अनुपतापी होवैहै । ताहीतैं इस सेतुकूं तरिके (पायके)

कहिये रोगआदिक उपतापवान् हुया अनुपतापी होवैहै ॥ किंवा[155]:—जातैं सेतुविषै अहोरात्र नहीं हैं तातैं इस सेतुकूं तरिके (पायके)नक्त (तमोरूपरात्रि) बी सर्व दिवसहीं सिद्ध होवैहै । अर्थ यह जो:—[156]विज्ञप्तिरूप आत्मज्योतिस्वरूप दिवसकीन्यांई दिवस सदा एकरूप हुया

---

१५५ यातैं बी आत्मारूप सेतुका महाभागधेयपना है। ऐसैं कहैहैं ॥

१५६ सर्व बी तमोरूप विद्वान्कूं दिवस हीं कैसैं होवैगा जातैं विद्याकरि बी विरुद्ध अर्थ नहीं सिद्ध होवैहै ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

नक्तमहरेवाभिनिष्पद्यते । सकृद्विभातो ह्येवैष ब्रह्मलोकः ॥ २ ॥

तद्य एवैतं ब्रह्मलोकं ब्रह्मचर्येणानु-

रात्रिबी दिवसहीं सिद्ध होवैहै ! जातें सदा विभातहीं यह ब्रह्मलोक है ॥ २ ॥

अर्थः—तहां जाई इस ब्रह्मलोककूं ब्रह्म-

विद्वान्कूं प्राप्त होवैहै ॥ जातें[157] सकृत्‌विभात (सदाविभात) कहिये सदा एकरूप स्वरूपकरि यह (ज्ञानी) ब्रह्मलोक है ॥ २ ॥

टीकाः—[158]तहां इस यथोक्त ब्रह्मलोककूं स्त्री अरु विषयनकी तृष्णाके त्यागरूप ब्रह्मचर्य-

---

१५७ तहां हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—ब्रह्मरूप अवेद्य लोक जातें स्वप्रकाश चिदेकतान स्थित होवैहै । यातें तिसरूप होनेतैं विद्वान्का यथोक्त रूपवान्पना अविरुद्ध है ॥

१५८ विद्याफलके यथोक्त रीतिकरि स्थित हुये यह फल विद्यावान् होनेकरि किनोंकूं सिद्ध होवैहै ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—ब्रह्मचर्यवानोकूं विद्याद्वारा ब्रह्मनामक लोक फलताहै ॥

विन्दन्ति तेषामेवैष ब्रह्मलोकस्तेषाꣳ सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ॥ ३ ॥

इत्यष्टमप्रपाठकस्य चतुर्थः खण्डः ॥ ४ ॥

चर्यकरि जानतेहैं तिनहींकूं यह ब्रह्मलोक होवैहै तिनका सर्वलोकनविषै कामचार होवैहै ॥ ३ ॥

इति श्री०मूलभाषा०अष्टमप्रपा०चतुर्थःखंडः ४

करि जे शास्त्र अरु आचार्यके उपदेशकूं अनुसरिके जानते हैं कहिये स्वात्मवेद्यताकूं संपादन करैहैं तिनहीं ब्रह्मचर्यरूपसाधनवाले ब्रह्मविदनकूं यह ब्रह्मलोक होवैहै। [१५९] अन्य स्त्री अरु विषयनके संगसैं जनित तृष्णावाले ब्रह्मविदनकूंबी नहीं ॥ तिनका सर्व लोकनविषै कामचार होवैहै । यह वाक्य उक्तअर्थवाला

---

१५९ तिनहींकूं । इस एवकार (हीं शब्द)करि प्रकाशित अर्थकूं कहैहैं ॥ इहां ब्रह्मवेत्ताओंकूं बी । ऐसैं वाणीमात्रकरि ब्रह्मका वेत्तापना कहियेहै औ तिनोंकूं । याका ब्रह्मचर्यवाले ब्रह्मवेत्ताओंकूं । यह अर्थ है ॥

अथाष्टमप्रपाठकस्य पंचमःखंडः ॥ ५ ॥

अथ यद्यज्ञ इत्याचक्षते ब्रह्मचर्य-

अथ श्री०मूलभाषा०अष्टमप्रपाठकस्य पंचमः खंडः॥५॥

अर्थः—अब जिसकूं "यज्ञ" ऐसें कहतेहैं

है ॥ [160] तातें ब्रह्मविदनकूं यह ब्रह्मचर्य परम सा-
धन है । यह अभिप्राय है ॥ ३ ॥

इति श्री०भाष्यभाषा०अष्टमप्रपाठकस्य चतुर्थः खंडः ॥४॥

अथ श्री०भाष्यभाषा०अष्टमप्रपाठकस्य पंचमः खंडः ५

स्तुत आत्माकी प्राप्तिअर्थ ज्ञानसहकारि
ब्रह्मचर्यका विधान ४

टीकाः—[161] जो आत्मा सेतुपनेआदिक गुणों-

---

१६० ब्रह्मचर्यरूप साधनवानोंकूं हीं ब्रह्मवेत्ता होनेकरि ब्रह्मनामक लोक होवैहै ॥ ऐसैं स्थित हुये फलितकूं कहैहैं॥इहां साधन है । ब्रह्मविद्याविषै । यह शेष है ॥ औ ब्रह्मविदनकूं । ऐसैं भाविनी वृत्तिकूं आश्रयकरिके कहा है ॥

इति श्री०अष्टमप्रपाठकगतचतुर्थखंडस्य टिप्पणम् ॥ ४ ॥

अथ श्री०अष्टमप्रपाठकगतपंचमखंडस्य टिप्पणम् ५

१६१ अब यथोक्त परमात्माकी प्राप्तिके साधन ज्ञानविषै सहकारि ब्रह्मचर्य पूर्व हीं कहा है । तैसैं हुये ब्रह्मचर्यकूं विधय करनेवाले उत्तरग्रंथकरि [कार्य था सो] किया ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां शमआदिककी अपेक्षाकरि अंतर

मेव तद्ब्रह्मचर्येण ह्येव यो ज्ञाता तं वि-
न्दतेऽथ यदिष्टमित्याचक्षते ब्रह्मचर्य-

सो ब्रह्मचर्य हीं है । जातैं ब्रह्मचर्यकरिहीं
जो ज्ञाता (ज्ञानी) है [सो] ताकूं पाव-
ताहै ॥ औ जाकूं "इष्ट" (पूजन) ऐसैं

करि स्तुत है ताकी प्राप्तिअर्थ ब्रह्मचर्यनामक
ज्ञानका सहकारि अन्य साधन विधान करनेकूं
योग्य है । ऐसैं कहैहै औ यज्ञ[१६२] आदिककरि क-
र्त्तव्य अर्थ ताकूं स्तुत करैहैः—अब[१६३] लोकविषै
शिष्ट पुरुष जिसकूं "यज्ञ" ऐसैं कहते हैं ।
कहिये परमपुरुषार्थका साधन कथन करते

(अन्य) शब्द है औ उक्त ब्रह्मचर्यकूं बी विधान करनेकूं अनंतर (पीछले) ग्रंथकी प्रवृत्ति है ॥ यह अर्थ है ॥

१६२ तब ता (ब्रह्मचर्य)की स्तुति क्यूं है ? यह आशंका-करिके । ता (स्तुति)की विधिकी शेषता (उपकारकता)कूं दिखावैहैं ॥

१६३ श्रुति उत्तरवाक्यकूं कहैहै । ताकूं लेके व्याख्यान करैहैं ॥ इहां ब्रह्मचर्यकी उक्तरीतिसैं विधानकरनेकी योग्य-ताके हुये ताकी स्तुतिके प्रारंभअर्थ अथ (अब) शब्द है

मेव तद्ब्रह्मचर्येण ह्येवेष्ट्वाऽऽत्मानमनुवि-
न्दते ॥ १ ॥

कहतेहैं सो ब्रह्मचर्यहीं है। जातैं ब्रह्मचर्य-
करिहीं पूजिके आत्माकूं पावताहै ॥ १ ॥

हैं सो ब्रह्मचर्यहीं है। [164] यज्ञका बी जो फल
है ताकूं ब्रह्मचर्यवान् पावताहै। यातैं यज्ञबी
ब्रह्मचर्यहीं है। ऐसैं निश्चय करनेकूं योग्य है॥ ॥
[165] ब्रह्मचर्य यज्ञ कैसैं है? यह कहै हैंः—जातैं
ब्रह्मचर्यकरिहीं [166] जो ज्ञाता है सो यज्ञकेबी
परंपराकरि फलभूत तिस ब्रह्मलोककूं पावता-
है तातैं यज्ञबी ब्रह्मचर्यहीं है। इसरीतिसैं "जो
ज्ञाता" इन अक्षरनकी अनुवृत्तिकरि यज्ञ ब्रह्मचर्य-

---

१६४ यज्ञके ब्रह्मचर्यविषै अंतर्भावकूं साधते हैं ॥
१६५ उक्तअर्थकूं हीं आकांक्षाद्वारा प्रतिपादन करैहैं ॥ इहां
परंपराकरि। याका चित्तशुद्धिरूपद्वारकरि। यह अर्थ है ॥
१६६ केवल फलद्वारा यज्ञ ब्रह्मचर्यविषै अंतर्भावकूं पा-
वता नहीं। किंतु यकार अरु ज्ञकाररूप दो अक्षरनके स-
म्यक् स्पर्श (संबंध)तैं बी। ऐसैं कहैहैं ॥

अथ यत्सत्रायणमित्याचक्षते ब्रह्म-

अर्थः–औ जिसकूं "सत्रायण" ऐसैं

हीं है ॥ औ जिसकूं "इष्ट" ऐसैं कहतेहैं सो ब्रह्मचर्यहीं है ॥[167] ॥ कैसैं कि? ब्रह्मचर्यरूपहीं साधनकरि तिस ईश्वरकूं पूजनकरिके अथवा आत्मविषयक एषणाकूं करिके तिस आत्माकूं पावताहै । एषणतैं[168] (इच्छाके करनेतैं) इष्टबी ब्रह्मचर्यहीं है ॥ १ ॥

टीकाः–औ जिसकूं "सत्रायण" ऐसैं कहते हैं सो ब्रह्मचर्यहीं है । तैसैं संत्[169]रूप

१६७ इष्टकर्मके ब्रह्मचर्यविषै अंतर्भावकूं आकांक्षाद्वारा स्पष्ट करैहैं ॥ इहां पूजन करिके तिस आत्माकूं पावताहै । ऐसैं संबंध है ॥

१६८ ब्रह्मचर्यकरि आत्मविषयक एषण (इच्छा) सपादन करियेहै । औ इष्ट (पूजन)करि बी सोई संपादन करियेहै । तातैं एषणरूप दोनूंके सादृश्यतैं इष्टकर्म बी यज्ञकीन्यांई ब्रह्मचर्यहीं है । ऐसैं कहैहैं ॥

१६९ बहु यजमानोंका किया वैदिककर्म सत्रायण है । सो तैसैं है । अर्थ यह जोः–यज्ञकीन्यांई औ इष्टकीन्यांई है ॥

चर्य्यमेव तद्ब्रह्मचर्य्येण ह्येव सत आ-
त्मनस्त्राणं विन्दतेऽथ यन्मौनमित्याच-
क्षते ब्रह्मचर्य्यमेव तद्ब्रह्मचर्य्येण ह्येवा-
त्मानमनुविद्य मनुते ॥ २ ॥

कहतेहैं सो ब्रह्मचर्यहीं है। जातैं ब्रह्मचर्य-
करि हीं सत्तैं आत्माके त्राण(रक्षण)-
कूं पावताहै ॥ औ जिसकूं "मौन" ऐसें
कहतेहैं सो ब्रह्मचर्य हीं है। जातैं ब्रह्मचर्य
करिहीं आत्माकूं जानिके मनन (चिंतन)
करताहै ॥ २ ॥

परमात्मातैं आत्मा (आप)के त्राण (रक्षण)-
कूं ब्रह्मचर्यरूप साधनकरि पावताहै यातैं
" सत्त्रायण " शब्दका वाच्यबी सो ब्रह्मचर्यहीं
है ॥ औ जिसकूं "मौन" ऐसें कहतेहैं सो
ब्रह्मचर्यहीं है । ब्रह्मचर्यरूपहीं साधनकरि
युक्त हुया आत्माकूं शास्त्र अरु आचार्यसैं

तहां ऐसैं सत्त्रायण ब्रह्मचर्यविषै अंतर्भावकूं पावताहै ? यह
आशंकाकरिके कहैहैं ॥

अथ यदनाशकायनमित्याचक्षते ब्र-

अर्थः-औ जिसकूं "अनाशकायन (अनशन)" ऐसैं कहतेहैं सो ब्रह्मचर्यहीं

जानिके पीछे मनन करताहै (ध्यावता है) यातैं मौन शब्दका वाच्य बी ब्रह्मचर्यहीं है ॥२॥

टीकाः-औ जिसकूं "अनाशकायन (अनशन)" ऐसैं कहते हैं सो ब्रह्मचर्यहीं है। जिसैं[170] आत्माकूं ब्रह्मचर्यकरि जानते हैं सो यह आत्मा जातैं ब्रह्मचर्यरूप साधनवान्‌का [अनशनतैं] नाश होता नहीं। तातैं अनाशकायनबी ब्रह्मचर्यहीं है ॥ औ जिसकूं "अरण्यायन" ऐसैं कहतेहैं सो ब्रह्मचर्यहीं है। औरै[171] अरुण्य शब्दके वाच्य ब्रह्मलोकगत दो अर्णव (समुद्र)

---

१७० उपवासपरायणपना अनाशकायन कहिये है। सो कैसैं ब्रह्मचर्यविषै अंतर्भावकूं पावताहै ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

१७१ अरण्यायन जो अरण्यवास सो कैसैं ब्रह्मचर्यके अंतर्भूत है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

ह्मचर्य्यमेव तदेष ह्यात्मा न नश्यति यं ब्रह्मचर्य्येणानुविन्दतेऽथ यदरण्यायनमित्याचक्षते ब्रह्मचर्य्यमेव तदरश्च ह वै

है। जातैं जिसकूं ब्रह्मचर्यकरि पावताहै यह (ब्रह्मचर्यवान्का) आत्मा नाशकूं पावता नहीं ॥ औ जिसकूं "अरण्यायन (अरण्यवास)" ऐसें कहतेहैं सो ब्रह्मचर्यहीं

हैं । इनविषै ब्रह्मचर्यवान्के अयन (गमन)तैं अरण्यायन ब्रह्मचर्य है ॥[१७२] जो ज्ञानतैं यज्ञ है। एषणतैं इष्ट है। सत्तैं त्राणतैं सत्रायण है। मननतैं मौन है। अनशनतैं अनाशकायन है। दो अरण्योंविषै गमनतैं अरण्यायन है। इत्यादि महान्पुरुषार्थके साधनोंकरि स्तुत हो-

---

१७२ विस्तारकरि कहे अर्थकूं संक्षेप करिके कहैहैं ॥ इहां जो ब्रह्मचर्यकरि आत्माके ज्ञानतैं आत्माकूं पावताहै सो ब्रह्मलोककूं पावताहै। तातैं यज्ञ ब्रह्मचर्य है। ऐसैं योजना है औ आदिशब्दकरि अपनी परमपुरुषार्थकी साधनता ग्रहण करिये है ॥

ण्यश्चार्णवौ ब्रह्मलोके तृतीयस्यामितो दिवि तदैरंमदीयꣳ सरस्तदश्वत्थः सो-

---

है ॥ तहां इसतैं तृतीय स्वर्गरूप ब्रह्मलोकविषै प्रसिद्ध "अर" औ "ण्य" दो अर्णव (समुद्र) हैं। तहां ऐर (अन्नमय अग्रद्रवयुक्त रसकरि पूर्ण) अरु मदीय (मदकर)

नेतैं ब्रह्मचर्य ज्ञानका परम सहकारि कारणरूप साधन है । यातैं ब्रह्मवेत्ताकरि सो यत्नतैं रक्षण करनेकूं योग्य है । यह अर्थ है ॥ तहां ब्रह्मलोकविषै जातैं प्रसिद्ध अर अरु ण्य शब्दके वाच्य दो अर्णव (समुद्र) हैं । वा समुद्रकी उपमावाले सर (तडाग) हैं। जो ब्रह्मलोक भूमि अरु अंतरिक्षकूं अपेक्षा करिके तृतीय स्वर्ग है तिस इस लोकतैं आरंभ करिके तृतीय गण्यमान स्वर्गविषै ॥ औ तहांहीं ऐर कहिये इरा जो अन्न तिसमय ऐर जो मंड (अग्ररसविशेष) तिसकरि पूर्ण ऐर ऐसा औ मदीय

मसवनस्तदपराजिता पूर्ब्रह्मणः प्रभुवि-
मितꣳ हिरणमयम् ॥ ३ ॥

सर है । तहां सोमसवन अश्वत्थ है । तहां
ब्रह्माकी अपराजिता पुरी है औ प्रभुकरि
निर्मित सुवर्णमय [मंडप] है ॥ ३ ॥

कहिये ताके उपयोग करनेवालोंकूं मदकर (ह-
र्षका उत्पादक)सर है औ तहांहीं अश्वत्थ-
वृक्ष नामतैं सोमसवन है । सोम जो अमृत
तिसरूप निस्रववाला वा अमृत स्रव ऐसा है औ
तहांहीं ब्रह्मलोकविषै ब्रह्मचर्यरूप साधनरहित
ऐसे ब्रह्मचर्यरूप साधनवानोंतैं अन्योंकरि नहीं
जय करियेहै ऐसी अपराजितानामक ब्रह्मा-
(हिरण्यगर्भ)की पुरी है औ तहां ब्रह्मारूप प्र-
भुकरि विशेषकरि निर्मित औ सो हिरण्मय
(सुवर्णका) प्रभुविमित (स्वामिरचित)मंडप
है । यह वाक्यशेष है ॥ ३ ॥

तद्य एवैतावरं च ण्यञ्चार्णवौ ब्रह्म-लोके ब्रह्मचर्य्येणानुविन्दन्ति तेषामेवैष

अर्थः–तहां ब्रह्मलोकविषै जेई इन अर अरु ण्य दो अर्णवोंकूं ब्रह्मचर्यकरि पावते-

---

टीकाः–[173]तहां ब्रह्मलोकविषै येई अर अ-ण्य इन नामावाले अर्णव हैं जे अर अरु ण्य ना-मवाले कहे । इनकूं ब्रह्मचर्यरूप साधनकरि जे पावतेहैं तिनकूं हीं यह जो व्याख्यान किया ब्रह्मलोक सो होवैहै औ तिन ब्रह्मचर्यरूप सा-धनवाले ब्रह्मवेत्ताओंका सर्व लोकनविषै कामचार होवैहै । अन्य अब्रह्मचर्यपर बाह्यवि-षयासक्तबुद्धिनकूं कदाचित्‌बी नहीं । यह अर्थ है ॥ ॥ [174]ननु इहां "तूं इंद्र हैं । तूं यम हैं" इत्या-

---

१७३ ब्रह्मचर्यकूं स्तुत होनेतैं ताकूं विषय करनेवाले वि-धिकूं कहिके । अब तिसकरि सहित विद्या (उपासना)करि साध्य फलकूं कथन करैहैं ॥

१७४ ब्रह्मचर्यकूं अतिअल्पसाधन होनेतैं ताकी बडी स्तुति अयुक्त है । तातैं ब्रह्मचर्यकरि ज्ञानकूं लखायके सोई ज्ञान स्तुत करियेहै ? इस मतकूं पूर्ववादी उठवताहै ॥

ब्रह्मलोकस्तेषाꣳ सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ॥ ४ ॥

इत्यष्टमप्रपाठकस्य पंचमः खण्डः ॥ ५ ॥

हैं तिनहींकूं यह ब्रह्मलोक होवैहै । तिनका सर्व लोकनविषै कामाचार होवैहै ॥ ४ ॥

इति श्री०मूलभाषा०अष्टमप्रपाठ०पंचमःखंडः ५

दि वाक्यनकरि जैसैं कोईकबी महापूज्य पुरुष स्तुत करियेहै । ऐसे इष्ट आदिक शब्दनकरि स्त्री आदिक विषयनकी तृष्णाकी निवृत्तिमात्र जो ब्रह्मचर्य सो स्तुतिके योग्य नहीं है । किंतु ज्ञानकूं मोक्षका साधन होनेतैं सोई इष्ट आदिक शब्दनकरि इहां स्तुत करियेहै ? ऐसे केईक कहतेहैं । [१७५] सो बनै नहीं:—काहेतें स्त्रीआदिक बाह्यविषयनकी तृष्णाकरि हरण कियेगयेहैं चित्त जिनोंके ऐसे पुरुषनकूं प्रत्यगात्माके विवेक वि-

---

१७५ तिस ब्रह्मचर्यकी क्षुद्रसाधनता अशुद्ध है दुःखसैं अनुष्ठान करने योग्य होनेतैं औ तिसविना ज्ञानके असंभवतैं । ऐसैं सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं ॥

ज्ञानके असंभवतैं "[१७६]स्वयंभू इंद्रियनकूं बहिर्मुख हिंसाकरता भया तातैं पुरुष पराक् (बाह्य) देखताहै अंतरात्माकूं नहीं" इत्यादि श्रुति अरु स्मृतिनके शतनतैं [१७७]ज्ञानका सहकारि कारण जो स्त्रीआदिक विषयनकी तृष्णाकी निवृत्तिका साधन ब्रह्मचर्य सो करनेकूं योग्यहीं है । यातैं ताकी स्तुति युक्तहीं है ॥ ॥ [१७८]ननु यज्ञआदिककरि स्तुत ब्रह्मचर्य है । यातैं यज्ञआदिकनकी पुरुषार्थसाधनता जानियेहै ? [१७९]सत्य जानियेहै । [१८०]परंतु इहां

१७६ विषयकरि हरेगयेहैं चित्त जिनोंके ऐसैं नरनकूं विवेकके असंभवविषै प्रमाणकूं कहेहैं ॥ इहां "विषयनकूं ध्यावनेवाले पुरुषका" इत्यादि गीता स्मृतिविवक्षित है ॥

१७७ ब्रह्मचर्यकी उत्तम साधनताके सिद्धभये फलितकूं कहैहैं ॥

१७८ ब्रह्मलोककी प्राप्तिके साधन ब्रह्मचर्यकूं यज्ञ आदिककरि स्तुत होनेतैं तिनकीबी ब्रह्मलोकप्राप्तिकी साधनता श्रुतिनैं अभिप्रायकी विषयकरी है? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै॥

१७९ तिन यज्ञादिकनकी पुरुषार्थ (चित्तशुद्धिद्वारा केवल मोक्ष)की साधनता प्रकृत श्रुतिकरि प्रतीत होवैहै । किंवा ब्रह्मलोककी साधनता ? ऐसैं विकल्प करिके सिद्धांती प्रथम पक्षकूं अंगीकार करेहैं ॥

१८० द्वितीयपक्ष बनै नहीं । वाक्यभेदके प्रसंगतैं । ऐसैं कहैहैं ॥

ब्रह्मलोककेप्रति यज्ञआदिकनकी साधनताकूं अभिप्रायकी विषय करिके यज्ञआदिकनकरि ब्रह्मचर्य नहीं स्तुत करियेहै। किंतु[१८१] तिनकी प्रसिद्ध पुरुषार्थकी साधनताकूं अपेक्षाकरिके स्तुतकरियेहै॥ जैसैं[१८२] इंद्र आदिक [की उपमा]करि राजा स्तुतकरिये है॥ परंतु जहां इंद्र आदिकनका व्यापार है तहांहीं राजाका [स्वतंत्र कर्तृत्व] नहीं है। ताकीन्यांई॥ ॥ जे[१८३] ये ब्रह्मलोकके संबंधी अर्णव आदिक औ संकल्पके जन्य पिता आदिक भोग हैं। वे[१८४] क्यां पार्थिव

१८१ तब यज्ञ आदिकनकरि ब्रह्मचर्यकी स्तुति कैसैं है? तहां कहैहैं॥

१८२ उक्तअर्थकूं दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं॥ इहां यह अर्थ हैः—"तूं इंद्र हैं। तूं विष्णु हैं" जैसैं इत्यादि वचन विप्र आदिककरि राजा स्तुत करियेहै। तथापि तिस राजाका इंद्र आदिकनके व्यापारविषै निरंकुश (स्वतंत्र) कर्त्तापना है ऐसैं नहीं अंगीकार करियेहै॥ ऐसैं यज्ञ आदिकनकरि स्तुत ब्रह्मचर्यकूंबी तुल्यफलवान्‌पना नहीं है॥

१८३ ब्रह्मलोकविषै स्थित पदार्थनकूं निर्णय करनेकूं विचारकूं प्रकट करतेहुये आदिविषै ता विचारके विषयकूं कहैहैं

१८४ तिनमैं एकपक्षकूं उठायके दृष्टांतकरि तिस उत्थित प्रकारकूं कहैहैं॥

(पृथिवीके विकार) औ आप्य (जलके विकार) हैं। जैसें इसलोकविषै देखियेहैं ताकीन्यांई अर्णव वृक्ष पुरी अरु सुवर्णमंडप हैं। [१८५]अथवा मानसप्रतीतिमात्र हैं? औ इसतैं क्या भया? [तहां सिद्धांती कहैहैं:–] [१८६]जब पार्थिव अरु आप्यरूप स्थूल होवैं तब तिनके हृदयविषै आकाशमैं समाधान (स्थिति)का असंभवहोवैगा औ पुराणमैं "ब्रह्मलोकविषै मनोमय शरीरआदिक हैं" ऐसा वाक्य है सो विरोधकूं पावैगा औ "[१८७]अशोकअहिम ब्रह्मलोककूं" इत्यादिक श्रुतियां

---

१८५ अन्य पक्षकूं स्वप्नदृष्टांतके वशतैं दिखावैहैं ॥

१८६ किस पक्षविषै कौंन लाभ है वा कौंन दोष है। औ दोषके दर्शनतैं मानस होनेकरि सूक्ष्मताविषै पुराणके अनुग्रहके संभवतैं वे मानस (मनोमय)हीं हैं। ऐसैं कहैहैं ॥

१८७ केवल तिनकी स्थूलताके हुये "दोनूं इसविषै" इत्यादि श्रुतिकरि औ पुराणरूप स्मृतिकरि विशेष नहीं होवैहै। किंतु "अशोक (संतापवर्जित) औ अहिम (शीतल स्पर्शकरि शून्य) ब्रह्मलोककूं जातेहैं इत्यादिक बी श्रुतियां ब्रह्मलोककूं निरूपण करतियां हैं। वे तहांके पदार्थनकी स्थूलताके हुये विरोधकूं पावैगी। काहेतैं स्थूल पदार्थनके तहां सद्भावके हुये शीतल स्पर्शआदिककूं अवर्जनीय होनेतैं। ऐसैं कहैहैं ॥

हैं ॥ ॥ [188]ननु समुद्र नदीयां तडाग वापी कूप यज्ञ वेद अरु मंत्र आदिक मूर्त्तिमान् हुये ब्रह्माकेप्रति प्राप्त होवैहैं" यह पुराणरूप स्मृति तिनकी मानसताकेहुये विरोधकूं पावैगी ? सो शंका बनै नहीं:-काहेतैं [189]मूर्त्तिमान्ताके हुये प्रसिद्ध रूपनकेहीं तहां गमनके असंभवतैं । [190]तांतैं प्रसिद्ध मूर्त्तिनतैं भेदकरि सागरादिकनकी अन्य मूर्त्ति सागरादिकनकरि गृहीत ब्रह्मलोकविषै गमन करनेवाली कल्पना करनेकूं योग्य हैं औ [191]तुल्यकल्पनाकेहुये यथाप्रसिद्ध

---

१८८ ब्रह्मलोकके पदार्थनकी मानसताविषै अन्य पुराणरूप स्मृतिके विरोधकूं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

१८९ क्या दृश्यमान रूपकरि समुद्र आदिकनका ब्रह्मलोकविषै गमन स्मृतिका अर्थ है । किंवा:-अन्यस्वरूपकरि गमन स्मृतिका अर्थ है ? ऐसैं विकलपकरिके प्रथम पक्षकूं सिद्धांती दूषण देतेहैं ॥ इहां उभयत्र (दोनूं लोकनविषै) अप्रतीतिके प्रसंगतैं । यह अर्थ है ॥

१९० प्रथम पक्षके असंभव हुये अवशेष रहे द्वितीय पक्षकूं कहैहैं ॥

१९१ द्वितीय विकल्प होहु हमारी क्या हानि है ? यह आशंका करिके । ब्रह्मलोकविषै मानस देहसैं मानसहीं सागरादिकनके मानसरूपके साथि संबंधके संभवतैं तिनकी मा-

(प्रसिद्धके अनुसार)हीं मानासिक आकारवालियां पुरुष स्त्री आदिक मूर्त्तियां कल्पना करनेकूं युक्त हैं । मानस देहके अनुसारी संबंधके संभवतैं ॥ [192]जोंतैं स्वप्नविषै मानासिकहीं आकारवालियां पुरुष स्त्री आदिक मूर्त्तियां देखी हैं ॥ [193]ननु वे मूर्त्तियां अनृतरूपहीं हैं औ [194]"वे ये सत्यकाम हैं" यह श्रुति तैसैं हुये विरोधकूं पावैगी ? सो शंका बनै नहींः—काहेतैं मानसप्रत्ययके सद्भावके संभवतैं ॥ [195]जोंतैं मानसप्रत्यय

नसहीं मूर्तियां ब्रह्मलोकविषै स्थित कल्पना करनेकूं युक्त हैं। ऐसैं कहैहैं ॥

१९२ तब मनोरथकरि कल्पितकीन्यांई अतिचंचल होनेतैं भोगके योग्य आकारवान्ता सागरादिकनकूं नहीं होवैगी ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

१९३ स्वप्नतुल्यताके हुये मिथ्यापनैकी प्राप्ति होवैगी ? ऐसैं पूर्ववादी आशंका करैहै ॥

१९४ मिथ्यापनैके प्रसंगकी इष्टताकूं आशंका करिके पूर्ववादी श्रुतिके विरोधकूं कहैहै ॥

१९५ जे स्वप्नविषै देखे हैं वे नहीं हैं परंतु "देखे हैं" ऐसा तिनका दर्शन बाधकूं पावता नहीं । तैसैं हुये स्वप्नपदार्थनके ज्ञानकी सत्यता इष्ट है। ऐसैं सिद्धांती परिहार करैहैं ॥ मानसी मूर्तियां । इस दृष्टांतकूं विवरण करैहैं ॥

स्त्री पुरुष आदिक आकार स्वप्नविषै देखियेहैं ॥ ॥ [१९६] ननु जाग्रत्‌की वासनाके अनुसार स्वप्नके दृश्य हैं। परंतु तहां स्वप्नविषै स्त्री आदिक विद्यमानहीं हैं ? हे पूर्ववादिन् ! [१९७] यह तेरेकरि अति अल्प कहियेहै। जाग्रत्के विषयबी मानसप्रत्ययकरि अभिरचितहीं हैं। काहेतें जाग्रत्के विषयनकूं सत्‌के अवलोकनकरि रचित तेज जल अरु अन्नमय होनेतें ॥ औ जातें [१९८] संकल्परूप मूलवाले लोक हैं। ऐसें "संकल्पकूं करते हुयेकीन्यांई स्वर्ग अरु पृथिवी हैं" इस ठिकाने कहाहै। औ [१९९] सर्व श्रुतिनविषै प्रत्यगात्मातें उ-

---

१९६ जागरितविषै संवित् (ज्ञान)तें अतिरिक्त पदार्थ हैं तिनकी वासनारूप वे पदार्थ स्वप्नविषै भासतेहैं। परंतु तिनकी ज्ञानस्वरूपता नहीं है ? ऐसें पूर्ववादी शंका करैहै ॥

१९७ जागरितकूं बी संवित्‌का विवर्त्त होनेतें ताकी तातें पृथक् सत्ता नहीं है। ऐसें सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं ॥

१९८ भूमविद्याके विचारके कियेहुयेबी जाग्रत्के विषयकूं संवित् (चेतनरूपज्ञान)का विवर्त्तपना होवैगा। ऐसें कहैहैं ॥

१९९ यातैंबी जाग्रत्के विषयनकूं संवित्‌का विवर्त्तपना है। ऐसें करैहैं।

त्पत्ति औ प्रलय कहेहैं औ तिसविषैहीं स्थिति "जैसैंहीं अर रथनाभिविषै" इत्यादि वाक्यकरि कहियेहै। [200] तातैं मानस अरु बाह्यविषयनका बीज अरु अंकुरकीन्यांई परस्पर कार्यकारणभाव अंगीकार करियेहीं है॥ ॥ [201] यद्यपि बाह्यहीं मानस हैं औ

---

२०० ननु कुलाल घटकूं करनेकूं इच्छता हुया मनविषै संकलपित आकारकूं बाहिर निर्माण करताहै। तहां संकल्प बाह्य आकारका निमित्त है औ संकल्प पूर्वानुभूतके सजातीयरूप विषयवाला है। पूर्वानुभूत बी पूर्वतरसंकलपका निमित्त है। ऐसैं निमित्त अरु नैमित्तकभाव जो है सो सर्वकी संवित्की विवर्त्तता (कल्पितकार्यता)के हुये कैसैं संभवैहै ? तहां कहैहैं॥ इहां यह अर्थ हैः—जातैं सत्कूं सर्वका ईक्षण जो है सो पूर्वकलपके पदार्थनके सदृश पदार्थनकूं विषय करनेवाला है औ पूर्वकलपके पदार्थ तिसतैं पूर्वतर ईक्षणके निमित्त हैं। यातैं संवित्हीं ऐसैं स्वअविद्याकरि विवर्त्तरूप होवैहै। काहेतैं निरवयव सन्मात्रकूं स्वरूपकरि ईक्षण आदिकके असंभवतैं। तातैं सर्वकी संवित्की विवर्त्तरूपताके हुयेबी यह अनिर्वाच्य निमित्त-नैमित्तिकभाव विरोधकूं पावता नहीं॥

२०१ अब सत्शब्दकी वाच्य संवित्के अनिर्वाच्य स्फुरणकालविषै जे विषय बाह्य होनेकरि भासतेहैं। तिनकी कदाचित्बी संवित् विना सत्ताके अनंगीकारतैं आदि अंतविषै असद्भावरूप अनृतपना प्राप्त होवैगा। तैसैं हुये व्यवहारके

मानसहीं बाह्यहीं हैं। तथापि तिनका सत्तास्वरूप आत्माविषै कदाचित्‌बी अनृतपना नहीं होवैहै ॥ ॥ [202] ननु स्वप्नविषै देखेविषय प्रतिबुद्ध(जागेपुरुष) कूं अनृतरूप होवैहैं ? यह तेरा कथन [203] सत्यहीं है। परंतु सो (स्वप्नके विषयका) अनृतपना [204] जाग्रत्के बोधकी अपेक्षावालाहै स्वतः नहीं औ [205] तैसें जाग्रत्‌विषै देखे विषयनका अनृतपना स्वप्नबोधकी

भंगका प्रसंग होवैगा ? तहां कहैहैं ॥ इहां तथापि अनृतपना नहीं है। ऐसैं अध्याहार करना औ अध्यस्तका अधिष्ठानहीं स्वात्मा (स्वरूप)है। तिसविषै कदाचित्‌बी अत्यंत असत्पना नहींहै तादात्म्यकरिहीं स्फुरणतैं। यातैं व्यवहारके भंगका प्रसंग नहीं है। यह भाव है ॥

२०२ कदाचित् बी अनृतपना नहीं है। ऐसैं कहनेवाले तुम सिद्धांतीकरि प्रतीतिकालतैं अन्यकालविषैबी विषयनका अनृतपना नहींहै ऐसैं कहीं। तहां अनुभवके विरोधकूं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

२०३ स्वप्नविषै देखे पदार्थनका कालांतरविषै मिथ्यापना हमकूं वांछितहीं है। ऐसैं सिद्धांती अंगीकार करैहैं ॥

२०४ तब तिनका असत्‌पनाहीं स्वीकार किया ? यह आशंका करिके कहेहैं ॥

२०५ तथापि जाग्रत्के बोधकरि अविषयीकरणतैं (नहीं देखनेतैं) स्वप्नविषै देखे पदार्थनका असत्‌पनाहीं माननेकूं

अपेक्षावालाहै स्वतः नहीं। [२०६] विशेष आकारमात्र तो सर्वका मिथ्याज्ञानरूप निमित्तवालाहै। ऐसैं "वाणीका आरंभण विकार नाममात्र (अनृत)है। तीनरूप हीं सत्य है" यह श्रुति कहैहै [२०७] औ वे तीनरूपबी आकार विशेषतैं अनृत हैं। [२०८] स्वतः सत् मात्ररूप होनेकरि सत्य हैं औ सत्रूप आत्माके प्रबोधतैं [२०९] पूर्व स्वविषयविषैबी स्वप्नके दृश्यकी-

---

योग्य है? यह आशंका करिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:- जब जाग्रत्के बोधसैं अविषयीकरणमात्रकारि स्वप्नदृष्टपदार्थनका असत्पना तुजकूं इष्ट है। तब जाग्रत्के विषयनकेबी स्वप्नके बोधकरि अविषयीकरणतैं असत्पनैका प्रसंग होवैगा। तातैं कदाचित्बी संवित्विषै विषयनका अत्यंत असत्पना नहीं है॥

२०६ तब वाचारंभणकी श्रुति कैसैं है? यह आशंका करिके कहैहैं॥

२०७ तीनरूपनकी सत्यताके हुये विशेष आकारमात्र मिथ्या है यह अयुक्त कहा है। काहेतैं तिन तीनरूपनविषैबी विशेष आकारके सद्भावतैं? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

२०८ तब तिन तीनरूपनविषै सत्यपद कैसैं प्रयोगकिया है? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

२०९ तब "सो सत्य है" इतना प्रयोग करनेकूं योग्य था क्यूं ऐसैं "तीन रूपहीं सत्यहै॥ यह कहा? तहां कहैहैं

न्यांई सर्व सत्यहीं हैं। यातैं कोईबी विरोध नहीं है। [210]तातैं ब्रह्मलोकके संबंधी मानसहीं अरण्य आदिक औ संकल्पजन्य पिता आदिक काम (भोग) [211]बाह्यविषयनके भोगकीन्यांई अशुद्धिरहित होनेतैं शुद्धसत्वमय संकल्पसैं जन्य ब्रह्मलोकविषै विषय हैं। यातैं निरतिशयसुखरूप अरु सत्य ईश्वरनके विषय होवैहैं। यह अर्थ है॥ औ [212]सतूरूप सत्य आत्माके प्रतिबोधके हुयेबी रज्जुविषै कल्पित सर्पआदिककीन्यांई सतूरूप

---

२१० प्रकृतकूं उपसंहार करैहैं॥ इहां तातैं। याका प्रथमपक्षकीन्यांई द्वितीयपक्षविषै दोषके अभावतैं। यह अर्थ है।

२११ जब इस लोकके विषयनकीन्यांई ब्रह्मलोकके बी विषय विचार कियेहुये सत्य हैं। तब तिनविषै कौंन विशेष है। जिसकरि इनके परित्यागकरि तिनके कामीनकूं विद्याका विधान है? तहां कहैहैं॥ इहां जन्य। ब्रह्मलोकविषै विषय हैं। यह शेष है औ प्रकृत फलश्रुतितैं। यह अध्याहार है॥

२१२ ननु तिनके अविद्यादशाविषै अर्थक्रियाकारिता (सफल क्रियाकी जनकता) रूप सत्यपनैंके संभव हुये बी विद्याअवस्थाविषै कहांतैं सत्यता होवैगी? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥ इहां यह अर्थ है:-जैसैं रज्जुविषै कल्पितसर्पआदिक जे हैं वे रज्जुतत्वके बोध हुये तिसस्वरूपताकूंहीं पावतेहैं विवेचनतैं। तैसैं सर्व बी विषय विद्याअवस्थाविषै अन्वय अरु

अथाष्टमप्रपाठकस्य षष्ठः खंडः ॥ ६ ॥
अथ या एता हृदयस्य नाड्यस्ताः

अथ श्री॰मूलभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्य षष्ठः खंडः ॥६॥

अर्थः—अनंतर जे ये हृदयकी नाडीयां

आत्मरूपताकूंहीं पावतेहैं। यातें सत्स्वरूपसें सत्यहीं होवैहैं ॥ ४ ॥

इति श्री॰भाष्यभाषा अष्टमप्रपाठकस्य पंचमः खंडः ॥५॥

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्य षष्ठः खंडः ॥६॥

उक्त ब्रह्मोपासककी मस्तकगत नाडीसैं गति
कहनेकूं नाडीखंड ६

टीकाः—औ जो[२१३] पुरुष हृदय कमलगत यथो-

व्यतिरेककरि परिहार (त्याग)केअर्थ असत्मात्रताकूंहीं पावतेहैं। यातैं तिनकी सत्यता अविरुद्ध है ॥

इति श्री॰अष्टमप्रपाठकगतपंचमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ५ ॥

अथ श्री॰अष्टमप्रपाठकगतषष्ठखंडस्य टिप्पणम् ६

२१३ सगुणविद्याके फलके स्वरूपकूं ऐसैं उपपादन करिके। ताकी प्राप्तिअर्थ गति कहनेकूं योग्य है। यातैं नाडीखंडकूं अवतार देतेहैं ॥ इहां यथोक्तगुण सत्यकामता आदिक हैं औ ब्रह्मचर्य आदिक। यह आदिशब्द शम दम आदिकके संग्रह अर्थ है ॥

पिङ्गलस्याणिम्नस्तिष्ठन्ति शुक्लस्य नील-
स्य पीतस्य लोहितस्येत्यसौ वा आदि-

हैं। वे पिंगल शुक्ल नील पीत लोहित सू-
क्ष्म रसकी (अन्नके रसकरि) [पूर्णहीं]
स्थित होवैहैं इति ॥ यह प्रसिद्ध आदित्य

क्तगुण विशिष्ट ब्रह्मकूं ब्रह्मचर्यआदिक साधन
करि संपन्न अरु त्यागकरी[214] है बाह्य विषयरूप
अनृतकी तृष्णा जिसनैं ऐसा हुया उपासताहै।
ताकी यह मस्तकगत (सुषुम्णा) नाडीकरि गति
कहनेकूं योग्य है। यातैं नाडीखंड आरंभ करि-
येहै:—अनंतर जे ये वक्ष्यमाण कमलाकार
ब्रह्मउपासनाके स्थान हृदयकी संबंधिनी ना-
डियां आदित्यमंडलतैं किरणोंकीन्यांई हृदयरू-

२१४ तिसीहीं आदिशब्दके अर्थकूं स्पष्ट करैहैं ॥ इहां अधिकारीके सफल उपासनाकी विधिके अनंतर। अथ शब्दका अर्थ है औ अन्नके रसकरि। यह शेष है औ तिसआकारवाली। यह तत् (तिस)शब्द अन्नरसरूप अर्थवाला है औ "शुक्लकी" इत्यादि षष्ठी पूर्वकीन्यांई है औ श्रुतिविषै "इति" शब्द जो है सो अध्याहारके प्रकाशनअर्थ है॥

त्यः पिङ्गल एष शुक्ल एष नील एष पीत एष लोहितः ॥ १ ॥

पिंगल है। यह शुक्ल है। यह नील है। यह पीत है। यह लोहित है ॥ १ ॥

पमांसपिंडतैं सर्व ओरतैं निकसी हैं। औ वे ये पिंगल (वर्णविशेषकरि विशिष्ट) सूक्ष्मरसकी (अन्नके रसकरि)पूर्ण तिस आकारवालीहीं हुई स्थित होवैहैं। अर्थ यह जोः—वर्त्ततियां हैं॥ तैसैं शुक्ल नील पीत अरु लोहित (रक्त) रसकी (रसकरि) पूर्ण हैं॥ ऐसैं सर्वत्र अध्याहार करनेकूं योग्य है॥ पित्तनामक[२१५] सौर (सूर्यके)तेजकरि भये पाककरि उत्पन्न अल्प कफके साथि संबंधतैं पित्तनामक सौर तेज पिंगल हो-

---

२१५ फेर अन्नके रसका पिंगल आदिक विचित्र वर्णविशेष कैसैं सिद्ध होवैहै? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥ इहां यह अर्थ हैः—जो पित्त नामक सौरतेज है। तिसकरि भुक्त अरु पीतका पाक होवैहै। तिस पाककरि उत्पन्न अल्पकफके साथि संबंधतैं सोई पित्तनामक सौरतेज पिंगल होवैहै। तिसके साथि संबंधतैं रसका अरु नाडीनका पिंगलपना होवैहै॥

वैहै औ [216] सोई वातके अधिक होनेतैं नील होवैहै
औ [217] सोई कफके अधिक होनेतैं शुक्ल होवैहै।
[218] कफके साथि वातकी समताके हुये पीत होवैहै।
[219] शोणित (रुधिर)की बहुलताकरि लोहित (रक्त)
होवैहै॥ [220] वा वैद्यक (वैद्यशास्त्र)तैं वर्णविशेष [221] कैसैं

---

२१६ औ सोई पित्तनामक सौरतेज यथोक्त पाकसैं उत्पन्न बहुत वायुके साथि संबंधतैं तिस (वायु)की अधिकतातैं नील होवैहै। तिसके साथि संबंधतैं अन्नरसकी अरु नाडीनकी नीलता होवैहै। ऐसैं कहैहैं॥

२१७ प्रकृतहीं पित्तनामक सौर तेज यथोक्त पाकके वशतैं उत्पन्न भये स्वसंबंधी कफकी अधिकतातैं शुक्ल होवैहै औ तिसके साथिसंबंधतैं अन्नरसकी अरु नाडीनकी शुक्लता होवैहै। ऐसैं कहैहैं॥

२१८ उक्त पाककरि उत्पन्न कफसैं तिस (पाक)करि उत्पन्नहुये वातकी समताके हुये सोई ताका संबंधी तेज पीत होवैहै॥ औ तिसके साथि संबंधतैं अन्नरसकी अरु नाडीनकी पीतता होवैहै। ऐसैं कहैहैं॥

२१९ जब तो यथोक्त पाकसैं उत्पन्न शोणित बहुल होवैहै तब तिसकी अरु नाडीनकी रक्तता होवैहै। ऐसैं कहैहैं॥

२२० अन्यपक्षकूं कहैहैं॥

२२१ खोजनेके प्रकारकूं कहैहैं॥ इहां यह अर्थ है:—नाभिके ऊपर औ हृदयतैं नीचे आमाशय कहतेहैं तिसविषै

तद्यथा महापथ आतत उभौ ग्रामौ

अर्थः-तहां जैसें बडा मार्ग व्याप्तहुया

होवैहैं ऐसें खोजनेकूं योग्य हैं ॥ यह [222]श्रुति तोः-आदित्यके संबंधतैंहीं नाडीनविषै अनुगत तिस (आदित्यरूप) तेजके ये वर्ण विशेष हैं। ऐसें कहैहै ॥ ॥ [223]कैसेंकि? यहहीं आदित्य वर्णतैं पिंगल है। यह आदित्य शुक्लबी है। यह नील है। यह पीत है। यह लोहित आदित्य हीं है ॥ १ ॥

टीकाः-[224]तौं (आदित्य)का अध्यात्मरूप (देह-

स्थित तेज "सौर पित्त है" ऐसें कहियेहै औ सो अन्य धातुरूप सहकारीके वशतैं अन्नरसके वर्णविशेषविषै कारण है "आमाशयविषै गत जो पित्त सो रंजक है। रसके रंजनतैं" इत्यादि वचनतैं ॥

२२२ तब "पिंगलकी" इत्यादि श्रुति कैसें है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

२२३ उक्तअर्थकूं आकांक्षाद्वारा स्पष्ट करैहैं ॥ इहां आदित्य (तेज)के पिंगलता आदिक वर्णविशेष शास्त्रप्रमाणके होनेतैंहीं प्रतीति करनेकूं योग्य हैं ॥

२२४ आदित्य जो नाडीनविषै अनुगत तेज। ताके पिंगल-

गच्छतीमञ्चामुञ्चैवमेवैता आदित्यस्य रश्मय उभौ लोकौ गच्छन्तीमञ्चामु-

---

दोनूं ग्रामोंकेप्रति जाताहै । इसकेप्रति औ उसकेप्रति ॥ ऐसैं हीं ये आदित्यकी रश्मियां (किरण) दोनूं लोकनकेप्रति जावै हैं ।

गत) नाडीनके साथि कैसैं संबंध है ? इस अर्थविषै दृष्टांतकूं कहेहैं:—तहां जैसैं लोकविषै महान् (विस्तीर्ण) जो पंथा (मार्ग) सो महापथ है । सो व्याप्त हुया दोनूं ग्रामोंके प्रति जाताहै । इस समीप स्थितकेप्रति औ उस दूर स्थितकेप्रति ॥ ऐसैं कहिये जैसैं दृष्टांत महापथ दोनूं ग्रामोंके प्रति प्रवेशकूं पाया हुया जाताहै। ऐसैं (तैसैं) हीं ये आदित्यके किरण दोनूं लोकनके प्रति उभयत्र प्रवेशकूं पाये हुये उस आदि-

---

ताआदिक वर्णविशेष होवैहैं । ऐसैं कहा । ताहीकूं प्रश्नद्वारा-दृष्टांतके आश्रयकरि स्पष्ट करैहैं ॥ इहां उभयत्र । याका आदित्यमंडलविषै औ पुरुषविषै । यह अर्थ है ॥

ऽमुष्मादादित्यात्प्रतायन्ते । ता आसु नाडीषु सृप्ता आभ्यो नाडीभ्यः प्रतायन्ते । तेऽमुष्मिन्नादित्ये सृप्ताः ॥ २ ॥

इस(पुरुष)केप्रति औ उस(आदित्यमंडल)के प्रति ॥ उस आदित्यतें प्रसृत होवैहैं । वे इन नाडीनविषै प्रविष्ट हुई इन नाडीनतें प्रसृत होवैहैं । वे उस आदित्यविषै प्रविष्ट हैं ॥ २ ॥

त्यमंडलकेप्रति औ इस पुरुषकेप्रति जावैहैं ॥ जैसैं[225] महापथ है ॥ ॥ कैसैंकि[226] ? आदित्य मंडलतें संतत (प्रसृत) होवैहैं । वे अध्यात्म इन पिङ्गल आदिक वर्णवाली यथोक्त[227] नाडीनविषै

---

२२५ तहां पूर्व उक्त दृष्टांतकूंहीं अनुवाद करैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:–दोनूं ग्रामोंकेप्रति जैसैं महापथ (बडामार्ग)जाताहै । तैसैं उभयत्र आदित्यके रश्मियां (किरण) प्रविष्ट हैं ॥

२२६ तिसीहीं प्रवेशकूं प्रश्नद्वारा प्रकट करैहैं ॥

२२७ तब नाडीनकूं पिंगलादि वर्णवान्‌पना कैसैं होवैहै? यह आशंका करिके "सौर तेजकरि" इत्यादि वाक्यकरि

तद्यत्रैतत्सुप्तः समस्तः सम्प्रसन्नः स्व-

अर्थः—तहां जिस कालविषै यह (सो-
वना) जैसें होवै तैसें सुप्त समस्त संप्रसन्न

गत हैं। अर्थ यह जोः—प्रविष्ट हैं । इननाडीनतैं प्रवृत्त संतानभूत हुई संतत होवैहैं वे उस आदित्यविषै प्रवृत्त हैं ॥ किरण शब्दकेवाच्य रश्मि[228]नकूं उभयलिंगवाली होनेतैं "ते(वे)" ऐसैं पुल्लिंगकरि कहियेहैं ॥ २ ॥

टीकाः—तहां[229] ऐसैं[230] हुये जिसकालविषै यह

उक्तअर्थकूं स्मरण करावैहैं ॥ इहां उस आदित्यविषै प्रविष्ट हैं । ऐसैं संबंध है ॥

२२८ स्त्रीलिंगकरि निर्देशकरी रश्मिनका पुल्लिंगकरि निर्देश कैसैं है ? तहां कहैहैं ॥

२२९ नाडीनके स्वरूपकूं कहिके । विज्ञानात्माकूं जो स्वाप (निद्रा)की अधिकरणता है तिसकरि तिन नाडीनकूं स्तुत करनेकूं आदिविषै स्वापकूं प्रसंगविषै प्राप्त करैहैं ॥

२३० सप्तमीके अर्थकूंहीं स्पष्ट करैहैं ॥ इहां ऐसैं हुये । याका नाडीनके स्वरूपके पूर्वोक्तरीतिकरि निरूपण किये हुये । यह अर्थ है औ यह स्वपन (सोवना) । यह क्रियाका विशेषण है ॥

प्नं न विजानात्यासु तदा नाडीषु सृप्तो भवति। तन्न कश्चन पाप्मा स्पृशति ते-जसा हि तदा सम्पन्नो भवति ॥ ३ ॥

होवैहै [याहींतें] स्वप्नकूं नहीं जानताहै। तब इन नाडीनविषै प्रविष्ट होवैहै। ताकूं कोई बी पाप स्पर्श करता नहीं। जातें तब तेजकरि संपन्न (व्याप्त) होवैहै ॥ ३ ॥

(सोवना) जैसैं होवै तैसैं यह जीव सुप्त (सुषु-प्तिकूं प्राप्त) होवैहै ॥ [231]स्वाप (निद्रारूप)कूं दोप्र-कारवाला होनेतैं सुप्तपुरुषका "समस्त"। ऐसा विशेषण है। अर्थ यह जोः—[232]उपसंहार (विलय)कूं प्राप्त भई सर्व करणोंकी वृत्तिवाला होवैहै। [233]यातैं बाह्यविषयनके संबंधसैं जनित

---

२३१ "समस्त" विशेषणके अर्थवान्‌पनैकूं कहैहैं ॥ इहां दर्शनवृत्ति (स्वप्न)की न्यांई अदर्शनवृत्ति (सुषुप्ति) है। ऐसैं स्वाप (निद्रा)का दो प्रकारपना इष्ट है। तहां दर्शनवृत्तिरूप स्वापकी व्यावृत्ति (निषेध) अर्थ "समस्त" ऐसा विशेषण है॥

२३२ ताके मिलित अर्थकूं कहैहैं ॥

२३३ अन्यविशेषणकूं उठायके व्याख्यान करैहैं ॥ इहां

कालुष्यके अभावतैं सम्यक् प्रसन्न ऐसा संप्रसन्न होवैहै। [२३४]यांहीतैं स्वप्नकूं कहिये विषयनके आकारके आभास मानस स्वप्नप्रत्ययकूं नहीं जानताहै। अर्थ यह जोः—नहीं अनुभवकरताहै॥ जब ऐसैं सुप्त होवैहै। तब इनसूर्यके तेजकरि पूर्ण यथोक्त नाडीनविषै। अर्थ यह जोः—[२३५]द्वाररभूत नाडीनकरि हृदयाकाशकेप्रति प्रविष्ट (गत) होवैहै॥ ॥ [२३६]जांतैं सत्‌की संपत्तितैं अन्य ठिकाने स्वप्नका अदर्शन नहीं है। इस सामर्थ्यतैं इहां "नाडीनविषै" यह सप्तमी

यातैं। याका उपसंहारकिये सर्व करणोंवाला होनेतैं। यह अर्थ है॥

२३४ उक्त विशेषण दोकूं आश्रय करिके "स्वप्नकूं" इत्यादि वाक्यकूं व्याख्यान करैहैं॥

२३५ नाडीनविषै प्रविष्ट होवैहै। ऐसैं जो कहा सो अयुक्त है। काहेतैं "जो यह हृदयके भीतर आकाश है तिसविषै शयन करैहै" ऐसैं अंगीकारतैं? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

२३६ "नाडीनविषै" ऐसैं सुनी जो सप्तमी सो "नाडीनकरि" ऐसैं तृतीयारूपकरि कैसैं व्याख्यान करियेहै? तहां कहैहैं॥ इहां तदा (तब) ऐसैं सुषुप्ति अवस्था कहियेहै॥

तृतीयारूपसैं पलटती है ॥ तिस सत्सैं संपन्न-कूं कोईबी धर्म अधर्मरूप पाप स्पर्श करता नहीं । तब आत्माकूं स्वरूपविषै अवस्थित होनेतैं । जातैं देहं[237] अरु इंद्रियकरि विशिष्टकूं सुखदुःखरूप कार्यके प्रदानकरि पाप स्पर्श करताहै । परंतु सत्केसाथि संपन्न (मिलितभये) स्वरूपविषै स्थितकूं कोईबी पाप स्पर्शकरनेकूं उत्साह करता नहीं ताकूं पापका अविषय होनेतैं ॥ [238]जातैं अन्य अन्यका विषय होवैहै । परंतु सत्कूं प्राप्तभये पुरुषका इसीकरिबी किसीतैं बी अन्यपना नहीं है ॥ अविद्या काम अरु कर्मके बीजका ब्रह्मविद्यारूप अग्निकरि अदाहरूप निमित्तवाला आत्माका [239]स्वरूपतैं प्रच्यवन (प-

२३७ तिस अवस्थाविषै कर्मके अभावके हुये फेर उत्थान कैसैं होवैहै? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः सुख दुःखके अनुभवके अभावतैं पापका असंस्पर्श इधर (सुषुप्तिविषै) कहनेकूं इच्छित है । परंतु कर्मके अभावतैं नहीं ॥

२३८ अविषयताकूं साधतेहैं ॥

२३९ सुषुप्तिविषै स्वरूपमैं अवस्थित पुरुषका गिरना कैसैं होवैहै? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां अविद्या काम अरु कर्मका बीज जो अनादि अज्ञान । ताका ब्रह्मविद्यानामक

तन) तो [२४०]जाग्रत् अरु स्वप्न अवस्थाकेप्रति गमनरूप [२४१]बाह्य विषयनका प्रतिबोध है । [२४२]ऐसैं हम षष्ठ अध्यायविषैहीं कहते भये । सो इहां बी प्रतीति करनेकूं योग्य है ॥ [२४३]जब ऐसैं सुप्तपुरुष नाडीनके अंतर्गत सौर तेजकरि जातैं सर्व ओरतैं संपन्न (व्याप्त) होवैहै । [२४४]यातैं तब विशेषकरि चक्षुआदिककी नाडीरूप द्वारनकरि बाह्यविषयनके भोगअर्थ अप्रसृत याके कारण होवैहैं ॥ [२४५]तातैं यह सुप्तपुरुष करणोंके निरोधतैं स्वात्माविषैहीं स्थितहुया स्वप्नकूं नहीं जानताहै । यह युक्त है ॥ ३ ॥

अग्निकरि सुषुप्तिविषै दाह नहीं होवैहै। तिस निमित्तवाला सुषुप्त पुरुषका फेर स्वरूपतैं गिरना होवैहै । ऐसैं संबंध है ॥

२४० ताहीकूं व्याख्यान करैहैं ॥

२४१ किसप्रकारका स्वरूपतैं पतनहै ? इस अपेक्षाके हुये कहैहैं ॥

२४२ औ यह "सत्‌विषै प्राप्त होयके नहीं जानतेहैं" इत्यादि वाक्यविषै पूर्व षष्ठ अध्यायमैं कहा है । ऐसैं कहैहैं ॥

२४३ "तेजकरि हीं" यह पापके अस्पर्शविषै श्रुतिउक्त हेतु है तिस हेतुकूं व्याख्यान करैहैं ॥

२४४ तिसकी व्याप्तिके कार्यकूं कहैहैं ॥

२४५ कार्य करणके संस्पर्शके अभावके फलकूं दिखावैहैं ॥

अथ यत्रैतदबलिमानं नीतो भवति

अर्थः—अनंतर जहां यह (प्राप्त होना) जैसें होवै तैसें अबलभावकूं प्रापित होवै-

टीकाः—तंहां[२४६] ऐसें[२४७] हुये अब जिसकालविषै

---

२४६ नाडीनकूं ऐसें स्तुतकरिके । तिनकरि ऊर्ध्वगमनकूं दिखावनेकूं मरणकालकूं प्रसंगविषै प्राप्त करैहैं ॥

२४७ ताहीके अर्थकूं कहैहैं ॥ इहां ऐसें हुये । याका नाडीनकी उक्तरीतिसैं श्रेष्ठताके हुये । यह अर्थ है औ तिन नाडीनकरि ऊर्ध्वगमनके दिखावनेके प्रारंभ अर्थ अथ (अब) शब्द है औ रोगादि । यह आदिपद आगंतुक सर्व निमित्तनके संग्रहअर्थ है औ जराआदिक । यह आदिपद तो स्वाभाविक सर्व निमित्तनके जनावनेअर्थ है । यह भेद है औ नयन (प्राप्त करना) यह क्रियाका विशेषण है औ प्रारब्ध कर्मके अवसानरूप अर्थवाला पंचम वाक्यगत अथ शब्दका अर्थ है औ "यह" ऐसा क्रियाका विशेषण है । ताका यह उत्क्रमण जैसें होवै तैसें । यह अर्थ है औ यथोक्त रश्मिन (किरणों)करि । याका नाडीनविषै प्रसृत अरु आदित्यमंडलतैं आगत रश्मिनकरि । यह अर्थ है औ कर्मकरि जित कहिये वशीकृत (स्वात्माके संबंधिभावकूं प्रापित) लोककूं नहीं उल्लंघनकरिके ताके प्राति अविद्वान् कहिये केवल कर्मवान् जाताहै । यह अर्थ है ॥

तमभित आसीना आहुर्जानासि मां जानासि मामिति। स यावदस्माच्छरीरादनुत्क्रान्तो भवति तावज्जानाति॥४॥

है। [तब] ताकूं च्यारीओरतैं बैठे हुये "मेरेकूं जानताहैं मेरेकूं जानताहैं" ऐसैं कहतेहैं। सो जहांलगि इस शरीरतैं अनुत्क्रांत होवैहै तहांलगि जानताहै ॥ ४ ॥

देवदत्त देहकेरोगआदिक निमित्तवाले वा जराआदिक निमित्तवाले अबलभाव (कृशभाव) कूं यह नयन (प्रापण) जैसैं होवै तैसैं प्रापित होवैहै। अर्थ यह जोः—जब मुमूर्षु (मरणेवाला) होवैहै। तब ताकूं सर्व ओरतैं वेष्टनकरिके बैठे ज्ञाति "मुजतेरे पुत्रकूं जानता हैं औ मुज पिताकूं जानता हैं" इत्यादि कहते हैं ॥ ॥ सो मुमूर्षु यावत् इस शरीरतैं नहीं निकस्या होवैहै तावत् पुत्रादिकनकूं जानताहै ॥ ४ ॥

अथ यत्रैतदस्माच्छरीरादुत्क्रामत्य-
थैतैरेव रश्मिभिरूर्ध्वमाक्रमते। स ओ-

अर्थः—अनंतर जब यह (उत्क्रमण) जैसें होवै तैसें इस शरीरतें उत्क्रमणकूं करताहै। तब इनहीं रश्मिनकरि सो "ॐ" ऐसें [ध्यावताहुया] ऊर्ध्वकूं गमन कर-

---

टीकाः—अनंतर जब यह (उक्रमण) जैसें होवै तैसें इस शरीरतें उक्रमण (निकसने)कूं करताहै। तब इन यथोक्तहीं रश्मिन (किरणों) करि ऊर्ध्वकूं जाताहै॥ जैसें कर्मकरि जित लोककेप्रति अविद्वान् जाताहै ॥ ईतर[२४८]विद्वान् तो यथोक्त साधनकरि संपन्न हुया सो "ॐ" ऐसें ॐकारकरि आत्माकूं ध्यावता-

---

२४८ दहरविद्यावालेकी गतिकूं दिखावैहैं ॥ इहां यथोक्त साधन जो दहर(उक्त हृदयाकाश)का विज्ञान तिसकरि संपन्न(विशिष्ट)। यह अर्थ है औ सो ध्यावताहुया जाताहै। ऐसें उत्तरग्रंथविषै संबंध है औ यथापूर्व (जैसें पूर्व)। याका स्वस्थअवस्थाविषै कीन्यांई मरणअवस्थाविषै बी। यह अर्थ है॥

मिति वा होद्वा मीयते। स यावत्क्षिप्ये-
न्मनस्तावदादित्यं गच्छत्येतद्वै खलु

ताहै। वा (विद्वान् जब) मरता है [तब]
ऊर्ध्वकूं [जाताहै]॥ सो जहांलगि मनकूं
डालताहै तहांलगि आदित्यके प्रति जाता-

हुया जाता है। जैसैं पूर्व (स्वस्थ अवस्थाकी
न्यांई) हीं[२४९] ॥ वाँ[२५०] उर्ध्वकूं जाताहै कहिये ज-
ब विद्वान् मरजाता है तब ऊर्ध्वकूं जाताहै।[२५१] वाँ
जब इतर (अविद्वान्) जाताहै तब तिर्यक्-
भावकूं जाता है। यह अभिप्राय है॥ सो[२५२] वि-
द्वान् उत्क्रमण करताहुया कहिये देहसैं नि-

२४९ वा ह। इन दो निपातनके अवधारण (निश्चयरूप) अर्थकूं कथन करैहैं॥

२५० "उत्" शब्दके अर्थकूं कहैहैं॥

२५१ वा शब्दकरि जनाये विकल्पकूं दिखावैहैं॥ इहां जब विद्वान् मरताहै तब ऊर्ध्वकूंहीं जाताहै औ जब तो अविद्वान् मरताहै तब तिर्यक् (टेढा)हीं जाताहै। यह विभाग है॥

२५२ त्यक्तदेहवाले विद्वान्की आदित्यकी प्राप्तिविषै अत्यंतशीघ्रताकूं दिखावनेकूं अनंतरके वाक्यकूं ग्रहण करैहैं॥

लोकद्वारं विदुषां प्रपदनं निरोधोऽविदुषाम् ॥ ५ ॥

है । यहहीं प्रसिद्ध लोकका द्वार विद्वानोंका प्रपदन (प्रापक) है । अविद्वानोका निरोध है ॥ ५ ॥

कस्या हुया यावत् मनकूं क्षेपण करैहै (डाले) कहिये जि[253]तने कालकरि मनका क्षेप (डालना) होवै तितने कालकरि आदित्यकूं जाताहै (पावताहै ।) इहां शीघ्र गमन करताहै। परंतु तितनेहीं कालकरि यह विवक्षित नहीं है ॥ ॥ किस अर्थ आदित्यके प्रति गमन करताहै?— यह कहियहै:—यहहीं प्रसिद्ध ब्रह्मलोकका द्वार है जो आदित्य है । इस द्वारभूत आदित्यकरि विद्वान् ब्रह्मलोककूं जाताहै । [254]यांतें विद्वानोंका (उपासकोंका) प्रपदन है । प्राप्त होताहै

---

२५३ ताकूं व्याख्यान करैहैं ॥

२५४ आदित्यकी प्राप्तिके हुये क्या होवैगा ? यातैं कहैहैं॥

तदेष श्लोकः शतञ्चैका च हृदयस्य

अर्थः-तहां यह श्लोक हैः-शत अरु एक हृदयकी नाडियां हैं। तिनके मध्य एक

ब्रह्मलोककूं इसद्वारकरि यातैं यह प्रपदन है औ निरोधन जो निरोध सो इस आदित्यतैं अविद्वानोंका होवैहै यातैं निरोध है । अर्थ यह जोः-अविद्वान् [२५५]सूर्यके तेजकरि देहविषैहीं निरुद्ध (रोके) हुये मस्तकगत नाडीकरि उत्क्रमण करते (निकसते)हीं नहीं "[२५६]च्यारी ओरतैं अन्यनाडीयां" इस श्लोक (मंत्र)तैं ॥ ५ ॥

टीकाः-तिस इस यथोक्त अर्थविषै यह श्लोक (मंत्र) होवैहैः-शत औ एक कहिये

---

२५५ तब आदित्यकूं प्राप्त अरु तिसतैं निरुद्ध भये अविद्वानोंकूं बी फेर ब्रह्मलोककी अप्राप्ति क्यूं होवैगी? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

२५६ देहविषै निरुद्ध भये अविद्वानोंका मस्तकगतनाडीनकरि उत्क्रमण नहीं होवैहै । इस अर्थविषै लिंगकूं दिखावैहैं॥ इहां षष्ठवाक्यकी टीकाविषै यथोक्त अर्थ जो है सो नाडीनका विभागरूप है ॥

नाड्यस्तासां मूर्द्धानमभिनिःसृतैका त-

मूर्द्धाके प्रति निकसी है । तिसकरि ऊर्ध्वकूं जाताहुया अमृतभावकूं पावताहै । च्यारी-

---

एकोत्तरशत नाडीयां मांसके पिंडभूत हृदयकी संबंधिनी प्रधानतैं होवैहैं । देहकी नाडीनकूं[257] अनंत होनेतैं ॥ तिनके मध्य एक (सुषुम्णा) मूर्धाकेप्रति निकसी है । तिसकरि ऊर्ध्वकूं गमन करताहुया अमृतभाव (क्रममुक्ति)कूं पावताहै । औ च्यारी ओरतैं (नानागतिवाली) कहिये तिर्यक् (टेढी) गमन करनेवाली अरु ऊर्ध्वगत अन्यनाडीयां संसारकेप्रति गमनकी द्वारभूत होवैहैं अमृतभाव अर्थ तो नहीं किंतु उत्क्रमणविषैंहीं होवैहैं । अर्थ यह जोः—

---

२५७ प्रधानतैं । इस विशेषणके तात्पर्यकूं कहैहैं ॥ इहां प्रकरण जो है सो नाडीरूप विषयवाला वा दहरविद्यारूपविषयवाला है ॥

इति श्री० अष्टमप्रपाठकगतषष्ठखंडस्य टिप्पणम् ॥ ६ ॥

योर्ध्वमायन्नमृतत्वमेति । विष्वङ्ङन्या उत्क्रमणे भवन्त्युत्क्रमणे भवन्ति ॥ ६ ॥

इत्यष्टमप्रपाठकस्य षष्ठः खंडः ॥ ६ ॥

अथाष्टमप्रपाठकस्य सप्तमः खंडः॥७॥

य आत्माऽपहतपाप्मा विजरो वि-

ओरतैं अन्य उत्क्रमणविषै होवैहै । उत्क्रमणविषै होवैहै ॥ ६ ॥

इति श्री०मूलभाषा०अष्टमप्रपा०षष्ठः खंडः ॥६॥

अथ श्री०मूलभाषा०अष्टमप्रपाठकस्य सप्तमः खंडः॥७॥

अर्थः—प्रजापतिरुवाचः—जो आत्मा

उत्क्रांति अर्थहीं होवैहै ॥ इहां दो अभ्यास प्रकरणकी समाप्ति अर्थ हैं ॥ ६ ॥

इति श्री० भाष्यभाषा०अष्टमप्रपाठकस्य षष्ठः खंडः ॥६॥

अथ श्री०भाष्यभाषा०अष्टमप्रपाठकस्य सप्तमः खंडः॥७॥

ब्रह्मा पास गत इंद्रविरोचनकूं अक्षिपुरुषोपदेश ४

टीकाः—अनंतर[२५८] जो यह संप्रसाद इस शरी-

अथ श्री०अष्टमप्रपाठकगतसप्तमखंडस्य टिप्पणम् ७

२५८ दहरविद्याविषै उपास्यकी स्तुतिअर्थ उक्तअर्थकूं

मृत्युर्विशोकोऽविजिघत्सोऽपिपासः स-
त्यकामः सत्यसङ्कल्पः सोऽन्वेष्टव्यः स

अपहतपाप्मा विजर विमृत्यु विशोक क्षु-
धारहित तृषारहित सत्यकाम सत्यसंकल्प
है। सो अन्वेषण करनेकूं (जाननेकूं इच्छा

रतैं उत्थान होयके पर ज्योतिकूं पायके स्वरू-
पकरि समाप्त (सिद्ध) होवैहै। येहँ[२५९] आत्मा है।
ऐसैं कहते भये॥ यह अमृत अभय है यह ब्र-
ह्म है" ऐसैं पूर्व कहाथा। तहां कौंन[२६०] यह सं-
प्रसाद है? वा तिसिकूं[२६१] ज्ञान कैसैं होवैहै।

अनुवाद करैहैं॥ इहां विवेककी अनंतरता अथशब्दका अर्थ व्याख्यान किया औ शरीरतैं सम्यक् उत्थान जो है सो इस विषै अहंममाभिमानका त्यागरूप है॥

२५९ स्वरूपकूं विशेषण देतेहैं॥ इहां आचार्यका उक्ति-कर्त्तापना दिखायाहीं है॥

२६० संप्रसाद जो है सो प्राण है वा विज्ञानात्मा (जीव) है? इस संशयतैं पूर्ववादी पूंछता है॥ इधर प्रकृत वाक्य-विषै यह "तहां" इस सप्तमीका अर्थ है॥

२६१ औ तिस संप्रसादकूं परमात्मविषयक ज्ञान किस उपायकरि होवैहै? ऐसैं पूर्ववादी अन्य प्रश्नकूं कहैहै॥

विजिज्ञासितव्यः स सर्व्वाꣳश्च लोका-
नाप्नोति सर्व्वाꣳश्च कामान्यस्तमात्मा-

करनेकूं) योग्य है। सो विजिज्ञासन करनेकूं (विशेषकरिजाननेकूं) योग्य है । औ सो सर्व लोकनकूं अरु सर्व कामोंकूं पावताहै ।

---

[२६२] जैसैं सो इस शरीरतैं सम्यक् ऊठिके परज्योतिकूं पायके स्वरूपकरि समाप्त होवैहै ? [२६३] जिसस्वरूपकरि समाप्तहोवैहै । सो किस लक्षणवाला आत्माहै ? औ [२६४] संप्रसादके देहके संबंधि पररूप हैं

---

२६२ तिसकूं परमात्माके ज्ञानसैं क्या होवैहै ? यह आशंकाकरिके पूर्ववादी कहैहै ॥ इहां तैसा ताकूं ज्ञान किस प्रकारसैं होवैहै ॥ ऐसैं संबंध है ॥

२६३ औ अभिनिष्पद्यमान (समाप्त भये) रूपवाला आत्मा सविशेष (भेदसहित) है वा निर्विशेष (भेदरहित) है ? ऐसैं अन्य प्रश्नकूं पूर्ववादी करैहै ॥

२६४ जातैं आत्माके सच्चिदानंद एकतानरूपतैं अन्यअर्थस्वरूप दृश्यमान शरीरके संबंधके किये अनेक रूप हैं । तैसैं हुये तिस शरीररूप उपाधितैं जो अन्य ताका स्वरूप है सो सर्व प्रमाणोंकरि अप्रतिपादित कैसैं है ? ऐसैं अन्य प्रश्नकूं पूर्ववादी कहैहै ॥

नमनुविद्य विजानातीति ह प्रजापतिरुवाच ॥ १ ॥

जो तिस आत्माकूं जानिके विशेषकरि जानताहै ॥ ऐसें प्रजापति कहतेभये ॥ १ ॥

तिस (देह)तैं अन्य जो ताका स्वरूपहै सो कैसें है? [265] इसंप्रकारके जे अर्थ हैं वे कहनेकूं योग्य हैं ॥ यातैं उत्तरग्रंथ आरंभ करियेहै ॥ [266] आख्यायिका तो विद्याग्रहणके संप्रदानके विधि (प्रकार)के दिखावनेअर्थ है औ [267] विद्याकी स्तुतिअर्थ

---

२६५ इन च्यारी प्रश्नोंके उत्तररूप होनेकरि सिद्धांती उत्तर ग्रंथकूं अवतार देतेहैं ॥

२६६ प्रजापतिका औ इंद्र विरोचनका संवादरूप जो इहां आख्यायिका देखियेहै सो किस अर्थवाली है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:–शिष्यका विद्याग्रहणविषै औ गुरुका तिस विद्याके सम्यक् प्रदानविषै जो विधि कहिये श्रद्धालुता आदिक प्रकार है ताके दिखावनेरूप अर्थवाली है॥ यद्वाः–विद्याका ग्रहण (स्वीकरण) जिस संप्रदान (जिस दानके पात्र शिष्य) विषै देखियेहै ताका विधि जो ब्रह्मचर्यआदिक ताके दिखावनेरूप अर्थवाली आख्यायिका है ॥

२६७ आख्यायिकाके अन्य तात्पर्यकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ

है । [२६८]राजाकरि सेवित जल है । याकी न्यांई:- [२६९]जो आत्मा अपहतपाप्मा विजर विमृत्यु विशोक क्षुधारहित तृष्णारहित सत्यकाम सत्यसंकल्प है । जि[२७०]सके उपासनकेवास्ते [२७१]उपलब्धिअर्थ हृदयकमल कहाहै । जिसविषै सत्य अरु अनुरूप आच्छादनवाले काम स्थित हैं । जाके उपासना सहकारि ब्रह्मचर्यरूप साधन कहा ।

है:-प्रजापतिनैं कही औ देवोनैं अरु असुरोनैं प्रार्थितकरी औ देव असुरनकेपति इंद्र विरोचननैं बडे श्रमसैं वांछितकरी औ देवराजनैं किसी प्रकारसैं बी प्राप्तकरी है । तातैं महापूज्य यह विद्या है । यातैं ताकी स्तुतिअर्थ यह आख्यायिका है ॥

२६८ महत्पुरुषनकरि उपासित वस्तुकी महापूज्यताविषै दृष्टांतकूं कहैहैं ॥

२६९ जो माया उपाधिवाला सविशेष चैतन्य है सोई निरुपाधिक निर्विशेष है ॥ ऐसैं सविशेष अरु निर्विशेषके अभेदके अभिप्रायकरि प्रजापतिके वाक्यकूं व्याख्यान करनेकूं ग्रहण करैहैं ॥

२७० तहां "सो अन्वेषण करनेकूं योग्य है" इस वाक्यविषै स (सो) शब्दके अर्थकूं कहैहैं ॥

२७१ उपासन यह किस अर्थ है? इस अपेक्षाके हुये कहैहैं ॥ इहां ताका यह फल है । ऐसैं संबंध है ॥

औ उपासनके फलभूत कामकी प्राप्तिअर्थ मस्तकगत नाडीकरि गति कही । सो अन्वेषण करनेकूं योग्य है कहिये शास्त्र अरु आचार्यके उपदेशोंकरि जाननेकूं योग्यहै । सो विजिज्ञासितव्य है [तात्पर्य यह है किः—जिज्ञासापूर्वक विचारद्वारा] स्वसंवेद्यताकेतांई आपादन करनेकूं योग्य है ॥ ॥ ताके अन्वेषणतैं औ विजिज्ञासनतैं क्या फल होवैगा ? यह कहियेहैंः—सो सर्व लोकनकूं औ सर्व कामोंकूं पावताहै । जो तिस आत्माकूं यथोक्तप्रकारसैं शास्त्र अरु आचार्यके उपदेशकरि अन्वेषणकरिके (विचारिके) विशेषकरि जानताहै कहिये स्वसंवेद्यता (स्वानुभवगोचरता)कूं आपादन करैहै ताकूं यह सर्व लोक अरु कामोंकी प्राप्तिरूप जो सर्वात्मता[२७२] तिसरूप फल होवैहै । ऐसैं निश्चयकरि

---

२७२ निर्गुणविद्याका सर्व लोक अरु कामोंका प्राप्तिरूप फल कैसैं है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां सर्वात्मता । याका परिच्छेदभ्रांतिकी निवृत्तिकरि पूर्ण स्वरूपसैं अवस्थिति । यह अर्थ है ॥

प्रजापति (ब्रह्मा) कहते भये ॥ ॥ औ इहां "[273]अन्वेषण करनेकूं योग्य है अरु विजिज्ञासित (विज्ञात) करनेकूं योग्य है" ऐसा यह नियमविधिहीं है [274]अपूर्वविधि नहीं। [275]ईसै रीतिसैं अन्वेषण करनेकूं योग्यहै अरु विजिज्ञासित करनेकूं योग्य है। यह (नियमविधिरूप) अर्थ है। काहेतैं अन्वेषण अरु विजिज्ञासनकूं [276]दृष्ट अर्थरूप

---

२७३ प्रजापतिके वाक्यतैं प्रतीयमान विधिके स्वरूपकूं कहैहैं ॥

२७४ एवकारकरि निषेध करने योग्यकूं दिखावैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः– शब्दतैं विद्याके उदय हुये ताकी उत्पत्तिअर्थ अग्निहोत्र आदिकके विधिकीन्यांई अपूर्वविधि नहीं संभवै है॥

२७५ इहां अवघात (चावलोंके खांडणे)के विधिकी न्यांई नियमविधि बी कैसैं होवैगा? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः–मिथ्याज्ञानके संस्कारकी प्रबलतातैं अनात्माके अभिनिवेशकी निवृत्तिकी स्वतंत्र अन्वेषण अरु शास्त्राचार्यद्वारा अन्वेषणरूप पक्षविषै प्राप्तिकेहुये शास्त्र अरु आचार्यकरि आत्माका अन्वेषणहीं करनेकूं योग्य है। यह नियम है ॥

२७६ यातैं बी नियमविधिहीं है। अपूर्वविधि नहीं है। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः–अन्वेषण अरु विजिज्ञासनतैं ज्ञानरूप साधन कहा औ ताका विद्याद्वारा अविद्याकी निवृ-

होनेतैं औ तिन दोनूंकी दृष्टार्थता[277] (भोजनके फल तृप्तिकी न्यांई दृष्टफलवान्‌ता)कूं यह श्रुति आगे "मैं इहां भोगकूं देखता नहीं" इस वाक्यकरि वारंवार दिखावैगी औ देहादिकके धर्मोसैं[278] पररूपकरि ज्ञायमान आत्माके स्वरूपके निश्चयके हुये विपरीतनिश्चयकी निवृत्तिरूप दृष्ट (रज्जुज्ञानतैं सर्पभ्रमकी निवृत्तिकीन्यांई प्रत्यक्ष) फल है। यातैं इस विधिकी नियमरूप[279]

त्ति दृष्ट हीं फल है। काहेतैं अन्वय अरु व्यतिरेककरि ताकी हेतुताके निश्चयतैं ॥ तैसैं हुये तहां अपूर्वविधिका अवकाश नहीं है ॥

२७७ तिन दोनूंकी दृष्टफलवान्‌ताविषै वाक्यशेषकूं अनुकूल करैहैं ॥

२७८ वारंवार प्रयोगकिये " मैं देखताहूं " इस वर्तमान उपदेशकरि अन्वेषणआदिककूं दृष्टफलता कैसैं होवैगी ? यह आशंकाकरिके। देहतैं अतिरिक्त आत्माके वादीनकूं वाक्यजनित ज्ञानतैं औ अनुमानतैं मनुष्यभाव आदिक भ्रमकी निवृत्तिकी प्रसिद्धितैं ऐसैं मति कहो। इस अभिप्रायकरिके कहैहैं

२७९ अन्वेषणआदिककी दृष्टफलवान्‌ताके हुये फलितकूं कहैहैं ॥ इहां अपूर्वविधिरूपता। याका तिस अपूर्वविधिकी विषयता। यह अर्थ है औ " इहां " ऐसैं अन्वेषण आदिककी उक्ति है। अर्थ यह जोः—अग्निहोत्रआदिककी न्यांई अ-

तद्धोभये देवासुरा अनुबुबुधिरे । ते

अर्थः—ताकूं उभय देव अरु असुर अनंतर जानतेभये ॥ वे कहते भयेः—जब

अर्थता हीं युक्त है। परंतु अग्निहोत्रआदिकनकी न्यांई अपूर्वविधिरूपता इहां नहीं संभवैहै ॥१॥

टीकाः—"तिसँकूं दोनूं" इत्यादिरूप जो आख्यायिका है ताका प्रयोजन कहा ॥ तिसँ प्रसिद्ध प्रजापतिके वचनकूं दोनूं देवासुर कहिये देव अरु असुर जे देवासुर वे पीछे परंपराकरि आगत अरु स्वकर्णगोचरकूं प्राप्त [तिसवचन]कूं जानते भये ॥ ॥ औ वे इसप्रजापतिके वचनकूं जानिके क्या करते भये ?

न्वेषणआदिककी अपूर्वविधिकी अंगरूप अत्यंत अप्राप्तिके अभावकूं उक्त होनेतैं ॥

२८० अब आख्यायिकाकूं व्याख्यान करनेकूं । आख्यायिका तो विद्याके ग्रहण अरु संप्रदानके विधिके दिखावनेरूप अर्थवाली है । इत्यादि वाक्यकरि उक्त अर्थकूं स्मरण करावैहैं

२८१ प्रकटकरी आख्यायिकाके अक्षरनकूं व्याख्यान करैहैं॥

होचुर्हन्त तमात्मानमन्विच्छामो यमा-

अनुमति होवै तब तिस आत्माकूं अन्वेषण करैं। जिस आत्माकूं अन्वेषण करिके (खो-

यह कहियेहैः—वे देव अरु असुर स्वसभाविषै परस्पर कहतेभयेः—जब तुह्मारी अनुमति (संमति) होवै तब तिस प्रजापतिकारि उक्त आत्माकूं अन्वेषण करैं। जिस आत्माकूं अन्वेषणकरिके (खोजिके) सर्व लोकनकूं औ सर्व कामोंकूं पावताहै। ऐसैं कहिके इंद्र (देवराजा)हीं आप देवनकेमध्य [इतर देवनकूं अरु सर्व भोगकी सामग्रीकूं स्थापन करिके शरीरमात्रकरिहीं प्रजापतिके प्रति] गमन करताभया ॥ तैसैं विरोचन (असुर-स्वामी) असुरनकेमध्य ॥ ॥ गुरु जे हैं वे विनय[२८२] (अगर्व) करि अभिगमन करनेकूं योग्य

२८२ ननु इंद्र अरु विरोचन विद्यार्थी हुये बी परिकर भूषणादि उपस्करकूं परित्यागकरिके शरीरमात्रकरि प्रजापतिके प्रति क्यूं जाते भये? तहां कहैहैं ॥

त्मानमन्विष्य सर्वा॑ꣳश्च लोकानाप्नोति सर्वा॑ꣳश्च कामानितीन्द्रो हैव देवानामभिप्रवव्राज। विरोचनोऽसुराणां। तौ हा-

---

जिके) सर्व लोकनकूं अरु सर्व कामोंकूं पावताहै ॥ ऐसैं [कहिके] इंद्रहीं देवनके मध्य अभिगमन करता भया । विरोचन

हैं । ऐसैं यह दिखावै हैं:—त्रैलोक्य[283]के राज्यतैंबी गुरुतर विद्या है ऐसैं दिखावैहै । [284]जातैं देव अरु असुरनके राजे महायोग्य भोगके योग्य हुये तिस प्रकारसैं गुरुकेप्रति समीप जाते भये ॥ (वे इंद्र अरु विरोचन) असंविदानहीं कहिये परस्पर विज्ञापनकूं नकरते हुये विद्याके फलकेप्रति परस्पर ईर्ष्याकूं दिखावते हुये ।

---

२८३ तिन दोनूंकी उक्त रूपवाली गतिके वशतैंहीं दिखाये अन्य अर्थकूं कथन करैहैं ॥ इहां विद्याहै इस प्रकारसैं दिखावैहै । ऐसैं संबंध है ॥

२८४ ता विद्याकी अत्यंत गुरुताविषै हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां संवित्कूं कहिये मैत्रीकूं ॥

संविदानावेव समित्पाणी प्रजापतिस-
काशमाजग्मतुः ॥ २ ॥

तौ ह द्वात्रिंꣳशतं वर्षाणि ब्रह्मचर्य्य-
मूषतुस्तौ ह प्रजापतिरुवाच-किमिच्छं-

असुरनके मध्य ॥ वे दोनूं अमैत्रीकूं करने-
वालेहीं समित्पाणि हुये प्रजापतिके पास
आवतेभये ॥ २ ॥

अर्थः—वे दोनूं बत्तीश वर्ष ब्रह्मचर्य
जैसें होवै तैसें वास करतेभये ॥ ॥ तिनकूं
प्रजापति कहतेभये ॥ प्रजापतिरुवाचः—

समित्पाणि कहिये समिधनका भार है हस्त-
विषै जिनोंके ऐसें हुये प्रजापतिके पासआ-
गमनकरतेभये ॥ २ ॥

टीकाः—वे दोनूं जायके बत्तीस (३२) वर्ष
शुश्रूषा (सेवा)पर होयके ब्रह्मचर्य जैसें होवै
तैसें वास करतेभये ॥ ॥ तब अभिप्रायके ज्ञा-

तावत्वास्तामिति? तौ होचतुर्य आत्माऽप-
हतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोकोऽवि-
जिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्यस-

किसकूं इच्छतेहुये वास करतेहो? ऐसैं
[उक्तहुये] वे दोनूं कहतेभये ॥ इंद्रवि-
रोचनावूचतुः—जो आत्मा अपहतपाप्मा
विजर विमृत्यु विशोक क्षुधारहित तृषार-
हित सत्यकाम सत्यसंकल्प है। सो अन्वे-

ता प्रजापति तिन दोनूंकूं कहतेभये ॥ प्र-
जापतिरुवाचः—किसकूं इच्छते हुये कहिये
किस प्रयोजनकूं अभिप्रायका विषयकरिके इ-
च्छते हुये तुम दोनूं वास करते भये? ऐसैं
उक्त हुये वे दोनूं कहते भये ॥ इंद्रविरोच-
नावूचतुः—"जो आत्मा" इत्यादि भगवा-
न् (आप) के वचनकूं शिष्टपुरुष जनाव-
वतेहैं। यातैं तिस आत्माकूं जाननेकूं इच्छ-
ते हुये हम दोनूं वास करते भये! ऐसैं

ङ्कल्पः सोऽन्वेष्टव्यः स विजिज्ञासितव्यः स सर्व्वाꣳश्च लोकानाप्नोति सर्व्वाꣳश्च कामान् यस्तमात्मानमनुविद्य विजा-

---

षण करनेकूं (जाननेकूं इच्छा करनेकूं) योग्य है सो विजिज्ञासन करनेकूं (विशेषकरि जाननेकूं) योग्य है॥ सो सर्व लोकनकूं अरु सर्व कामोंकूं पावताहै जो तिस आत्माकूं जानिके विशेषकरि जानताहै। ऐसैं

[कहते भये]॥ ॥ [285]यद्यपि इंद्र अरु विरोचन प्रजापतिके समीप आगमनतैं पूर्व परस्पर ईर्ष्यायुक्त होते भये? तथापि विद्याप्राप्तिके प्रयोजनके गौरव (गुरुपनै)तैं त्याग किये हैं राग द्वेष मोह अरु ईर्ष्या जिनोनैं ऐसेहीं हुये

---

२८५ इहां तिस आत्माकूं जाननेकूं इच्छते हुये हम दोनूं "वास करते भये हैं" ऐसैं [उत्तम पुरुषके] वक्तव्यके हुये बी "वास करते भये हो" ऐसैं जो [मध्यम पुरुष] कहा सो प्रजापतिके वचनका अनुकर्षणमात्र है। ऐसैं देखनेकूं योग्य है॥ अब परस्पर वैरी जे इंद्र विरोचन तिनका चिरकाल एकत्र अवस्थान कैसैं भया? यह आशंका करिके कहैहैं॥

नातीति भगवतो वचो वेदयन्ते तमिच्छन्ताववास्तमिति ॥ ३ ॥

तौ ह प्रजापतिरुवाच-य एषोऽक्षिणि

भगवान् (आप)के वचनकूं [केइक] निवेदन करतेहैं । ताकूं इच्छतेहुये [हम दोनूं] वास करतेहैं! ऐसैं ॥ ३ ॥

अर्थः-तिनकूं प्रजापति कहतेभये ॥

ब्रह्मचर्य जैसैं होवै तैसैं प्रजापतिविषै वासकरते भये ॥ तिसँ[२८६]करि यह आत्मविद्याका गौरव (सर्व साधनोतैं भारीपना) प्रख्यापन किया ॥ ३ ॥

टीकाः-तिन दोनूंकूं ऐसे तपस्वी शुद्धकल्मष (प्रक्षालित दोषवाले) योग्य लखिके (जानिके) प्रजापति कहते भये ॥ प्रजापतिरु-

---

२८६ स्वभावतैं वैरी हुये बी इंद्र अरु विरोचनके विद्यार्थी होनेकरि चिरकाल एकत्र वासकरि सूचनकिये अर्थकूं दिखावैहैं ॥ इहां शुद्धकल्मषवाले । याका प्रक्षालितदोषवाले । यह अर्थ है ॥ औ पुरुष द्रष्टा । ऐसैं संबंध है ॥

पुरुषो दृश्यत एष आत्मेति होवाचैत-
दमृतमभयमेतद्ब्रह्मेत्यथ योऽयं भगवो-

प्रजापतिरुवाचः–जो यह अक्षिविषै पुरुष देखियेहै यह आत्मा है । ऐसैं कहतेभये । यह अमृत अभय है यह ब्रह्म है इति ॥ ॥

वाचः–जो यह अक्षिविषै पुरुषरूप द्रष्टा विषयनतैं निवृत्त[287][288] चक्षु (इंद्रिय)वाले अरु नष्ट भये कषाय (रागादि)वाले योगीनकरि देखियेहै । येह[289] अपहतपाप्माआदिक गुणवाला आत्मा है। जिसकूं मैं पूर्व कहताभया । जिसके विज्ञानतैं सर्व लोक अरु कामोंकी प्राप्ति होवैहै । यह

---

२८७ अस्मदादिकोंकरि तहां दृष्टा देख्या नहीं है? यह आशंकाकरिके कहेहैं ॥

२८८ इंद्रियनकी विषयनतैं विमुखताविषै हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां योगीनकरि कहिये समाधिनिष्ठनकरि । अर्थ यह जोः–अंतर्मुखदृष्टिवाले पुरुषनकरि ॥

२८९ " जो आत्मा " इत्यादिवाक्यके साथि इस वाक्यकी एकवाक्यताकूं दिखावैहैं ॥

ऽप्सु परिख्यायते यश्चायमादर्शे कतम

इंद्रविरोचनावूचतुः-अब हे भगवन्! जो यह जलोंविषै च्यारीओरतैं जानियेहै औ जो यह आदर्शविषै है। कौंनसा यह है?

---

२९० भूमानामवाला अमृत है। याहींतैं अभय है। याहींतैं ब्रह्म कहिये वृद्धतम (सबतैं अधिकबडा) है इति ॥ ॥ अनंतर इस प्रजापतिकरि उक्त "अक्षिविषै पुरुष देखियेहै" ऐसे वचनकूं सुनिके दोनूं छाया (प्रतिबिंब)रूप पुरुषकूं ग्रहण करते भये औ ग्रहणकरिके दृढीकरणअर्थ प्रजापतिकूं पूंछतेभये ॥ इंद्रविरोचनावूचतुः-
२९१ अब हे भगवन्! जो यह जलोंविषै च्यारी ओरतैं जानिये है औ जो यह आदर्शविषै अरु खड्गआदिकविषै आत्मा (देह)के प्रतिबिंब-

---

२९० औ भूमविद्याके साथि याकी एकवाक्यताकूं सूचन करैहैं॥ इहां इति शब्द वाक्यकी समाप्तिअर्थ है॥

२९१ उक्तअर्थविषै वाक्यकूं डालते हैं॥ इहां अथ शब्द प्रश्नअर्थ है औ इति शब्द समाप्तिअर्थ है॥

एष इत्येष उ एवैषु सर्व्वेष्वेतेषु परिख्यायत इति होवाच ॥ ४ ॥

इत्यष्टमप्रपाठकस्य सप्तमः खण्डः ॥ ७॥

इति॥ ॥ प्रजापतिरुवाचः—यहहीं इन सर्व अंतनविषै च्यारीओरतैं जानियेहै। ऐसैं कहतेभये ॥ ४ ॥

इति श्री०मूलभाषा०अष्टमप्र०सप्तमः खंडः ॥७॥

रूप आकारवाला च्यारीओरतैं जानियेहै । इनके मध्य आपनैं कहा जो आत्मा यह कौंनसा है? किंवा इन सर्वविषै एकहीं है? इति॥ ॥ ऐसैं[२९२] पूंछे हुये प्रजापति कहते भये॥ प्रजापतिरुवाचः—"जो चक्षुविषै दृष्टा मैंनैं कहा सो यहहीं है" ऐसैं ईसैं[२९३] उक्त वचनरूप

---

२९२ जो चक्षुकरि उपलक्षित दृष्टा है यह हीं मैंनैं कहा अपहतपाप्मा आदिक धर्मवाला आत्मा है। तुम दोनूंनैं फेर अन्यथा (विपरीत) ग्रहण किया है। ऐसैं निपातकरि सूचनकरते हुये प्रजापति कहते भये। ऐसैं कहैहैं॥

२९३ प्रजापति जब ऐसैं कहते भये तब तिन दोनूंकी वि-

वस्तुकूं मनविषै करिके इन सर्व अंतन (मध्यन) विषै च्यारी ओरतें जानिये है! ऐसें कहते भये ॥ ॥ [294] ननु विगतदोष प्रजापतिरूप आचार्य होते भये ता प्रजापतिकूं दोनूं शिष्यनका विपरीतग्रहण अनुमोदन करनेकूं कैसें युक्त होवै है? [295] सत्य । ऐसें अनुज्ञात (अनुमोदनकिया) नहीं है ॥ ॥ कैसेंकि? जातें आत्मा(आप)विषै अध्यारोपित पांडित्य महत्व अरु बोद्धापनेतें उद्धत (उच्छृंखल) इंद्र अरु विरोचन हैं औ तैसेंहीं लोकविषै प्रतिष्ठित होनेकरि प्रसिद्ध हैं। तैसेंहीं वे। दोनूं जब प्रजापतिकरि "तुम दोनूं विपरीतग्राही मूढ हो" ऐसें उक्त होवैं तब तातैं तिनके चित्तविषै दुःख होवैगा औ तिसतें जनित चित्तकी शिथिलतातैं फेर प्रश्न श्रवण ग्रहण अरु

मुखता कैसें नहीं निवृत्त भई? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां इसकूं। याका यथोक्त वचनरूप वस्तुकूं। यह अर्थ है ॥

२९४ जो प्रजापतिनैं मनविषै राख्या वस्तु है ताकूं प्रकट करनेकूं पूर्ववादी प्रश्न करैहै ॥

२९५ श्रेष्ठ शिष्यगत विपरीत ग्रहण आचार्यकरि अनुज्ञा (अनुमोदन) करनेकूं अयुक्त है। ऐसें अंगीकारकरिके। सिद्धांती प्रजापतिके अभिप्रायकूं कहैहैं ॥

अवधारण (निश्चय)के प्रति उत्साहका भंग होवैगा। यातैं वे दोनूं शिष्य रक्षण करनेकूं योग्य हैं ऐसैं प्रजापति मानतेहैं। प्रथम विपरीतकूं ग्रहणं[२९६] करहू। औ ता (विपरीतग्रहण)कूं उदकशराव (जलपात्र)के दृष्टांतकरि दूरी करूंगा। ऐसैं मानतेहैं ॥ ॥ ननु[२९७] प्रजापतिकरि "यह हीं है" ऐसैं अनृत कहनेकूं युक्त नहीं है ? प्रजापतिनैं अनृत[२९८] कहा नहीं है ॥ कैसैंकि[२९९]:—आप (प्रजापति)नैं कहा जो अक्षिकरि उपलक्षित पुरुष

---

२९६ तब तिन दोनूंका विपरीतग्रहण कैसैं दूरी करनेकूं योग्य है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां प्रथम विपरीतकूं। यह शेष है औ चकारकरि " मानताहै " यह क्रियापद पीछेसैं खीचियेहै ॥

२९७ " जिस जिसकूं श्रेष्ठ आचरता है " इस गीताउक्त न्यायकरि सर्वका मृषावादीपना होवैगा? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

२९८ प्रजापतिके अभिप्रायकूंहीं प्रकट करते हुये अतिप्रसंगकूं परिहार करनेकूं तिस प्रजापतिके अनृतवादीपनैकूं सिद्धांती दूषण देतेहैं ॥

२९९ ताहीकूं आकांक्षापूर्वक स्पष्ट करैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:—दोनूं शिष्यनकरि ग्रहण किया जो यह आत्मा तिसतैं

सो शिष्यनकरि गृहीत छायारूप आत्मातें प्रजापतिके मनविषै अतिसमीप है। काहेतें "औ[३००] सर्वके भीतरहै" इस श्रुतितें। [३०१]तांहीकूं "यह हीं है" ऐसै प्रजापति कहतेभये। यातें प्रजापतिनें अनृत (जूठ) कहा नहीं। [३०२]तैसें हुये तिन दोनूंके विपरीत ग्रहणकी निवृत्तिकेअर्थ हीं कहे हैं ॥४॥

इति श्री०भाष्यभाषा०अष्टमप्रपाठकस्य सप्तमः खंडः ॥७॥

आत्मा (आपहीं प्रजापति) नैं कहा जो अक्षिकरि उपलक्षित द्रष्टा है सो प्रजापतिके मनविषै संनिहिततर (अत्यंतसमीप) है यातैं सोई तिसनैं कहा है ॥

३०० औ यातैं द्रष्टा प्रजापतिके मनविषै संनिहिततर है। ऐसैं कहैहैं ॥

३०१ प्रजापतिके मनविषै द्रष्टाकी समीपताके हुये बी ताका मृषावादीपना कैसैं नहीं है? यातैं कहैहैं ॥

३०२ औ यातैं प्रजापतिका मृषावादीपना नहीं है। ऐसैं कहैहैं ॥ ॥

इति श्री०अष्टमप्रपाठकगतसप्तमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ७ ॥

अथाष्टमप्रपाठकस्याष्टमः खंडः ॥ ८ ॥

उदशराव आत्मानमवेक्ष्य यदात्म-

अथ श्री॰मूलभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्याष्टमः खंडः ॥८॥

अर्थः–प्रजापतिरुवाचः–उदकशरावavi-

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्याष्टमः खंडः ८

इंद्र विरोचन जलपात्रात्मदर्शन । विरोचन गमन ९

टीकाः– प्रजापतिरुवाचः–उदक शरावविषै कहिये जलकरि पूर्ण शराव (कूंडे) आदिक पात्रविषै आत्माकूं देखिके अनंतर जो तहां आत्माकूं देखते हुये नहीं जानते हो सो मेरेकूं कथन करो ॥ ॥ ऐसें उक्त हुये वे दोनूंउदकशराववविषै अवलोकन करते भये ॥ तैसें करनेवाले तिन दोनूंके प्रति प्रजापति कहतेभये ॥ प्रजापतिरुवाचः–क्या देखतेहो ? ऐसें ॥ ॥ [३०३] नंनु "सो मेरेकूं कथन

अथ श्री॰अष्टमप्रपाठकगताष्टमखंडस्य टि॰ ॥ ८ ॥

३०३ इहां आत्माकूं उदकशराववविषै देखिके तिस आ-

नो न विजानीथस्तन्मे प्रब्रूतमिति ? तौ होदशरावेऽवेक्षाञ्चक्राते ॥ तौ ह प्रजाप-

षै आत्माकूं देखिके जो आत्माको नहीं जानतेहो सो मेरेकूं कहो ॥ ॥ ऐसें [उक्त हुये] वे दोनूं उदकशरावविषै अवलोकन करतेभये ॥ ॥ तिनकूं प्रजापति कहते-

करो " ऐसें प्रजापतिकरि उक्त तिन दोनूं शिष्योनैं उदकशरावविषै अवलोकन करिके प्रजापतिकेअर्थ नहीं निवेदन किया । औ "यह हम दोनूंनैं नहीं जान्या " ऐसें अज्ञानके हेतुके अनिवेदन किये हुये प्रजापति कहतेभयेः—"क्या देखते हो ?"—ऐसें । तहां कौंन अभिप्राय है ? ३०४ यहै कहियेहैः—तिनं ३०५ दोनूंकूं "यह हमकूं अवि-

त्माकूं तहां देखनेवाले तिन दोनूंकूं अनंतर जो आत्माके स्वरूपकूं तुम दोनूं नहीं जानते हो सो मेरेकूं कहो । ऐसें संबंध है ॥ तहां यह प्रजापतिका वचन आरंभके अनुकूल (अनुसार) नहीं होवैहै ? ऐसें पूर्ववादी शंका करैहै ॥

३०४ आरंभकूं उलंघन करिके कहनेवाले प्रजापतिके अभिप्रायकूं सिद्धांती कहैहैं ॥

३०५ तहां प्रथम इंद्र अरु विरोचनकरि " हम दोनूंनैं

तिरुवाच-किं पश्यथ इति? तौ होचतुः

भये ॥ प्रजापतिरुवाचः—क्या देखतेहो ? ऐसैं [उक्त हुये] वे दोनूं कहतेभयेः—हे

दित है" ऐसी आशंका नहीं होती भई । किंतु छायारूप आत्माविषै (प्रतिबिंब औ ताके हेतु शरीरविषै) आत्माका प्रत्यय निश्चितहीं होता भया । जिसंकरि[३०६] यह आगे कहैगीः—"वे दोनूं शांतहृदयवाले हुये गमन करते भये" ऐसैं ॥ [३०७]जातैं अभिप्रेत अर्थके अनिश्चित हुये शांतहृदयवान्पना नहीं संभवैहै । तिसकरि "यह हम दोनूंनैं नहीं जान्या" ऐसैं नहीं कहतेभये औ

यह नहीं जान्या" ऐसैं प्रजापतिके प्रति अकथनविषै कारण-कूं कहैहैं ॥ इहां छायात्माविषै । याका छायाविषै औ ताके हेतु शरीरविषै इंद्र अरु विरोचनकूं क्रमतैं आत्मबुद्धि यह निश्चित प्रवृत्त भई । यह अर्थ है ॥

३०६ तिन दोनूंके तहां आत्मप्रत्ययके निश्चितपनैविषै गमककूं कहैहैं ॥

३०७ ननु शांतहृदयवाले तिन दोनूंके गमनके हुये बी प्रत्ययका निश्चितपना कैसैं है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां तिसकरि । याका विपरीतग्राहीपनैकरि । यह अर्थ है ॥

सर्वमेवेदमावां भगव आत्मानं पश्याव आलोमभ्य आनखेभ्यः प्रतिरूपमिति १

भगवन् ! इस सर्वहींकूं हम आत्मा देखते-हैं। लोमनतैं आरंभ करिके नखनकेपर्यंत प्रतिरूप (प्रतिबिंब)कूं। ऐसैं ॥ १ ॥

विपरीतग्राही[३०८] दोउ शिष्य उपेक्षा करनेकूं योग्य नहीं हैं ऐसैं जानिके प्रजापति आपहीं पूंछते भयेः—"क्या देखते हो ?" ऐसैं औ तिनके विपरीत[३०९] निश्चयके दूरीकरनेअर्थ "साधु (सम्यक्) अलंकृत हुये " इत्यादि आगे कहैंगे॥ ॥ तब[३१०] वे दोनूं कहते भये ॥ इंद्रविरोचनावू-

---

३०८ जब उक्तकूं न ग्रहण करिके विपरीतकूं ग्रहण करते भये। तब वे दोनूं कुबुद्धिवाले होनेतैं प्रजापतिकरि उपेक्षा करनेकूं योग्य हैं ? यह आशंका करिके । प्रजापतिके अभिप्रायकूं कहैहैं ॥

३०९ यह प्रजापतिकूं संमत है । यह तुमनैं कैसैं जान्या ? यातैं कहैहैं ॥

३१० प्रजापतिके प्रश्नविषै देव अरु असुरनके राजनके विपरीत ग्रहणकूं अनुवाद करैहैं ॥

तौ ह प्रजापतिरुवाच-साध्वलंकृतौ

अर्थः-तिनकूं प्रजापति कहतेभये ॥ प्रजापतिरुवाचः-सम्यक् अलंकारयुक्त सुं-

---

चतुः-हे भगवन् ! हम इस सर्वकूं आत्मा देखतेहैं लोमनतैं आरंभकरिके नखपर्यंत प्रतिरूप (प्रतिबिंबरूप छाया)कूं! ऐसैं कहिये हे भगवन् ! जैसैंहीं हम दोनूं शरीर लोमनखादिमान् हैं ऐसैंहीं लोमनखादिसहित हम दोनूंके प्रतिरूप (प्रतिबिंब)कूं उदकशरावविषै देखतेहैं ! ऐसैं [कहतेभये] ॥ १ ॥

टीकाः-तिन[३११] दोनूंके प्रति छाया अरु देहविषै आत्मनिश्चयके दूरी करनेअर्थ ॥ फेर प्रजापति कहते भये । प्रजापतिरुवाचः-

---

३११ ताके दूरीकरनेके प्रकारकूं सूचन करैहैं ॥ इहां छायाविषै औ ताके हेतु देहविषै तिन दोनूंकूं आत्मनिश्चय जो है ताके निरासअर्थ । यह अर्थ है ॥ औ " इहां " ऐसैं इस पर्यायकी उक्ति है । तिसाविषै नहीं आदेश करतेभये । काहेतैं ताके प्रयोजनके अभावतैं । यह अर्थ है ॥

सुवसनौ परिष्कृतौ भूत्वोदशरावेऽवेक्षे-

दरवस्त्रवाले अरु छेदनकिये नखलोमवाले होयके उदकशराववि‌षै अवलोकन करो!

जैसैं स्वगृहविषै थे तैसैं सम्यक् अलंकारयुक्त अरु सुवसन कहिये महामूल्यवाले वस्त्ररूप परिधानवाले औ परिष्कृत (छिन्नलोमनखवाले) होयके उदकशराववि‌षै फेर देखो! ऐसैं औ इहां (इसपर्यायविषै) "जो अज्ञात होवै सो मेरेकूं कहो?" ऐसैं आदेश नहीं करते भये?॥ ॥ फेर[312] इस सम्यक् अलंकार आदिककूं करिके उदकशराववि‌षै देखनेकरि तिन दोनूंका छायाविषै आत्माका ग्रहण कैसैं दूरी किया होवैगा? जैसैं आगंतुक अरु शरीरसैं संबंधवाले जे[313] सम्यक् अलंकार अरु सुंदरवस्त्रआदिक हैं

---

३१२ उक्त उदाहरणकरि छायाविषै औ देहविषै इंद्र अरु विरोचनका आत्मप्रत्यय नहीं दूरी किया होवैहै? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

३१३ छायाका औ ताके कारण देहका आगंतुक होनेतैं

थामिति ! तौ ह साध्वलंकृतौ सुवसनौ

॥ ॥ ऐसें [उक्त हुये] वे दोनूं सम्यक् अलंकारयुक्त सुंदरवस्त्रवाले अरु छेदन

तिनका उदकशरावविषै छायाकरपना है। ऐसैं शरीरका बी छायाकरपना पूर्व होता भया। यह जानियेहै औ नित्यताकरि अभिप्रेत अरु अखंडित जे[314] शरीरके एकदेशरूप लोम नख आदिक हैं तिनका छायाकरपना पूर्व होता भया औ तिनके छेदित हुये लोमनखआदिककी छाया नहीं देखियेहै। यातैं लोमनखआदिककीन्यांई शरीरकाबी आगमापायीपना सिद्ध भया॥ [315] ईसरीतिसैं उदकशरावआदिकविषै दृश्यमान [प्रतिबिंब] औ ताके निमित्त देहका अनात्म-

अनात्मपना इहां विवक्षित है। ऐसैं सिद्धांती उत्तर कहैहैं॥ इहां पूर्व। याका उदक आदिकसैं संबंधकी अवस्थाविषै। यह अर्थ है॥

३१४ व्यभिचारी होनेतैं बी छाया औ ताके कारणकी अनात्मता है। ऐसैं कहैहैं॥

३१५ दोनूं युक्तिनकरि सिद्ध अर्थकूं निगमन करैहैं॥

परिष्कृतौ भूत्वोदशरावेऽवेक्षाञ्चक्राते ॥
तौ ह प्रजापतिरुवाच-किं पश्यथ इति ?२

किये नखलोमवाले होयके उदकशरावविषै अवलोकन करतेभये ॥ ॥ तिनकूं प्रजापति कहतेभये ॥ प्रजापतिरुवाचः–क्या देखतेहो ? ऐसैं ॥ २ ॥

पना सिद्ध भया । काहेतैं उदकशरावआदिकविषै छायाकर (प्रतिबिंबकारक) होनेतैं । देहसैं संबंधवाले अलंकारआदिककीन्यांई ॥ केवल[३१६] इतनाहीं नहीं किंतु इसकरि यावत् किंचित् आत्मभावकरि अभिमत अहंकारादिक आत्मीय (अपनै) भावकरि औ अभिमत सुख[३१७] दुःख

---

३१६ केवल छाया औ ताके कारणकाहीं अनात्मपना नहीं । किंतु उक्त न्यायकरि अहंकारादिकनका औ तिनके धर्मनका आत्मा अरु आत्मीयपना निषेध किया । ऐसैं प्रसंगतैं अतिदेश करैहैं ॥ इहां आत्मापनैकरि अभिमत अहंकारादि । यह शेष है औ मोहादिकविषै आत्मीयभावकरि अभिमत । ऐसैं अध्याहार करनेकूं योग्य है ॥

३१७ इसकरि । ऐसैं सूचन कियेहीं हेतुकूं दिखावैहैं ॥

राग द्वेष अरु मोहआदिक है सो कादाचित्क (आगमापायी) होनेतैं नख लोमआदिककीन्यांई अनातमा है। ऐसैं प्रतीतिकरनेकूं योग्य है॥ [३१८] ईसरीतिसैं अशेष मिथ्याग्रहणके दूरि करनेके निमित्त सम्यक् अलंकारआदिरूप दृष्टांतके प्रजापतिकरि कहेहुये ताकूं सुनिके तैसैं करनेवाले तिन दोनूंका बी छायाविषे आत्माका विपरीत ग्रहण जातैं नहीं दूरी होता भया। तातैं किसीबी स्वदोषकरिहीं प्रतिबद्ध भया है विवेकविज्ञान जिनोंका ऐसैं इंद्र अरु विरोचन होते भये। ऐसैं जानियेहै॥ ॥ तिन पूर्वकीन्यांईहीं दृढनिश्चयवाले दोनूंकूं प्रजापति पूंछतेभये॥ प्रजापतिरुवाच:—"क्या देखते हो?" ऐसैं॥ २॥

इहां अनात्मा है। ऐसैं अनात्मापना जो है सो अनात्मीयपनेके उपलक्षणअर्थ है॥

३१८ तब तिन दोनूंके यथोक्त रीतिकरि विपरीत ग्रहणकूं अपगत होनेतैं उत्तररूप प्रजापतिके वाक्यसैं क्या है? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

तौ होचतुर्यथैवेदमावां भगवः साध्वलंकृतौ सुवसनौ परिष्कृतौ स्व एव-

---

अर्थः—वे दोनूं कहतेभये ॥ इंद्रविरोचनावूचतुः—हे भगवन्! हम दोनूं सम्यक् अलंकारयुक्त सुंदरवस्त्रवाले अरु छेदन किये नखलोमवाले हैं यह [उदाहरण]

टीकाः—वे दोनूं तैसैंहीं (पूर्वकीन्यांई) प्रतिपन्न (निश्चयवाले) हुये कहतेभये "जैसैं इसकूं"[३१९] ऐसैं। कहिये सम्यक् अलंकारआदिककरि विशिष्ट हम दोनूंहैं। जैसैंहीं यह उदाहरण है। ऐसैंहीं ये दोनूं हमारे छायात्मा हैं ऐसैं अत्यंत वि-

---

३१९ इहां " तैसैंहीं " याका व्याख्यान " पूर्ववत् " यह है औ " जैसैंहीं यह " ऐसैं प्रतीकका ग्रहण है ताकूं व्याख्यान करैहैं ॥ इहां हम दोनूं हैं ऐसा यह उदाहरण जैसैंहीं है। ऐसैं संबंध है औ अक्षि [विषै पुरुष इस] वाक्यतैं अरु उदकशरावववाक्यतैं औ साधु अलंकारवाक्यतैं छाया अरु ताके हेतुके मध्य एकहीं आत्मता है। अभ्यासतैं (बहुवारपठनतैं) ऐसैं जो भ्रमका अतिशय भया सो " सुतराम् (अत्यंत) " ऐसैं कहा ॥

मेवेमौ भगवः साध्वलंकृतौ सुवसनौ परिष्कृतावित्येष आत्मेति होवाचैतद-

---

जैसें हीं है। ऐसें हीं हे भगवन्! सम्यक् अलंकारयुक्त सुंदरवस्त्रवाले अरु छेदन किये नखलोमवाले ये (छायात्मा) हैं ऐसें [क०] ॥ ॥ यह आत्मा है। ऐसें कहते

परीतनिश्चयवाले होते भये ॥ ॥ जिसें[320] आत्माके लक्षणकूं "जो आत्मा अपहतपाप्मा है" ऐसें फेर ताके विशेषकूं खोजनेवाले शिष्यनकूं "जो यह अक्षि (चक्षु) विषै पुरुष देखियेहै" ऐसें साक्षात्आत्माके निर्देश कियेहुये तिनके विपरीतग्रहणके दूरीकरनेअर्थ उदकशराव अरु सम्यक् अलंकाररूप दृष्टांतकेबी कहे हुये आत्मस्वरूपके बोधतैं विपरीतग्रहण दूरी भया नहीं। यातैं ये किसी बी स्वदोषकरि प्रतिबद्ध भया है विवेक विज्ञानका सामर्थ्य जिनोंका ऐसे भये हैं। ऐसें मानिके प्रजापति यथाऽभिप्रेत (स्वअभिमत)हीं-

---

३२० प्रजापतिके वाक्यकूं उठावतेहैं ॥

मृतमभयमेतद्ब्रह्मेति॥तौ ह शान्तहृदयौ प्रवव्रजतुः ॥ ३ ॥

भये। यह अमृत अभय है यह ब्रह्म है। ऐसैं [ब्रह्माकरि उक्त] वे दोनूं शांतहृदयवाले हुये गमन करतेभये ॥ ३ ॥

आत्माकूं मनविषै राखिके "यह आत्मा है" ऐसैं कहते भये । यह अमृत अभय है यह ब्रह्म है । ऐसैं [321] पूर्वकीन्यांई। परंतु [322] तिनकरि अभिप्रेत (अभिमत) आत्माकूं नहीं कहतेभये॥ ॥[323]"जो आत्मा" इत्यादि आत्माके लक्षणके श्रवणकरि अरु अक्षिगत पुरुषके श्रवणकरि अरु

---

३२१ वाक्यके व्याख्यानकूं अतिदेश करैहैं ॥

३२२ एष (यह) शब्दकरि तिन दोनूं शिष्यनके अभिप्रेत (अभिमत)हीं छाया नामक अरु देहनामक आत्माकूं स्मरण करिके प्रजापति अनुमोदन करते भये? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

३२३ "वे दोनूं शांतहृदयवाले हुये" इत्यादिवाक्यके तात्पर्यकूं कहैहैं ॥ इहां संस्कारयुक्त प्रथम होहू। यह शेष है॥

उदकशरावआदिक युक्तिकरि संस्कारयुक्त प्रथम होहू औ [324] सर्व मेरे वचनकूं फेरि फेरि स्मरण करनेवाले तिन दोनूंकूं प्रतिबंधके क्षयतैं आपहीं आत्माविषै विवेक होवैगा । ऐसैं मानते हुये औ [325] फेरि ब्रह्मचर्यके उपदेशके हुये जो तिनके चित्तविषै दुःख होवैगा । ताकी उत्पत्तिकूं हरण करनेकूं इच्छतेहुये प्रजापति कृतार्थबुद्धिमान् होनेकरि जानेवालेबी तिन दोनूंकूं उपेक्षाकरते भये ॥ वे इंद्र अरु विरोचन शांतहृदयवाले कहिये संतुष्टहृदयवाले । अर्थ यह जोः—कृतार्थबुद्धिवाले हुये गमन करते भये ॥ तिनकूं संतोष भया । परंतु [326] शमहीं नहीं भया । जब तिनकूं शम भया होवै तब विपरीतग्रहण विगत होवै ॥ ३ ॥

---

३२४ संस्कारयुक्त हुये बी तिन दोनूंकूं आत्माविषै विवेक कैसैं होवैगा? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

३२५ तिनकी उपेक्षाविषै अन्य कारणकूं कहैहैं ॥

३२६ शांतहृदयवान्‌पना कहा है सो तुष्टहृदयवान्‌पनैकरि क्यूं व्याख्यान करियेहै । हृदयगत शम (शांति) हीं क्यूं नहीं विवक्षित करियेहै? तहां कहैहैं ॥

तौ हान्वीक्ष्य प्रजापतिरुवाचाऽनुप-

अर्थः—तिनकूं देखिके प्रजापति कहते-भये ॥ प्रजापतिरुवाचः—आत्माकूं नहीं

टीकाः—ऐसैं[३२७] तिन गये इंद्र अरु विरोचनरूप भोगासक्त राजाओकूं यथोक्तअर्थका विस्मरण होवैगा? ऐसी आशंका मनमैं ल्यायके औ प्रत्यक्ष[३२८] वचनकरि होता जो है चित्तविषै दुःख ताकूं हरण करनेकूं इच्छते हुये। दूर जातेहुये तिन दोनूंकूं देखिके "जो आत्माअपहत पाप्मा" इत्यादि वचनकीन्यांई यह (वक्ष्यमाण) वचन बी इन दोनूंके श्रवणकी गोचरताकूं पावैगा। ऐसैं मानिके प्रजापति[३२९] अप्रत्यक्ष कहते भयेः—

३२७ जब प्रजापति तिन दोनूंकूं उपेक्षा करतेभये तब "तिन दोनूंकूं देखिके" इत्यादिवाक्य क्यूं है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां प्रजापति कहतेभये। ऐसैं संबंध है ॥

३२८ तब तिन दोनूंकूं बुलायके क्यूं नहीं कहतेभये? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

३२९ कर्त्तापनेकरि संबंधके अर्थ उक्तकूंहीं फेर अनुवाद करैहैं ॥

लभ्यात्मानमननुविद्य व्रजतो यतर ए-
तदुपनिषदो भविष्यन्ति। देवा वाऽसुरा

जानिके अप्रत्यक्षकरिके दोनूं जातेहैं। इतर
देव वा असुर इस उपनिषद्वाले होवैंगे।

यथोक्तलक्षणवाले आत्माकूं [330] नहीं जानि-
के औ अनुवेदन (स्वानुभव) न करिके क-
हिये आपके प्रत्यक्ष न करिके औ विपरीत नि-
श्चयवाले होयके ये इंद्र अरु विरोचन गमन
करते भये। यातैं इतर देव वा असुर। विशे-
षितकरि क्या (प्रयोजन)हैः-इस उपनिषद्वाले
होवैंगे कहिये इन दोनूंनैं जो ग्रहणकरी आ-
त्मविद्या सो यह उपनिषद् जिन देवनकी वा
असुरनकी है ऐसे जे देव वा असुर वे इसउप-
निषद्वाले कहिये ऐसे विज्ञानवाले। अर्थ यह
जोः—इस निश्चयवाले। होवैंगे॥ ॥ वे क्या

---

३३० यह प्रजापति क्या कहतेभये? इस अपेक्षाके हुये कहैहैं॥

वा ते पराभविष्यन्तीति ॥ स ह शान्तहृदय एव विरोचनोऽसुरान् जगाम तेभ्यो हैतामुपनिषदं प्रोवाचात्मैवेह महय्य

वे पराभवकूं पावैंगे ऐसैं ॥ ॥ सो शांतहृदयवालाहीं विरोचन असुरनके प्रति जाताभया । तिनकेअर्थ इस उपनिषद् (ज्ञान)कूं कहताभयाः—आत्माहीं (देह) इहां

[फलकूं पावैंगे] किः—पराभवकूं पावैंगे । अर्थ यह जोः—श्रेयके मार्गतैं पराभूत (बहिर्भूत) कहिये विनष्ट होवैंगे ॥ ॥ [331] स्वगृहके प्रति गमनकरनेवाले सुर अरु असुरनके मध्य जो असुरराज विरोचन था सो शांतहृदयवालाहीं हुया असुरनकेप्रति जाता भया औ जायके तिन असुरनकेअर्थ शरीरविषै आत्मबुद्धिरूप जो उपनिषद् है तिस इस उपनिषद्कूं क-

---

३३१ यथोक्त प्रजापतिके वाक्यकूं सुनिके बी जानेवाले इंद्र अरु विरोचनके मध्य विरोचनगत अवांतरविशेषकूं कहैहैं ॥

आत्मा परिचर्य्य आत्मानमेवेह मह-यन्नात्मानं परिचरन्नुभौ लोकाववाप्नो-तीमञ्चामुञ्चेति ॥ ४ ॥

पूजनीय है आत्मा परिचरणीय (सेवनीय) है । आत्माहीकूं इहां पूजताहुया आत्माकूं सेवताहुया दोनूं लोकनकूं पावताहै इसकूं औ उसकूं ऐसैं ॥ ४ ॥

हता भया ॥ "देहमात्रहीं आत्मा है" ऐसैं पिता (ब्रह्मा)नैं कहा है ऐसैं ॥ [332]तातैं आत्माहीं (देह) इहां (इसलोकविषै) पूजनीय है । तैसैं परिचर्य कहिये परिचरणीय (सेवनीय) है । तैसैं आत्मा (देह)कूंहीं [333]इहां (इसलोकविषै)

---

३३२ पिताकरि तैसैं कहे हुये बी हमोंकरि तहां क्या कर्त्तव्य है ? यह आशंकाकरिके विरोचन कहैहै ॥ इहां तैसैं याका पूजनीयपनैकी न्यांई । यह अर्थ है औ फेर तैसैं । यह उक्त प्रकारकी उक्ति है ॥

३३३ तथापि प्रार्थित (वांछित) जो सर्व लोक औ कामोकी प्राप्ति सो असिद्ध भई ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

तस्मादप्यद्येहाददानमश्रद्दधानमय-

अर्थः-तातैं अद्यापि इहां अदाता अ-

पूजता हुया अरु सेवता हुया दोनूं लोक-
नकूं पावताहै । इसकूं औ उसकूं ॥ इस-
लोक अरु परलोकविषैहीं सर्व लोक औ काम
अंतर्भावकूं पावते हैं । यह असुरनके राजाका
अभिप्राय है ॥ ४ ॥

टीकाः-[३३४]तातैं तिनका संप्रदाय अद्यापि
अनुवर्त्तमान है । यातैं इहां (इसलोकविषै)
दानकूं न करनेवाले (अविभागशील) अरु
सत्कार्यनविषै श्रद्धारहित अरु यथाशक्ति अ-
यजमान (यजन करनेके स्वभावसैं रहित)
पुरुषकूं यह निश्चयकरि आसुर है जातैं ऐसे
स्वभाववाला है बडा खेद है । ऐसैं खेदकूं

३३४ विरोचनके संप्रदायकी अविच्छन्नताकूं दिखावैहैं ॥ इहां तातैं । याका देहात्मवादकूं आसुर (असुरनका किया) होनेतैं । यह अर्थ है औ तिनका संप्रदाय कहिये तिन विरोचन आदिक असुरनका संप्रदाय जो देहके आत्मभावका उपदेश । सो ॥

जमानमाहुरासुरो बतेत्यसुराणाᳪं ह्ये-
षोपनिषत्प्रेतस्य शरीरं भिक्षया वसने-

श्रद्धालु अयजमानकूं "आसुर है" ऐसें खे-
दयुक्त हुये कहतेहैं । जातें असुरनकी यह
उपनिषद् हैः—प्रेतके शरीरकूं भिक्षाकरि

पावते हुये शिष्टपुरुष कहते हैं ॥ जातें [335] असु-
रनकी श्रद्धारहितताआदिक लक्षणवाली यह
उपनिषत् है । तिस [336] उपनिषद्करि संस्कारयु-
क्त हुये [वे देहात्मवादी] प्रेत (मृत)के शरी-
रकूं गंध पुष्प अरु अन्नआदिकलक्षणवाली
भिक्षाकरि अरु वस्त्रआदिकसैं आच्छादनआ-
दिकप्रकाररूप वसन (वस्त्र)करि अरु ध्वजप-
ताकाआदिकके करनेरूप अलंकारकरि ऐसें
संस्कारयुक्त करते हैं ॥ इस शरीर (शव)के

---

३३५ आत्मभावआदिककरि रहित पुरुषकूं आसुर क्यूं कहतेहैं? इस आकांक्षाके हुये कहैहैं ॥

३३६ प्रकृत उपनिषद्के कार्यकूं कथन करैहैं ॥

इति श्री०अष्टमप्रपाठकगताष्टमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ८ ॥

नालंकारेणेति सꣳस्कुर्वन्त्येतेन ह्यमुं लोकं जेष्यन्तो मन्यन्ते इति ॥ ५ ॥

इत्यष्टमप्रपाठकस्याष्टमः खंडः ॥ ८ ॥

अथाष्टमप्रपाठकस्य नवमः खंडः ॥९॥

अथ हेन्द्रोऽप्राप्यैव देवानेतद्भयं द-

वसनकरि अलंकारकरि ऐसैं संस्कारयुक्त करतेहैं । इसकरिहीं उसलोककूं जीतलिया मानतेहैं ॥ ५ ॥

इति श्री०मूलभाषा०अष्टमप्रपा०अष्टमः खंडः ॥८

अथ श्री०मूलभाषा०अष्टमप्रपाठकस्य नवमः खंडः ९

अर्थः—औ इंद्र देवनकूं अप्राप्तहोयके

संस्कारकरि मरिके पावने योग्य उस (स्वर्ग लोककूं जीतलेवाले मानते हैं ॥ ५ ॥

इति श्री० भाष्यभाषा० अष्टमप्रपाठकस्याष्टमः खंडः॥८

अथ श्री०भाष्यभाषा०अष्टमप्रपाठ०नवमः खंडः ॥९

देहछायात्मदोषकरि इंद्रका पुनरागमन औ वास ३

टीकाः—अब[३३७] इंद्र देवनकूं अप्राप्तहोयकेहीं

अथ श्री०अष्टमप्रपा०नवमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ९ ॥

३३७ इस रीतिसैं विरोचनगत विशेषकूं दिखायके अब देवराजगत विशेषकूं कहैहैं ॥

दर्श-यथैव खल्वयमस्मिञ्छरीरे साध्वलंकृते साध्वलंकृतो भवति सुवसने सु-

हीं इस भयकूं देखताभयाः—जैसेंहीं इस शरीरके सम्यक् अलंकृत हुये प्रसिद्ध यह (छायात्मा) सम्यक् अलंकृत होवैहै।

अक्रूरताआदिक दैवीसंपत्[338]करि युक्त होनेतें गुरुके वचनकूं पुनः पुनः स्मरण[339] करताहुयाहीं जाताहुया इस वक्ष्यमाण स्वात्माके ग्रहणरूप निमित्तवाले भयकूं देखताभया ॥ उदंकशरा[340]वके दृष्टांतकरि प्रजापतिनें जिसअर्थ न्याय क-

३३८ दोनूंकूं प्रजापतिके वाक्यके श्रवणके तुल्य हुये बी देवराजकूं हीं मार्गविषै ताका अनुसंधान (स्मरण) कैसें भया? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

३३९ स्मरणके फलकूं कहैहैं ॥

३४० प्रजापतिके वचनकूं स्मरण करनेवालेबी इंद्रकूं छायात्माके ग्रहणविषै कैसें दोष दर्शन भया? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां जिस अर्थ। याका देहादिककी अनात्मताके ज्ञापन अर्थ। यह अर्थ है औ कादाचित्कपना (कदाचित् होनेपना) अरु व्यभिचारीपनाआदिक न्याय है औ ताका एकदेश जो है सो व्यभिचारीका अनात्मपना है ॥

वसनः परिष्कृते परिष्कृत एवमेवाय-
मस्मिन्नन्धेऽन्धो भवति स्रामे स्रामः

सुवसन हुये सुवसन । परिष्कृत हुये प-
रिष्कृत ॥ ऐसैंहीं इसके अंधहुये अंध हो-
वैहै । स्राम हुये स्राम । परिवृक्ण (छि-

हा ताका एकदेश मघवा (इंद्र)की बुद्धिविषै प्रतीत होताभया जिसँकरि[341] छायारूप आत्माके ग्रहणविषै दोषकूं देखताभया ॥ ॥ कैसैं[342] कि ? जैसैंहीं इसशरीरके सम्यक् अलंकृत हुये प्रसिद्ध यह छायात्माबी सम्यक् अलंकृत होवैहै । औ सुवसन (सुंदरवस्त्रवान्) हुये सुवन होवैहै औ परिष्कृत हुये परिष्कृत होवैहै कहिये जैसैं[343] नख लोमआदिक देहके अवयवनके निवारणके हुये छायात्माबी परि-

३४१ न्यायके एकदेशकी दृष्टिके फलकूं कहैहैं ॥

३४२ दोषदर्शनकूंहीं आकांक्षाद्वारा स्पष्ट करैहैं ॥

३४३ उदाहरणकरि कहे वाक्यविषै कहनेकूं इच्छित अर्थकूं कथन करैहैं ॥

परिवृक्णे परिवृक्णोऽस्यैव शरीरस्य नाशमन्वेष नश्यति। नाऽहमत्र भोग्यं पश्यामीति ॥ १ ॥

न्नांग) हुये परिवृक्ण । इसींहीं शरीरके नाशके पीछे यह नाशकूं पावताहै ॥ १ ॥

ष्कृत (³⁴⁴नखलोमादिरहित) होवैहै ॥ ऐसैंहीं यह छायात्माबी इस शरीरके [³⁴⁵नखलोमआदिकनके साथि चक्षुआदिकनकूं देहके अवयवभावकूं तुल्य होनेतैं] चक्षुके निवारणके भये

---

३४४ "परिष्कृत होवैहै" इस वाक्यकूं व्याख्यान करैहैं ॥ इहां ऐसैं हीं । याका देहके नख आदिकके दूरी किये हुये छायात्माकेबी तिस (नखआदिक)के दूरीकरणकीन्यांईं । यह अर्थ है औ इस शरीरके अंधहुये छायात्माबी अंध होवैहै । ऐसैं संबंध है ॥

३४५ देहके अंधपनैके हुये छायात्माका सो अंधपना क्यूं इष्ट है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:–तिन (नखादिकन)के साथि चक्षु आदिकनके देहके अवयवपनैकूं तुल्य होनेतैं । देहविषै नख आदिकके अभाव हुये छायाविषै बी तिनके अभावके अंगीकारतैं देहविषै चक्षु आदिकके अभावके हुयेबी छायाविषै बी तिनका अभाव युक्त है ॥

स समित्पाणिः पुनरेयाय॥तꣳह प्र-

अर्थः—मैं इहां भोग्यकूं नहीं देखताहूं। ऐसें [दोषकूं जानिके] सो समित्पाणि

अंध हुये अंध होवैहै औ स्राम हुये स्राम होवैहै ॥ [346]स्राम प्रसिद्ध एकनेत्रवाला है। ताकूं अंधताकरि प्राप्त होनेतें चक्षु वा नासिका जाकी सदा स्रवै है ऐसा जो पुरुष सो इहां स्राम कहिये है ॥ औ परिवृक्ण कहिये छिन्नहस्तवाला वा छिन्नपादवाला ॥ स्राम वा परिवृक्ण देहके हुये छायात्माबी तैसा (परिवृक्ण) होवैहै ॥ तैसैं [348]ईस देहके नाशके पीछे यह नाशकूं पावताहै ॥ १ ॥

टीकाः—[349]यांतें मैं इहां कहिये इस छायात्मा-

३४६ स्राम शब्दके अपुनरुक्त अर्थकूं कथन करैहैं ॥

३४७ पदार्थकूं कहिके वाक्यार्थकूं कहैहैं ॥

३४८ परतंत्र होनेतैं छाया (प्रतिबिंब)की अनात्मताकूं दिखायके तहां (ताकी अनात्मताविषै)हीं अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥

३४९ विनाशिता आदिक युक्तिके दर्शनके फलकूं उपसंहार करैहैं ॥

जापतिरुवाच- मघवन्यच्छान्तहृदयः प्राव्राजीः सार्द्धं विरोचनेन किमिच्छन्

हुया फेर आवताभया ॥ ॥ ताकेप्रति कहतेभये ॥ प्रजापतिरुवाचः—हे इंद्र ! तूं जो शांतहृदयवाला हुया विरोचनके साथि ग-

---

के दर्शनविषै वा देहात्माके दर्शनविषै । भोग्यरूप फलकूं देखता नहीं ॥ [३५०] इसरीतिसैं देह अरु छायारूप आत्माके दर्शन (ज्ञान)विषै दोषकूं निश्चयकरिके सो (इंद्र) समित्पाणि (समिध हैं हस्तविषै जिसके ऐसा) हुया ब्रह्मचर्य जैसैं होवै तैसैं वास करनेकूं फेर गुरुके समीप आवताभया ॥ ॥ ताकूं प्रजापति कहते भये ॥ प्रजापतिरुवाचः—हे मघवन् ! जो तूं शांतहृदयवाला हुया विरोचनके साथि गमन करता भया हैं । किसकूं इच्छता हुया

---

३५० दोषकूं देखिके इंद्र यथोक्त रीतिसैं क्या करता भया ? इस अपेक्षाके हुये कहैहैं ॥

पुनरागम इति? स होवाच-यथैव खल्व-
यं भगवोऽस्मिञ्छरीरे साध्वलंकृते सा-

मन करताभयाहैं । किसकूं इच्छताहुया
फेर आवताभया हैं? ऐसैं [उक्त हुया]
सो कहताभया ॥ इंद्र उवाचः—हे भगवन्!
जैसैं हीं इस शरीरके सम्यक् अलंकृत हुये

फेर आवताभयाहैं? ऐसैं विशेषकरि जौंन[351]-
तेहुये बी फेर इंद्रके अभिप्रायकी प्रकटताअर्थ
फेरि पूंछतेभये । जैसैं "जिसकूं[352] जानताहैं ति-
सकरि मेरेप्रति समीप गमनकर" ऐसैं ॥ ॥
तैसैं (ब्रह्माकरि पूंछे) हुये। इंद्र अपने अभिप्राय-
कूं प्रकट करताभयाः—जैसैं हीं प्रसिद्ध यह।

---

३५१ सर्वज्ञहीं प्रजापति । इंद्रके अभिप्रायकूं जानते हुये हीं किसअर्थ प्राकृतकीन्यांई पूंछते हैं? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

३५२ ज्ञानवान् आचार्यके बी शिष्यके प्रति अभिप्रायविशेषकरि जाननेकूं प्रश्नके संभवविषै दृष्टांतकूं कहैहैं ॥ इहां तैसैं हुये । याका प्रजापतिके प्रश्नके अनुसारकरि । यह अर्थ है औ इंद्रकूं विषयकरनेवाला "स्व"शब्द है ॥

ध्वलंकृतो भवति सुवसने सुवसनः प-

प्रसिद्ध यह (छायाऽऽत्मा) सम्यक् अलं-कृत होवैहै। सुवसन हुये सुवसन । परिष्कृ-

---

इत्यादि ॥ ॥ औ "ऐसैं हीं है" इस रीतिसैं प्रजापति अनुमोदन करतेभये ॥ ॥ [३५३] ननु अक्षि-पुरुषके श्रवणके तुल्यहुये । इंद्र देहकी छायाकूं "आत्मा" ऐसैं ग्रहणकरताभया औ देहहींकूं तो विरोचन ग्रहण करताभया । तिसविषै क्या निमित्त है ? [३५४] तहाँ मानतेहैं किः—[३५५] जैसैं उदकश-रावआदिक प्रजापतिके वचनकूं स्मरण करनेहारे अरु देवनकेप्रति अप्राप्त भये हीं इंद्रकूं आचार्य-उक्त बुद्धिकरि छायारूप आत्माका ग्रहण औ ति-

---

३५३ दोनूं शिष्यनके श्रवणकी समताके हुये बी निश्चयकी विषमताविषै पूर्ववादी निमित्तकूं पूंछताहै ॥

३५४ सिद्धांती आचार्यके मतके उपन्यासद्वारा परिहार करैहैं ॥

३५५ तहां निश्चयके भेदविषै दृष्टांतकरि निमित्तके भेदकूं दिखावैहैं ॥ इहां आचार्यउक्त बुद्धिकरि। याका तात्पर्यकरि प्रजापतिनैं छायात्माहीं कहा है इस भ्रांतिकरि। यह अर्थ है ॥

रिष्कृते परिष्कृत एवमेवायमस्मिन्नन्धे-
ऽन्धो भवति स्रामे स्रामः परिवृक्णे प-

त हुये परिष्कृत ॥ ऐसैं इसके अंध हुये यह
अंध होवैहै । स्राम हुये स्राम । परिवृक्ण

सविषै दोषदर्शन होताभया । तैसैं[356] विरोचनकूं न-
हीं भया । तब क्या भया किः—देहविषै[357] हीं आ-
त्माका दर्शनभया । तिसविषै[358] दोषदर्शन बी नहीं
भया ॥ तौंकीन्यांई[359] हीं विद्याग्रहणके सामर्थ्यके

---

३५६ विरोचनकूं इंद्रकीन्यांई छायात्माका ग्रहण आचार्य उक्त बुद्धिकरि नहीं भया । ऐसैं कहैहैं ॥

३५७ तब ता विरोचनकूं आत्माका ज्ञान कैसैं भया ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—आचार्यनैं आत्मा देहहीं कहाहै । इस बुद्धिकरि तहां (देहविषै)हीं विरोचनकूं आत्माका ज्ञान होताभया ॥

३५८ औ देवनकूं अप्राप्तभये इंद्रकूं छायात्माके ग्रहणविषै मार्गके मध्य दोषदर्शन भया ताकीन्यांई असुरनकूं अप्राप्तभये विरोचनकूं मार्गके मध्य देहात्माके दर्शनविषै दोषदर्शन नहीं भया । ऐसैं कहैहैं ॥

३५९ दृष्टांतकूं कहिके दार्ष्टांतकूं कहैहैं ॥

रिवृक्णोऽस्यैव शरीरस्य नाशमन्वेष नश्यति। नाहमत्र भोग्यं पश्यामीति॥२॥

हुये परिवृक्ण । इसीहीं शरीरके नाशके पीछे यह नाशकूं पावताहै ॥ मैं इहां भोग्यकूं नहीं देखताहूं ऐसैं ॥ २ ॥

प्रतिबंधरूपदोषकी अल्पता अरु बहुलताकी अपेक्षावाला इंद्र अरु विरोचनकूं क्रमतें छायात्मा अरु देहका ग्रहण भया ॥ तिनमैं इंद्र[360] अल्पदोषवाला होनेतैं "देखियेहै" इस श्रुतिअर्थकेप्रति हीं श्रद्धावान् होनेकरि ग्रहणकरता भया ॥ औ इतर (विरोचन) श्रुतिअर्थकूं त्याग करिके लक्षणासैं छायाके निमित्त देहकूं । प्रजापतिनैं यह (देहरूपआत्मा) कहा है। ऐसैं दोषकी अधिकतातैं ग्रहण करताभया ॥ जैसैं प्र[361]सिद्ध आद-

---

३६० विद्याके ग्रहणविषै उपयोगी सामर्थ्यका प्रतिबंधभूत जो रागादि दोष ताकी अल्पताकी अपेक्षावाला इंद्रका छायाविषै आत्मग्रहण है ऐसैं कहा ताकूं स्पष्ट करैहैं ॥

३६१ यथोक्त दोषकी अधिकताकी अपेक्षावाले ग्रहणकर्त्ता विरोचनके अभिप्रायकूं दृष्टांतकरि दिखावैहैं ॥

र्शविषै दृश्यमान नील अरु अनीलरूप दो वस्त्रनके मध्य "जो नील है सो बडा योग्य है" ऐसैं छायाका निमित्त वस्त्रहीं कहियेहै छाया नहीं। ताकीन्यांई। यह विरोचनका अभिप्रायहै ॥ जातैं अन्य (बृहदारण्य) श्रुतिविषै तुल्यश्रवणके हुयेबी [३६२]स्वचित्तके गुणदोषके वशतैंहीं शब्दके अर्थका निश्चय स्थापनकिया है "[३६३]दमकूं करो । दानकूं

---

३६२ उक्त अर्थकूं बृहदारण्यक श्रुतिके आश्रयकरि स्पष्ट करैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:-देवनकूं मनुष्यनकूं औ असुरनकूं प्रजापतिकरि दकारके उपदेशके साधारणताकरि किये हुये। तिनकूं ताके श्रवणके तुल्य हुयेबी ताकेअर्थके भेदका निश्चय स्वचित्तके गुणदोषके वशतैं हीं बृहदारण्यकविषै ख्यापन (जाहिर)किया है। तैसैं इहां बी है ॥

३६३ वा तहां (बृहदारण्यकविषै) तुल्य श्रवणके हुये बी अर्थके भेदकी बुद्धि कैसैं भई? तहां कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:-जातैं हम स्वभावतैं अदांत (दमरहित) हैं तिसकरि "दमकूं करो" ऐसैं हमारेप्रति पिता कहतेभये। ऐसी देवनकूं मति (बुद्धि) प्रकट होती भयी ॥ जातैं हम स्वभावतैं लुब्ध (लोभी) हैं तिसकरि "दानकरो" ऐसैं हमारेप्रति पिता कहते भये। ऐसी मनुष्यनकूं बुद्धि होती भयी ॥ जातैं हम स्वभावतैं अत्यंत क्रूर हैं तिसकरि "दयाकूं करो" ऐसैं हमारे प्रति प्रजापति कहतेभये। ऐसी असुरनकूं प्रतिपत्ति (निश्चयरूप बुद्धि) होती भयी ॥ तहां ऐसैं दकारमात्रके श्रवणतैं

एवमेवैष मघवन्निति होवाचैतन्त्वे-
व ते भूयोऽनुव्याख्यास्यामि वसापरा-

अर्थः—प्रजापतिरुवाचः—हे इंद्र ! ऐसैं हीं यह है। ऐसैं कहतेभये ॥ इसीहींकूं तो तेरेअर्थ फेर अनुव्याख्यान करूंगा। अन्य

करो। दयाकूं करो" ऐसैं दकारमात्रके श्रवणतैं औ निमित्त[३६४](युक्तिदर्शन)बी ता (चित्तके गुण दोष)के अनुसारी हीं सहकारी होवैहैं ॥ २ ॥

टीकाः—प्रजापतिरुवाचः—हे मघवन् ! ऐ-[३६५]

आपके चित्तके अनुसारकरि तिनकूं विचित्र बुद्धि भयी। तैसैं इंद्र अरु विरोचनकूं बी होवैगी ॥

३६४ औ इंद्र अरु विरोचनकूं युक्तिदर्शनके अविशेषतैं अर्थके निश्चयका बी अविशेष होवैगा? ऐसैं जो कहै। सो बनै नहीं। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:—युक्तिके दर्शन बी स्वचित्तके गुणदोषकी अलपता अरु बहुलताकी अपेक्षा-वाले हैं। यातैं तिन दोनूंकूं ताकी अपेक्षावाला निश्चयका विषमपना अविरुद्ध है ॥

३६५ इंद्रके अभिप्रायकूं जानिके प्रजापति अनुमोदन करतेभये ऐसैं कहा। अब अनुमोदनके वाक्यकूं व्याख्यान करैहैं॥ इहां इंद्रके अभिप्रायकूं विषय करनेवाला एष (यह) शब्दहै॥

णि द्वात्रिंशतं वर्षाणीति ॥ स हापराणि द्वात्रिंशतं वर्षाण्युवास ॥ तस्मै होवाच ३

इत्यष्टमप्रपाठकस्य नवमः खंडः ॥ ९ ॥

बत्तीश वर्ष वासकर ऐसैं ॥ ॥ सो अन्य बत्तीश वर्ष वास करताभया ॥ ताकेअर्थ कहतेभये ॥ ३ ॥

इति श्री॰मूलभाषा॰अष्टमप्र॰नवमः खंडः ॥९॥

सैंहीं यह है । तैंनैं सम्यक् जान्या । छायात्मा नहीं है । ऐसैं प्रजापति कहतेभये । जो मैंनैं कहा आत्मा प्रकृत है । इसीहीं पूर्व व्याख्यान कियेबी आत्माकूं तो तेरेअर्थ फेर व्याख्यानकरूंगा ॥ [३६६]जातैं एकवार व्याख्या किये अरु दोषरहित पुरुषनके निश्चयकी विषय प्राप्त वस्तुकूं बी तूं नहीं ग्रहणकरताभया । जातैं तूं किसीबी दोषकरि प्रतिबंधकूं पाया है ग्रह-

---

३६६ "अनुव्याख्यान करूंगा" ऐसैं उक्तकूं सुनिके सुननेकी कामनावाले समीपप्राप्त इंद्रकेप्रति प्रजापति कहैहैं ॥

इति श्री॰अष्टमप्रपाठकगतनवमखंडस्य टिप्पणम् ॥ ९ ॥

अथाष्टमप्रपाठकस्य दशमः खंडः १०

य एष स्वप्ने महीयमानश्चरत्येष आ-

अथ श्री॰मूलभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्य दशमः खंडः १०॥

अर्थः—प्रजापतिरुवाचः—जो यह स्वप्न-विषै महीयमान हुया विचरताहै यह आ-

---

णका सामर्थ्य जिसका ऐसा भया हैं। यातैं तिसदोषके क्षपण (क्षय)अर्थ दूसरे बत्तीस(३२) वर्ष वासकर! ऐसैं कहिके तैसैं वास करनेवाले अरु क्षयकूं पाया है दोष जिसका ऐसे तिस इंद्रकेअर्थ प्रजापति कहते भये ॥ ३ ॥

इति श्री॰ भाष्यभाषा॰ अष्टमप्रपाठकस्य नवमः खंडः॥ ९॥

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपाठ॰दशमः खंडः॥१०॥

इंद्रार्थ स्वप्नपुरुषोपदेश, तामैं दोषसैं इंद्रवास ४

टीकाः—प्रजापतिरुवाचः—जो आत्मा अपहतपाप्माआदिक लक्षणवाला है औ जो यह अक्षिविषै पुरुष है। इत्यादिवाक्यकरि व्याख्यान किया है। यह सो है ॥ ॥ यह कौंन है ? जो स्वप्नविषै महीयमान हुया कहिये स्त्री-

त्मेति होवाचैतदमृतमभयमेतद्ब्रह्मेति ॥
स ह शान्तहृदयः प्रवव्राज ।सहाप्राप्यैव

त्मा है। ऐसैं कहतेभये। यह अमृत अभय
है यह ब्रह्म है इति॥ ॥ सो (इंद्र) शांत-
हृदयवाला हुया जाताभया । सो देवनकूं

आदिकनकरि पूज्यमान हुया विचरताहै ।
अर्थ यह जोः—अनेकप्रकारके स्वप्नके भोगनकूं
अनुभवकरताहै । यह आत्मा है। ऐसैं प्रजा-
पति कहतेभये । इत्यादिवाक्य समान है ॥
॥ ऐसैं उक्त हुया सो इंद्र शांतहृदयवाला
हुया गमनकरताभया ॥ सो देवनकूं अप्रा-
प्त होयकेहीं पूर्वकीन्यांई इस (स्वप्नके द्रष्टा)
आत्माविषैबी भयकूं देखता भया ॥ ॥
३६७ कैसैं किः—सो यह शरीर यद्यपि अंध हो-

अथ श्री०अष्टमप्रपाठकगतदशमखंडस्य टिप्प० १०

३६७ इहां पूर्वकीन्यांई । याका छायात्माके दर्शनकीन्यांई ।
यह अर्थ है ॥ औ इस आत्माविषै बी । याका स्वप्नद्रष्टाविषै ।

देवानेतद्भयं ददर्श-तद्यद्यपीद९ शरीर-मन्धं भवत्यनन्धः स भवति यदि स्राममस्रामो नैवैषोऽस्य दोषेण दुष्यति॥१॥

अप्राप्त होयके हीं इस भयकूं देखताभया:—सो यह शरीर यद्यपि अंध होवैहै सो (स्वप्नात्मा) अनंध होवैहै। जब [यह शरीर] स्राम [होवै। तब सो] अस्राम [होवैहै]॥ यह इसके दोषकरि दूषित होता नहीं है॥ १॥

वैहै [तथापि] जो स्वप्नात्माहै सो अनंध होवैहै॥ जब यह शरीर स्राम (चक्षु अरु नासासैं गलितजलवाला) होवैहै औ तब सो (स्वप्नात्मा) अस्राम होवैहै॥ यह स्वप्नात्मा इस देहके दोषकरि दूषणकूं पावता नहीं॥ १॥

यह अर्थ है॥ ननु छायात्माके शरीरके अनुसारीपनैकीन्यांई स्वप्नद्रष्टाकूं इस शरीरका अनुसारीपना नहीं है। तैसैं हुये पूर्वकीन्यांई दोषदर्शन कैसैं भया? यह आशंकाकरिके परिहार करैहैं॥

न वधेनास्य हन्यते नास्य स्राम्येण स्रामो घ्नन्ति त्वेवैनं विच्छादयन्तीवा-

अर्थः—इसके वधकरि नहीं हनन करियेहै। इसके स्राम्य (स्रमभाव)करि स्राम नहीं [होवैहै]। इसकूं हनन करतेहीं (कीन्यांई)तो हैं। पलायन करावते हुये-

टीकाः—इस (देह)के वधकरि बी सो छायात्माकीन्यांई नहीं हनन करियेहै। औ इसके स्राम्य (स्रामपनैं)करि स्वप्नात्मा स्राम नहीं होवैहै॥ जो [३६८] अध्यायकी आदिविषै "इसकी जराकरि यह जीर्ण होता नहीं" इत्यादि आगममात्रकरि उपन्यास किया वस्तु। [३६९] सो इहां

३६८ इहां स्राम्यकरि। याका चक्षु आदिकगत निरंतर जलके गलनकी विषयताकरि। यह अर्थ है॥ ननु देहके दोषकरि आत्माकूं नहीं दोष होवैहै ऐसैं पूर्वहीं कहा। सो इहां फेर किस अर्थ कहियेहै? यातैं कहैहैं॥ इहां न्याय जो है सो अन्वय अरु व्यतिरेक नामवाला है॥

३६९ जातैं इस देहके अभिमानके होतेहीं द्रष्टा देहधर्म-

प्रियवेत्तेव भवत्यपि रोदितीव। नाहमत्र भोग्यं पश्यामीति ॥ २ ॥

कीन्यांई हैं। अप्रियके वेत्ताकीन्यांई होवैहै। रोवते हुयेकीन्यांई बी है । मैं इहां भोग्यकूं नहीं देखताहूं ऐसैं [दोषकूं जानिके]॥२॥

न्याय (युक्ति)करि उपपादन करनेकूं उपन्यास किया ॥ [३७०]प्रथम यह (स्वप्नदृष्टा) छायात्माकीन्यांई देहके दोषकरि युक्त नहीं है किंतु इसकूं हननकरतेहीं तो हैं ॥ इहां एव (हीं) शब्द इव (न्यांई) अर्थविषै है । केईक इसकूं हनन करतेहुयेकीन्यांई हैं । ऐसैं देखनेकूं योग्य है । [३७१]परंतु हनन करतेहीं हैं। ऐसैं देखनेकूं यो-

---

के साथि संयोगकूं पावतेकीन्यांई पावताहै। स्वप्नविषै तो इस देहके अभिमानके अभावतैं तिस देहधर्मकेसाथि संबंधकूं पावता नहीं । ऐसैं कहैहैं ॥

३७० स्वप्नद्रष्टा जब देहके दोषकरि जुडता नहीं तब तिसविषै दोषदर्शन कैसैं भया ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

३७१ एवकार जैसैं सुन्याहै तैसैं क्यूं नहीं व्याख्यान करि-

समित्पाणिः पुनरेयाय ॥ तꣳह प्रजा-

अर्थः—सो समित्पाणि हुया फेर आव-

ग्य नहीं है । काहेतैं पीछले सर्व वाक्यनविषै इव (न्यांई) शब्दके देखनेतैं ॥ ॥ ननु[372] "इसके वधकरि नहीं हनन करियेहै" इस विशेषणतैं हननकरतेहीं तो हैं? इसप्रकारसैं जो कहैं । तो ऐसैं [373]बनै नहीं:—काहतैं [374]प्रजापतिकूं प्रमाणीकरनेवाले इंद्रके अनृतवादीपनैके आ-

---

येहै? तहां कहैहैं ॥ इहां द्वितीय इति शब्द देखनेकूं योग्य है । इस पदसैं संबंधकूं पावताहै ॥

३७२ देहके वधकरि यह नहीं हनन करियेहै । इस विशेषणतैं स्वप्नद्रष्टाका स्वतः वध नियमतैं विवक्षित है । एव शब्द जैसा सुन्या तैसाहीं काहेतैं नहीं होवैगा? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

३७३ क्या यह इंद्र प्रजापतिकूं आप्त (यथार्थवक्ता) मानताहै वा अनाप्त मानताहै? जब ताकूं अनाप्त (अयथार्थवक्ता) जानताहै तब ताके प्रति विद्याके ग्रहणअर्थ इंद्रका उपगमन नहीं संभवैहै । ऐसैं मानिके सिद्धांती कहैहैं ॥

३७४ अन्य विकल्पकेप्रति कहैहैं ॥ इहां स्वतः हनन स्वप्नद्रष्टाका इंद्रकूं विवक्षित नहीं है । यह शेष है ॥

पतिरुवाच-मघवन्यच्छान्तहृदयः प्रा-

ताभया ॥ ॥ ताकूं प्रजापति कहतेभये ॥
प्रजापतिरुवाचः—हे इंद्र ! जो तूं शांतहृद-

पादनके असंभवतें औ इंद्र तिस प्रजापतिकूं प्रमाणी करताहुया "[३७५] यँह अमृत है" ऐसे इस प्रजापतिके वचनकूं कैसैं मृषा करैगा ॥ ॥[३७६] ननु प्रजापतिकरि उक्त छायापुरुषविषै "इस शरीरके नाशके पीछे यह नाशकूं पावताहै" ऐसैं इंद्र दोषकूं कहता भया । तैसैं इहांबी होवैगा ? ऐसैं[३७७] बनै नहींः—[३७८]काहेतें "जो यह अक्षिविषै पुरुष देखियेहै" ऐसैं प्रजापतिनैं छायात्मा नहीं कहा । ऐसैं इंद्र मानताहै ॥ [३७९]कैसैंकिः—अपहतपाप्माआदिकलक्षणके पूंछे हुये जब प्रजापतिनैं छायात्मा कहा ऐसैं

३७५ उक्तकूंहीं स्पष्ट करैहैं ॥

३७६ दृष्टांतकरि पूर्ववादी शंका करैहै ॥

३७७ दृष्टांतकूं सिद्धांती विपरीत घटावते हैं ॥

३७८ ताके विपरीत घटावनेके प्रकारकूं प्रश्नपूर्वक प्रकट करैहैं ॥

३७९ इसीहींकूं आकांक्षापूर्वक प्रपंचन करैहैं ॥

व्राजीः किमिच्छन् पुनरागम इति? स होवाच- तद्यद्यपीदं भगवः शरीरमन्धं

यवाला हुया जाताभया हैं। किसकूं इच्छताहुया फेर आवताभया हैं? ऐसैं [उक्त हुया] सो (इंद्र) कहताभयाः—हे भगवन्! सो यह शरीर यद्यपि अंध होवैहै सो

इंद्र मानताहै। तब प्रजापतिकूं प्रमाणीभूत करिके फेर श्रवणकेअर्थ समित्पाणि हुया कैसैं जावै औ जाताभया॥ तातैं प्रजापतिनैं छायात्मा नहीं कहा। ऐसैं इंद्र मानताहै॥ [३८०] तैसैं हुये "द्रष्टा अक्षिविषै देखियेहै" ऐसैं व्याख्यान किया

---

३८० औ इंद्र "देखियेहै" इस श्रुतिके अर्थकूं ग्रहण करिके छायात्माकूं ग्रहण करताभया। ऐसैं पूर्व कहा। अब अन्यथा कैसैं कहियेहै? तहां कहैहैं॥ इहां यह अर्थ हैः— जैसैं यह वाक्य अक्षिकरि उपलक्षित द्रष्टाके पर है तैसैं पूर्वहीं व्याख्यान किया। परंतु स्वप्नद्रष्टाविषै छायात्माविषैकीन्यांईं स्पष्ट विनाशकी दृष्टि नहीं है औ इधर "तैसैं" याका जैसैं सो समीप गमनकरिके स्वप्नद्रष्टाकूं हनन करते हुयेकीन्यांईं हैं तैसैं। यह अर्थ है॥

भवत्यनन्धः स भवति। यदि स्राममस्रामो नैवैषोऽस्य दोषेण दुष्यति ॥३॥

(स्वप्नद्रष्टा) अनंध होवैहै। जब स्राम [होवै। तब सो] अस्राम [होवैहै]। यह इसके दोषकरि दूषित होता नहीं है॥ ३ ॥

॥ तैसैं [केईक इसकूं] भगावते (पलायन करावते) हुयेकीन्यांई हैं॥ औ तैसैं पुत्रादिकके मरणके निमित्त अप्रियके वेत्ताकीन्यांई होवैहै॥ किंवाः—आपबी रोदनकरते हुयेकीन्यांई होवैहै॥ ॥ नैनु[३८१] अप्रियकूं जानताहीं है। वेत्ता (जाननेवाले)कीन्यांई। यह कैसैं संभवै? तहां[३८२] कहियेहैः—सो बनै नहीं। काहेतैं अमृत अरु अभयपनेके वचनके असंभवतैं औ

---

३८१ पूर्ववादी इव (न्यांई) शब्दकेप्रति आक्षेप करैहै॥

३८२ वेत्ता (ज्ञाता)पना जब विकाररूप होवै तब ताका अमृतभाव नहीं होवैगा। काहेतैं मृत्तिकाआदिककीन्यांई विनाशीभावके प्रसंगतैं। तातैं एवके ठिकाने इव (न्यांई) शब्द युक्त है। ऐसैं सिद्धांती उत्तर कहैहैं॥

न वधेनास्य हन्यते नास्य स्राम्येण स्रामो घ्नन्ति त्वेवैनं विच्छादयन्ती-

---

अर्थः—प्रजापतिरुवाचः—हे इंद्र ! ऐसैंहीं यह है। ऐसैं कहतेभये ॥ इसीहींकूं तो

"ध्यावते हुयेकीन्यांई" इस अन्य श्रुतितैं ॥ ॥ [३८३] ननु प्रत्यक्षका विरोध होवैगा ? ऐसैं जो कहै। [३८४] सो बनै नहीं:—काहेतैं शरीरविषै आत्मताके प्रत्यक्षकीन्यांई भ्रांतिके संभवतैं ॥ प्रथम अप्रियके वेत्ताकीन्यांई नहीं होवैहै। वा [अप्रियका वेत्ताहीं] होवैहै। यह [३८५] रहो। मैं इहां (स्वप्नात्माके

---

३८३ "मैं जानताहूं" ऐसैं विकारकी आश्रयताके प्रत्यक्षके विरोधतैं तुमनैं श्रुतिगत एव (हीं) शब्दके ठिकाने जो इव (न्यांई) शब्द कहा सो युक्त नहीं है ? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

३८४ बुद्धिके साथि अध्यासतैं बी प्रत्यक्षके संभवतैं वेत्ताका विकारीपना नहीं सिद्ध होवैहै। ऐसैं सिद्धांती परिहार करैहैं ॥

३८५ "नहीं मैं इहां" इत्यादि वाक्यकूं अवतार देतेहैं ॥

वाऽप्रियवेत्तेव भवत्यपि रोदितीव । नाहमत्र भोग्यं पश्यामीत्येवमेवैष मघवन्निति होवाचैतन्त्वेव ते भूयोऽनुव्याख्यास्यामि वसाऽपराणि द्वात्रिंशतं

तेरेअर्थ फेर अनुव्याख्यान करूंगा । अन्य बत्तीश वर्ष वासकर ऐसैं ॥ ॥ सो

ज्ञानविषैबी) भोग्यकूं देखता नहीं । अभिप्राय यह है किः–इष्टफलकूं जानता नहीं ॥ ॥ प्रजापतिरुवाचः–ऐसैं हीं यह है । तेरे[३८६] अभिप्रायकरि । यह वाक्य शेष है । काहेतैं[३८७] आत्माके

इहां वा । याका अप्रियवेत्ताहीं होवैहै । यह अर्थ है ॥ औ इष्ट जो है सो सर्व लोक औ कामोंकी प्राप्तिरूप है ॥

३८६ विधेय (वाच्यअर्थ)विषै ब्रह्मभावकरि अध्यासका किया बी अप्रियका वेत्तापना आदिक है । सो फेर हृदय देशविषै बी प्राप्तभया । यातैं तेरे (इंद्रके) अभिप्रायकरि अप्रियके वेत्तापनैकीन्यांई स्वप्नका द्रष्टा है परंतु मेरे (प्रजापतिके) अभिप्रायकरि नहीं है । ऐसैं विशेषण देतेहैं ॥

३८७ तहां हेतुकूं कहैहैं ॥

वर्षाणीति ॥ स हापराणि द्वात्रिंशतं वर्षाण्युवास ॥ तस्मै होवाच ॥ ४ ॥

इत्यष्टमप्रपाठकस्य दशमः खंडः ॥ १० ॥

अन्य बत्तीश वर्ष वास करताभया ॥ ताके-अर्थ कहतेभये ॥ ४ ॥

इति श्री०मूलभाषा०अष्टमप्रपा०दशमः खंडः १०

अमृत अभयरूप गुण (धर्म)वान्पनैकूं मेरेकरि अभिप्रेत होनेतैं ॥ मैंनैं न्यायतैं दो[३]वार कहे वस्तुकूंबी इंद्र यथावत् निश्चय करता नहीं । तातैं पूर्वकीन्यांईं इस इंद्रकूं अद्यापि (अबीबी) प्रतिबंधका कारण है । ऐसैं मानतेहुये प्रजापति ता दोषके क्षपणअर्थ दूसरे बत्तीस वर्ष ब्रह्मचर्य जैसैं होवै तैसैं वास कर । ऐसैं आदेश करते भये ॥ तैसैं वास करनेवाले अरु क्षयकूं

---

३८८ " अन्य बत्तीस वर्ष वास कर " इत्यादि वाक्यके तात्पर्यकूं कहैहैं ॥ इहां तैसैं । याका प्रजापतिके वाक्यके अनुसारकरि । यह अर्थ है ॥

इति श्री० अष्टमप्रपाठकगतदशमखंडस्य टिप्पणम् ॥ १० ॥

अथाष्टमप्रपाठकस्यैकादशः खंडः॥११॥

तद्यत्रैतत् सुप्तः समस्तः सम्प्रसन्नः

अथ श्री॰मूलभाषा॰अष्टमप्रपाठ॰एकादशःखंडः॥११॥

अर्थः—प्रजापतिरुवाचः—तहां जिसकालविषै यह (स्वपन) जैसें होवै तैसें सुप्त

पाया है कल्मष (मल) जिसका ऐसे तिस इंद्रकेअर्थ प्रजापति कहतेभये ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

इति श्री॰भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्य दशमः खंडः॥१०॥

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपाठ॰एकादशः खंडः११

इंद्रार्थ सुषुप्तपुरुषोपदेश, तामैं दोषसैं इंद्रवास ३

टीकाः—पूर्वकीन्यांई "इसीहींकूं तो तेरेअर्थ" इत्यादि कहिके "तहां जिसकालविषै यह (सोवना) जैसें होवै तैसें सुप्त" इत्यादि व्याख्यान किया वाक्य प्रजापति कहैहैं ॥ प्रजापतिरुवाचः—[३८९]अक्षिविषै जो द्रष्टा है औ स्वप्नविषै पू-

---

अथ श्री॰अष्टमप्रपाठकगतैकादशखंडस्य टि॰ ११

३८९ इहां जैसें पूर्व "इसीहींकूं तो तेरे अर्थ" इत्यादि कहिके "जो यह स्वप्नविषै महीयमान हुया" इत्यादि कहा।

स्वप्नं न विजानात्येष आत्मेति होवा-
चैतदमृतमभयमेतद्ब्रह्मेति ॥ स ह शान्त-
हृदयः प्रवव्राज। स हाप्राप्यैव देवानेत-

समस्त संप्रसन्न हुया स्वप्नकूं नहीं जान-
ताहै। यह आत्मा है। ऐसें कहतेभये। यह
अमृत अभय है यह ब्रह्म है इति ॥ ॥ सो
(इंद्र) शांतहृदयवाला हुया जाताभया ॥
सो देवनकूं अप्राप्त होयकेहीं इस भयकूं

ज्यमान हुया विचरताहै। सो यह सुप्त समस्त
संप्रसन्न स्वप्नकूं नहीं जानताहै। यह आ-
त्मा है। ऐसें प्रजापति कहतेभये। यह
अमृत अभय है यह ब्रह्म है। यह स्व (प्र-
जापतिका) अभिप्रेत (अभिप्रायका विषय)

तैसैं इहां बी "इसीहींकूं तो तेरेअर्थ" ऐसैं कहिके "तहां जिस कालविषै यह (सोवना) जैसैं होवै तैसैं" यह श्रेष्ठ अ-धिकारीके अर्थ प्रजापति कहैहैं। ऐसैं योजना है ॥ अब व्या-ख्यानकियेहीं वाक्यके अर्थकूं संक्षेप करिके दिखावैहैं ॥ इहां तहां बी। याका सुषुप्त पुरुषके दर्शनविषै बी। यह अर्थ है॥

द्धयं ददर्श-नाह खल्वयमेवꣳसम्प्रत्या-
त्मानं जानात्ययमहमस्मीति । नो एवे-
मानि भूतानि । विनाशमेवापीतो भव-

देखताभया:-निश्चयकरि यह ऐसैं अबी
आत्माकूं "यह मैं हूं" ऐसैं नहीं जानताहै।
औ इन भूतनकूं नहीं [जानताहै]। वि-
नाशकूंहीं प्राप्तभया होवैहै ॥ मैं इहां भो-

है ॥ ॥ इंद्र तहां (सुषुप्तपुरुषके दर्शनविषै बी)
दोषकूं देखताभया ॥ ॥ कैसैंकि:[३९०]-सुषुप्तिवि-
षै स्थितबी आत्मा निश्चयकरि यह अबी
(जाग्रत्स्वप्नविषै) सम्यक् आत्माकूं जानता
है। ऐसैं नहीं जानता है ॥ कैसैंकि:[३९१]-"यह
मैंहूं" ऐसैं औ इनभूतनकूं नहीं [जानता

---

३९० तिसीहीं दोषदर्शनकूं प्रश्नद्वारा स्पष्ट करैहैं ॥

३९१ स्वात्माकूं नहीं जानताहै । ऐसैं उक्त अर्थकूंहीं आकांक्षारूप द्वारसैं आकारकरि दिखावैहैं ॥

ति। नाहमत्र भोग्यं पश्यामीति ॥ १ ॥

स समित्पाणिः पुनरेयाय ॥ तꣳ ह प्र-

ग्यकूं नहीं देखताहूं। ऐसैं [दोषकूं जा-
निके] ॥ १ ॥

अर्थः—सो समित्पाणि हुया फेर आवताभया। ताकूं प्रजापति कहतेभये ॥ प्र-

---

है]। जैसैं[392] जाग्रत्विषै वा स्वप्नविषै [जानता है। तैसैं] ॥ यातैं[393] विनाशकूंहीं [इहां विनाशकूं प्राप्तकीन्यांई। ऐसैं[394] पूर्वकीन्यांई देखनेकूं योग्य है] प्राप्तभया होवैहै। अभिप्राय यह है किः—विनष्टकीन्यांई होवैहै ॥ १ ॥

टीकाः—जातैं[395] ज्ञानके होते ज्ञाताका सद्भाव

---

३९२ तहां विरुद्ध धर्मवाले दृष्टांतकूं कहैहैं ॥

३९३ सुषुप्तिमैं स्वपरके विवेकके अभावके हुये दोषकूं कहैहैं ॥ ॥

३९४ "हनन करतेहीं हैं" इस वाक्यविषै उक्त अर्थकूं लखावते हैं ॥

३९५ ज्ञानके अभावमात्रकरि विनष्टपना काहेतैं होवैहै ? यह आशंकाकरिके। उक्त अभिप्रायकूं स्पष्ट करैहैं ॥

जापतिरुवाच-मघवन्यच्छान्तहृदयः प्राव्राजीः किमेवेच्छन्पुनरागम इति? स होवाच-नाह खल्वयं भगव एवꣳसम्प्रत्यात्मानं जानात्ययमहमस्मीति । नो एवेमानि भूतानि। विनाशमेवापीतो भ-

---

जापतिरुवाचः-हे इंद्र ! जो तूं शांतहृदयवाला हुया जाताभया हैं । किसकूं इच्छता हुया फेर आवताभया हैं ? इति ॥ ॥ सो कहताभया ॥ इंद्र उवाचः-हे भगवन्! निश्चयकरि यह ऐसैं अबी आत्माकूं “ मैं यह हूं” ऐसैं नहीं जानताहै औ इन भूतनकूं नहीं [जानताहै] । विनाशकूंहीं प्राप्तभया

जानियेहै ज्ञानके नहोते नहीं जानियेहै औ सुषुप्त पुरुषकूं ज्ञान नहीं देखिये है। यातैं सो विनष्टकीन्यांई है । यह अभिप्राय है ॥ [३९६] परंतु अमृत

---

३९६ एवकार जैसैं सुन्या है तैसैंहीं क्यूं नहीं होवैगा ? यह आशंकाकरिके कहेहैं ॥

वति। नाहमत्र भोग्यं पश्यामीति ॥२॥
एवमेवैष मघवन्निति होवाचैतन्त्वेव ते भूयोऽनुव्याख्यास्यामि नो एवान्य-

---

होवैहै। मैं इहां भोग्यकूं नहीं देखताहूं ऐसें [क०] ॥ २ ॥

अर्थः—प्रजापतिरुवाचः—हे इंद्र! ऐसेंहीं यह है। ऐसें कहतेभये। इसीहींकूं तो तेरेअर्थ फेर अनुव्याख्यान करूंगा। इसतें अन्यत्र (अन्यकूं) नहीं। अन्य पंचवर्ष

अभयके वचनकी प्रमाणताकूं इच्छता हुया इंद्र आत्माके विनाशकूंहीं मानता नहीं ॥ २ ॥

टीकाः—पूर्वकीन्यांई "ऐसेंहीं" इसप्रकारसैं कहिके [प्रजापति कहतेभये ॥ प्रजापतिरुवाचः—] जो मैंनैं तीन पर्यायन (क्रमों)करि कहा तिसीहीं इसकूं। इस आत्मातैं अन्यत्र कहिये अन्यकिसीकूंबी नहीं। किंतु इसीकूंहीं

त्रैतस्माद्वसाऽपराणि पञ्च वर्षाणीति॥स-
हापराणि पञ्च वर्षाण्युवास। तान्येकश-

वास कर! ऐसैं [उक्त हुया] सो अन्य
पंचवर्ष वास करताभया॥ वे एकशत सं-

मैं फेर व्याख्यान करूंगा॥ परंतु [३९७] स्वल्प
तेरा दोष अवशेष रहा है। ताके क्षपणअर्थ
अन्य पंचवर्ष वास कर॥ ऐसैं प्रजापतिकरि
उक्त हुया सो इंद्र तैसैं करताभया॥ तिस
नष्टकषायआदिक दोषवाले इंद्रके अर्थ तीनि
स्थानोंके दोषके संबंधसैं रहित अरु अपहत-
पाप्मापनैआदिक लक्षणवाले आत्माके स्वरूपकूं
प्रजापति कहतेभये॥ वे एक शतवर्ष संपन्न
(मिलित) होतेभये॥ जो लोकविषै शिष्टपु-
रुष कहतेहैं किः—एक शतवर्ष इंद्र प्रजा-
पतिविषै ब्रह्मचर्य जैसैं होवै तैसैं वास कर-
ताभया ऐसैं॥ सो यह "बत्तीश" इत्यादि

---

३९७ पूर्वहीं ब्रह्मचर्यके आदेशके अभावविषै हेतुकूं कहैहैं

इंद्रार्थं सुषुप्तपुरुषोपदेश, तामैं दोषसैं इंद्रवास ३

तꣳ सम्पेदुरेतत्तद्यदाहुरेकशतꣳ ह वै वर्षाणि मघवान्प्रजापतौ ब्रह्मचर्य्यमुवास ॥ तस्मै होवाच ॥ ३॥

इत्यष्टमप्रपाठकस्यैकादशः खंडः ॥ ११ ॥

पन्न भये ॥ जो कहतेहैं किः–एकशत वर्ष इंद्र प्रजापतिविषै ब्रह्मचर्य वास करताभया ॥ सो यह [दिखाया] है ॥ तिस (इंद्र)के अर्थ कहतेभये ॥ ३ ॥

इति श्री०मूलभाषा०अष्टमप्र०एकादशःखंडः ११

वाक्यकरि दिखाया ॥ ऐसैं आख्यायिकातैं अलग होयके श्रुतिकरि कहियेहै ॥ ३९८ईसरीतिसैं यह इंद्रभाव (त्रिलोकीके राज्य)तैंबी गुरुतर अरु इंद्रनैंबी महान् यत्नसैं एक अधिकशतवर्षपर्यंत किये प्रयासकरि प्राप्त किया आत्मज्ञान है। यातैं

---

३९८ आख्यायिकातैं अलग होयके श्रुति हम लोकनकेवास्ते किसअर्थ ऐसैं उपदेश करती है? यह आशंकाकारिके कहैहैं ॥ ॥

इति श्री०अष्टमप्रपाठकगतैकादशखंडस्य टिप्पणम् ॥ ११ ॥

अथाष्टमप्रपाठकस्य द्वादशः खंडः १२

मघवन्मर्त्यं वा इद९ँ शरीरमात्तं मृ-

अथ श्री॰मूलभाषा॰अष्टमप्रपा॰द्वादशः खंडः ॥१२॥

अर्थः–हे इंद्र ! प्रसिद्ध यह शरीर मर्त्य

इसतैं पर (श्रेष्ठ) अन्य पुरुषार्थ नहीं है। ऐसैं श्रुति आत्मज्ञानकूं स्तुत करैहै ॥ ३ ॥

इति श्री॰ भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्यैकादशः खंडः ११

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्य द्वादशः खंडः १२

मर्त्यदेहतैं भिन्नात्मद्रष्टता । आत्मोपासक फल ॥ ६ ॥

टीकाः–प्रजापतिरुवाचः–हे मघवन्[३९९] ! प्रसिद्धमर्त्य (मरणरूपधर्मवाला) यह शरीर है। जो[४००] अक्षि आधार आदिक लक्षणवाला अरु

अथ श्री॰अष्टमप्रपाठकगतद्वादशखंडस्य टि॰ १२

३९९ कार्य अरु कारणकरि परिवेष्टित विश्व अरु तैजस कहे औ कारणमात्रकरि बद्ध प्राज्ञ व्याख्यान किया। अबी अशरीर तुरीयकूं उपदेश करनेकूं प्रजापति शरीरसहितताकूं निंदा करैहैं ॥

४०० शरीरकीन्यांई आत्माका बी विनाशीपना अवस्था-विशेष (सुषुप्ति)विषै दिखाया है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

त्युना तदस्यामृतस्याशरीरस्यात्मनोऽ-

है औ [सो] मृत्युकरि ग्रस्त है। सो (श-
रीर) इस अमृत अशरीर आत्माका अधि-

संप्रसादलक्षणवाला मेरेकरि कहा आत्मा विना-
शकूं हीं प्राप्त भया होवैहै। ऐसैं मानताहैं। तहां
(ताकी मर्त्त्यताविषै) कारणकूं[४०१] श्रवण करः—जो यह
प्रसिद्ध शरीर है जाकूं देखताहैं सो यह मर्त्त्य
(विनाशि) है औ सो मृत्युकरि आत्त कहिये नि
रंतरहीं ग्रस्त है ॥ [४०२] कदाचित्हीं मरताहै यातैं
मर्त्त्य है। ऐसैं कहेहुये तैसा संत्रास (भय)

४०१ शरीरसहित जो है सो विशेषविज्ञानवान् होवैहै।
अशरीरकूं तो विशेषविज्ञानके अभावतैं विनाशका भ्रम हो-
वैहै। फेर यह आत्मा वस्तुतैं विनाशकूं पावता नहीं। का-
हेतैं "अपने रूपकरि समाप्त होवैहै" ऐसैं संप्रसाद (जीव)
के अविनाशीपनैके वचनतैं। इस अभिप्रायकरिके कारणपनै-
कूंहीं स्पष्ट करतेहुये वाक्यके अक्षरनकूं व्याख्यान करैहैं ॥

४०२ ननु "मर्त्त्य" ऐसैं कहनेकरिहीं शरीरकी मृत्यु-
करि व्याप्तताके सिद्ध भये फेर मृत्युकरि व्याप्त यह क्यूं क-
हियेहै? तहां कहैहैं ॥

धिष्ठानमात्तो वै सशरीरः प्रियाप्रिया-
भ्यां। न वै सशरीरस्य सतः प्रियाप्रिय-

ष्ठान है ॥ [याहींतैं] सशरीर (शरीरस-
हित) हुया प्रिय अरु अप्रियकरि ग्रस्त
है ॥ सशरीरके होते प्रिय अरु अप्रियकी

नहीं होवैहै जैसा मृत्युकरि ग्रस्त (सदा व्याप्त)-
हीं है । ऐसैं कहेहुये [संत्रास] होवैहै । यातैं वै-
राग्यअर्थ "मृत्युकरि आत्त (ग्रस्त) है" ऐसैं यह
विशेष कहियेहै ॥ [४०३] कैसैं प्रसिद्ध विरक्त हुया दे-
हाभिमानतैं निवर्त्त होवैहै? यातैं ॥ [४०४] इहां "शरीर"

---

४०३ वैराग्यअर्थ विशेषवचन है ऐसैं जो कहा । सोई वैराग्य किसअर्थ है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां निवर्त्त करनेविषै विशेष वचन फलवान् है । यह शेष है ॥

४०४ "सो इसका" इस वाक्यविषै जो "तत् (सो)" शब्द है ताके अर्थकूं कहैहैं ॥ इधर "हे मघवन् (हे इंद्र!)" इत्यादि वाक्य "इहां" इस सप्तमीका अर्थ है औ तीन स्थानवाला होनेकरि । याका जाग्रत् स्वप्न अरु सुषुप्ति नामवाले तीन स्थानोंका संबंधी होनेकरि । यह अर्थ है औ अमृतपना कहिये षट् ऊर्मिनतैं वर्जितपना औ अशरीरपना कहिये स्वा-

योऽपहतिरस्त्यशरीरं वाव सन्तं न प्रियाप्रिये स्पृशतः ॥ १ ॥

अपहति (उच्छेद) नहीं है । अशरीर होतेकूं प्रिय अरु अप्रिय स्पर्श करतेनहीं॥१॥

ऐसैं इंद्रिय अरु मनकरि सहित कहियेहै । सो शरीर इस संप्रसाद[का] कहिये तीन स्थानवाला होनेकरि गम्यमान (ज्ञायमान) [का] अरु अमृत[का] । अर्थ यह जोः—मरणआदिक देह इंद्रिय अरु मनके धर्मनसैं वर्जित[का] ॥ इहां "अमृतका" इस पदकरिहीं अशरीरताके सिद्ध हुये फेर अशरीरका यह वचन आत्माका वायुआदिकनकीन्यांई सावयवपना औ मूर्तिमानूपना मति होहू यातैं है ॥ ऐसे आत्माका भोगका अधिष्ठान है॥ वा आत्माका सतूरूप ई-

---

भाविक सावयवभाव आदिककारि रहितपना औ " आत्माका अधिष्ठान है" इस वाक्यविषै भोग[का] ऐसैं अपेक्षितकूं पूरण किया ॥

४०५ भोक्ताका भोगायतन शरीर है । ऐसैं विशेषणके

क्षितातैं तेज जल अरु अन्नआदिकके क्रमसैं उत्पन्न भया अधिष्ठान (उपलब्धिका अधिकरण) है ॥ वा जीवनरूपसैं[४०६] प्रवेश करिके सत् (ब्रह्म)-हीं इसविषै अधिष्ठित होवैहै यातैं अधिष्ठान है ॥ जिसँका[४०७] यह इस प्रकारका नित्यहीं मृत्युकरि ग्रस्त अरु धर्म अधर्मकरि जनित होनेतैं प्रिय अरु अप्रियवाला अधिष्ठान है । सो तिसके अधिष्ठित (आश्रित) तद्वान्[४०८] हुया सशरीर[४०९] (शरीरसहित) होवैहै ॥ अशरीरस्वभाववाले[४१०] आत्माकूं "सोई

अर्थकूं कहिके । ताहीके (अधिष्ठानपदरूप विशेषणके)अन्य अर्थकूं कहैहैं ॥ इहां अधिष्ठान है । याका तिस जनयिता (जनक)की उपलब्धिका अधिकरण है । यह अर्थ है ॥

४०६ अधिष्ठान शब्दके अन्य अर्थकूं कहैहैं ॥

४०७ उत्तर वाक्यविषै स्थित सशरीर शब्दकूं व्याख्यान करैहैं ॥ इहां ईदृश (इस प्रकारका) । याका मर्त्यपनैआदिक विशेषणवाला । यह अर्थ है औ सो (यथोक्त शरीर) अधिष्ठित (आश्रित) किया है इसनैं इस व्युत्पत्तिकरि तदधिष्ठित (तिसके आश्रित) । याका सो तद्रूप पुरुष । यह अर्थ है ॥

४०८ तिसीहीं शब्दके मिलितअर्थकूं कहैहैं ॥

४०९ उक्त अर्थविषै विशेषणकूं डालते हैं ॥

४१० अशरीरकूं सशरीरता कैसैं होवैहै ? यह आशंका-

शरीर मैं हूं औ मैं शरीरहीं हूं" ऐसा अविवेकतैं आत्मभाव जो है सो सशरीरपना है । याहींतैं सशरीर हुया प्रिय (सुख) औ अप्रिय (दुःख)-करि आत्त (ग्रस्त) है । यह[411] प्रसिद्ध है ॥ औ तिस बाह्य विषयनके संयोग अरु वियोग मेरेकूं हैं ऐसैं मन्यमान (माननेवाले) सशरी-[412]रके होते सशरीरके बाह्य विषयनके संयोग अरु वियोगरूप औ आपकी संततिरूप तिन प्रिय औ अप्रियकी अपहति कहिये विनाश (उच्छेद) नहीं है इति ॥ फेर देहाभिमानतैं

करिके कहैहैं ॥ इहां अविवेकतैं सशरीर होवैहै । ऐसैं पूर्वके साथि संबंध है औ जातैं सशरीर है याहींतैं प्रिय अरु अप्रियकरि व्याप्त पुरुष होवैहै । ऐसैं योजना है ॥

४११ मूलगत "वै" शब्दके अर्थकूं कहैहैं ॥

४१२ भाष्यगत "एतत् (यह)" शब्दके अर्थकूंहीं उत्तर वाक्यके व्याख्यानकरि स्पष्ट करैहैं ॥ इहां वे दोनूं मेरेकूं हैं । ऐसैं माननेवाले आपके होते तिन संतति (प्रवाहसैं वर्त्तमान)रूप दोनूंकी अपहति नहीं है । ऐसैं संबंध है औ प्रिय औ अप्रियका स्वरूपकरि विनाश है क्षणिक होनेतैं ? यह आशंकाकरिके संततिरूप दोनूंकी । ऐसैं कहा औ "इति" शब्द । वाक्यकी समाप्तिरूप अर्थवाला है ॥

अशरीरस्वरूपके विज्ञानकरि निवर्त्त किया है अविवेकज्ञान जिसतैं ऐसे तिसैं[413] अशरीर हुयेकूं प्रिय अरु अप्रिय नहीं स्पर्श करतेहैं॥ इहां स्पर्शरूप अर्थवाला "स्पृशि[414]" धातु जो है सो प्रत्येकसैं संबंधकूं पावताहै। यातैं प्रियं[415] नहीं स्पर्श करताहै। अप्रिय नहीं स्पर्श करताहै। ऐसैं वाक्यका द्वय होवैहै "म्लेच्छैं[416] अशुचि अरु अधार्मिकोंके साथि संभाषण करना नहीं" यह जैसैं है तैसैं॥ जातैं वे (प्रिय औ अप्रिय) दोनूं धर्म[417] अधर्मके कार्य हैं। अशरीरता तो स्वरूप है। यातैं तहां धर्मअधर्मके असंभवतैं

४१३ अजन्माके वा अज्ञके देहके संबंधद्वारा संसारीपनैकूं कहिके। विद्यावान् भये ताहीकी देहकी निवृत्तिरूप द्वारकरि मुक्तिकूं दिखावैहैं॥

४१४ मुक्त पुरुषविषै मिलित प्रिय अप्रियके अस्पर्शके हुये बी एक एकका स्पर्श होवैगा? यह आशंकाकरिके कहैहैं॥

४१५ प्रत्येक संबंधकूं आकारकरि दिखावैहैं॥

४१६ समस्त (समास युक्त) होनेकरि श्रवणकिये अनेकके एक एकके क्रियापदसैं संबंधविषै दृष्टांतकूं कहैहैं॥

४१७ प्रिय अरु अप्रियके मुक्त आत्माविषै असंस्पर्शकूं पातनिकापूर्वक कैमुतिकन्यायकरि दिखावैहैं॥ इहां "तहां ऐसैं" अशरीरता नामक स्वरूप कहियेहै॥

तिनका कार्यभाव दूरतेहीं है । यातैं ताकूं प्रिय अरु अप्रिय स्पर्श करते नहीं ॥ ॥ [४१८]नंनु जब प्रियबी अशरीरकूं स्पर्श करता नहीं ऐसैं है । तब जो इंद्रनैं कहाः—सुषुप्तिविषै स्थित पुरुष विनाशकूंहीं प्राप्त होवैहै ऐसैं। सोई इहां (मुक्तविषै) बी प्राप्त भया ? [४१९]यैहै दोष नहीं हैः—काहेतैं धर्मअधर्मके कार्य शरीरके संबंधी प्रियअप्रियके प्रतिषेधकूं "[४२०]अशरीरकूं प्रिय औ अप्रिय स्पर्शकरते नहीं" ऐसैं विवक्षित होनेतैं ॥ जातैं [४२१]आगमापायी वस्तुनविषै स्पर्शशब्द देख्या है । जैसैं शीतस्पर्श अरु उष्णस्पर्श है ऐसैं । [४२२]परंतु अग्निके स्वभावभूत उष्ण अरु प्र-

४१८ प्रियके स्पर्शके अभावकूं सुनिके मोक्षकी अपुरुषार्थताकूं पूर्ववादी शंका करैहै ॥ इधर "इहां बी" ऐसैं मुक्त पुरुष ग्रहण करियेहै ॥

४१९ स्वाभाविक प्रियके अनिषेधतैं मुक्तिकूं अपुरुषार्थता नहीं है । ऐसैं सिद्धांती उत्तरकूं कहैहैं ॥

४२० निषेधकूंहीं आकारकरि दिखावैहैं ॥

४२१ कदाचित् होनेवालेहीं प्रिय अप्रियकाहीं यह निषेध है । इस अर्थविषै नियमकूं कहैहैं ॥

४२२ कदाचित् होनेवाले वस्तुविषै स्पर्श शब्दकीन्याई स्वात्माविषै यह शब्द नहीं है । ऐसैं कहैहैं ॥

काशका अग्निके साथि स्पर्श है ऐसैं नहीं होवैहै ॥ तैसैं अग्निके वा सूर्यके[४२३] उष्णप्रकाशकीन्यांईं स्वरूपभूत आनंदरूप प्रियकाबी इहां (आत्माविषै) प्रतिषेध नहींहै। काहेतैं "विज्ञानआनंद ब्रह्म है। आनंद ब्रह्म है" इत्यादि श्रुतिनतैं औ ईहांबी[४२४] "भूमा हीं सुख है" ऐसैं उक्त होनेतैं ॥ ॥ ननु[४२५] भूमाकी औ प्रियकी एकताके हुये असंवेद्य (ज्ञानका अविषय) होनेतैं। वा स्वरूपकरिहीं[४२६] नित्यसंवेद्य होनेतैं निर्वि-

---

४२३ तब आत्माविषै कदाचित् होनेवाला हीं प्रिय है। यातैं तिसमात्रके निषेधतैं तिस अवस्थावाला अपुरुषार्थपना होवैगा? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

४२४ भूमविद्याके आलोचनकिये हुये बी सुखमात्रका आत्माविषै निषेध नहीं है। ऐसैं कहैहैं ॥

४२५ तथापि विषयविषयी (प्रकाश्यप्रकाशक)भावकरि भेदके अभावतैं तिस अवस्थावाला अपुरुषार्थपना होवैगा? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

४२६ भेद जो है सो पुरुषार्थपनैविषै उपयोगी नहीं है। काहेतैं जहां भेद नहीं है तहां पुरुषार्थपनाबी नहीं है ऐसे केवल व्यतिरेकके अभावतैं ॥ सुखका साक्षात्कार तो पुरुषार्थ है औ सो अभेदविषै बी विद्यमान है? यह सिद्धांतीकी आशंका मनमैं ल्यायके पूर्ववादी कहैहै ॥

शेषता (अभिन्नता) है ऐसैं । सो इंद्रकूं इष्ट नहीं है । काहेतें "निश्चयकरि[427] यह अबी आत्माकूं 'यह मैं हूं' ऐसैं नहीं जानताहै । इन भूतनकूं नहीं [जानताहै] विनाशकूंहीं प्राप्त होवैहै । मैं इहां भोग्यकूं नहीं देखताहूं" ऐसैं इंद्रकरि उक्त होनेतैं । औ जातैं जिस ज्ञानकरि जो भूतनकूं औ आत्माकूं जानताहै औ अप्रियकूं किंचित्बी नहीं जानताहै औ सो सर्व लोकनकूं अरु सर्व कामोंकूं पावताहै सोई इंद्रकूं इष्ट है ? सत्य[428,429] यह इंद्रकूं इष्ट हैः—ये भूत मेरेतैं अन्य हैं । सर्वलोक अरु काम मेरेतैं अन्य हैं । मैं इनका स्वामी हूं । परंतु[430] यह इंद्रका

४२७ आत्माविषै विशेषज्ञानसैं रहितता इंद्रकूं इष्ट नहीं है । इस अर्थविषै पूर्ववादी हेतुकूं कहैहै ॥

४२८ तब इंद्रकूं क्या इष्ट है ? यह आशंकाकरिके पूर्ववादी कहैहै ॥ इहां जिस ज्ञानकरि पावताहै सो इंद्रकूं इष्ट है । ऐसैं पूर्वले पदसैं संबध है ॥

४२९ क्या यह विशेषविज्ञान इंद्रकूं इष्ट है ऐसैं कहिये है । किंवाः—हित है ऐसैं कहनेकूं वांछित करियेहै ? ऐसैं विकल्प करिके सिद्धांती तिनमैं प्रथम पक्षकूं अंगीकार करैहैं ॥

४३० द्वितीयपक्षकूं दूषण देतेहैं ॥ "इहां द्वितीयतैं हीं भय होवैहै" इत्यादि श्रुतितैं । यह अर्थ है ॥

हित नहीं है औ इंद्रका[४३१] हित प्रजापतिकरि कहनेकूं योग्य है। [४३२]आकाशकीन्यांई अशरीरस्वरूप होनेकरि सर्व भूत लोक अरु कामोंके आत्मभावके ज्ञानकरि जो प्राप्ति। सो हित इंद्रकेअर्थ कहनेकूं योग्य है। ऐसैं प्रजापतिकरि अभिप्रेत है। परंतु राजाकूं राज्यप्राप्तिकीन्यांई अन्यभावकरि नहीं ॥ [४३३]तहां ऐसैं आत्माकी एकताके हुये "ये भूत हैं। यह मैं हूं" ऐसैं किसकूं किसकरि जानैगा ॥ ॥ [४३४]ननु इसपक्षकेहुये "स्त्रीयनकरि वा यानोंकरि। सो जब पितृलोककी कामनावाला होवैहै। सो एकप्रकारका होवैहै" इत्यादि विद्वान्के ऐश्वर्यकी श्रु-

४३१ तथापि प्रजापतिकरि इंद्रकेअर्थ हित हीं उपदेश करनेकूं योग्य है? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

४३२ तब ताका हित क्या है? ऐसैं जो कहै। तहां सो कहैहैं ॥ इहां हित कहनेकूं योग्य है। ऐसे संबंध है ॥

४३३ हितहीं है इष्ट तो नहीं। ऐसैं स्थितहुये फलितकूं कहैहैं ॥

४३४ सर्व भूतनका औ सर्व लोकनका आत्मा (स्वरूप) सच्चिदानंदमात्र है। जब मुक्तकी तिसरूपता अंगीकार करियेहै तब ता (मुक्त)के ऐश्वर्यकी श्रुतियां कैसैं निर्वाह करैहैं? ऐसैं पूर्ववादी प्रश्न करैहै ॥

तियां अघटित होवैंगी ? सो [435] बनै नहीं:—काहेतैं सर्वात्माकूं सर्व फलसैं संबंधके संभवतैं अविरोध है यातैं । मृत्तिकाकूं सर्व घट करक कुंडआदिककी प्राप्तिकीन्यांई ॥ ॥ [436] ननु सर्वात्मभावके हुये दुःखसैं संबंध बी होवैगा ? ऐसैं जो कहै । सो [437] बनै नहीं:—काहेतैं दुःखके बी आत्मभावके ज्ञानतैं अविरोध है औ [438] आत्माविषै अविद्याकृत कल्पनारूप निमित्तवाले जे दुःख

४३५ सगुण विद्यावानोंका जो ऐश्वर्य (विभूति) है सो निर्गुणविद्याकी स्तुतिअर्थ कीर्तन करियेहै । काहेतैं ब्रह्मीभूत मुक्तकूं सगुणविद्याकाबी अंतरात्मारूप होनेतैं ताके फलकूं तहां उपचार (आरोप) करनेकूं युक्त होनेतैं । ऐसैं सिद्धांती परिहार करैहैं ॥

४३६ सर्वात्मभावके हुये निंदाबी प्राप्त होवैहै ? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

४३७ दुःखकूं जैसैं दुःख होनेका अभाव है ताकीन्यांई तिस दुःखका आत्मा विद्वान् बी दुःखी नहीं होवैगा । ऐसैं सिद्धांती समाधान करैहैं ॥

४३८ तब दुःखी जीवनका आत्मा मुक्त है [सो] यातैं दुःखी होवैगा? तहां कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:—प्रथम आत्माकूं स्वभावतैं दुःखीपना नहीं है किंतु आविद्यक (अविद्याकृत) दुःखीपना है औ सो अविद्या मुक्तकी दग्ध भई है । यातैं ताकूं दुःखीपनैकी प्राप्ति नहीं है ॥

हैं वे रज्जुविषै सर्पआदिककी कल्पनारूप निमित्तवाले दुःखनकीन्यांई हैं औ सो दुःखनकी निमित्त अविद्या । अशरीररूप आत्माकी एकताके स्वरूपके दर्शनकरि उच्छिन्न (दग्ध) भई । यातैं दुःखके संबंधकी आशंका नहीं संभवैहै ॥ औ [४३९] शुद्धसत्वतैं जनित संकलपरूप निमित्तवाले सर्व भूत(विषय)नविषै मानस कामोंका तो ईश्वरके देहसैं संबंध सिद्ध होवैहै ॥ [४४०] पर (परमात्मा)हीं सर्व सत्व (जीव)नके उपाधि-

४३९ तब विद्याकरि अविद्याके दग्ध हुये तिसकरि आरोपित जो ईश्वरका सगुणविद्याका फलरूप ऐश्वर्य सो बी दग्ध भया । यातैं स्तुतिअर्थ इहां ताके उपदेशकी सिद्धि कैसैं होवैगी ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:- शुद्ध सत्व जो रजो तमोकरि स्पर्शरहित सत्व है तिस मायाके ऐकदेशतैं उपजे संकल्प हैं निमित्त जिन ऐश्वर्यके भेदरूप कामोंके । वे तथोक्त (शुद्ध सत्व संकलपानिमित्त) हैं तिन मानस कामोंका सर्व भूतन (विषयन)विषै ईश्वरके अभिध्यानरूप मनोमात्र जो सिद्धोंका ईश्वर नामक स्वभाव है तिस (रूप ईश्वर देह) के साथि संबंध मायाअवस्थाविषै सिद्ध होवैहै ॥

४४० ननु जीवनकाहीं अविद्या तत्कार्यसैं संबंध है ईश्वका नहीं ? ऐसैं जो कहै । सो बनै नहीं । ऐसैं कहैहैं ॥

रूपद्वारकरि भोक्ता है। ऐसैं सर्व अविद्याकृत संव्यवहारोंका परमात्माहीं आस्पद (विषय) है अन्य नहीं। यह वेदांतका सिद्धांत है ॥ ॥

जो[४४१] यह अक्षिविषै पुरुष देखियेहै। ऐसैं छायापुरुषहीं प्रजापतिनैं कहाहै औ[४४२] स्वप्न सुषुप्तिविषैबी परमात्मातैं अन्यहीं कहाहै। अपहतपाप्मापनैआदिक लक्षणवाला पर[४४३] (परमात्मा) नहीं कहा। काहेतैं विरोधतैं? ऐसैं केईक मानतेहैं

---

४४१ च्यारी पर्याय (उपदेशके क्रम) न विषै त्वंपदके अर्थके अनुवादकरि तिस त्वंपदार्थकी तत्पदार्थता विधेय (करनेकूं योग्य) है। इस अपने अभिप्रायकरि प्रजापतिका वाक्य व्याख्यान किया ॥ अबी वेदांतमतके एकदेशी (भर्तृप्रपंच)के मतकूं उठावतेहैं ॥

४४२ प्रथमपर्यायके छायात्माके विषयपनैकी न्यांई द्वितीय अरु तृतीय पर्यायनकूंबी विज्ञानात्मारूप विषयवान्पना है। ऐसैं एकदेशी कहैहै ॥ इहां अन्यहीं परमात्मातैं कहा है। ऐसैं संबंध है ॥

४४३ चतुर्थपर्यायकीन्यांई पहिले तीन पर्यायोंविषै बी परमात्माहीं काहेतैं नहीं कहियेहै? तहां एकदेशी कहैहै ॥ इहां अपहतपाप्मापनै आदिकका औ अवस्थावान्पनैका परस्पर विरोध "विरोधतैं" इस हेतुका अर्थ है ॥

औ वे छाँयाआदिक[444] आत्माओंके उपदेशविषै प्रयोजनकूं कहतेहैं:—परमात्माकूं दुर्विज्ञेय होनेतैं तिसीहींके आँदिविषै[445] उच्यमान हुये अत्यंत बाह्य विषयनविषै आसक्तचित्तवाले पुरुषकूं अत्यंत सूक्ष्मवस्तुके श्रवणके हुये व्यामोह(विपरीतज्ञान) मति होवै। यातैं [पृथक् छायाऽऽत्माका उपदेश किया है]॥ जैसैं[446] प्रसिद्ध द्वितीयाविषै सूक्ष्म चंद्रकूं दिखावनेकूं इच्छता हुया पुरुष

---

४४४ ननु अंतिमपर्यायविषै परमात्माका उपदेश घटताहै। काहेतैं ताके ज्ञानकूं मुक्तिरूप फलवाला होनेतैं। पूर्वले पर्यायनविषै छायाआदिक क्यूं निर्देश करियेहैं। तिस मुक्तिरूप फलके अभावतैं? यातैं कहैहैं ॥

४४५ तहां प्रथम छायात्माके उपदेशके प्रयोजनकूं एकदेशी कहैहै ॥ इहां परमात्माकूं अतिसूक्ष्म होनेकरि दुःखसैं जाननेयोग्य होनेतैं आदिविषै तिसीहींके कहे हुये तिस अतिसूक्ष्मके बी श्रवणके हुये बी अनात्माविषै निष्ठावाले श्रोताकूं व्यामोह (विभ्रम) होवैगा। सो मति होवै। यातैं पृथक् छायात्माका उपदेश किया है। ऐसैं संबंध है ॥

४४६ स्वप्न अरु सुषुप्तिविषै विज्ञात्मा (जीव)के उपदेशके प्रयोजनकूं दिखावते हुये उक्त अर्थकूं दृष्टांतकरि एकदेशी स्पष्ट करैहै ॥ इहां इति शब्द तिङ् (दिखावैहै। इस क्रियापद)के साथि संबंधकूं पावताहै ॥

आदिविषै किसीबी प्रत्यक्ष वृक्षकूं "इसकूं देख यह चंद्र है" ऐसैं दिखावताहै । तदनंतर अन्यकूं । तदनंतर बी अन्य चंद्रके समीपस्थित पर्वतके मस्तककूं "यह चंद्र है" ऐसैं दिखावताहै । तदनंतर यह चंद्रकूं देखताहै ॥ ऐसैं यह "जो यह अक्षिविषै" इत्यादि तीनपर्यायोंकरि प्रजापतिनैं कहा । परमात्मा नहीं ऐसैं [४४७]चैतुर्थपर्यायविषै तो मर्त्य (मरणधर्मवाले) देहतैं सम्यक् उत्थानकरिके अशरीरभावकूं प्राप्त हुया ज्योति स्वरूपकूं पावताहै । औ जि[४४८]सैं उत्तमपुरुषविषै स्त्रीआदिकनकरि हसताहुया क्रीडताहुया रममाण होवैहै । सो उत्तमपुरुष परमात्मा कहाहै ॥ ऐसैं कहतेहैं ? [तहां सिद्धांती कहैहैः—] [४४९]सैत्य । प्रथम यह व्याख्या सुननेकूं रम-

४४७ अन्य (चतुर्थ) पर्यायके तात्पर्यकूं कहैहैं ॥

४४८ मरणधर्मवाले देहतैं पृथक् होयके ज्योतिः स्वरूप अशरीरभावकूं प्राप्त हुया पुरुष यद्यपि चतुर्थपर्यायविषै कहियेहै । तथापि यह परमात्मा कैसैं होवैगा ? यह आशंकाकरिके एकदेशी कहैहै ॥ इहां सो संप्रसाद है जो विद्वान् कर्त्ता होनेकरि विवक्षित है ॥

४४९ क्या यह व्याख्यान । शब्दका अनुसारी है किंवा

णीय है । परंतु[४५०] इस ग्रंथका अर्थ ऐसैं नहीं संभवैहै ॥ कैसैं[४५१] किः—"अक्षिविषै पुरुष देखियेहै" ऐसैं उपन्यास (कहनेका आरंभ) करिके दो शिष्यनकरि छायात्माके ग्रहण कियेहुये जब प्रजापतिनैं "अक्षिविषै देखियेहै" ऐसैं छायात्माहीं उपदेश किया होवै। तब तिन दोनूंके तिस विपरीत ग्रहणकूं मानिके ताके दूरी करणअर्थ उदकशरावका उपन्यास "औ क्या देखते हो" ऐसा प्रश्न अरु सम्यक् अलंकारका उपदेश व्यर्थ होवैगा॥ किंवा[४५२]:—जब[४५३] आप उपदेशकिया होवै तब इस

अर्थका अनुसारी है? ऐसैं विकल्पकरिके सिद्धांती प्रथमपक्षकूं अंगीकार करैहैं ॥

४५० द्वितीयपक्षकूं दूषण देतेहैं ॥

४५१ असंभवकूंहीं आकांक्षाद्वारा स्पष्ट करैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—जब प्रथमपर्यायविषै छायात्मा उपदेश किया होवै । तब इंद्र विरोचनकूं सम्यक् दर्शी होनेतैं तिनके विपरीत ग्रहणके दूरीकरने अर्थ प्रजापतिका श्रम वृथा होवैगा । तिसकरि यह व्याख्यान अर्थका अनुसारी नहीं है ॥

४५२ यातैं प्रथमपर्यायविषै छायात्माका उपदेश नहीं है। ऐसैं कहैहैं ॥

४५३ प्रजापतिकरि उपदेशकिये बी छायात्माके ग्रहणकूं नहीं सहन करैहै ? यह आशंकाकरिके अन्य हेतुकूं स्पष्ट करै

ग्रहणके बी दूरीकरणका कारण कहनेकूं योग्य होवै औ स्वप्न सुषुप्तिविषै आत्माओंके ग्रहणोंके हुये बी तिनके दूरीकरणके कारणकूं आप कहैं औ कहा नहीं । तिसकरि हम मांनतेहैं किः–प्रजापतिनैं अक्षिविषै छायात्मा नहीं उपदेश कियाहै ॥ किंवा[454] अन्य बी हैः–अक्षिविषै जब "देखियेहै" ऐसैं द्रष्टा उपदेश किया होवै । तातैं (तब)यह युक्त है ॥ औ "इसीहींकूं तो तेरेअर्थ" ऐसैं कहिके स्वप्नविषै बी यह द्रष्टाकाहीं उपदेश है ॥ ॥ स्वप्नविषै[455] द्रष्टा नहीं उपदेश

हैं ॥ इहां तिसकरि । याका छायात्माके ग्रहणके दूरी करनेके कारणके अवचनकरि । यह अर्थ है औ तिस प्रजापतिकरि । ऐसैं एक "तत्" शब्द जोडनेकूं योग्य है ॥

४५४ यातैं बी प्रथमपर्यायविषै द्रष्टाकाहीं उपदेश है । छायापुरुषका नहीं । ऐसैं कहैहैं ॥ इहां समीप स्थितवस्तुकूं आश्रय करनेवाले एतत् (इसीकूं इस) शब्दकरि छायात्माकूं खींचिके स्वप्नविषै द्रष्टाका उपदेश किया होवै तो प्रजापतिकूं मिथ्यावादीपना प्राप्त होवैगा । तैसैं हुये प्रथमपर्यायविषै बी द्रष्टाका हीं उपदेश है । यह अर्थ है ॥

४५५ स्वप्न अवस्थाकरि विशिष्टकूं अन्य स्थानविषै बाध्य होनेतैं तहां (स्वप्नविषै) द्रष्टाका उपदेश नहीं है? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

किया ? ऐसैं जो कहै। सो[456] बनै नहीं:—काहेतैं "रोदन करते हुयेकीन्यांई बी है। अप्रियके वेत्ताकीन्यांई है" ऐसैं उपदेशतैं औ स्वप्नविषै द्रष्टातैं[457] अन्य कोई बी पूज्यमान हुया विचरता नहीं। काहेतैं "इहां (स्वप्नविषै) यह पुरुष स्वयंज्योति होवैहै" ऐसैं न्याय (युक्ति) करि अन्य (बृहदारण्यक) श्रुतिविषै सिद्ध होनेतैं ॥ यद्यपि[458] स्वप्नविषै बुद्धि [रूप प्रकाश] करि सहित होवैहै ? तथापि बुद्धि स्वप्नभोगकी उपलब्धिकेप्रति करणताकूं भजती नहीं। किंतु[459] वस्त्रगत[460]

४५६ सिद्धांती अनुभवके अनुसारकरि उत्तरकूं कहैहैं ॥

४५७ किंवा:—प्रकाशके कारणोके उपरामके हुये जो प्रकाश है सो स्वाभाविक है। इस न्यायकरि प्रत्यगात्माका स्वयंज्योतिपना बृहदारण्यकविषै स्वप्न अवस्थाकूं आश्रय करिके कहा है। तातैं बी तहां द्रष्टाका उपदेश सिद्ध होवैहै। ऐसैं कहैहैं ॥

४५८ सूर्यादिकनके उपरामके हुये जो प्रकाश दृश्यमान है सो स्वाभाविक है। ऐसैं जो कहा सो अयुक्त है। काहेतैं स्वप्नविषै बी अंतःकरणके सद्भावतैं ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥ ॥

४५९ करणताके अभावविषै हेतुकूं पूर्ववादी पूंछताहै ॥

४६० नील पीतआदिक जाग्रत्की वासनाओंकरि वि-

चित्रकीन्यांई जाग्रत्की वासनाकी आश्रय हुई बुद्धि दृश्यहीं होवैहै । यातैं द्रष्टाके स्वयंज्योतिपनैंका बाध नहीं होवैहै ॥ किंवा[461] अन्य बी हैः— जाग्रत् अरु स्वप्नविषै भूतनकूं औ आपकूं "ये भूत हैं । यह मैं हूं" ऐसैं जानताहै । [तैसैं हुये स्वप्नविषै द्रष्टाहीं उपदेश किया है] औ प्राप्तिके[462] हुये "निश्चयकरि यह नहीं जानता है" इत्यादि सुषुप्तिगत विशेषज्ञानका प्रतिषेध युक्त होवैगा ॥ तैसैं[463] चेतनकीहीं शरीरसहितताके हुये

वर्त्तमान हुई बुद्धि साक्षीकी वेद्यताकूं पावती है । तैसैं हुये पटचित्रकी न्यांई विचित्र वासनामय चित्तकूं साक्षीगम्य होनेतैं सो चित्त स्वप्नके ज्ञानविषै करण नहीं होवैहै । यातैं ताके द्रष्टाका स्वयंज्योतिपना न्यायकरि सिद्ध है । ऐसैं सिद्धांती कहैहैं ॥

४६१ प्रसंगप्राप्त अर्थकूं छोडिके स्वप्न अवस्थाविषै द्रष्टाहीं उपदेश कियाहै । इस अर्थविषै अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां तैसैं हुये जाग्रत्अवस्थाकीन्यांई स्वप्नविषै बी द्रष्टाहीं उपदेश किया । यह शेष है ॥

४६२ यातैं बी स्वप्नावस्थाविषै द्रष्टाका हीं उपदेश है । ऐसैं कहैहैं ॥

४६३ केवल उक्तसुषुप्तिसंबंधी निषेध । निषेध करने योग्यकी प्राप्तिकी अपेक्षा सहित होनेतैं दो अवस्थाविषै द्रष्टाके

अविद्यारूप निमित्तवाले प्रिय अरु अप्रियविषै अपहति (विनाश) नहीं है। ऐसैं कहिके तिसीहीं अशरीर हुयेकूं विद्याके होते शरीरसहितताविषै प्राप्त प्रिय अरु अप्रियका "अशरीररूपहीं हुयेकूं प्रिय अरु अप्रिय स्पर्श करते नहीं" इत्यादि वाक्यकरि जो प्रतिषेध है सो युक्त है ॥ औ "[४६४]एकं आत्मा स्वप्न अरु बुद्धांत (जाग्रत्) विषै महामत्स्यकीन्यांई असंग हुया संचरताहै " ऐसैं अन्य श्रुतिविषै सिद्ध है ॥ ॥ औ
[४६५]जो कहा किः—संप्रसाद जो है सो शरीरतैं स-

उपदेशकूं आकांक्षा करता नहीं । किंतु तुरीयगत निषेध बी निषेध करने योग्यकूं आकांक्षा करता हुया दोनूं अवस्थाविषै द्रष्टाके उपदेशकूं आकांक्षा करताहै । ऐसैं कहैहैं ॥ इहां निषेधकूं प्राप्तिकी अपेक्षा सहित होनेतैं प्रकृतहीं द्रष्टाकी अविद्या है निदान जिसका ऐसी सशरीरताके होते तिस (सशरीरतारूप) निमित्तवाले दोनूं स्थानोंविषै प्राप्त प्रिय अप्रियकी अपहति नहीं है। ऐसैं " नहीं सशरीरके होते " इत्यादि वाक्यकरि कहा । सशरीरताके होते प्राप्त प्रिय अप्रियका तिसीहीं अवस्थात्रयातीतकूं विद्याके हुये "अशरीरकूं" इत्यादि वाक्यकरि निषेध युक्त है । ऐसैं योजना है ॥

४६४ स्वप्नमैं द्रष्टाके उपदेशविषै अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥

४६५ चतुर्थ पर्यायका सुषुप्तिगत पुरुषतैं अन्य अर्थरूप

म्यक् उत्थानकरिके जिसविषै स्त्रीआदिककरि रममाण होवैहै । सो संप्रसाद (सुषुप्तपुरुष)तैं अन्य अधिकरणभावकरि निर्देश किया उत्तमपुरुष है ? ऐसैं । सो बी असत् हैः—काहेतैं चतुर्थ पर्यायविषै बी " इसीहींकूं तो तेरेअर्थ " इसवचनतैं ॥ [४६६] जब [सो चतुर्थ पर्याय उक्त तुरीय] तिस (सुषुप्तिगतपुरुष)तैं अन्य अभिप्रेत (अभिमत) होवै । तब पूर्वकीन्यांई " इसीहींकूं तो तेरेअर्थ" ऐसैं प्रजापति जूठ नहीं कहते ॥ [४६७] किंवा अन्य बी हैः—तेज जल अरु अन्नआदिकनके स्रष्टा सत्के स्वविकार देहरूपकार्यविषै प्रवेशकूं दिखायके प्रविष्टकेअर्थ फेर " तत्वमसि (सो तूं हैं) " ऐसा उपदेश है सो जूठा प्राप्त होवैगा औ जब संप्रसादतैं अन्य उत्तमपुरुष होवै । तब तिसविषै तूं स्त्रीआदिककरि रंता (रमणकाकर्त्ता) होवैगा । ऐसा उपदेशयुक्त होता ।

विषयवान्पना पूर्ववादीनैं कहा था ताकूं अनुवाद करिके सिद्धांती दूषण देतेहैं ॥

४६६ ताहींकूं व्यतिरेकद्वारा स्पष्ट करैहैं ॥

४६७ अधिकरण (आधार) अरु आधेयभावकरि भेद सत्य नहीं है । इस अर्थविषै अन्य हेतुकूं कहैहैं ॥

[४६८] तैसैं जब भूमा (ब्रह्म) जीवतें अन्य होता । तब भूमाविषै "मैं हीं हूं" ऐसैं आदेश करिके "आत्माहीं यह सर्व है" ऐसैं उपसंहार (समाप्ति) नहीं करते ॥ औ "[४६९] ईसैं (परमात्मा) तैं अन्य द्रष्टा नहीं है" इत्यादि अन्य श्रुतितैंबी [जीवब्रह्मका भेद नहीं है] ॥ औ सर्व जंतुनका प्रत्यगात्मा जब परमात्मा न होवै । तब [४७०] सर्व श्रुतिनमैं परमात्माविषै आत्मशब्दका प्रयोग जो है सो नहीं होता ॥ [४७१] तातैं एक हीं आत्मा प्रकरणविषै प्रतिपादित सिद्ध भया ॥ औ [४७२] आत्माकूं संसारीपना नहीं है । काहेतैं संसारकूं आत्माविषै अविद्याकरि अध्यस्त होनेतैं ॥ [४७३] जौ-

---

४६८ जीवपरमात्माके भेदका षष्ठप्रपाठक उक्त विरोधकी न्यांई सप्तमप्रपाठक उक्त विरोध बी होवैगा । ऐसैं कहैहैं ॥

४६९ बृहदारण्यकश्रुतिके आलोचनके हुये बी जीव ईश्वरका भेद नहीं संभवैहै । ऐसैं कहैहैं ॥

४७० तातैं बी जीव परमात्माका भेद नहीं है । ऐसैं कहैहैं ॥

४७१ श्रुतिनके अर्थकूं उपसंहार करैहैं ॥

४७२ आत्माके साथि एकताके हुये परमात्माकूंहीं सर्व देहनविषै संसारीपना होवैगा ? ऐसैं जो कहै । सो बनै नहीं । ऐसैं कहैहैं ॥

४७३ आरोपित संसारीपना वस्तुतैं आत्माविषै नहीं है ।

तैं रज्जु शुक्तिका अरु गगनआदिकनविषै जे सर्प रजत अरु मल (नीलता) आदिक हैं वे तिन रज्जुआदिकके मिथ्या अज्ञानकरि अध्यस्त होवैहैं ऐसैं ॥ ईंर्सैकरि शरीरसहितकी प्रिय अरु अप्रियविषै अपहति नहीं है । यह व्याख्यान किया औ जो अप्रियके वेत्ताकीन्यांई है। जातैं अप्रियका वेत्ताहीं नहीं है । ऐसैं स्थित

यह द्रष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥ इहां मिथ्या अज्ञानकरि अध्यस्त । याका मिथ्या ऐसा जो सो अज्ञान यह मिथ्याऽज्ञान है तिसकरि अध्यस्त कहिये अविद्यमान हुयेहीं विद्यमानकी न्यांई प्रतीतिकूं प्राप्त । यह अर्थ है ॥

४७४ "नहीं सशरीरके होते" इत्यादि वाक्यकूं कहनेवाले प्रजापतिकरि आत्माके साथि प्रिय अप्रियके संबंधकी वास्तवता विवक्षित है? ऐसी शंकाकूं उक्त न्यायके अतिदेशकरि निरस्त करैहैं ॥ इहां आत्माविषै संसारकी प्राप्ति नहीं है । यह अर्थ है औ अध्यासपर्यंत होनेपना प्रिय अप्रियके नाशका अभाव है । वास्तवपना नहीं । काहेतैं प्रिय अप्रियके मूल शरीरके संबंधकूंहीं दुर्निरूप होनेतैं । यह अर्थ है ॥ इधर स्वप्नका द्रष्टा निश्चयकरि अप्रियके वेत्ताकी न्यांई होवैहै। परंतु अप्रियका वेत्ताहीं नहीं है। ऐसैं जो पूर्वग्रंथविषै स्थित है । सो सिद्ध भया ॥

है सो सिद्ध भया औ ऐसैं[४७५] हुये सर्व पर्यायों-विषै "यह अमृत अभय है यह ब्रह्म है" ऐसा प्रजापतिका वचन जो है सो सत्य होवैगा । [४७६]यद्वाः—प्रजापतिकी मिषरूप श्रुतिका वचन सत्यहीं होवैगा औ सो[४७७] श्रुतिवचन कुतर्कयुक्तबुद्धिकरि जूठा करनेकूं युक्त नहीं है । काहेतैं तिस श्रुतिवचनतैं गुरुतर अन्यप्रमाणके असंभवतैं ॥ ॥ [४७८]ननु दुःखआदिक अप्रियका वेत्तापना

४७५ अन्यलाभकूं कहैहैं ॥ इहां प्रजापतिका वचन सत्य होवैगा । ऐसैं संबध है ॥

४७६ अपौरुषेयी (अपुरुषरचित) श्रुतिविषै प्रजापतिका वचन अवकाशसहित कहांतैं होवैगा ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

४७७ सुखआदिक आश्रयसहित हैं । गुण होनेतैं । रूपादि गुणकीन्यांई । इस अनुमानतैं तिनका आश्रय परिशेषतैं आत्मा होवैगा । इस वैशेषिक आदिकनके तर्कके विरोधतैं श्रुतिका वचन असत्य होवैगा ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—सुखादिकनकूं उपाधिके धर्म होनेकरि [अन्य प्रमाणकरि सिद्ध होनेतैं तिनकी श्रुतिकरि साध्यताके हुये । पिष्टके पेषणकीन्यांई] सिद्धसाध्य [दोष]के होनेतैं श्रुतिवचनका बाधक [अन्यप्रमाण] नहीं है ॥

४७८ प्रत्यक्ष प्रमाण है ? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

अव्यभिचारीहुया प्रत्यक्ष अनुभव करियेहै ? ऐसैं जो कहै[४७९]।सो बनै नहीं:–काहेतैं मैं जरादिरहितहूं जीर्णहूं जन्म्याहूं मैं आयुष्मान्हूं गौर हूं कृषण हूं मृत भयाहूं । इत्यादि प्रत्यक्ष अनुभवकीन्यांईं ताके संभवतैं ॥ ॥ यह सर्वबी[४८०] सत्य है ? ऐसैं जो कहै । तो ऐसैंहीं होहू । यहै[४८१] दुरवगम[४८२] (दुःखसैं जानने योग्य आत्मतत्व) है॥ जिसकरि[४८३] देवराज बी उदकशरावआदिकाविषै

---

४७९ ता (प्रत्यक्ष)कूं आभासरूप होनेतैं श्रुतिवचनकी बाधकता नहीं है । ऐसैं सिद्धांती परिहार करैहैं ॥

४८० द्रष्टांत बी सिद्ध किया नहीं होवैहै ? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

४८१ जराआदिककी सत्यताका वचन तेरा ऐसैंहीं होहू। इस रीतिसैं सिद्धांती अंगीकार करैहैं ॥

४८२ अंगीकारविषै हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:– "अधिकारीकूं प्रमाका जनक वेद है" इस न्यायतैं ऐसैं अनधिकारीनकूं आत्मतत्व दुर्ज्ञान कहिये दुःखसैं होवैहै ज्ञान जिसका ऐसा है । यातैं जराआदिककी सत्यताका वचन होहू । इतनैकरि वस्तुकी हानि नहीं है ॥

४८३ ताकी दुरवगमता (दुःखसैं जाननेकी योग्यता) विषै लिंगकूं कहैहैं ॥ इधर "इहां" ऐसैं आत्मतत्वकी उक्ति है ॥

दिखाये अविनाशकी युक्तिवाला हुयाबी इहां (इस आत्मतत्वविषै) "विनाशकूं हीं प्राप्तभया होवैहै" ऐसैं मोहकूं पावताभया ॥ [४८४] तैसैं महाप्राज्ञ अरु प्राजापत्य (प्रजापतिका निकटवंशज वा शिष्य) विरोचन बी देहमात्रविषै आत्मदर्शनवाला होता भया ॥ [४८५] तैसैं इंद्रके आत्मविनाशके भयरूप सागरविषैहीं वैनाशिक (नास्तिकवादी) डूबजाते भये ॥ [४८६] तैसैं सांख्यवादी द्रष्टाकूं देहादिकतैं व्यतिरिक्त आत्मा जानिके बी त्याग कियाहै आगमरूप प्रमाण जिनोनैं ऐसैं होनेतैं अन्यत्वदर्शन (भेदज्ञान)रूप मृत्युविषैहीं स्थित होतेहैं ॥ [४८७] तैसैं अन्य काणाद(वैशेषिक) आ-

४८४ ताकी दुःखसैं जाननेकी योग्यताविषै अन्यलिंगकूं कहैहैं ॥

४८५ वैनाशिक (नास्तिक) नकी भ्रांति बी आत्माकी दुर्गमताकूं जनावै है। ऐसैं कहैहैं ॥

४८६ सांख्यवादीनकी भ्रांति बी आत्माकी दुर्गमताकूं जनावै हैं। ऐसैं कहैहैं ॥

४८७ तार्किकनकी भ्रांतिबी ताकी दुर्गमताविषै प्रमाण है। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां बुद्धि सुख दुःख इच्छा द्वेष प्रयत्न

दिक दर्शनवाले क्षारआदिकनकरि कषायरक्तवस्त्रकीन्यांई नव आत्माके गुणनकरि युक्त आत्मद्रव्यकूं विशोधन करनेकूं प्रवर्त्त भये हैं॥ [४८८] तैसैं अन्य बाह्यविषयनकरि हरण किये हैं चित्त जिनोंके ऐसे जे कर्मी। वे वेद है प्रमा जिनोंकूं ऐसें हुये बी परमार्थ सत्य आत्माकी एकताकूं इंद्रवत् विनाशकीन्यांई मानतेहुये घटीयंत्रकीन्यांई आरोह अरु अवरोह (ऊंचे चढणे अरु नीचे उतरने)के प्रकारोंकरि निरंतर संसारचक्रविषे भ्रमतेहैं। तब [४८९] अन्य विवेकहीन अरु स्वभावतैं हीं बाह्यविषयनकरि हरण किये हैं चित्त जिनोंके ऐसैं जे क्षुद्रजंतु वे भ्रमण करतेहैं यामैं क्या

धर्म अधर्म अरु भावना (संस्कारविशेष)। ये आत्माके नव गुण न्यायमतमैं मानेहैं॥

४८८ मीमांसकोंकी भ्रांति ताकी दुर्बोधताविषै प्रमाण है। ऐसैं कहैहैं॥

४८९ जब परीक्षकन (पंडितन)की बी इस प्रकारकी भ्रांति आत्माकी दुर्गमताकूं जनावै है। तब विचाररहित लौकिक जनोंकी भ्रांति तिसविषै प्रमाण करनेकूं योग्य है। ऐसैं कहैहैं॥ इहां अन्य भ्रमते हैं। यामैं क्या कहनेकूं योग्य है॥

कहना है ॥ [४९०]तातैं त्यागकरी हैं सर्व बाह्यविषयनकी एषणा जिनोंनैं ऐसैं अरु [४९१]अनन्य नहीं है शरण जिनोंका ऐसैं अरु [४९२]परमहंसपरिव्राजक अरु अति[४९३]आश्रमी अरु [४९४]वेदांतके विज्ञानविषै तत्पर अरु अत्यंतपूज्य औ [४९५]प्रजापतिके इस संप्रदायकूं अनुसरनेवाले अधिकारीनकरि यह च्यारीप्रकरणोंकरि संबद्ध आत्मतत्व जाननेकूं योग्य है ॥ [४९६]तैसैं श्रुति अनुशासन करैहै:—अद्यापि (अबीबी)

---

४९० जब लौकिकनकूं औ परीक्षकनकूं यह आत्मतत्त्व दुःखसैं जाननेकूं योग्य प्रतिज्ञाकरिये है। तब किनकूं यह सुखसैं जाननेकूं योग्य है ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

४९१ एषणाओंविषै उदासीनताकीन्यांई आत्मतत्वविषै तिनकी उदासीनता (उपेक्षा)कूं निवारण करैहैं ॥

४९२ तिनके कुटीचकभावकूं निषेध करैहैं ॥

४९३ कर्मनिष्ठनके आश्रमनकूं अतिक्रमणकरिके नैष्कर्म्य (कर्मरहितता)की प्रधानताकरि वर्त्तमानपनैकूं दिखावै हैं ॥

४९४ "अनन्यशरण [नकरि]" ऐसैं उक्त अर्थकूं स्पष्ट करैहैं ॥ इहां पूज्यतम [नकरि] । यह नित्यका अनुवाद है॥

४९५ तिनके प्राचीन आत्मज्ञानके उपायकूं उपदेश करैहैं ॥ इहां तीन स्थान औ तुरीय इनकूं विषय करनेवाला प्रकरणोंका चतुष्टय है ॥

४९६ यथोक्त अधिकारीनकूं हीं आत्मज्ञान होवैहै । इस

अशरीरो वायुरभ्रं विद्युत्स्तनयित्नु-
रशरीराण्येतानि। तद्यथैतान्यमुष्मादा-

अर्थः–अशरीर वायु है। बादल विद्युत्
अरु गर्जन ये अशरीर हैं ॥ तहां जैसैं ये

येई [जानतेहैं] अन्य नहीं इति ॥ १ ॥

टीकाः–तहां[४९७] शरीररहित अरु अविद्याकरि शरीरके साथि अविशेषता (तादात्म्यभाव) रूप शरीरसहितताकूं सम्यक् प्राप्तभये संप्रसादकी शरीरतैं सम्यक् उत्थान करिके अपने रूपकरि जैसैं परिसमाप्ति होवैहै तैसैं कहनेकूं योग्य है। यातैं द्रष्टांत कहियेहैः–अशरीर वायु है। [४३८]अविद्यमान शिर हस्तआदिकवाला है श-

---

अर्थविषै अन्य लिंगकूं कहैहैं ॥ इहां "अशरीरकूं" इत्यादि वाक्यके व्याख्यानकी समाप्तिअर्थ इति पद है ॥

४९७ शरीर सहितकूं बंध है । अशरीरकूं मुक्ति है। ऐसैं स्थित हुये "अशरीर वायु है" इत्यादि वाक्य किस अर्थ है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

४९८ वायुकी अशरीरता कैसैं है ? सो कहैहैं ॥ इहां ऐसैं हुये। याका वायुआदिकनकी अशरीरताकेहुये। यह अर्थ है॥

काशात्समुत्थाय परंज्योतिरुपसम्पद्य स्वेन स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यन्ते ॥ २ ॥

उस आकाशतैं सम्यक् उत्थानकरिके पर-ज्योति (सूर्यके ताप)कूं पायके अपने रू-पकरि संपन्न होवैहैं ॥ २ ॥

रीर इसका ऐसा जो है सो अशरीर है ॥ किंवाः-अभ्र (बादल) विद्युत् अरु स्तनयित्नु (मेघका गर्जन) ये बी अशरीर हैं ॥ तहां ऐसैं हुये वर्षाआदिक प्रयोजनके अवसानविषै जैसैं होवै तैसैं "[४९९] उसतैं" ऐसैं भूमिविषै स्थित हुई श्रुति स्वर्गलोकसंबंधी आकाशदेशकूं व्यपदेश (कथन) करैहै ॥ ये यथोक्त आकाशके समान-रूपताकूं प्राप्तभये अरु अपने वायुआदिरूपकरि अगृह्यमाण हुये आकाशनामवान्ताकूं प्राप्त

---

४९९ आकाशकूं सर्वत्र एकरूप होनेतैं "उसतैं" ऐसैं व्यपदेश (कथन)की सिद्धि काहेतैं होवैगी ? यह आशंका-करिके कहैहैं ॥

भयेहैं । जैसैं[५००] संप्रसाद (जीव) जो है सो अविद्याअवस्थाविषै शरीरमैं आत्मभावकूंहीं प्राप्तभयाहै । तैसैं वे वायुआदिक तथाभूत (आकाशके आत्मभावकूं प्राप्त) हुये वर्षाकरनेआदिक प्रयोजनकी सिद्धिअर्थ उस स्वर्गलोकसंबंधी आकाशदेशतैं ऊठतेहैं (ऊठिके) ॥
५०१ कैसैंकिः—शिशिरऋतुके निवृत्तिके हुये सूर्यके परज्योति (प्रकृष्ट उष्णभाव)कूं पायके । अर्थ यह जोः—सूर्यके अभितापकूं पायके । आदित्यके अभितापकरि पृथक्भावकूं प्राप्त हुये अपने अपने रूपकरि परिसमाप्त होवैहैं ।

---

५०० यथोक्त अशरीर जे वायु आदिक तिनकूं आकाशभावकी प्राप्तिविषै द्रष्टांतकूं कहैहैं ॥ इहां तैसैं वायुआदिक अपनेरूपकरि अगृह्यमाणभावकी अवस्थाविषै आकाशनामवानूताकूं प्राप्त होवैहैं । ऐसैं संबंध है औ वे (वायुआदिक) तथाभूत हुये । याका आकाशके स्वरूपभावकूं प्राप्त हुये । यह अर्थ है ॥

५०१ वर्षाआदिक फलकी सिद्धिअर्थ वायुआदिकनका आकाशदेशतैं उत्थान कहा ताकूं आकांक्षारूप द्वारकरि स्पष्ट करैहैं ॥ अपने अपने रूपकरि सिद्ध होवैहैं । ऐसैं संबंध है ॥

एवमेवैष संप्रसादोऽस्माच्छरीरात्स-

अर्थः—ऐसैंहीं यह संप्रसाद (जीव) इस शरीरतैं सम्यक् उत्थानकरिके पर

कहिये [५०२] पुरोवातआदिक वायुरूपकरि स्तिमित (अचल)भावकूं छोडिके वायु अरु अभ्र (बादल) बी भूमि पर्वत औ हस्तीआदिरूपकरि अरु बीजली बी अपने ज्योति लताआदिक चपलरूपकरि अरु मेघगर्जनबी अपने गर्जित वज्ररूपकरि इसरीतिसैं वर्षाऋतुके आगमके हुये अपने अपने रूपकरि सिद्ध होवैहैं ॥ २ ॥

टीकाः—[५०३] जैसैं यह द्रष्टांत है। तैसैं वायुआ-

५०२ तहां वायुकी बादलकी बीजलीकी अरु मेघगर्जनकी अपनेरूपकरि सिद्धिके प्रकारकूं विवरण करैहैं ॥ इहां स्तिमित (अचल)भावकूं छोडिके वायु । यह शेष है ॥

५०३ दृष्टांतकूं अनुवाद करिके दार्ष्टांतकूं कहैहैं ॥ इहां वायुआदिकनके । इस पदके पूर्व “तैसैं” यह अध्याहार करनेकूं (बाहिरसैं लेनेकूं) योग्य है औ तहां आदिशब्दकरि बादल बीजली अरु मेघगर्जन ग्रहण करियेहैं औ आकाश आ-

मुत्थाय परं ज्योतिरुपसम्पद्य स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यते स उत्तमः पुरुषः स

ज्योतिकूं पायके अपने रूपकरि संपन्न होवैहै ॥ सो उत्तमपुरुष है ॥ सो तहां (स्वा-

---

दिकनकूं आकाशआदिककी समताकी प्राप्तिकीन्यांई अविद्याकरि संसारअवस्थाविषै शरीरकी समताकूं "[५०४] मैं अमुकका पुत्र हूं जन्म्याहूं जीर्ण भयाहूं मरूंगा" इस प्रकार प्राप्त हुया । [५०५] प्रजापतिकरि यथोक्त क्रमसैं इंद्र प्रतिबोधित भया । ताकीन्यांई । [५०६] तूं देह इंद्रियआदिकके धर्मवाला नहीं हैं । किंतुः—"तत्वमासि (सो तूं हैं)" ऐसैंहीं

दिककी । यह आदिपद बादल आदिकके कारणके ग्रहणअर्थ है ॥

५०४ शरीरकी समताकूंहीं विशेषण देतेहैं ॥

५०५ प्रतिबोधनविषै दृष्टांतकूं कहैहैं ॥ इहां यथोक्त क्रमकरि । याका च्यारी पर्यायोंविषै उपदेश किये प्रकारकरि । यह अर्थ है औ मघवान् (इंद्र) प्रतिबोधित भया । ऐसैं संबंध है ॥

५०६ दार्ष्टांतिकविषै प्रतिबोधनके प्रकारकूं दिखावैहैं ॥

तत्र पर्य्येति जक्षन्क्रीडन्रममाणः स्त्री-
भिर्वा यानैर्वा ज्ञातिभिर्वा नोपजनꣳ

त्माविषै) हसता हुया वा भक्षण करता
हुया स्त्रीओंकरि वा यानों (वाहनों) करि
वा ज्ञातिनकरि क्रीडा करता हुया औ रमण

प्रतिबोधित हुया सो यह संप्रसाद (जीव) इस
शरीरतैं [५०७]आँकाशतैं वायुआदिकनकी न्यांई स-
म्यक् उत्थान करिके । अर्थ यह जोः—दे[५०८]हाँ-
दिकतैं विलक्षणतास्वरूप आत्माके रूपकूं जा-
निके देहविषै आत्माकी भावनाकूं त्यागिके।
सत्स्वरूप अपनेरूपकरि हीं समाप्त होवैहै।
[५०९]येंहैं पूर्व तृतीयखंडविषै व्याख्यान किया है॥
[५१०]सो संप्रसाद (जीव) जिस अपनेरूपकरि परि-

---

५०७ शरीरतैं विद्वान्के उत्थानविषै दृष्टांतकूं कहैहैं ॥
५०८ उत्थानकूं विभाग करैहै ॥
५०९ पुनरुक्तिकूं परिहार करैहैं ॥
५१० उत्तर वाक्यविषै स्थित स(सो)शब्दकूं व्याख्यान करैहैं ॥ सो उत्तम पुरुष है । ऐसैं संबंध है ॥

स्मरन्निदꣳ शरीरꣳ स यथा प्रयोग्य

करता हुया उपजन इस शरीरकूं नहीं स्मरण करता हुया पर्यटन करताहै॥ सो जैसें

समाप्त होवैहै सो उत्तमपुरुष है ॥ जैसें रज्जु जो है सो[511] प्रतिबोधतैं पूर्व भ्रांतिके निमित्ततैं सर्प होवैहै। पीछे किया है प्रकाश (ज्ञान) जिसका ऐसी हुई रज्जुस्वरूप अपने रूपकरि समाप्त (सिद्ध) होवैहै। औ ऐसैं[512] सो उत्तमपुरुष है ॥ उत्तम ऐसा जो यह पुरुष सो उत्तमपुरुष कहियेहै। सोई उत्तमपुरुष। अक्षिपुरुष[513]। स्वप्नपुरुषरूप दो

५११ संप्रसादकी अपनेरूपकरि सिद्धिकूं दृष्टांतकरि स्पष्ट करैहैं ॥

५१२ उक्त दृष्टांतके अनुसारकरि अविद्यादशाविषै शरीरमैं आत्मभावकूं प्राप्त भया। विद्याकरि प्रकाशित ब्रह्मस्वरूप हुया अपनेरूपकरि । परिसमाप्त (सिद्ध) होवैहै । इस दार्ष्टांतिककूं कहैहैं ॥

५१३ पुरुषका उत्तम विशेषण जो है सो अन्य पुरुषनके व्यवच्छेद (व्यावृत्ति) अर्थ है। इस अभिप्रायकरिके पुरुष-

आचरणे युक्त एवमेवायमस्मिञ्छरीरे प्राणो युक्तः ॥ ३ ॥

प्रयोग्य(अश्व वा बैल) आचरण (रथ वा गाडी)विषै युक्त होवैहै । ऐसैं हीं यह प्राण इस शरीरविषै युक्त (जुड्या)है ॥३॥

व्यक्त अरु सुषुप्त समस्त संप्रसन्नरूप अव्यक्त औ अपनेरूपकरि अशरीर (तुरीय)। इस भेदतैं च्यारी पुरुष हैं । इनके[514] मध्य यह अपने रूपकरि स्थित है । औ क्षर अक्षररूप जे व्याकृत (सर्व स्थूल सूक्ष्म भूतरूप कार्य) अरु अव्याकृत (अज्ञानमय मायारूप कारण) तिन दोनूंकूं अपेक्षा करिके उत्तमपुरुष कहियेहै । जातैं श्रीभगवद्गीताविषै पंचदश अध्यायमैं कियां[515] है

नके भेदकूं दिखावैहैं ॥ इहां ऐसैं च्यारी पुरुष हैं । यह शेष है ॥

५१४ तिनमैं पूर्वले तीनिपुरुषनकी व्यवच्छेद्यता कहिये व्यावर्त्यता (भिन्नकरिके जनावनेकी योग्यता) है औ तुरीयकी तो उत्तमपुरुषता है । ऐसैं कहैहैं ॥

५१५ यथोक्त उत्तमपुरुषविषै श्रीकृष्णभगवान्‌की संमति-

निर्वचन (स्पष्टीकरण) जिसका ऐसा यह है [यातैं उत्तमपुरुष है] ॥ ५१६ सो संप्रसाद (जीव) अपने रूपकरि तहां (स्वात्माविषै) स्वस्थ होनेकरि सर्व (जड चेतन) का आत्मभूत हुया पर्यटन करताहै ॥ कहींक (स्वर्गलोकाविषै) इंद्रादिरूपसैं जक्षण करता हुया कहिये हसताहुया वा उच्च नीच वांछित भक्ष्यनकूं भक्षण करता हुया । कहींक (ब्रह्मलोकविषै) मनोमात्र वा संकल्पतैंहीं सम्यक् उत्पन्न भये ब्रह्मलोक-

कूं कहैहैं ॥ इहां " लोकविषै क्षर औ अक्षरहीं ये दो पुरुष हैं । सर्व भूत क्षर हैं अरु कूटस्थ (अज्ञान) अक्षर कहियेहै । उत्तम पुरुष तो अन्य है । परमात्मा ऐसैं उदाहरण किया है । औ जो अविनाशी ईश्वर तीनिलोककेप्रति प्रवेशकरिके धारण करैहै ॥ जातैं मैं क्षरकूं अतीत (उल्लंघन करिगया) हूं औ अक्षरतैं बी उत्तम हूं । यातै लोकविषै औ वेदविषै प्रसिद्ध पुरुषोत्तम हूं " ऐसैं गीताके पंचदश अध्यायविषै भगवान् कहते भये ॥ सो संमति है ॥

५१६ " सो तहां " इत्यादि वाक्यकूं व्याख्यान करैहैं ॥ इहां कहींक । ऐसैं स्वर्गलोककी उक्ति है औ कहींक मनोमात्र [करि] । इस ठिकाने कहींक ऐसैं ब्रह्मलोक ग्रहण करिये है ॥

संबंधी स्त्रीआदिकनकरि क्रीडा करता हुया औ मनसैंहीं रममाण(रमण करता) हुया । उपजनकूं[५१७] कहिये स्त्री औ पुरुषके परस्परके उपगमन (संगम) करि उपजताहै यातैं उपजन है । वा आत्मभावसैं आत्माकी समीपताकरि उपजाहै यातैं उपजन है । ऐसा यह शरीर है । तिस उपजनरूप इस शरीरकूं नहीं स्मरण करताहुया पर्यटन करताहै ॥ जातैं तौं[५१८] (देह)के स्मरणविषै दुःखहीं होवैहै । काहेतैं ताकूं दुःखरूप होनेतैं ॥ ॥ ननु[५१९] जब अनुभूतकूं नहीं स्मरण करैगा तब मुक्तकूं असर्वज्ञता होवैगी ? यह[५२०] दोष बनै नहीं:—काहेतैं जि-

---

५१७ "न उपजनकूं" इस प्रतीककूं ग्रहण करिके व्याख्यान करैहैं ॥ इहां ताकूं नहीं स्मरण करता हुया पर्यटन करताहै । ऐसैं संबंध है ॥

५१८ यथोक्तदेहकी स्मृतिविषै कौंन असंभव है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

५१९ विद्वान् मुक्तके अनुभूत (अनुभवकिये) देहके असरणविषै पूर्ववादी दूषणकूं आशंका करैहै ॥

५२० असर्वज्ञतारूप दूषणकूं सिद्धांती निराकरण करैहैं ॥

स मिथ्याज्ञानआदिककरि उत्पन्न भयाहै। सो मिथ्याज्ञानआदिक विद्याकरि उच्छेदकूं पाया। यातैं सो अनुभूत (अनुभवकिया)हीं नहीं है। यातैं ताके अस्मरणके हुये सर्वज्ञताकी हानि नहीं होवैहै ॥ जातैं [521] उन्मत्त (पागल) वा ग्रहगृहीत (भूतावेश युक्त) पुरुषनैं जो अनुभव किया है सो उन्मादआदिक दोषके दूरी हुयेबी स्मरण करनेकूं योग्य नहीं होवैहै ॥ तैसैं इहां बी अविद्यादोषवाले संसारीनकरि जो अनुभव करियेहै सो सर्वात्मा अशरीर [रूप मुक्त]कूं नहीं स्पर्श करैहै। काहेतैं अविद्यारूप निमित्तके

इहां यह अर्थ हैः—जातैं अनुभूत अर्थकी स्मृतिके हुये सर्वज्ञ है ऐसैं है औ शरीरआदिक अनुभूत नहीं हैं। काहेतैं अविद्या काम अरु कर्मरूप मूलवाले तिस शरीरआदिककूं अज्ञानमात्र होनेतैं औ कार्यसहित तिस अज्ञानकूं ज्ञानके उदयमात्रकरि नष्ट होनेतैं शरीरादिकतैं पूर्वबी अनुभवतैं विपरीतवर्त्तिपनैके असंभवतैं ॥

५२१ शरीरआदिक पूर्व सम्यक् ज्ञानकरि अविषय किया हुया बी। भ्रांतिकरि अनुभव कियाहीं है। यातैं विद्वानोकूं बी स्मरण करनेकूं योग्य है? ऐसैं जो कहै। सो बनै नहीं। ऐसैं कहैहै ॥

अभावतैं ॥ परंतु उच्छिन्न[522] दोषवाले अरु नष्ट कषायवाले विद्वानोंकरि जे मानस (मनरचित) सत्यकाम अनृत[523]रूप अपिधान (आच्छादन)वाले अनुभव करियेहैं। विद्या[524]करि अभिव्यंग्य (आविर्भाव करनेकूं योग्य) होनेतैं वे (उक्तकाम) इसप्रकारसैं उक्त सर्वात्मभूत विद्वान्‌के साथि संबंधकूं पावतेहैं। ऐसैं आत्म[525]ज्ञानकी स्तुति-अर्थ निर्देश (कीर्त्तन) करियेहै। यातैं[526] "जे ये ब्रह्मलोकविषै" ऐसैं यह सम्यक् विशेषण देती

---

५२२ मुक्तपुरुषविषै जब शरीरआदिक संबंधकूं पावते नहीं। तब तिसविषै काम कैसैं संबंधकूं पावैंगे? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

५२३ सर्व पुरुषनकरि ये काम क्यूं नहीं अनुभूत होवैंगे? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

५२४ यातैं बी विद्वानोंकूंहीं तिनका आविर्भाव होवैहै। ऐसैं कहैहैं ॥

५२५ निर्गुणविद्याके प्रकरणमैं विद्वान्‌विषै सत्यकामोंके संबंधका वचन क्यूं है? तहां कहैहैं ॥ इहां आत्मविद्याकी स्तुतिअर्थ विद्वान्‌विषै कामोंके संबंधका वचन है ॥

५२६ "मनकरि इनकामोंकूं देखता हुया इस वक्ष्यमाण वाक्यविषै विशेष श्रवण बी युक्त है। ऐसैं कहैहैं ॥

है ॥ जातैं जहाँ[527] कहां होनेवाले बी वे काम ब्रह्मरूपहीं लोकविषै होवैहैं । ऐसैं ब्रह्मकूं सर्वात्मा होनेतैं कहियेहैं [यातैं तिनका ब्रह्मलोकविषै भाविपना है] ॥ ॥ ननु[528] एक हुया "अन्यकूं देखता नहीं अन्यकूं सुनता नहीं अन्यकूं विशेषकरि जानता नहीं सो भूमाहै ऐसा है औ ब्रह्मलोकके संबंधी कामोंकूं देखता हुया रमताहै । यह विरुद्ध कैसैं कहा । जैसैं[529] एक पुरुष जिसीहीं क्षणविषै देखता है औ सो तिसीहीं क्षणविषै नहीं देखताहै ऐसैं ? यहँ[530] दोष

---

५२७ इंद्रियादिकनविषै होनेवाले कामोंका ब्रह्मलोकविषै होनेपना काहेतैं होवैगा? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

५२८ "मनकरि इन कामोंकूं" इत्यादि वाक्य स्तुतिअर्थ हुया बी प्रधानवाक्यसैं विरुद्ध होनेतैं त्यागनेकूं योग्य है ? ऐसैं पूर्ववादी शंका करैहै ॥

५२९ दोनू वाक्यनके परस्पर विरोधविषै पूर्ववादी दृष्टांतकूं कहैहै ॥

५३० "जहां हीं सो (चैतन्य) नहीं देखता है. देखता हुयाहीं सो नहीं देखता है । जातैं द्रष्टाकी दृष्टिका विपरिलोप नहीं है अविनाशी होनेतैं । सो द्वितीय तो तिससैं अन्य विभक्त नहीं है जाकूं देखे" इस बृहदारण्यककी श्रुतिकूं आश्रयकरिके सिद्धांती विरोधकूं दूरी करैहैं ॥

बनै नहीं:–काहेतें अन्य (बृहदारण्यक) श्रुतिविषै इस विरोधका परिहार किया होनेतें। द्रष्टाकी दृष्टिके अविपरिलोपतें देखताहुयाहीं होवैहै औ द्रष्टातें अन्यभावकरि कामोंके अभावतें नहीं देखताहै॥ ऐसें [अविरोध संभवैहै]॥ ॥ [531] यद्यपि सुषुप्तपुरुषविषै सो कहा? [तथापि] मुक्तकूं बी सर्वके साथि एकतातें द्वितीयका अभाव समान है औ "किसकरि[532] किसकूं देखेगा" ऐसें कहा हीं है॥ ॥ [533] ननु अशरीरस्वरूप अरु

---

५३१ यथोक्त बृहदारण्यकका वाक्य सुषुप्त पुरुषकूं आश्रयकरिके प्रवृत्तभया है। सो मुक्तपुरुषकूं विषय करनेवाला होनेकरि कैसें उदाहरण किया? यातें कहैहैं॥ इहां यह अर्थ है:–सुप्तपुरुषकूं मोक्षविषै दृष्टांतरूप होनेतें औ तिसगत (दृष्टांतगत द्वैतके अभाव)के दार्ष्टांतविषै अनुगमतें सुषुप्तपुरुषविषै जो कहा ताका संबंध मुक्तविषै सिद्ध होवैहै॥

५३२ किंवा:–मुक्तकूं हीं आश्रय करिके "जहां तो इसकूं सर्व आत्माहीं होताभया" इत्यादि वाक्य तहां (बृहदारण्यकविषै) हीं कहा है। ऐसें कहैहैं॥

५३३ फलरूप अर्थवादके औ अक्षिवाक्यके परस्पर विरोधकूं पूर्ववादी शंका करैहै॥ इहां यह अर्थ है:–"देखिये है" इस पदकूं चाक्षुष (चक्षुके विषयपदार्थ)के दर्शनविषै रूढ होनेतें अशरीरकूं ताकी अयोग्यतातें अशरीर आत्माकी उक्ति "देखियेहै" इस श्रुतितें विरुद्ध है॥

अपहतपाप्माआदिक लक्षणवाला हुया यह पुरुष "अक्षिविषै देखियेहै" इस प्रकार प्रजापतिनैं कैसैं कहा ? [५३४]तहां जैसैं यह अक्षिविषै साक्षात् देखियेहै" सो कहनेकूं योग्य है । यातैं यह वाक्य आरंभ करियेहै:—[५३५]तहां अक्षिविषै दर्शनमैं कौंन हेतु है ? इस अपेक्षाकेहुये श्रुति कहैहै:—सो दृष्टांत । [५३६]जैसैं प्रयोग्य [वा इहां प्रयोग्यके पर 'स' शब्द है] प्रकर्षकरि योजना करियेहै यातैं [५३७]प्रयोग्य कहियेहै ऐसा जो अश्व वा बलीव-

५३४ आत्मभाव अरु अमृतभाव आदिक ब्रह्मकूं विषय करनेवाली अनेक श्रुति अरु लिंगके विरोधतैं "देखियेहै" इस एक श्रुतिके ज्ञानमात्र विषयका निरोध है । इस अभिप्रायकरिके सिद्धांती अनंतर वाक्यकूं उठावते हैं ॥

५३५ चाक्षुष दर्शनकी अविषयताके हुये चक्षुके दर्शनविषै कौंन हेतु है ? इस अपेक्षाके हुये लिंगरूप हेतुवाला दर्शन प्रथम संभवै है । ऐसैं मानिके श्रुति दृष्टांतकूं कहैहै । सो दृष्टात जैसैं होवैहै तैसैं कहिये है । ऐसैं कहैहैं ॥

५३६ तिसीहीं दृष्टांतकूं अनुवादकरिके व्याख्यान करैहैं ॥

५३७ अध्याहाररहितताकी सिद्धिअर्थ अन्यपक्षकूं कहैहैं ॥ इहां "ऐसैं" इस पदके साथि द्वितीय यथा (जैसैं) शब्द संबंधकूं पावताहै ॥ औ शरीरका रथस्थानीयपना "शरीरकूं तो

ई । सो जैसैं लोकविषै आचरताहै (च्यारीओ-रतैं विचरताहै) इसकरि ऐसा जो रथ वा शकट सो आचरण कहियेहै । तिस आचरणविषै ताके आकर्षण (वहन करने)अर्थ युक्त (योजनाकिया) होवैहै ॥ ऐसैंहीं इस रथस्थानीय शरीरविषै यह प्राण जो पंचवृत्तिवाला[538] है औ इंद्रियें[539] मन अरु बुद्धिकरि संयुक्त हुया प्रज्ञानात्मा[540] है कहिये विज्ञान[541] अरु क्रियारूप

रथहीं जान " इस अन्यश्रुतितैं माननेकूं योग्य है औ इस रथस्थानीय शरीरविषै ईश्वरकरि स्वकर्म फलके उपभोगनिमित्त सो प्राण रथीपनैकरि युक्त (नियुक्त) है। ऐसैं संबंध है॥

५३८ घ्राणगत प्राणकूं भिन्न करैहैं ॥

५३९ " बुद्धिकूं तो सारथि जान औ मनकूं रस्सी जान । इंद्रियनकूं हय (अश्व) कहतेहैं " इस अन्य(कठवल्लीकी)श्रुतिकूं आश्रय करिके कहैहैं ॥

५४० " आत्माकूं रथी जान " इस श्रुतिसैं विरुद्ध प्राणका रथीपना है ? यह आशंका करिके । ता (आत्मा)का उपाधि जो है । ताके साथि अभेदके अंगीकारतैं । ऐसैं मति कहो । ऐसैं कहैहैं ॥

५४१ ताके अध्यात्म संतानरूप दोनूं शरीरनसैं विशिष्ट होनेकरि स्फुरणकूं प्राप्त स्वरूपकूं दिखावैहैं ॥

दो शक्तिनकरि संमूर्छित (व्याप्त) स्वरूपवाला है। सो युक्त कहिये स्वकर्मफलके उपभोगके निमित्त नियुक्त (योजना किया) होवैहै ॥ कहिये[५४२] "किसके उत्क्रांत हुये मैं उत्क्रांत होऊंगा वा किसके स्थित हुये स्थित होऊंगा। ऐसैं ईक्षण करिके सो प्राणकूं सृजता भया" इस श्रुति अनुसार राजाकरि[५४३] सर्वाधिकारीकीन्यांईं ईश्वरनैं दर्शन श्रवणमय चेष्टारूप व्यापारविषै प्राण अधिकारी किया है ॥ औ तिसीहींका[५५४]

५४२ ईश्वरकूं यथोक्त प्राणउपाधिद्वारा भोक्तापना आदिक संसारीपना है। इस अर्थविषै अन्यश्रुतिकूं प्रमाण करैहैं॥ इहां "मैं स्थित होउंगा ऐसैं ईक्षण करिके सो प्राणकूं सृजताभया" इत्यादि श्रुति है। यह शेष है॥

५४३ तैसैं हुये जैसैं राजाकरि सर्वाधिकारीपनैकरि सेनाध्यक्ष (सेनापति) संधि अरु विग्रह आदिक कार्यविषै योजना करियेहै। तैसैं ईश्वरकरि सर्व अन्य चेष्टाओंविषै अधिकारी अपने दर्शनआदिक व्यापारनके निमित्त नियुक्त (योजना किया) होवैहै। ऐसैं कहैहैं ॥ इहां प्राण स्वविलक्षणचेतनकरि नियुक्त करियेहै प्रयोज्य (जोडने योग्य) होनेतैं अश्वआदिककी न्यांईं। इस अनुमानतैं देहसैं मिलित प्राणतैं भिन्न अमिलित चेतन सिद्ध होवैहै। यह समुदायका अर्थ है॥

५४४ चक्षुआदिकनकी चेष्टा चेतनके निमित्त है चेष्टा

अथ यत्रैतदाकाशमनुविषण्णं चक्षुः

अर्थः—अनंतर जहां इस आकाशके प्रति अनुगत चक्षु है। [तहां] सो चाक्षुष

मात्रा कहिये एकदेश तो चक्षु इंद्रिय है। सो रूपकी उपलब्धिका द्वारभूत है ॥ ३ ॥

टीकाः—अनंतर[५४५] जहां (संसारदशाविषै) यह कृष्णताराकरि उपलक्षित आकाश(देहगत छिद्र)केप्रति अनुगत चक्षु है। तहां सो

होनेतैं रथआदिककी चेष्टाकी न्यांईं। इस अन्य अनुमानकूं सूचन करैहैं ॥ इहां प्रकृतप्राणकूं विषयकरनेवाला तत् (तिसी) शब्द है औ। मात्रा इस पदका व्याख्यान एकदेश यह है औ प्राण संवादविषै चक्षु आदिकनकी प्राणपरतंत्रता (प्राणाधीनता)की प्रतीतितैं तिनकूं ता (प्राण)की एकदेशरूपता है। ऐसैं देखनेकूं योग्य है ॥

५४५ शरीरतैं भिन्न आत्माकूं संभावना करिके ताके उपाधिकृत द्रष्टापनैकूं कहैहैं ॥ इहां शरीरतैं अतिरिक्त आत्माकी संभावनातैं अनंतरपना अथशब्दका अर्थ है औ जहां। तहां। इन दो सप्तमीकरि संसारदशा कहियेहै औ अनुगत चक्षु है। ऐसैं संबंध है ॥

स चाक्षुषः पुरुषो दर्शनाय चक्षुरथ यो वेदेदं जिघ्राणीति स आत्मा । गन्धाय

पुरुष है । [ताका] दर्शनअर्थ चक्षु करण है ॥ औ जो "इसकूं सूंघूं" ऐसैं जानता-है । सो आत्मा है । [ताका] गंधकेअर्थ

प्रकृत अशरीर आत्मा चाक्षुष पुरुष है । [चक्षुविषै होवैहै यातैं "चाक्षुष" कहियेहै] । ताका दर्शन (रूपकी उपलब्धि)अर्थ चक्षु करण है । जिस[५४६] परमात्मारूप द्रष्टाकेअर्थ सो (चक्षुइंद्रियरूप करण इष्ट) है ॥ ॥ सो पर अशरीर असंहत । [५४७]देहादिकनकेसाथि संहत (अध्यास-

---

५४६ दर्शनकेअर्थ चक्षु है । इस वाक्यके अर्थकूं खोलते हैं ॥ इहां जिस परमात्मारूप द्रष्टाके अर्थ करण चक्षु इष्ट है सो परमात्मा चक्षुविषै दर्शनरूप लिंगकरि देखियेहै । ऐसैं संबंध है ॥

५४७ चक्षुकी परार्थताविषै हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:—जो संहत (अन्यसैं मिलित) है सो स्वविलक्षणका शेष देख्या है । जैसैं शयन आसनआदिक है । तैसैं ॥ सो चक्षु

घ्राणमथ यो वेदेदमभिव्याहराणीति स आत्माऽभिव्याहाराय वागथ यो वे-

---

घ्राण है ॥ औ जो "इसकूं कथन करों" ऐसैं जानताहै । सो आत्मा है । [ताका] बोलनेके अर्थ वाक् है ॥ औ जो "इसकूं

करि मिलित) होनेतैं इहां चक्षुविषै दर्शनरूप लिंगकरि देखियेहै ॥ इहां "[548]अक्षिविषै देखिये है" ऐसैं जो प्रजापतिनैं कहा सो सर्व इंद्रियरूप द्वारनके उपलक्षणअर्थ है । जातैं सर्वविषियैंनका[549] उपलब्धा (ज्ञाता) सोई है यातैं । [550]स्पष्ट उपल-

---

वी देहादिकनके साथि मिलित होनेतैं जिस विलक्षणका शेषभूत है सो इहां दर्शनरूप लिंगकरि देखियेहै (जानिये है) ॥ विवादका विषय जो दर्शन सो आश्रयसहित है धर्म होनेतैं रूपादिककीन्यांई । इस अनुमानतैं ॥

५४८ " देखियेहै " इस वाक्यके अविरुद्धअर्थकूं कहिके " अक्षिविषै " यावाक्यके विवक्षित अर्थकूं कहैहैं ॥

५४९ जैसैं अक्षिद्वारा रूपका उपलब्धापर है । तैसैं तिस तिस इंद्रियद्वारा तिस तिस विषयका उपलब्धा परहीं है । ऐसैं करिके यह उपलक्षण युक्त है । ऐसैं साधते हैं ॥

५५० सर्व इंद्रियनकरि जब उपलब्धापना समान है तब

देदᳪ श्रृण्वानीति स आत्मा। श्रवणाय श्रोत्रं ॥ ४ ॥

सुनूं" ऐसें जानताहै। सो आत्मा है। [ताका] श्रवणकेअर्थ श्रोत्र है॥ ४॥

ब्धिका हेतु होनेतैं तो "चक्षुविषै" यह विशेषवचन सर्व श्रुतिनविषै है औ "मैं देखताभया हूं।[५५१] यातैं सो सत्य होवैहै" इस श्रुतितैं ॥ [५५२] अथापि

सर्व श्रुतिनविषै बी चक्षुविषैहीं याका उपलब्धापना कैसें उपदेश करियेहै? तहां कहैहैं ॥

५५१ चक्षुकी स्फुट उपलब्धिविषै हेतुतामै श्रुतिकूं कथन करैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—जहां "देखताभयाहूं" ऐसें चक्षुका प्रत्यय होवैहै सो वस्तु सत्य है स्पष्ट उपलंभतैं । ऐसें दो विवाद करनेवालोंविषै देख्याहै ॥

५५२ "जो यह अक्षिविषै" इसवाक्यविषै सर्व इंद्रियद्वारा उपलब्धा विवक्षित है। ऐसें उक्त अर्थकूं स्पष्ट करैहैं ॥ इहां अथापि । याका चक्षुविषै स्पष्ट उपलंभके हुये बी । यह अर्थ है औ जो इस देहविषै जिस किसी बी इंद्रियकरि जिस किसीबी विषयकूं जानता है सो आत्मा है । ऐसें संबंध है॥

(ऐसैं हुये बी) जो इसविषै जानताहै ॥ [553]कैसैंकिः–इस सुगंधिकूं वा दुर्गंधिकूं मैं सुंघूं। ऐसैं जो जानताहै। कहिये [554]ईसेंके गंधकूं मैं जानूं ऐसैं जो जानताहै। सो आत्मा है। ताके गंध (गंधके विज्ञान) अर्थ घ्राण है ॥ औ जो इस वचनकूं उच्चारण करूं ऐसैं अरु कथन करूंगा ऐसैं जानताहै सो आत्माहै। ताका उच्चारणरूप क्रियाकी सिद्धिअर्थ करण वाक् इंद्रिय है ॥ औ जो इसकूं श्रवण करूं। ऐसैं जानताहै सो आत्मा है। ताकूं श्रवणकेअर्थ श्रोत्र है ॥ ४ ॥

---

५५३ उक्तहीं अर्थकूं आकांक्षाद्वारा स्पष्ट करैहैं ॥

५५४ "सूंघताहूं" ऐसैं जो जानता है। ऐसैं उक्तकूंहीं संक्षेपसैं कहैहैं ॥ इहां घ्राणआदिक इंद्रियनकरि असंस्पृष्ट। याका तिस तिस द्वारकरि अनिष्पन्न (असिद्ध) है। यह अर्थ है औ केवल मनोमात्र जनित है। ऐसैं इसकूं मनन करताहूं। अर्थ यह जोः–संपादन करताहूं ॥

अथ यो वेदेदं मन्वानीति स आ-

अर्थः—औ जो "इसकूं मनन करों" ऐसें

टीकाः—औ जो[555] "इसकूं मनन करूं" ऐसें कहिये इंद्रियनके संबंधसैं रहित केवल मनन-रूप व्यापारकूं मनन करूं । ऐसैं जानताहै । सो आत्मा है । ताकूं मननअर्थ मन है ॥ जो जानताहै सो आत्मा है । ऐसैं इसरीतिसैं सर्वत्र प्रयोगतैं वेदन (संवितूरूप ज्ञान) इस (आ-त्मा)का स्वरूप है । ऐसैं जानियेहै ॥ जैसैं जो पूर्वतैं (पूर्वदिशाके तरफ) प्रकाशताहै सो आ-दित्य है । जो दक्षिणतैं जो पश्चिमतैं जो उत्तरतैं जो ऊर्द्धप्रकाशताहै । सो आदित्य है । ऐसैं कहे हुये प्रकाशस्वरूप सो (सूर्य) है ऐसैं जानियेहै ॥

---

५५५ " जो जानता है " इस वाक्यविषै प्रत्ययका अर्थ-भूत कर्तापना सापेक्ष होनेतैं मिथ्या है औ प्रकृति (धातु)का अर्थरूप तो संवित् मात्र अनपेक्ष होनेकरि सत्य आत्मस्वरूप है । ऐसैं कहैहैं ॥

त्मा। मनोऽस्य दैवं चक्षुः स वा एष ए-

जानताहै सो आत्मा है। याका मन दैव

५५६
दर्शनादि क्रियाकी सिद्धिअर्थ तो चक्षुआदिक क-
रण हैं ॥ औ यह५५७ इस आत्माके सामर्थ्यतें जा-
नियेहै ॥ ५५८आत्माका सत्तामात्र हीं ज्ञानका कर्त्ता-
पना है। परंतु व्यापृत (व्यापारवान्) होने-

---

५५६ ननु आत्मा जब संवेदनस्वभाव है तब ताके संस-र्गतैंहीं विषयकी सिद्धिके संभवतैं चक्षुआदिकनकी व्यर्थता होवैगी? यह आशंका करिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ हैः—अंतःकरणकी वृत्ति दर्शनआदि क्रिया है औ सो संवित् एकरस असंग उदासीन आत्माके विषयसैं संसर्गके भ्रमकी हेतु है। ता (दर्शनादि क्रिया)की सिद्धिअर्थ चक्षुआदिक सार्थक (सफल) होवैहैं ॥

५५७ तिनकी उक्तरीतिसैं सार्थकताविषै गमककूं कहैहैं॥ इहां यह अर्थ हैः—करणोंका कहा जो सार्थकपना सो प्रकृत संवित्मात्रकूं असंग होनेतैं ही स्वतः विषयके संबंधके असंभवकरि ताके संबंधकी भ्रांतिके कारण अंतःकरणवृत्तिविशेषकी अपेक्षाकरि निर्धारित है ॥

५५८ आत्माकी संवित्मात्रस्वभावरूपताके हुये कर्तापनेका व्यवहार कैसैं होवैगाः—यह आशंका करिके कहैहैं ॥

तेन दैवेन चक्षुषा मनसैतान् कामान् पश्यन् रमते ॥ ५ ॥

चक्षु है ॥ सोई यह इस दैवचक्षुरूप मनकरि इन कामोंकूं देखताहुया रमताहै॥५॥

करि नहीं ॥ जैसें सूर्यका सत्तामात्र हीं प्रकाशकाकर्त्तापना है । परंतु व्यापारवान् होनेकरि नहीं । ताकीन्यांई ॥ मन[५५९] इस आत्माका दैव कहिये अप्राकृत (इतरइंद्रियनकरि असाधारण) चक्षु है ॥ देखताहै इसकरि यातैं चक्षु है ॥ औ[५६०] वर्त्तमानकालकूं विषयकरनेवाले इंद्रिय हैं

---

५५९ " जो यह अक्षिविषै " इत्यादि वाक्य प्रपंचन किया । अबी " सो तहां " इत्यादि फलवाक्यकूं प्रपंचन करनेकूं अन्य इंद्रियनतैं मनकी विलक्षण ताकूं दिखावैहैं ॥

५६० तिसमनकी चक्षुरूपताके हुयेबी दैवपना काहेतैंहै? यह आशंका करिके कहैहैं ॥ इहां आगंतुकदोषसैं रहितपना मृदितदोषवान्‌पना है औ सर्वेश्वर प्रकाशित होवैहै जिस विशुद्ध मनविषै सो मन सर्वेश्वर है । सो है उपाधि इसका ऐसा जो मुक्तपुरुष सो तैसा (सर्वेश्वर मन उपाधिवाला) कहा है औ ईश्वरकरि । याका वाके प्रकाशक [मन]करि ।

य एते ब्रह्मलोके।तं वा एतं देवा आ-

अर्थः—जे ये ब्रह्मलोकविषे [हैं। ति-नकूं]॥ तातें तिस इस आत्माकूं देव उ-

---

यातें वे अदैव हैं। मनतो तीन कालकूं विषय-करनेवाले ज्ञानका करण है औ नष्ट दोषवाला हुया सूक्ष्म अरु व्यवहित (अंतरायसहित) आदिक सर्व वस्तुके ज्ञानका करण है। यातें दैव चक्षु कहियेहै॥ सोई मुक्त स्वरूपकूं प्राप्त अरु अविद्याकृत देह इंद्रिय मनसैं वियुक्त अरु सर्वात्मभावकूं प्राप्त हुया यह आकाशकीन्यांई विशुद्ध सर्वेश्वर (सर्वेश्वरके प्रकाशक) मनरूप उपाधिवाला हुया इसी हीं ईश्वर (ईश्वरके प्र-काशक दैव चक्षु रूप) मनकरि इन कामोंकूं सूर्यके प्रकाशकीन्यांई नित्य आविर्भूत दर्शन (चैतन्य) करि देखता हुया रमताहै॥ ५॥

टीकाः—किन कामोंकूं? इस अपेक्षाके हुये

यह अर्थ है औ अविद्याआदिक प्रतिबंधकके अभावतैं मन-करि नित्य प्रतत (व्याप्त) दर्शनरूप जो नित्य अभिव्यक्तस्व-रूप चैतन्य है तिसकरि देखताहुया। ऐसैं योजना है॥

त्मानमुपासते तस्मात्तेषाꣳ सर्व्वे च लो-
का आत्ताः सर्व्वे च कामाः स सर्व्वाꣳश्च
लोकानाप्नोति सर्व्वाꣳश्च कामान्यस्त-

पासतेहैं । तिनकूं सर्व लोक औ सर्व काम
प्राप्त हैं ॥ सो सर्व लोकनकूं औ सर्व का-
मोंकूं पावताहै । जो तिस आत्माकूं जानि-

श्रुति विशेषण देती हैः—जे ये ब्रह्मलोकविषै
हिरण्यनिधिकीन्यांई बाह्यविषयनके आसंग-
रूप अनृतकरि ढांपे हुये संकल्पमात्रकरि लभ्य
(प्राप्य) हैं तिनकूं । यह अर्थ है ॥ [561] जातैं यह
इंद्रकेअर्थ प्रजापतिनैं कहा आत्मा है । तातैं
तिसतैं सुनिके तिस इस आत्माकूं अद्यापि दे-
व उपासतेहैं औ ताके उपासनतैं तिनकूं सर्व
लोक औ सर्व काम प्राप्त भये ॥ [562] जिसअर्थ

---

५६१ "तिस प्रसिद्ध इसकूं" इत्यादि वाक्यकूं व्याख्या-
न करैहैं ॥

५६२ पदार्थकूं कहिके वाक्यार्थकूं कहहैं ॥

मात्मानमनुविद्य विजानातीति ह प्रजापतिरुवाच प्रजापतिरुवाच ॥ ६ ॥

इत्यष्टमप्रपाठकस्य द्वादशः खण्डः ॥ १२ ॥

के विशेषकरि जानताहै ॥ ऐसैं हीं प्रजापति कहतेभये ॥ ६ ॥

इति श्री०मूलभाषा०अष्टमप्रपा०द्वादशःखंडः१२

हीं इंद्र एक शतवर्ष ब्रह्मचर्य जैसैं होवै तैसैं वास करताभया ताका फल देवोनैं प्राप्त किया । यह अभिप्राय है ॥ देवनकूं महाभाग्यवाले होनेतैं[५६३] सो युक्त है । परंतु अबी मनुष्यनकूं अल्पजीवितवाले होनेतैं औ अत्यंतमंदबुद्धिवाले होनेतैं नहीं संभवैहै ? ऐसैं प्राप्त हुये यह कहिये-

---

५६३ "सो सर्वकूं" इत्यादिवाक्यकूं आशंकाकरिके उत्तररूप होनेकरि उठायके व्याख्यान करैहैं ॥ इहां यथोक्तफल तत्शब्दका अर्थ है औ प्रकरण जो है सो निर्विशेष ब्रह्म आत्माकी एकताके ज्ञानरूप विषयवाला है ॥

इति श्री० भाष्यभाषा० अष्टमप्रपाठ० द्वादशखंडस्य टि०१२

अथाष्टमप्रपाठकस्य त्रयोदशः खंडः १३
श्यामाच्छबलं प्रपद्ये शबलाच्छ्यामं

अथ श्री॰मूलभाषा॰अष्टमप्रपा॰त्रयोदशः खंडः ॥१३॥

अर्थः—श्यामतैं शबलकूं पावों। शबलतैं

हैः—सो आधुनिक पुरुषबी सर्व लोकनकूं औ सर्व कामोंकूं पावताहै ॥ ॥ कौंन यहकिः— इंद्र आदिककीन्यांई जो तिस आत्माकूं गुरु शास्त्रके अनुसार जानिके विशेषकरि जानताहै [सो]॥ इस रीतिसैं सामान्यकरि प्रजापति कहते भये । यातैं सर्वकूं आत्मज्ञान औ ताके फलकी प्राप्ति तुल्यहीं होवैहै । यह अर्थ है ॥ इहां दोवार जो कथन है सो प्रकरणकी समाप्तिअर्थ है ॥ ६ ॥

इति श्री॰भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपाठकस्य द्वादशः खंडः१२

अथ श्री॰भाष्यभाषा॰अष्टमप्रपा॰त्रयोदशःखंडः ॥१३॥

जप ध्यानार्थ श्यामतैं शबलप्राप्तिकी प्रार्थनाका मंत्र १

टीकाः—"[५६४]श्यामतैं शबलकूं पावताहूं" इत्या-

अथ श्री॰अष्टमप्रपाठकगतत्रयोदशखंडस्य टि॰ १३

५६४ दहरप्रकरण विद्याके प्रकरणविषै उपास्यकी स्तुति-

प्रपद्येऽश्व इव रोमाणि विधूय पापं च-
न्द्र इव राहोर्मुखात्प्रमुच्य धूत्वा शरी-

श्यामकूं प्राप्तभयाहूं ॥ रोमनकूं अश्वकीन्यांई पापकूं धोयके । राहुके मुखतैं प्रयुक्त होयके चंद्रकीन्यांई शरीरकूं धोयके (त्यागिके)

दि मंत्रका आम्नाय (परंपराऽऽगत उपदेश) जपकेअर्थ वा ध्यानकेअर्थ पावन है ॥ श्याम कहिये गंभीर ऐसा वर्ण है । श्यामकीन्यांई श्याम हार्द (हृदयगत) ब्रह्म है । अत्यंत दुरवगाह्य (दुर्गम) होनेतैं । तिस हार्द ब्रह्मकूं जानिके ध्यानकरि तिस श्यामतैं शबलकूं पावों । शबलकीन्यांई शबल [ब्रह्मलोक] है । अरण्यआदिक अनेक कामोंकरि मिश्र होनेतैं ब्रह्मलोककूं शबलपना है । तिस ब्रह्मलोकरूप शबलकूं

अर्थ प्रसंगतैं कहा । तिस प्रकरणकी परिसमाप्तिअर्थ प्रकृत दहरविद्याके शेषभूत (उपयोगी) अर्थकूं जपविधानकेअर्थ श्रुति प्रारंभ करैहै ॥ इहां अत्यंत दुरवगाह्य होनेतैं ध्यानहीन पुरुषनकूं । यह शेष है ॥

जप ध्यानार्थ श्यामतैं शबलप्राप्तिकी प्रार्थनाका मंत्र १

रमकृतं कृतात्मा ब्रह्मलोकमभिसम्भवामीत्यभिसम्भवामीति ॥ १ ॥

इत्यष्टमप्रपाठकस्य त्रयोदशः खंडः ॥ १३ ॥

कृतात्मा हुया अकृत ब्रह्मलोककूं पावों ऐसें। पावों ऐसें ॥ १ ॥

इति श्री०मूलभाषा०अष्टमप्र०त्रयोदशःखंडः१३

मैं प्राप्त होउं कहिये [५६५]मैंनकरि [५६६]शरीरपाततैं ऊर्ध्व गमन करों। [५६७]जातैं मैं शबलरूप ब्रह्मलोकतैं नामरूपके व्याकरण (स्पष्टीकरण)अर्थ श्यामकूं प्राप्तभया हूं। अभिप्राय यह है किः हार्दभावकूं प्राप्तभया हूं। [५६८]यातैं तिसीहीं प्रकृति (मूल) स्वरूप आत्मारूप शबलकूं पावताहूं।

---

५६५ जीवतेकूं ब्रह्मलोककी प्राप्ति कैसैं होवैहै? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

५६६ तब मुख्य तिसकी प्राप्ति नहीं होवैहै? यह आशंका करिके कहैहैं ॥

५६७ विपरीतपाठकूं हेतुताकरि है। ऐसैं व्याख्यान करैहैं॥

५६८ हेतु जो है सो प्रतिज्ञासैं योजना करियेहै ॥

यह अर्थ है ॥ ॥ [५६९] केवल ब्रह्मलोककूं पावों । यह कैसें ? तहां कहियेहैः-रोमनकूं धोयके अश्व-कीन्यांई कहिये अश्व अपने लोमनकूं धोयके (कंपकरि श्रमकूं अरु धूलीआदिककूं रोमनतैं दूरी करिके) जैसें निर्मल होवैहै । ऐसें हार्द-ब्रह्मके ज्ञानकरि धर्मअधर्म नामक पापकूं धोय-के राहुग्रस्त चंद्रकीन्यांई । सो चंद्र तिस रा-हुके मुखतैं प्रमुक्त होयके जैसें भास्वर होवै-है । ऐसें [५७०] सर्व अनर्थनके आश्रय शरीरकूं धो-यके (त्यागिके) इहांहीं ध्यानकरि कृतात्मा (कृतकृत्य) हुया अकृत (नित्य) ब्रह्मलोक-कूं प्राप्त होता हूं इति ॥ इहां दो वार कथन मंत्रकी समाप्तिअर्थ है ॥ १ ॥

इति श्री० भाष्यभाषा० अष्टमप्रपाठकस्य त्रयोदशः खंडः १३

---

५६९ दृष्टांतकूं आकांक्षापूर्वक अवतार देके व्याख्यान करैहैं ॥

५७० शरीरकी त्याज्यतामैं हेतुकूं कहैहैं ॥ इहां इति शब्द ध्यानकी समाप्तिअर्थ है ॥

इति श्री० अष्टमप्रपाठकगत-त्रयोदशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १३ ॥

अथाष्टमप्रपाठकस्य चतुर्दशः खंडः १४

आकाशो वै नाम नामरूपयोर्निर्वहिता। ते यदन्तरा तद्ब्रह्म तदमृतꣳस

अथ श्री०मूलभाषा०अष्टमप्रपाठ०चतुर्दशः खंडः॥१४॥

अर्थः–आकाशहीं नाम (प्रसिद्ध) नामरूपका निर्वाहक है। वे जिसके मध्य हैं सो ब्रह्म है। सो अमृत है सो आत्मा है

अथ श्री०भाष्यभाषा०अष्टमप्रपा०चतुर्दशः खंडः॥१४॥

आकाशनामसैं ब्रह्मके लक्षणपूर्वक प्रार्थना १

टीकाः–"आकाशहीं" इत्यादिवाक्य ब्रह्मके लक्षणके निर्देशरूप अर्थवाला च्यारीओरतैं [५७१] ध्यानअर्थ है॥ आकाशहीं नाम (श्रुतिनविषै

अथ श्री० अष्टमप्रपाठकगतचतुर्दशखंडस्य टि०१४

५७१ "इसविषै दहर अंतरआकाश है" इस लक्षणके निर्देशके प्रकृतविषै उपयोगकूं दिखावैहैं॥ इहां "सर्व प्रसिद्ध ये भूत आकाशतैंहीं उपजते हैं आकाशके प्रति अस्तकूं पावतेहैं। आकाशहीं इनतैं बडा है" इत्यादिक श्रुतियां हैं॥

आत्मा॥प्रजापतेः सभां वेश्म प्रपद्ये। यशोऽहं भवामि ब्राह्मणानां यशो राज्ञा

॥ ॥ प्रजापतिकी सभा-ग्रहकूं पावों । ब्राह्मणोंका यश मैं होऊं । राजाओंका यश वैश्यनका यश [होऊं] । ता यशकूं मैं

प्रसिद्ध आत्मा) है । आकाशकीन्यांई[५७२] अशरीर होनेतें अरु सूक्ष्म होनेतें औ सो आकाश स्वात्मा (आप)विषै स्थित जगत्के बीजभूत फेनस्थानीय नामरूपका सलिल (जल)कीन्यांई निर्वहिता (निर्वोढा) कहिये व्याकर्त्ता है ॥ वे नामरूप जिस ब्रह्मके मध्य वर्ततेहैं वा तिन[५७३] नामरूपके मध्य जो[५७४] नामरूपकरि अस्पृष्ट है ॥ यद्यपि यह

५७२ आकाशशब्दकरि आत्माकी श्रुतिनविषै प्रसिद्धतामैं हेतुकूं कहैहैं ॥

५७३ "वे जिसके अंतर हैं" इस वाक्यविषै "वे" इसपदकूं प्रथमाके द्विवचनांत ग्रहणकरिके व्याख्यान करिके । अब द्वितीयाके द्विवचनांतकूं षष्ठीरूप अर्थवाला ग्रहणकरिके व्याख्यान करैहैं ॥

५७४ "जिसके अंतर" यह समस्त पद पूर्व व्याख्यान

यशो विशांयशोऽहमनुप्रापत्सिस हाहं यशसां यशः श्येतमदत्कमदत्कं श्ये-

---

पावनेकूं इच्छताहूं । सोई मैं यशोंका यश हूं ॥ ॥ श्येत (रक्त) अदत्क (दंतरहित) ऐसे अदत्क (भक्षक) श्येत लिंदु (पि-

---

सो ब्रह्म नामरूपतैं विलक्षण अरु [575] नामरूपकरि अस्पृष्ट है । तथापि [मायाकेवशतैं] तिनका निर्वोढा है । ऐसे लक्षणवाला ब्रह्म है । यह अर्थ है ॥ यहहीं मैत्रेयीब्राह्मणकरि याज्ञवल्क्यनें कहा है:— चिन्मात्रके अनुगमतैं सर्वत्र चित्स्वरूपता हीं है । यातैं एकवाक्यता जानियेहै ॥ ॥ सो कैसैं जानियेहै ? यह कहैहैं:—सो आत्मा है । जातैं

किया । अब तो व्यस्त जैसैं होवै तैसैं व्याकृत (स्पष्ट) किया । तिसीहीं व्याकरण (स्पष्टीकरण)कूं संक्षेपसैं कहैहैं ॥

५७५ तिन दोनूंकरि जब अस्पृष्ट है तब तिनका निर्वाहक कैसैं है ? यह आशंका करिके कहैहैं ॥ इहां मायाके वशतैं । यह शेष है ॥

तं लिन्दु माऽभिगां लिन्दु माऽभि-
गाम् ॥ १ ॥

इत्यष्टमप्रपाठकस्य चतुर्दशः खण्डः ॥ १४ ॥

च्छल)कूं मति प्राप्त होउं लिंदु (सचिक्क-
ण)कूं मति प्राप्त होउं ॥ १ ॥

इति श्री०मूलभाषा०अष्टमप्र०चतुर्दशःखंडः १४

---

५७६ आत्मा नाम सर्व जंतुनका प्रत्यक्चेतन स्वसंवेद्य प्रसिद्ध है । तिसी हीं स्वरूपसैं जानिके ५७७ अशरीर ५७८ आकाशवत् सर्वगत ५७९ आत्मा ब्रह्म है ऐसैं जाननेकूं योग्य है औ सो आत्मारूप ब्रह्म अमृत है

---

५७६ आत्मस्वरूपताके हुयेबी ब्रह्मका करतलामलककीन्यांई अपरोक्षपना कैसैं होवैगा ? यातैं कहैहैं ॥ इहां तिसकरि । याका स्वसंवेद्य होनेकरि । यह अर्थ है ॥

५७७ देहद्वयरूप उपाधिवाले आत्माकी स्वसंवेद्यता काहेतैं है ? तहां कहैहैं ॥

५७८ परिच्छिन्नकी अशरीरता अयुक्त है ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥

५७९ ब्रह्म हीं प्रत्यक्षभूत है यह कैसैं जान्या ? यह आशंकाकरिके कहैहैं ॥ इहां यह अर्थ है:—ब्रह्मकी जब अनात्मता (आत्मभिन्नता) होवै तब अब्रह्मभावका प्रसंग होवैगा । यातैं प्रत्यक्भूत ब्रह्म कहनेकूं योग्य है ॥

कहिये अमरणधर्मवाला है ॥ ॥ ५८०यातैं ऊर्ध्व (पीछे) मंत्र हैः—प्रजापति जो चतुर्मुख ताकी सभाकेप्रति जो प्रभुविमित (स्वामीरचित) वेश्म (गृह) है ताकूं मैं जावों ॥ किंवाः—यश नाम आत्मा सो मैं ब्राह्मणोंका होऊं। जातैं ५८१ब्राह्मणहीं विशेषकरि ताकूं उपासते हैं तातैं तिनका आत्मा मैं होऊं ॥ तैसैं राजाओंका अरु वैश्यनका [आत्मा होऊं]। वे बी अधिकारी हीं हैं यातैं तिनकाबी यश (आत्मा) होऊं ॥ तिस यशकूं मैं प्राप्त होनेकूं इच्छताहूं। सोई मैं यशनका कहिये देह इंद्रिय मन अरु बुद्धिरूप आत्माओंका। यश कहिये आत्मा हूं ॥ ॥ किसअर्थ मैं ऐसैं प्राप्त होऊं? यह कहिये हैः—श्येत कहिये वर्णतैं पक्वबदरफलसम रोहित (रक्त) तैसैं अदत्क कहिये दंतरहित हुया बी

---

५८० उपास्यके स्वरूपकूं दिखायके। अब ताके उपासककी प्रार्थनाके मंत्रकूं उठायके व्याख्यान करैहैं ॥

५८१ प्रथमतैं ब्राह्मणके ग्रहणविषै हेतुकूं कहैहैं ॥

अदत्क कहिये भक्षक ऐसा स्त्रीव्यंजक[५८२] (स्त्रीकी योनि)। काहेतैं तांके[५८३] सेवीनके तेज बल वीर्य अरु विज्ञानरूपधर्मोंका अपहंता है। अर्थ यह जोः–विनाशक है। जो ऐसे लक्षणवाला श्येत लिंदु कहिये पिच्छल जो(द्रवित) है ताकूं मैं मति प्राप्त होऊं। मति प्राप्त होऊं॥ इहां दो वार कथन जो है सो ता (योनिगमनरूप गर्भवास)की अत्यंत अनर्थहेतुताके प्रदर्शन अर्थ है॥ १॥

इति श्री०भाष्यभाषा०अष्टमप्रपाठकस्य चतुर्दशः खंडः १४

---

५८२ विशेष्यकूं निर्देश करैहैं॥ इहां योनिशब्दित प्रजननेंद्रिय (उपस्थ) कहियेहै। यह अर्थ है॥

५८३ सो भक्षक कैसैं होवैगा? सो कहैहैं॥ इहां ताका अभिगमन नाम वास है ताकी अतिशयकरि अनर्थकी हेतुता जनावनेकूं दो वार कथन है॥

इति श्री०अष्टमप्रपाठकगतचतुर्दशखंडस्य टिप्पणम् ॥ १४॥

अथ श्रीछान्दोग्योपनिषदष्टमप्रपाठकस्य पञ्चदशः खंडः प्रारभ्यते ॥ १५ ॥

तद्धैतद्ब्रह्मा प्रजापतय उवाच। प्रजा-

अथ श्रीछान्दोग्योपनिषदो मूलमात्रभाषादीपिकाया अष्टमप्रपाठकस्य पंचदशः खंडः प्रारभ्यते ॥१५॥

अर्थः–तिस इस (ज्ञान)कूं ब्रह्मा प्रजा-

अथ श्रीछान्दोग्योपनिषद्–भाष्यभाषादीपिकाया अष्टमप्रपाठकस्य पंचदशः खंडः प्रारभ्यते ॥ १५ ॥

उक्तात्मज्ञानकी परंपराप्राप्तता औ कर्मोपयोग १

टीकाः–तिस प्रसिद्ध इस आत्मज्ञानकूं उपकरण (सामग्री)सहित "ॐ ऐसे इस अक्षर (रूप उद्गीथ)कूं" इत्यादि उपासनोंकरि सहित ताके वाचक अष्टाध्यायीरूप ग्रंथकरि सहित ब्रह्मा जो हिरण्यगर्भ वा तिस (हिरण्यगर्भ)रूप द्वारकरि परमेश्वर। कश्यप (विराट् अभिमानी)प्रजापतिकेअर्थ कहताभया॥ यह प्रजापति स्वपुत्र मनुकेअर्थ [कहताभया]।

पतिर्मनवे। मनुः प्रजाभ्य आचार्यकुला-
द्वेदमधीत्य यथाविधानं गुरोः कर्म्मा-

पतिकेअर्थ कहतेभये । प्रजापति मनुके
अर्थ । मनु प्रजाकेअर्थ ॥ ॥ गुरुके कर्म-
तैं अतिशेष [काल]करि आचार्य्यके कु-
लतैं यथाविधान वेदकूं अध्ययन करिके

मनु प्रजाओंकेअर्थ [कहताभया] ॥ इस री-
तिसैं श्रुतिअर्थके संप्रदायकी परंपराकरि प्राप्त
जो उपनिषदनका विज्ञान[५८४] है सो अद्यापि विद्वा-
नोंविषै देखियेहै ॥ ॥ जैसैं[५८५] इहां पष्ठआदिक ती-

अथ श्री०अष्टमप्रपाठ०पंचदशखंडस्य टिप्प०॥१५॥

५८४ उक्त विज्ञानकी उत्प्रेक्षितता (कल्पना कृतता)की शंकाकूं दूरी करतेहुये अनादि परंपराकरि प्राप्तताकूं दिखावैहै ॥ इहां उपकरणसहित । याका उपकरणरूप शमादि साधनोंकरि सहित । यह अर्थ है औ तिसद्वारकरि । याका हिरण्यगर्भरूप द्वारकरि । यह अर्थ है ॥

५८५ विद्याके प्रकरणकूं समाप्तकरिके । अब अविद्वान्‌करि अनुष्ठित कर्मकी सफलताकूं अविद्वान्‌के संतोष अर्थ कथन करैहै ॥ इधर " इहां " ऐसैं प्रकृत (इस छांदोग्य) उ-

तिशेषेणाभिसमावृत्य कुटुम्बे शुचौ दे-

अभिसमावर्त्तन करिके। कुटुंबमैं शुचि देश-

नि ५८६ अध्यायनविषै प्रकाशित आत्मविद्या सफल देखियेहै । तैसैं कर्मोंका कोईबी अर्थ नहीं है ऐसैं प्राप्त हुये । तिस अनर्थताकी प्राप्तिके परिहार करनेकी इच्छाकरि यह विद्वानोंकरि अनुष्ठानकरी ते कर्मका विशिष्ट फलवान्पनैकरि अर्थवान्पना कहियेहैः-आचार्यके कुल (गृह)तैं वेदकूं अध्ययनकरिके कहिये अर्थकरि सहित अध्ययनकरिके। यथाविधान । अर्थ यह जोः- जैसैं स्मृतिउक्त नियम हैं तिनकरि युक्त हुया

पनिषद्की उक्ति है औ पूर्वाभिमुखता अरु पवित्रपाणिवान्ता आदिक नियम हैं औ भिक्षा भोजन स्नान अरु आचमन आदिक विधि है ॥

५८६ क्यूं ऐसा यह नियम अध्यनविषै कहियेहै ? तहां कहैहैं ॥ इहां तहांबी इस सप्तमीकरि यथोक्त अधिकारी ग्रहण किया औ इस सर्वकूं आप करता हुया ब्रह्मलोककूं पावताहै । ऐसैं संबंध है औ ऐसैं वर्तावता हुया इस पदका व्याख्यान ऐसैं यथोक्त प्रकारसैं करता हुया । ऐसैं है ॥

शे स्वाध्यायमधीयानो धार्मिकान्विदधदात्मनि सर्व्वैन्द्रियाणि सम्प्रतिष्ठाप्य

विषै स्वाध्यायकूं अध्ययन करताहुया धार्मिकनकूं नियमन करताहुया आत्माविषै सर्व इंद्रियनकूं स्थापन करिके । तीर्थनतैं

॥ ॥ स्मृतिउक्त सर्व विधिकेबी उपकुर्वाणक ब्रह्मचारीकेप्रति कर्तव्यताके हुये गुरुशुश्रूषाकी प्रधानताके प्रदर्शनअर्थ श्रुति कहैहै:—गुरुका कर्म जो कर्तव्यहै ताकूं करिके कर्म शून्य जो अवशेष रहा काल है तिस कालकरि वेदकूं अध्यनकरिके । यह अर्थ है ॥ ऐसैंहीं नियमवाले पुरुषकरि अध्यन किया जो वेद सो कर्म अरु ज्ञानरूप फलकी प्राप्तिअर्थ होवैहै अन्यथा नहीं । यह अभिप्रिय है ॥ सो [ब्रह्मचारी] अभिसमावर्तन करिके कहिये धर्मकी जिज्ञासाकूं समाप्त करिके । गुरुकुलतैं निवर्त्त होयके न्यायतैं दार (स्त्री) कूं ग्रहणकरिके कुटुंबविषै स्थित होयके । अर्थ

हिंसन् सर्वभूतान्यन्यत्र तीर्थेभ्यः स

अन्यत्र सर्व भूतनकूं अहिंसा करता हुया।

यह जोः—गृहस्थाश्रमविषै विहित कर्ममैं स्थित हुया ॥ ॥ तहां बी गृहस्थाश्रमविषै विहित कर्मोंके मध्य स्वाध्याय (वेदपाठ)की प्रधानताके विविक्त (एकांत) अरु अमेध्य (अपवित्रवस्तु) आदिकसैं रहित ऐसे देशविषै यथायोग्य बैठा हुया स्वाध्यायकूं अध्ययनकरता हुया कहिये अधिक अरु यथाशक्ति नित्यकर्मकूं औ ऋग्वेद-आदिकके अभ्यासकूं करता हुया ॥ धार्मिक पुत्रनकूं औ शिष्यनकूं धर्मयुक्त करता हुया कहिये धार्मिकपनैंकरि तिनकूं नियममैं राखता हुया । आत्माविषै कहिये स्वहृदयमैं दार्द ब्रह्म-विषै । सर्व इंद्रयनकूं सम्यक् स्थित करिके (उपसंहारकरिके) औ इंद्रियनके ग्रहणतैं कर्मोंकूं त्यागिके सर्व भूतनकूं अहिंसा करताहुया कहिये हिंसा जो परपीडा ताकूं न करताहुया । अर्थ

खल्वेवं वर्तयन्यावदायुषं ब्रह्मलोकम-

सो निश्चयकरि ऐसैं यावत् आयु वर्त्तता

यह जोः–सर्वभूत जो स्थावर जंगमरूप भूत तिन-कूं अपीडन करताहुया॥ ॥ ननु भिक्षाके निमित्त अटन आदिककरिबी परपीडा होवैगी? यातैं कहैहैः–तीर्थनतैं अन्यत्र। अर्थ यह जोः–तीर्थ-नाम शास्त्रकी आज्ञाका विषय (भिक्षाटन तथा यज्ञादि) तिसतैं अन्यत्र (अन्यठिकाने) औ सर्व आश्रमिनकूं यह समान हैः–तीर्थनतैं अन्यत्र अहिंसाहीं है। ऐसैं अन्य वर्णन करतेहैं॥ कुटुंबविषैहीं तिस सर्वकूं करताहुया सो प्रसिद्ध अधिकारी यावत् आयुष् (यावत् जीव) इस यथोक्त प्रकारसैं हीं वर्तावता (करता) हुया देहांतके हुये ब्रह्मलोककूं पावताहै। औ शरीरग्रहणकेअर्थ फेरि आवर्तन करता नहीं। प्राप्त पुनँरावृत्तिके प्रतिषेधतैं॥ अर्थ यह जोः–

---

५८७ अप्राप्तके प्रतिषेधकी आशंकाकूं निवारते हैं॥ इहां

भिसम्पद्यते । न च पुनरावर्तते । न च पुनरातर्तते ॥ १ ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषद्यष्टमप्रपाठकस्य पंचदशः खंडः समाप्तः ॥ १५ ॥

हुया ब्रह्मलोककूं पावताहै । औ पुनरावृत्तिकूं पावता नहीं । पुनरावृत्तिकूं पावता नहीं ॥ १ ॥

इति श्रीछान्दोग्योपनिषदो मूलमात्रभाषादीपिकायामष्टमप्रपाठकस्य पंचदशःखंडःसमाप्तः १५

५८७अर्चिआदिक मार्गकरि कार्यब्रह्म (हिरण्यगर्भ) के लोककूं पायके यावत् ब्रह्मलोकविषे स्थिति होवै तावत् तहांहीं पूर्व स्थित होवैहै । ता (ब्र-

---

चंद्रलोकआदिककीन्यांई ब्रह्मलोकतैं बी पुनरावृत्ति प्राप्त है ताके "औ नहीं" इत्यादिवाक्यकरि प्रतिषेधतैं अप्राप्तके प्रतिषेधकी प्राप्ति नहीं है । यह अर्थ है ॥

५८८ अपुनरावृत्तिवाक्यविषै स्थित अक्षरनकूं व्याख्यान करैहैं ॥ इहां पूर्व ऐसैं महाप्रलयतैं पूर्वकालकी उक्ति है औ तातैं । याका ब्रह्मलोकतैं । यह अर्थ है ॥

इति श्रीछांदोग्योपनिषद्भाष्यभाषादीपिकायामष्टमप्रपाठकगत-पंचदशखंडस्य टिप्पणं समाप्तम् ॥ १५ ॥

ह्मलोक)तें आवृत्तिकूं पावता नहीं ॥ इहां दो अभ्यास जो है सो उपनिषद् विद्याकी परिसमाप्तिरूप अर्थवाला है ॥ १ ॥

इति श्रीसामवेदीय छान्दोग्योपनिषद्-भाष्यभाषादीपिकायामष्टमप्रपाठकस्य पंचदशः खंडः समाप्तः ॥ १५ ॥

अनया टीकया टीका दशोपनिषदां मया ॥
यत्कृपातः सुसंपन्ना कृतार्थस्तान्नमाम्यहम् ॥ १ ॥
सर्वोपनिषदामर्थो ब्रह्माभिन्नात्मरूपकः ॥
सोऽहमस्मि सदा प्राज्ञैर्ध्येयो ज्ञेयश्च नित्यशः ॥ २ ॥

समाप्तेयमष्टमप्रपाठकस्य भाष्यभाषादीपिका ॥८॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाऽऽचार्यबापुसरस्वतीपूज्यपाद-शिष्य पीतांबरशर्मविदुषा विरचिता श्रीछान्दोग्योपनिषन्मूल टीकार्थसहित तच्छांकरभाष्यभाषादीपिका समाप्ता ॥

समाप्तोऽयं सटीकः श्रीग्रंथः ॥